www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पंजाब-केसरी : लाला लाजपत राय

भारतीय स्वाधीनता को मूर्तिमान करने में जिन शिल्पियों का आदरणीय योगदान रहा है उनमें पंजाब-केसरी लाला लाजपत राय का अन्यतम स्थान है ।

किसी चिरस्मरणीय जन-सेवा में सफलता पाने के लिये जिन गुणों की आवश्यकता होती है । उनका विकास करने के लिये उन्होंने कठोर साधना की थी । लाला लाजपत राय के अप्रतिभ व्यक्तित्व के चार स्तम्भ थे । लगन, पुरुषार्थ, साहस और धैर्य ।

लाला लाजपत राय एक आत्म-निर्मित व्यक्ति थे । वे उन अवसर प्राप्त अग्रस्थों में नहीं थे जिन्हें पैतृक परम्परा से साधन और सुविधायें मिल जाया करती हैं । लाला लाजपत राय ने अपने को उद्योग की तपस्या में तिल-तिल तपा कर कण-कण गढ़ा था ।

लाला लाजपतराय का जन्म एक अत्यन्त निर्धन वैश्य परिवार में २८ जनवरी सन् १८६५ में पंजाब के जिला फीरोजपुर की मोगा तहसील के अन्तर्गत एक छोटे से गाँव ढोड़िग्राम में हुआ था । यह ग्राम उनका ननिहाल था । कुछ परम्परा और कुछ निर्धनता के कारण इनके पिता श्री राधाकृष्ण ने इनकी गर्भवती माता गुलाबदेवी को उनके पिता के घर भेज दिया था ।

लाला लाजपत राय के पिता श्री राधाकृष्ण एक साधारण अध्यापक थे । मात्र पच्चीस रुपये वेतन पाते थे । जो अन्त में जाकर पैंतीस रुपये मासिक हो गया था । ऐसे निर्धन पिता से ऐसी आशा कैसे की जा सकती थी कि वे अपने पुत्र को वकालत जैसी उच्च शिक्षा दिला सकते थे किन्तु लाला लाजपत राय ने अपने उद्योग और परिश्रम के बल पर वकालत की उच्च परीक्षा पास की और एक सफल वकील बने । उन्होंने अपनी उन्नति के लिये अपने अन्य भाई-बहनों के साथ अन्याय नहीं किया । कभी नहीं चाहा कि पिता परिवार का तन-पेट काट कर उन्हें उच्च शिक्षा के लिये साधन दें । उन्हें तो अपनी लगन और पुरुषार्थ का भरोसा था । इसी का उन्होंने अवलम्ब लिया और वकील बनने की अपनी आकांक्षा पूरी कर ली ।

लाला लाजपत राय की इस आकांक्षा का भी एक आधार था । वे केवल वकील बनने के लिये ही वकील बनना नहीं चाहते थे और न यही चाहते थे कि वकील बनकर खूब पैसा कमायें और समाज में शान-शौकत से जीवन-यापन करें । यदि उनकी यह आकांक्षा इसी विचार तक सीमित होती तो उसकी कोई महत्ता न होती । न जाने कितने लोग वकालत पढ़ते और वकील बनते रहते थे । उन्हीं में से एक यह भी हो जाते । दूसरों की तरह खाते-कमाते और एक दिन इस भीड़ से भरी दुनिया से समाज पर बिना कोई छाप छोड़े चले जाते । उनकी इस आकांक्षा के पीछे एक महान् मन्तव्य निहित था और उसी मन्तव्य ने उन्हें एक साधारण व्यक्ति से असाधारण व्यक्ति बना दिया ।

वकील बनने की उनकी आकांक्षा केवल आकांक्षा नहीं थी, वरन् वह एक आवश्यकता थी । लाला लाजपत राय के हृदय में देश की पराधीनता और समाज की पतितावस्था की बड़ी गहरी कसक थी । उनका हृदय उसके उद्धार और सेवा करने के लिये व्याकुल रहता था ।

उन दिनों वकालत ही एक ऐसा क्षेत्र था, जिसमें प्रवेश लेकर आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक समस्याओं को सम्मानपूर्वक हल करने का अवसर रहता था । सुधार वृत्ति की हलचल उन दिनों उसी क्षेत्र में अधिक चल रही थी । जरूरी था कि जहाँ जिस बात की सम्भावना अधिक थी, वहीं जाया जाता । निदान निर्धनता का दोष मिटाने, जीवन की आवश्यकतायें पूरी करने और जन-सेवा द्वारा मनुष्यता को सार्थक बनाने के लिये उन्होंने वकालत को अपना आधार लक्ष्य बनाया और उसे प्राप्त करने के लिये अथक पुरुषार्थ किया ।

उस घोर निर्धनता की अवस्था में भी राधाकृष्ण अपने पुत्र के लिये जो कुछ भी कर सकते थे, उन्होंने किया । पहले तो उन्होंने लाजपत राय को स्वयं अपने आप ही घर पर पढ़ाया । इसके लिये वे अपनी व्यस्त दिनचर्या में से नित्य कुछ समय निकाल ही लेते थे । अनन्तर उन्होंने उन्हें रोपड़ में, जहाँ उस समय वे काम कर रहे थे, एक राजकीय मिडिल स्कूल में प्रवेश करा दिया । वह स्कूल केवल छठी कक्षा तक ही था । लाजपत राय ने क्रम से उसकी सारी कक्षायें प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर लीं । आयु के देखते हुए उनकी यह सफलता सराहनीय थी । वे स्कूल में सबसे कम आयु के विद्यार्थी थे । लेकिन शुरू से ही अपने जीवन लक्ष्य के प्रति उत्सुक होने के कारण उस छोटी अवस्था में भी लाजपत राय अधिकतर अपनी पढ़ाई की ओर ही ध्यान देते थे । जब तक अपना पाठ याद नहीं कर लेते थे खेलना तो खेलना, खाने तक की ओर ध्यान न देते थे । कर्त्तव्य के प्रति इसी एकाग्र लगन ने उन्हें एक मेधावी छात्र का गौरव प्रदान कर दिया । क्या बालक और क्या प्रौढ़, क्या

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नर और क्या नारी ? जो भी कर्त्तव्य के प्रति परिश्रम और पुरुषार्थ का अवलम्बन लेकर चलता है वह सफल हो ही जाता है ।

लाला लाजपत राय की अब अगली पढ़ाई के लिये अवरोध शुरू हो गया । रोपड़ में अब आगे कक्षायें नहीं थीं और पिता का भी स्थानान्तरण शिमला हो गया । पच्चीस रुपये मासिक के अल्प वेतन में सम्भव न था कि वे परिवार को अपने साथ ले जाते और शिमला में लाजपत राय को शिक्षा दिलाते । निदान उन्होंने हताश होकर बच्चे की शिक्षा के सम्बन्ध में छाती पर पत्थर रख लिया ।

पिता परिस्थितियों से जरूर हताश हो गये किन्तु पुत्र हताश न हुआ था । उदीयमान और अस्तमान भावों में यही तो अन्तर हो जाता है । परिस्थितियाँ जहाँ एक को उत्साहित करती हैं वहाँ दूसरे को निरुत्साह । इसीलिये तो कहा गया है कि परिस्थितियों से हार मानकर कभी आत्म-समर्पण मत करो । भविष्य के उज्ज्वल चित्रों की रक्षा के लिये वर्तमान से संघर्ष करते रहो और अतीत के उन संयोगों से शिक्षा तथा साहस प्राप्त करते रहो जो पहले भी इसी प्रकार गतिरोध बनकर आये थे और आपने जिनको विवेकपूर्वक जीत लिया था । किसी का अतीत गतिरोध के बिना पूरा नहीं होता । जीवन-यात्रा में समय-समय पर गतिरोध आना स्वाभाविक होता है । यदि ऐसा न हो तो पुरुषार्थ के कर्त्तव्य का कोई महत्त्व ही न रहे और न मनुष्य में प्रौढ़ता एवं परिपक्वता आये ।

पिता ने तो आगे पढ़ाने में विवशता प्रकट कर दी थी, किन्तु लाजपत राय को आगे पढ़ने की लगन लगी हुई थी । उन्होंने माता द्वारा पिता को कहलाया कि यदि उनको लाहौर भेज दिया जाये तो वे वहाँ अपने प्रयत्न के आधार पर शिक्षा का प्रबन्ध कर लेंगे और जो सहायता वे सरलतापूर्वक कर सकें कर दें ।

पिता को सन्देश मिला । उन्हें अपने बेटे के उत्साह में होनहार के लक्षण दिखाई दिये । उनका हृदय आनन्द और गौरव से भर गया । किन्तु आश्चर्य भी कम न हुआ । वे सोचने लगे कि यह छोटा-सा लड़का लाहौर जाकर वहाँ पढ़ाई के लिये क्या प्रबन्ध करेगा ? पहले तो उन्होंने उससे योजना पूछनी चाही फिर यह सोचकर नहीं पूछा—हो सकता है उसकी योजना किसी श्रम के रूप में हो, जिसे प्रकट करते हुए उसे संकोच हो । उत्साह पर संकोच का आघात किन्हीं नवोदित भावनाओं पर अनुकूल प्रतिक्रिया नहीं करता । निदान उन्होंने इस विषय में अपनी उत्सुकता पर नियन्त्रण कर लिया और अपनी सहमति कार्यान्वित कर दी ।

लाहौर में बालक लाजपत राय ने एक हाईस्कूल में प्रवेश लिया । प्रवेश में तो कठिनाई होनी ही क्या थी ? सारी पिछली परीक्षायें जिस परीक्षार्थी ने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की हों उसे तो कोई भी स्कूल खुशी-खुशी लेने को तैयार हो जाता है । लाजपत राय का पिछला परिश्रम सार्थक हुआ और वे आगे भी उच्च शिक्षा के राजमार्ग पर आ गये किन्तु सबसे बड़ी कठिनाई थी आर्थिक । पढ़ाई और जीवन की अन्य आवश्यकताओं का खर्च कैसे पूरा हो ? पिता से अनुरोध किया जा सकता था । वह तो लाहौर अपने बल पर पढ़ाई का वचन करके आये थे । समस्या कुछ कम उलझन भरी नहीं थी किन्तु आशावादी बालक लाजपत ने उसका हल निकाल ही लिया ।

आर्थिक समस्या का यह हल तीन शाखाओं में था । मितव्ययिता, बच्चों की ट्यूशन और शिक्षा विभाग से छात्रवृत्ति । मितव्ययिता के सम्बन्ध में उन्होंने यह तक भुला दिया कि सूखी रोटी और दो जोड़े मोटे कपड़ों के अतिरिक्त जीवन की कोई और भी आवश्यकतायें होती हैं । उनमें भी घाटा पड़ने पर उपवास का लाभ और साहसपूर्वक ऋतु का अनुभव । ट्यूशन तो आप से आप आने लगे जब उन्होंने अपनी योग्यता का अंश देकर बहुत से कमजोर छात्रों को पढ़ने में तेज बना दिया । अब रही छात्रवृत्ति की बात, सो उसके लिये उन्होंने पूरी तैयारी की और प्रतियोगिता में प्रथम स्थान लाकर शिक्षा-विभाग से छात्रवृत्ति वसूल कर ही ली । इस छोटी-सी उपलब्धि के लिये बालक लाजपत राय ने कितना परिश्रम किया था इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि संगी-साथियों की बात तो छोड़ दीजिये, अध्यापक तक कह उठते थे—"लाजपत बेटे ! कभी-कभी घंटा-आध घंटा खेल-कूद भी लिया करो । इस प्रकार पुस्तक रूप हो जाना तुम्हारी आयु के अनुरूप नहीं लगता ।" किन्तु उन आदरणीयों को क्या पता था कि उस बालक के नन्हें से हृदय में एक महापुरुष निर्माण पा रहा था; जिसकी मूर्तिमत्ता का यह प्रथम चरण था जो छात्रवृत्ति के लक्ष्य रूप में उसे पूरा ही करना था । पुरुषार्थ की अखण्ड साधना द्वारा ही तो अन्तर के उद्‌भाव्यों से महापुरुष में प्राण-प्रतिष्ठा की जाती है ।

कुछ दिन लाहौर में पढ़ने के बाद लाजपत राय दिल्ली चले गये । सोचा था कि दिल्ली भारत की राजधानी है, बड़ा नगर है, वहाँ पर रहकर आय में भी कुछ वृद्धि हो जायेगी और राजनीतिक हलचल से परिचय भी रहेगा । किन्तु बड़े नगरों में जो सबसे बड़ी कमी रहती है वह दिल्ली में भी थी । जनसंकुलता के कारण वहाँ का न तो जनजीवन ही शांत था और न वातावरण ही स्वास्थ्यदायक । लाजपत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

राय वहाँ बीमार पड़ गये । पहले तो उन्होंने बहुत कोशिश की कि किन्हीं उपायों से दिल्ली के जलवायु से उनके स्वास्थ्य का सामंजस्य हो जाये किन्तु इसमें सफलता की सम्भावना न देखी तो प्रकृति से व्यर्थ का संघर्ष करना ठीक न समझा और दिल्ली से अपनी माता के पास यह सोचकर चले आये—कदाचित् इसमें भी किसी शुभ सम्भावना का रहस्य छिपा हो ।

उनकी शिक्षा की लगन ने उन्हें अधिक दिनों तक जरगाँव में नहीं रहने दिया । स्वस्थ होते ही उन्होंने लुधियाना जाकर मिशन हाईस्कूल में प्रवेश ले लिया और अधिकाधिक तन्मयता के साथ पढ़ने लगे, जिससे कि अध्ययन की पिछली क्षति पूरी हो जाये और वे कक्षा में अपना प्रथम स्थान बनाये रहें । स्कूल के अधिकारियों ने उनकी लगन, तत्परता और योग्यता के उपलक्ष में छात्रवृत्ति की भी सुविधा दे दी । अपने भाग्य के निर्माण में व्यस्त व्यक्तियों की कठिनाइयाँ तो यों ही प्रत्याशित तथा अप्रत्याशित रूप में हल होती ही रहती हैं ।

लेकिन अभी उनके स्थैर्य की घड़ी नहीं आई थी । यहाँ भी बीमार हो गये । निदान कुछ समय के लिये विद्यालय छोड़ देना पड़ा । इस गतिरोध को भी उन्होंने ईश्वर की किसी बड़ी इच्छा का रहस्य माना और अपने पास न तो कातरता आने दी और न निराशा । बीमारी से संघर्ष करते हुए भी वे बराबर पढ़ते थे । इस प्रकार विद्यालय छूट जाने पर भी उन्होंने शिक्षा की प्रगति न रुकने दी । उन्हें इस बात का ज्ञान था कि सम्पर्क विच्छेद कर देने से पढ़ी विद्या भी विस्मृत होने लगती है ।

उन्हीं दिनों उनके पिता शिमला से अम्बाला बदली हो आये और लाजपत राय अपनी माता तथा भाइयों के साथ पिता के पास अम्बाला चले गये किन्तु अभी उनके धैर्य की परीक्षा समाप्त न हुई थी । अम्बाला आकर वे फिर बीमार हो गये और अबकी बार उन्हें एक भयंकर फोड़ा निकल आया । किन्तु इस स्थिति में भी उन्होंने अध्ययन से मुँह न मोड़ा । इन्हीं आपत्ति के दिनों में ही उन्होंने एक बंगाली विद्वान की सहायता से अंग्रेजी और पिता के सहयोग से उर्दू, फारसी और गणित की अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली । यह शिक्षा के प्रति उनकी लगन का ही प्रमाण था कि कष्ट और संकट के दिनों में भी उन्होंने उसका क्रम टूटने न दिया । जिनको कोई आन्तरिक अथवा बाह्य परिस्थिति अपने लक्ष्य की ओर प्रगति करते रहने से विरत कर देती है उनकी लगन में कमी होती है । ऐसी कच्ची लगन के लोग एक साधारण से कारण और छोटा-सा बहाना पाकर मन्द पड़ जाते हैं और तब न तो बड़ी सफलता पा पाते हैं और न उल्लेखनीय प्रगति ही कर पाते हैं । धैर्य, संयम, पथ्य और उपचार के बल पर लाजपत राय ने अपने स्वास्थ्य को, निरोग होकर जल्दी ही वापस कर लिया और यथासमय मैट्रिक की परीक्षा देकर सफल भी हो गये । सफलता तो तब संदिग्ध होती जब वे बीमारी के समय पराजय मानकर पड़े-पड़े—'अब कैसे क्या होगा ?' का ताना-बाना बुनते रहते । इसके विपरीत जब वे रोग को भी अन्य गतिरोधों की तरह हेय समझ कर उसका उपाय भी करते रहे और अध्ययन का क्रम भी चलाते रहे तो परीक्षा में असफलता की अनहोनी घटना हो भी कैसे सकती थी ? फिर भी उन्होंने इस संघर्ष पर विजय पाने में कुछ कम परेशानी न हुई । इसका जिक्र करते हुए उन्होंने स्वयं एक स्थान पर लिखा है—

"यों तो मेरी कठिनाइयाँ और परेशानियाँ जीवन भर मेरे माता-पिता के लिये कष्ट का कारण बनी रहीं किन्तु इस वर्ष जो मुझे और मेरे माता-पिता को कष्ट हुआ वह मैं आजीवन नहीं भूल सकता ।"

मैट्रिक की परीक्षा विशेष अंकों के साथ पास करने से उन्हें जो छात्रवृत्ति की सुविधा मिली उसके सहारे वे उच्च शिक्षा के लिये लाहौर चले गये और अरबी, उर्दू और भौतिक विज्ञान के साथ पंजाब विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि ग्रहण की । किन्तु इससे उन्हें सन्तोष न हुआ । कारण यह था कि उन दिनों पंजाब विश्वविद्यालय की उपाधि कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण न मानी जाती थी । कलकत्ता विश्वविद्यालय की डिग्रियों का उन दिनों बहुत मान था । इस अन्तर के कारण उन्हें अपना परिश्रम व्यर्थ जाता दिखाई देने लगा । किसी तपस्या की अपर्याप्त सिद्धि यदि थोड़ी-सी तपस्या और मिला देने से पूर्ण और प्रकाम हो सकती है तो धैर्यवान् साधक उससे पीछे नहीं हटते । वे कुछ समय और तप कर ऐसे कुन्दन बन ही जाते हैं जिसकी प्रतिभा और प्रभा फिर कभी आजीवन मन्द नहीं होती ।

शिक्षा में अपनी सफलता का असफल रूप देखकर लाजपत राय ने कोई सोच न किया और वे कलकत्ता विश्वविद्यालय की उपाधि के लिये कृत संकल्प होकर पुनः अध्ययन में जुट गये और इस बार उन्होंने फारसी के साथ उस विश्वविद्यालय का भी स्नातकत्व प्राप्त कर लिया । महान का सम्पर्क मध्यम को भी महान बना देता है । कलकत्ता विश्वविद्यालय की उपाधि मिलते ही उनकी पिछली डिग्री का भी महत्त्व बढ़ गया और लाला लाजपत राय एक-एक ग्यारह की तरह उन दोनों डिग्रियों से विशेष गुरुता युक्त हो गये । इस तपस्या में तन्मयता के कारण असावधान लाजपत राय पर रोग ने एक बार फिर आक्रमण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर दिया। इस बार की बीमारी से उन्हें बड़ा क्षोभ हुआ। वे सोचने लगे यदि इसी प्रकार रोगों का यह शत्रु आगे भी उनके पीछे पड़ा रहा तो वे भविष्य के मनोनीत कर्त्तव्य किस प्रकार पूरे कर सकेंगे? निदान उन्होंने एक दिन अपने जीवन क्रम का आमूल सम्पादन कर डाला। कमियों त्रुटियों और कृत्रिमताओं को निकाल फेंकने के साथ-साथ कठोर संयम, नियमित दिनचर्या और युक्ताहारविहार की ऊँची और अटूट प्राचीर से अपने स्वास्थ्य की किलेबन्दी कर दी जिसके फलस्वरूप उनका आरोग्य अपने शत्रु रोगों से सदासर्वदा के लिये निर्द्वन्द्व हो गया।

अब लाला लाजपत राय शिक्षा के उस परिवेश में आ गये थे जहाँ से वे अपने लक्ष्य वकालत की ओर अभियान कर सकते थे। उन्होंने लॉ विद्यालय में प्रवेश ले तो लिया किन्तु अर्थाभाव के कारण लॉ की डिग्री लोहे के चनों से कम कड़ी सिद्ध न हुई। उनकी शिक्षा का यह अन्तिम दौर मानो उनके धैर्य, पुरुषार्थ और कष्ट सहिष्णुता की अन्तिम परीक्षा थी। उन्होंने इस समादृत सफलता को किस दरिद्रता का सामना करते हुए प्राप्त किया उसका परिचय उनके दिये इस विवरण से ही मिल जाता है—उन्होंने लिखा है—

"लॉ कॉलिज के मेरे प्रारम्भिक दो-तीन माह तो असहनीय कठिनाई में बीते। इन दिनों मेरी आँखों ने भी मुझे बड़ा कष्ट दिया। भोजन का अभाव तो जब-तब बना ही रहता था जिसे मैं दिन भर पानी पी-पी कर पूरा करने का प्रयत्न किया करता था। दिन भर भूखा रह कर रात को भी भूखे सो जाने का तो जैसे आदी हो गया था। मेरी पुस्तकें मेरी क्षुधा को बहुत कुछ बहलाये रहती थीं।"

"भोजन का अभाव मेरी चिन्ता का उतना बड़ा विषय नहीं था जितनी कि चिन्ता मुझे कॉलिज की फीस और छात्रावास के शुल्क की थी। न तो ट्यूशन मिल रही थी और न उनके लिये समय ही मिल पाता था। वकालत का पाठ्यक्रम पूरा करने के लिये मेरा एक-एक क्षण जरूरी था। कई माह प्रयत्न और खोज करने के बाद एक मार्ग मिला। वह था विद्यालय की मात्र छः रुपये मासिक की छोटी-सी छात्रवृत्ति। मेरे लिये उस समय वह छोटी-सी धनराशि भी बहुत बड़ी चीज थी। वह भी सरलता से न मिल सकी। उसके लिये मुझे इतना संघर्ष और प्रयत्न करना पड़ा जितना कोई एक खजाने के लिये नहीं करता किन्तु इसके सिवाय अन्य उपाय भी तो न था। उस समय वह छोटी सी धनराशि, मेरे जीवन लक्ष्य का आधार होने के कारण, मेरे लिये बड़ी मूल्यवान थी। यदि उस संक्रान्ति समय में मैं उस समय प्रयत्न और प्राप्ति के अनुपात की तुलना करने की भावुकता में आ जाता तो निश्चय ही एक बड़ी भूल हो जाती। निदान मैंने प्रयत्न के एक बड़े मूल्य पर वह छोटी-सी धनराशि उत्साहपूर्वक प्राप्त कर ली। बड़ी प्रसन्नता हुई।"

"उस छात्रवृत्ति में से दो रुपये कॉलिज की फीस देता था, तीन रुपये वकालत का शुल्क और एक रुपया मासिक छात्रावास का निवास शुल्क। अब मेरे भोजन तथा अन्य खर्च के लिये मेरे पास केवल एक रुपया बचता था जिसके सहारे मैं अपना शेष जीवन चलाने की कोशिश करता था।"

"मेरे न बतलाने पर भी पता नहीं मेरे पिताजी को मेरी इस कठिनाई का पता कैसे चल गया। उन्होंने अपनी और परिवार की कठिनाइयाँ बढ़ाकर मेरी कठिनाई में हाथ बटाया। वे मुझे मासिक कभी आठ रुपये और कभी दस रुपये भेजा करते थे। मैंने अपने लिये यह उपकार बहुत समझा। इससे अधिक कुछ कर सकना उनके लिये सम्भव न था। मुझे उसी सीमा में रहकर अपना गुजर करना पड़ता था और मैंने साहसपूर्वक किया भी। वकालत की पुस्तकें बहुत मँहगी थीं किन्तु मैंने दौड़-धूप कर कुछ आवश्यक पुस्तकें सस्ते दामों में प्राप्त करली थीं। इस प्रकार जहाँ लॉ के अन्य छात्र अपने कमरों में नई-नई पुस्तकों की एक छोटी-छोटी लायब्रेरी रखते थे वहाँ थोड़ी-सी पुरानी पुस्तकों से ही काम चलता था। इसके अतिरिक्त जिन पुस्तकों की आवश्यकता होती थी और जो मेरे पास नहीं होती थीं उन्हें मैं अपने मित्रों से माँग लाता था और बड़ी सावधानी से काम निकाल कर निर्धारित समय पर वापस कर आता था। मैंने न तो किसी मित्र की कोई पुस्तक खराब की और न समय के बाद अपने पास रोकी। जिस प्रकार मैं स्वयं ही पुस्तकें ले आता था उसी प्रकार खुद जाकर सधन्यवाद वापस भी कर आता।"

"मेरे पिता मेरे लिये ऋण लेने को भी तैयार हुए किन्तु मैंने उन्हें वैसा करने नहीं दिया और सीमान्त मितव्ययिता के साथ अपना गुजारा करता रहा किन्तु मेरी इन सारी मुसीबतों का सारा मूल्य मुझे एक साथ मिल गया जब मैं वकालत की परीक्षा में मन भाये अंकों में पास हो गया।"

इस जीवन-निर्माण की कठोर गाथा के बाद लाजपत राय की सेवाओं का इतिहास प्रारम्भ होता है। रोहतक में वकालत प्रारम्भ करने के साथ ही उन्होंने लाहौर के डी. ए. वी. कॉलेज में काम भी करना शुरू कर दिया। कालेज नया-नया ही स्थापित हुआ था। उसके स्थायित्व और विकास के लिये बहुत काम करना था। उन दिनों निःस्वार्थ एवं निःशुल्क कार्यकर्ताओं की बड़ी कमी थी। लाला लाजपत राय ने कॉलेज को अपनी सेवायें प्रदान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कीं । वे प्रायः कचहरी के बाद रोहतक से लाहौर चले जाया करते थे । वहाँ जाकर वे कॉलेज का काम और कागज देखते थे । अपने प्रस्ताव देते और अगली योजनाओं पर विचार विमर्श करते थे । अवसर मिलने पर वे एक दो कक्षाओं को या तो कोई महत्त्वपूर्ण विषय पढ़ाते थे या नैतिकता, आचरण, अनुशासन, जन-सेवा और देश-भक्ति के प्रेरक उपदेश दिया करते थे ।

अवकाश के दिनों में तो लाला लाजपत राय लाहौर में ही रहते थे और सारे समय कॉलेज के काम में ही लगे रहते थे । उन दिनों उनका मुख्य कार्य कॉलेज के लिये धन संग्रह करना रहता था । वे कॉलेज के लिये झोली लिये बाजार-बाजार, दुकान-दुकान और घर-घर घूमते थे । लोगों को शिक्षा की आवश्यकता और महत्त्व समझाते थे । कॉलेज का उद्देश्य और उसके विकास की अनिवार्यता बतलाते थे । विनम्रतापूर्वक लोगों से दान देने की प्रार्थना करते थे । बच्चों को स्कूल भेजने की प्रेरणा देते थे और जो कुछ मिलता था उसे लाकर कालेज की भेंट कर देते थे । इस प्रकार अपने प्रयत्नों द्वारा लाला लाजपत राय ने लाहौर के डी. ए. वी. कॉलेज को हजारों रुपये और सैकड़ों छात्र ही नहीं दिये बल्कि अपनी प्रतिष्ठापूर्ण याचना से उसका महत्त्व भी बढ़ा दिया । जिन जनकार्यों के लिये सम्मानित व्यक्ति अहंकार जन्य आत्महीनता का भाव छोड़कर झोली ले लेते हैं उन कल्याण कार्यों को सफल होते विलम्ब नहीं लगता । लाला लाजपत राय की इस बहुमूल्य सेवा से कॉलेज कुछ ही समय में अपने पैरों खड़ा हो गया और उनको सहारा देने वाले उन जैसे ही बहुत से स्तम्भ भी मिल गये ।

इस सक्रिय सेवा के अतिरिक्त लाला लाजपत राय जनता में विचार आन्दोलन के लिये विविध पत्र-पत्रिकाओं में लेख भी लिखते रहते थे । परिवर्तनकारी लेखों ने लाहौर में जन-जागरण का प्रभात उदय कर दिया । लाला लाजपत राय की उत्पन्न की हुई इस हलचल ने जहाँ उन्हें जनप्रिय बना दिया वहाँ सरकारी अधिकारियों को असहयोगी । परिणामस्वरूप उनकी वकालत मन्द पड़ती गई । सरकार के पिट्ठू अफसरों का असहयोग इतना बढ़ गया कि उन्हें जीविका के लिये रोहतक छोड़ देने पर विचार करना पड़ा । इसको भी उन्होंने अपनी एक सफलता ही माना । जन-सेवाओं का महत्त्व और जन-सेवक का प्रभाव प्रारम्भ में विरोध की तुला पर ही तुलकर अपना मूल्य प्रकट करता है यद्यपि कॉलेज ने उन्हें सहायता देने का प्रस्ताव किया किन्तु उन्होंने उसे अस्वीकार कर दिया और कहा—"किसी जनसंस्था को सहायता दी जाती है या उल्टे उससे सहायता ली जाती है । सेवा एवं साधन का क्षेत्र एक रोहतक ही तो नहीं है । पूरा देश पड़ा है, कहीं भी चला जाऊँगा ।" निदान वे रोहतक से हिसार चले आये ।

हिसार में आकर लाला लाजपत राय ने जल्दी ही जन-सेवा का क्षेत्र खोज निकाला उन्हें पता चला कि म्यूनिसिपेलिटी में मन्त्री का स्थान रिक्त है जिसके कारण उसका काम सुचारु रूप से नहीं हो पा रहा है । उन्होंने तत्काल अपनी अवैतनिक सेवायें उस स्थान के लिये समर्पित कर दीं । उनके अनेक मित्रों ने उनसे कहा कि जब वह स्थान वैतनिक है आप नियमित वेतन क्यों नहीं लेते ? मित्रों का परामर्श सुनकर लाला जी हँस उठते थे कहा करते थे कि मैं उस स्थान पर जन-सेवा के लोभ से गया हूँ, पैसे के लोभ से नहीं । पैसे की अधिक लिप्सा अच्छी नहीं होती । यह मनुष्य को हद दर्जे का स्वार्थी बना देती है । स्वार्थी व्यक्ति समाज का स्वाभाविक विरोधी होता है । मैं समाज का विरोधी नहीं हितैषी बनना चाहता हूँ और परामर्श देता हूँ कि आप लोग भी स्वार्थ की सीमा कुछ कम करके समाज की सेवा करें जिससे कि समाज उन्नति और देश स्वाधीनता की ओर बढ़े । उनके इस परामर्श और उस कार्य का अनेक अच्छे आदमियों पर अनुकूल प्रभाव पड़ा उन्होंने अपना सुधार किया, जन-सेवा की ओर अग्रसर हुए और उसके अभूतपूर्व आनन्द के लिये लालाजी को धन्यवाद दिया ।

लालाजी ने बहुत समय तक म्युनिसिपेलिटी के मन्त्री पद पर काम किया और इस अवधि में नगर में अनेक सुधार कराये । नगर की स्वच्छता और छोटी शिक्षा संस्थाओं की सहायता को उन्होंने स्थायित्व दिलाया । चुँगी चौकियों पर होने वाले भ्रष्टाचार को रोका और कर्मचारियों के लिये अनेक सुधारों का प्रयत्न किया । उन्होंने इस प्रकार म्युनिसिपेलिटी के एक आदर्श मन्त्री का उदाहरण लोगों के सम्मुख रखा ।

लालाजी अपने कर्त्तव्य में किस सीमा तक निःस्वार्थ और निस्पृह थे, इसका प्रमाण इसी बात से मिलता है कि, उन्होंने अवसर होने पर भी अपने पद और प्रभाव के आधार पर सस्ती जमीन जायदाद का लाभ नहीं उठाया । जबकि न जाने कितने निवास रहित परिवारों को स्थान-स्थान पर चुँगी की जमीन पर मकान बना लेने की अनुमति दिलवाई और किराया भी नाम-मात्र का स्वीकृत करा दिया । उनके सम्बन्धियों ने उनसे उस अवसर पर अपने पद का लाभ उठाने के लिये कहा और अपने लिये भी सस्ते दामों पर बड़े-बड़े प्लाट चाहे किन्तु लालाजी स्वयं तो लोभ में नहीं ही आये अवसरवादी सम्बन्धियों को भी अनुचित लाभ नहीं उठाने दिया । इस निस्पृहता और ईमानदारी के लिये लोगों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के कोप के साथ मूर्ख की उपाधि भी मिली जिसे उन्होंने निर्विकार भाव से स्वीकार कर लिया । बाद में जब लाला लाजपत राय की सेवा भावना और देश-भक्ति सर्वथा प्रमाणित हो गई तो स्वार्थी लोगों को अपने व्यवहार पर बड़ा पश्चाताप हुआ ।

अपनी इन सेवाओं और सद्भावनाओं के कारण लालाजी हिसार में बड़े लोक-प्रिय हो गये । लोग उन्हें स्वभावतः अपना नेता मानने लगे । लालाजी ने अपनी इस नेतृत्वपूर्ण लोक-प्रियता का लाभ उठाया किन्तु अपने लिये नहीं, जन-हित के कार्यों के लिये उन्होंने अपने समर्थकों की अनेक सभायें कीं । जिनमें लोगों का ध्यान अनाथों की दशा की ओर आकर्षित किया और उनके लिये एक अनाथालय और एक उद्योग स्थापित करने का प्रस्ताव रखा । जनता ने उनके इस प्रस्ताव का केवल समर्थन ही नहीं किया बल्कि हाथों-हाथ उसे कार्यान्वित भी कर दिया । जल्दी ही उसके लिये एक समिति गठित हो गई, एक कोष स्थापित हो गया, जमीन चुन ली गई और उद्योग का सरंजाम जुटने लगा ।

अनाथालय और अनाथों के लिये उद्योग की स्थापना ने समाज के न जाने कितने लालों को आश्रय दिया । उनके तन-पेट का जब पालन होने लगा तो उनकी दुःखी आत्माओं ने सुखी होकर लालाजी को जो मौन आशीष दी होगी उसका फल सौ साल की साधना से भी अधिक रहा होगा । कौन कह सकता है कि लालाजी के आगामी यशस्वी कामों की प्रेरणा और सफलता में अनाथों की मौन आत्माओं का योगदान न रहा हो परमार्थ के इस रहस्य को तो कोई उपकारी ही जान सकता है ।

हिसार में वे सभी जन-कल्याण की बहुत सी योजनाओं को कार्यान्वित करने के विषय में विचार कर रहे थे कि लाहौर की अनिवार्य आवश्यकताओं ने उन्हें फिर वहाँ बुला लिया । उनका पोषित डी. ए. वी. कॉलेज अव्यवस्था के कारण प्रगति से वंचित हो रहा था । उसके आधार पर आर्य-समाज में फूट पड़ जाने से जनहित की बड़ी हानि हो रही थी और लाहौर का जन-जागरण एक सच्चे नेता की माँग कर रहा था । यह थीं वे अनिवार्य आवश्यकतायें जिनके कारण हिसार छोड़कर उन्हें पुनः लाहौर जाना पड़ा ।

जाते ही जाते उन्होंने सबसे पहले कॉलेज-कमेटी का मन्त्रि पद का उत्तरदायित्व अपने कन्धों पर लिया । समिति की सम्मति और कॉलेज की व्यवस्था के लिये उन्होंने दिन और रात एक कर दिया । इसके लिये उन्हें जिसके पास जितनी बार जाना पड़ा वे गये, जिनकी खुशामत, मिन्नत करनी पड़ी की और जो भी परिश्रम करना पड़ा किया । इस सदाशयता के लिये उन्होंने स्वाभिमान, संकोच, पद और प्रतिष्ठा के सारे अलंकार उतार कर रख दिये थे और यह सिद्ध कर दिया था कि जन-सेवक का स्थान जनता जनार्दन के पैरों के पास होता है और नेतृत्व की सार्थकता, सहनशीलता तथा विनम्रता में है ।

खण्डित आर्य-समाज को अखण्ड करने के लिये उन्होंने कितना प्रयत्न और सदस्यों की बैठकों के साथ-साथ सार्वजनिक सभायें कीं इसकी कोई गणना नहीं है । सभाओं में लालाजी के सारपूर्ण भाषणों का बड़ा अनुकूल प्रभाव पड़ा जिससे आर्य-समाज की दशा सुधार की दिशा में गतिमान होने लगी । उनके इन भाषणों का सारांश कुछ इस प्रकार का होता था—

"स्वामी दयानन्द की आत्मा का सच्चा स्वरूप जिसे हम सब आर्य-समाज कहते हैं उन ईंट पत्थरों का नाम नहीं है जिन पर आप लोग झगड़ा करते हैं । आर्य समाज उन वैदिक सिद्धान्तों का नाम है जिनमें भारतीय समाज का जीवन सन्निहित है । हम सब जनता की सेवा और अपने जीवन का सुधार करने के लिये इसमें सम्मिलित हुए हैं । इन मकानों पर अधिकार करने के लिये नहीं और न उनके लिये लड़ाई-झगड़ा करने के लिये । इन सब बातों से स्वामी दयानन्द की आत्मा को कितना दुःख होता होगा और जनता की कितनी हानि होती है, क्या आप लोगों को इसका विचार कभी नहीं आता ? यह बात ठीक है कि आप लोगों ने काफी धन और समय लगाकर समाज-मन्दिर का निर्माण कराया है । फिर भी इस पर झगड़ा करना और पुलिस, अदालत का सहारा लेना समाज के महान् उद्देश्य के सर्वथा प्रतिकूल है । मुझे इस प्रकार के अधार्मिक और सिद्धान्तघाती आचरण जरा भी पसन्द नहीं हैं । मेरा आप लोगों से विनम्र आवेदन है कि इन आपसी झगड़ों को छोड़कर जन-सेवा की ओर ध्यान दें जिससे कि आर्य-समाज के पावन उद्देश्य पूरे हो सकें ।"

लालाजी के प्रयत्नों के फलस्वरूप कॉलेज कमेटी और आर्य-समाज के सदस्यों में टूट-फूट के तत्व कम हुए । आगे चलकर जनमत के दबाव से उन्हें दो संस्थाओं का सभापतित्व भी ग्रहण करना पड़ा । इन महत्वपूर्ण उत्तरदायित्वों को निभाते हुए लालाजी 'दयानन्द-ऐंग्लो-वैदिक कॉलेज समाचार' नामक समाचार पत्र का सम्पादन भी करते थे और 'भारत-सुधार' तथा 'आर्य-मेसेन्जर' नामक समाचार-पत्रों का कार्य भी देखते थे । उनके लिये लेख लिखते और प्रकाशन का प्रबन्ध भी करते थे । इस जन-सेवा की वेदी पर उन्होंने जो व्यक्तिगत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

त्याग किया था उसके लिये वे निश्चय ही नमस्कार के योग्य माने जा सकते हैं । हिसार से जिस समय वे लाहौर के लिये रवाना हुए थे उस समय उनकी वकालत की मासिक आय हजार रुपये से दो हजार रुपये तक थी । लाहौर में आकर वे जन-सेवा के कार्यों में इस सीमा तक संलग्न हो गये कि वकालत के लिये उस सीमा तक ही समय एवं ध्यान देते थे जिससे उनकी अपनी जीविका चलती रहे और परिवार को थोड़ी-बहुत सहायता मिलती रहे । जन-सेवा के सम्मुख उनकी दृष्टि में धन का कोई महत्त्व ही न रह गया ।

लाला लाजपत राय को दुबारा लाहौर आये अभी ज्यादा समय नहीं हुआ था । अभी उनकी लोक-सेवाओं का कार्य-क्षेत्र पंजाब के कुछ जिलों तक ही फैल पाया था, किन्तु उन्नीसवीं शती के अन्तिम तीन-चार वर्षों की दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं ने उनका सेवा-क्षेत्र कई प्रान्तों तक बढ़ा दिया । सन् १८९६-९७ में लगभग पूरे भारत में सूखा पड़ गया, जिसने दुर्भिक्ष के रूप में सारे देश में त्राहि-त्राहि मचा दी । लोग उससे छूटने के उपायों में ठीक से लग भी न पाये थे कि तब तक प्लेग फूट पड़ी । प्रकृति के इस तेहरे प्रकोप से प्रलय का दृश्य उपस्थित हो गया । जनता और जन-नेताओं की कौन कहे सरकार तक के हाथ-पाँव फूल गये । ऐसे भयानक समय में लाला लाजपत राय ने जिस साहस, तत्परता और जन-सेवा की भावनाओं का प्रमाण दिया उससे देश की जनता ने उन्हें सिर-आँखों पर उठा लिया ।

लाला लाजपत्त राय तुरन्त लाहौर छोड़कर अनावृष्टि, अकाल और महामारी से पीड़ित क्षेत्रों के दौरे पर निकल पड़े । उन्होंने आपत्तिग्रस्त जनता की जो दशा देखी वह बड़ी हृदय विदारक थी । उन्होंने देखा कि प्लेग से प्रभावित लोग कीड़े-मकोड़ों की तरह मर रहे हैं । लोग भय से गाँव छोड़-छोड़कर भाग रहे हैं । परिवार के लोग तक अपने रोगियों के पास नहीं जाते । न कहीं दवा का प्रबन्ध है और न रोगियों की परिचर्या का प्रबन्ध । एक बड़ा समूह अनाथों और निराश्रितों की तरह मर रहा है । क्षेत्रों में श्मशानों जैसा दृश्य उपस्थित हो गया है ।

इधर अनावृष्टि जन्य अकाल से भी हजारों आदमी दाने-दाने को तरस कर अकाल मृत्यु मर रहे हैं । लोगों ने पेड़ों के पत्ते और छालों तक को खा डाला है । इतना ही नहीं उन्होंने यह तक देखा कि भोजन पाने के लिये लोग अपने बच्चों और स्त्रियों तक को बेच रहे हैं । क्षुधा-पीड़ित नारियाँ अपनी विभुक्षा विवश होकर शील तक दे डालने पर उतर आई हैं । समाज की यह दशा देख कर लाला लाजपत राय आँसुओं से रो उठे किन्तु उससे भी अधिक दुःख उन्हें यह देखकर हुआ कि उसी समाज में ऐसे नर-पशु भी थे जो मनुष्यों की उस पीड़ा से लाभ उठा रहे थे ।

ईसाई मिशनरी भूखी जनता को थोड़ा-सा भोजन देकर उनका धर्म परिवर्तन कर रहे थे । भ्रष्टाचारी, कालाबाजारिये और मुनाफाखोर भयंकर रूप से उस भूखी जनता का खून चूस रहे थे । जहाँ उन्हें उस समय अन्न और धन के भण्डार जनता के लिये बिना किसी मूल्य-मुआवजे के खोल देने चाहिये थे वहाँ वे एक के दस-दस बना रहे थे । थोड़े-से भोजन और कुछ सिक्कों पर नर-पिशाच विवश नारियों के शील का सौदा कर रहे थे । मानवता पर इस प्रकार का अमानवीय अत्याचार देखकर लाला लाजपत राय का हृदय टुकड़े टुकड़े हो गया । उन्होंने उस आपत्तिग्रस्त जनता की सहायता में अपने प्राण तक देने का संकल्प कर लिया ।

उन्होंने अकाल पीड़ित क्षेत्रों में अन्धाधुन्ध दौरे करने शुरू कर दिये । यदि उन्हें सूरज एक स्थान पर निकलता था तो शाम दूसरे स्थान पर होती थी । अपने इन दौरों में वे पीड़ित तथा रोगीजनों के पास जाकर उन्हें आश्वासन देते थे । उनके दुःख में सहानुभूति की शीतलता भरते थे । अनाथ स्त्री-बच्चों को उनके करुणा भरे आँसुओं ने बड़ा धीरज बँधाया ।

पीड़ितों के पास से वे जनता में आकर सभायें करते थे । अन्न, वस्त्र और धन-जन के लिये अपीलें निकालते थे । समाचार-पत्रों में सहायता के लिये प्रेरणा देने वाले लेख लिखते थे । साथ ही वे अकाल और आपत्ति से लाभ उठाने वाले नर-पिशाचों की निन्दा और आलोचना भी करते थे । वे कहते थे—धिक्कार है ऐसे मनुष्यों को, घोर धिक्कार है जो ऐसे आपत्ति काल में सहायता करना तो दूर, उल्टे पीड़ित लोगों का शोषण करते हैं । इस दुर्भाग्य को सुअवसर समझ कर मनमाना मुनाफा करते हैं । याद रखो तुम पाप की जिस कमाई को जमा कर-करके रख रहे हो वह सब एक दिन यहीं पर छूट जायेगी, लेकिन तुम्हारा पाप तुम्हारे साथ परलोक में जायेगा और तुम्हारे लिये रौरव नरक का कारण बनेगा । यह सब अपने पीड़ित भाइयों से मुनाफा कमाने का फल है । यह समय तो अपने भण्डार, अपने हृदय और अपनी मनुष्यता को उदारतापूर्वक खोल देने का है । यह समय अपनी व्यक्तिगत सुख-सुविधा और कामों तक को छोड़कर दुःखी लोगों की सेवा करने का है । धिक्कार है उन नर रूपी पशुओं को जो आपत्तिग्रस्त देशवासियों की उपेक्षा कर अपने मौज-मजे में लगे हुए हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

असहयोगिनी जनता के साथ-साथ लाला लाजपत राय ने देश की सरकार और देश के नेताओं को भी कम आड़े हाथों नहीं लिया । उन्होंने उनकी किंकर्त्तव्यविमूढ़ता से उत्पन्न निष्क्रियता को एक बड़ी कमजोरी बताया और कहा—"इस समय निराशा अथवा निरुत्साह को प्रश्रय देकर न तो बैठे रहने से काम चलेगा और न केवल प्रस्ताव पास करने और सहानुभूतिपूर्ण लेख लिखने से । इस समय मनुष्यता आपत्ति में फँसी है । इस समय मैदान में आकर उसकी सक्रिय सहायता एवं सेवा करने की आवश्यकता है । धनवान्, बलवान्, स्त्री, पुरुष, शिक्षित, अशिक्षित, साधु, संन्यासी, नागरिक, ग्रामीण, शिक्षक, विद्यार्थी, साधारण-असाधारण जो भी स्वामी-सेवक, नेता और अनुयायी इस समय भगवान् की कृपा से प्रकृति के इस प्रकोप से सुरक्षित हैं, सब जाति, वर्ण, धर्म, सम्प्रदाय, वर्ग और श्रेणी का विचार छोड़कर मरती मानवता की रक्षा के लिये अपने-अपने साधन लेकर चल पड़ें और सहायता एवं सेवा कार्यों में लग जायें । सरकार को चाहिये कि वह भी अन्य सारे कार्यों को गौण करके पीड़ित प्रजा की रक्षा के लिये जनता का साथ दें और शासक होने का अपना कर्त्तव्य पालन करें ।" लालाजी की इन प्रेरक मार्मिक अपीलों ने देश भर में एक हलचल खड़ी कर दी । हृदय से निकली हुई उनकी बातें सीधे लोगों के हृदय पर चोट करती थीं । सोते हुए लोगों में जागरण का वातावरण छा गया और उनकी मनुष्यता अपने भाइयों की सेवा-सहायता करने के लिये मचल उठी ।

लालाजी ने इस प्रकार जनता को जगाकर स्थान-स्थान पर जन-सेवा समितियों का गठन किया । हजारों की संख्या में स्वयं-सेवक तैयार किये । आगरा, लखनऊ, सीतापुर, गोंडा, मिर्जापुर, इलाहाबाद आदि अकालग्रस्त क्षेत्रों के मध्य स्थानों में केन्द्रीय कमेटियाँ और बड़े-बड़े सहायता शिविर स्थापित किये । डॉक्टर, नर्सों और परिचारिकाओं का भी प्रबन्ध किया । उन्होंने न केवल सैकड़ों स्वयं सेवक ही सहायता संचय करने के लिये देश भर में भेजे बल्कि स्वयं भी झोली डालकर निकल पड़े । लालाजी जहाँ भी जाते थे वहीं से हजारों रुपये और मनों सामग्री की व्यवस्था कर लाते थे । उन्होंने अपने प्रयत्नों से अन्न, वस्त्र और उपकरणों के ढेर के ढेर इकट्ठे कर दिये । वे स्वयं सेवकों को साथ लेकर स्वयं पीड़ितों के पास जाते थे और अपने सामने उन्हें सहायता दिलाते थे । बीमारों की स्वयं अपने हाथ से परिचर्या करते और मृत लोगों को ठिकाने लगाते थे ।

लालाजी की इस तत्परता और सेवा-भावना का फल यह हुआ कि न केवल देश के कोने-कोने से बल्कि विदेशों से भी अकाल पीड़ितों के लिये सहायता समग्री आने लगी । पं. मदनमोहन मालवीय और गोखले जैसे चोटी के नेता भी जन-सेवा के क्षेत्र में सक्रिय रूप से उतर आये और उन्होंने लालाजी का नेतृत्व खुशी-खुशी स्वीकार किया । किन्तु देश की विदेशी सरकार अभी तक अपने कर्त्तव्य में उदासीनता बरत रही थी । लालाजी उसकी यह कर्त्तव्यहीनता सहन न कर सके । उन्होंने अपने लेखों और भाषणों में उस पर कठोर आघात करने शुरू कर दिये । सरकार की आँखें खुलीं और उसने सबसे पहला काम यह किया कि रेलगाड़ी से आने वाली सहायता सामग्री का भाड़ा आधा कर दिया । अनन्तर उसने अकाल की जाँच और सहायता का सुझाव देने के लिये एक कमीशन स्थापित किया । कमीशन की रिपोर्टों में लालाजी ने अपनी योजनाओं का समावेश कराया और सरकार से हर प्रकार की सहायता प्राप्त की । इस प्रकार अपने अथक परिश्रम द्वारा लाला लाजपत राय ने आपत्ति पीड़ित जनता की जो अभूतपूर्व सेवा की वह मानवता के इतिहास में आदरपूर्ण अक्षरों में लिखी रहेगी । इन दिन-रात के सेवा कार्यों में लालाजी ने न केवल अपने हजारों रुपयों की आय का ही उत्सर्ग कर दिया बल्कि स्वास्थ्य का भी एक बहुत बड़ा भाग बलिदान कर दिया । स्वास्थ्य की हानि पर खेद प्रकट करने वालों से लालाजी ने सन्तोषपूर्वक यही कहा—"अपनी थोड़ी-सी शारीरिक अथवा आर्थिक हानि करके यदि पीड़ित मानवता की सेवा जा सकती है तो मैं इसे सस्ता सौदा ही समझता हूँ । यदि परमार्थ में मेरे प्राण भी चले जाते तब भी मैं अपने को धन्य ही मानता ।"

मानवता का आपत्ति से अभी युद्ध किये लालाजी को कुछ भी समय न गुजरा था कि १८९९ में राजस्थान में पुनः अकाल पड़ गया । मित्रों, परिजनों तथा सम्बन्धियों ने बहुत कुछ समझाया और चाहा कि अब लालाजी उस विकट परिस्थिति में न पड़ें और दूसरे लोगों को सेवा करने दें किन्तु मानवता के सच्चे पुजारी लालाजी न माने और पहले की तरह पुनः सेवा क्षेत्र में कूद पड़े । हितैषी जनों के विरोध का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा—"जन सेवा के कार्यों में वाटी और पाटी का दृष्टिकोण रखना किसी जन-सेवक के लिये एक बड़े अधर्म से कम नहीं है । मैंने कितना किया और लोग कितना कर रहे हैं, आपत्तिकाल में इसकी नाप-तौल करना एक अहंकारपूर्ण प्रवंचना है । मेरा विश्वास है कि जो व्यक्ति सेवाओं का परिणाम लिये बिना जितनी अधिक जन-सेवा कर लेता है वह उतना ही बड़ा परमार्थी है और उसका जीवन उतना ही अधिक सार्थक होता है ।"

इस बार भी लालाजी ने राजस्थान के अकाल पीड़ितों की सेवा उसी तत्परता और उत्साह से की जिस तत्परता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से पहले की थी उनकी इन सेवाओं की प्रशंसा न केवल देश के बड़े-बड़े नेताओं ने की प्रत्युत् पंजाब सरकार ने उन्हें सच्चा जन-सेवक माना। यहाँ तक कि जब भारत सरकार ने अकाल के कारणों की जाँच करने के लिये 'दुर्भिक्ष-कमीशन' स्थापित किया तो लालाजी को उसके सम्मुख सबसे बड़ा साक्षी माना।

राजपूताने के दुर्भिक्ष से निपटकर लाला लाजपत राय ने लाहौर में एक स्थायी सेवा-समिति की स्थापना की। उसमें उन्होंने स्वयं-सेवकों को आपत्तिग्रस्त मानवता की सेवा करने की विधियों का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की। एक स्थायी सेवा-कोष की स्थापना के साथ-साथ अनेक अनाथालय और आश्रम-गृहों की भी स्थापना कराई। संकटकाल में धर्म रक्षा के लिये ईसाइयों की साल्वेशन आर्मी (मुक्ति सेना) की तरह एक धर्म-रक्षक सेना का संगठन किया।

दैवयोग से, दूरदर्शी लाला लाजपत राय की इन संस्थापनाओं तथा संगठन की सामर्थता जल्दी ही सिद्ध हो गई। राजपूताना के अकाल के पाँच-छः साल बाद ही कांगड़ा जिले में भयंकर भूकम्प आ गया। जिसमें सैकड़ों मकान गिर गये, सैकड़ों आदमी मर गये और न जाने कितने परिवार बेघर-बार हो गये। लाला लाजपत राय तुरन्त अपनी पूर्व व्यवस्था के आधार पर भूकम्प पीड़ितों की सेवा में जुट गये। उन्होंने पुनः सहायता-संचय का अभियान चलाया। अन्न-वस्त्र और धन इकट्ठा किया। स्वयं-सेवकों का आह्वान किया और भूकम्प से ध्वस्त भू-भाग के पुनः निर्माण में लग गये। उन्होंने अनाथों एवं निराश्रितों को अनाथालयों और आश्रमगृहों में स्थान दिया। सैकड़ों तम्बू और झोंपड़ियों की व्यवस्था की। गरीब और निरुपाय लोगों के लिये लंगर चलवाये। इस प्रकार उन्होंने जल्दी भूकम्प-पीड़ित लोगों की स्थिरता और आत्म-विश्वास की स्थिति पैदा कर उनका बड़ा उपकार किया।

इसी प्रकार जब १९०७-८ में उड़ीसा, संयुक्तप्रान्त और मध्यप्रदेश में अकाल पड़ा तो उस समय भी सेवा-कार्यों में लालाजी सबसे आगे रहे। लालाजी की इस महान मानवता ने उन्हें इक्कीस-बाइस साल की आयु में ही देश के बड़े-बड़े नेताओं की पंक्ति में खड़ा कर दिया। देश भर में स्थान-स्थान पर उनका स्वागत हुआ, मान-पत्र और थैलियाँ भेंट की गईं जिनको कि उन्होंने जन-सेवा के कार्यों में ही लगा दिया। वे पंजाब आर्य-समाज के सभापति बनाये गये और भारत सरकार द्वारा देश के प्रमुख जन-नेताओं में स्वीकार किये गये।

अछूतों तथा हरिजनों के प्रति लाला लाजपत राय की सहानुभूति सदैव से रही थी। हिन्दुओं के इस वर्ग की दयनीय दशा को वे समाज पर एक कलंक मानते थे और चाहते थे कि उनकी दशा सुधरे और वे समाज का एक अच्छा अंग बनें। उन दिनों हिन्दू समाज के इस वर्ग को अपने-अपने सम्प्रदाय में मिला लेने के लिये ईसाइयों तथा मुसलमानों, दोनों के प्रयत्न चल रहे थे। ईसाई मिशनरी तो उन्हें उनकी गरीबी, अशिक्षा और अवहेलना से लाभ उठा कर उन्हें ईसाई बनाने में जुटे हुए थे और मुसलमान राजनैतिक आधार पर उन्हें हिन्दू-मुसलमानों के बीच आधा-आधा बाँट दिये जाने की पेशकश कर रहे थे। अछूतों के इस निष्कासन एवं विभाजन के पीछे हिन्दू-समाज के अस्तित्व के लिये एक भयंकर खतरा छिपा हुआ था। लाला लाजपत राय ने इस खतरे को स्पष्ट अनुभव कर लिया था। उन्होंने संकल्प कर लिया कि वे हिन्दू समाज के अस्तित्व के लिये अछूतों के उद्धार और उनकी रक्षा के लिये प्राणपण से प्रयत्न करेंगे। वे ईसाइयों और मुसलमानों के षड्यन्त्र को सफल न होने देंगे फिर चाहे इनके लिये उन्हें अपना सर्वस्व ही नहीं प्राण तक ही क्यों न देने पड़ें। निदान वे आर्य समाज के नेता की हैसियत से हरिजनों के कल्याण के लिये मैदान में उतर आये।

लालाजी ने अछूतोद्धार का काम सबसे पहले पंजाब में प्रारम्भ किया। काफी दिन धैर्यपूर्वक प्रचार करने के बाद उन्होंने एक अछूतोद्धार कमेटी स्थापित की। इसका प्रधान भी लोगों ने उन्हीं को बनाया। इस कमेटी के सदस्य जनता को अछूतों की दशा से परिचित कराते थे और उनकी वर्तमान दशा से होने वाली सामाजिक हानि से परिचित कराते थे। लोगों को अछूतोद्धार कार्यक्रम में शामिल होने और सहायता करने के लिये प्रेरित करते थे। पंजाब की केन्द्रीय अछूतोद्धार कमेटी को दृढ़ करने के बाद लालाजी ने उसके विकास और विस्तार के लिये प्रयत्न किया। भारत के विभिन्न क्षेत्र में उसकी शाखायें प्रशाखायें स्थापित कीं और उनका सम्बन्ध मूल कमेटी से जोड़कर उसे अखिल भारतीय रूप दे दिया।

वे अछूत-सुधार का प्रचार करने के लिये कमेटी के सदस्यों को बाहर भेजते थे। उनके लिये सारी व्यवस्था करने के लिये जनता से साधन एकत्र करते थे और आवश्यक निर्देश देते रहते थे। लाला लाजपत राय ने ऊँच-नीच और छुआछूत में विश्वास रखने वाले हिन्दुओं की आँखें खोलने के लिये भारत के बहुत से भागों का दौरा किया। विशेष तौर से वे इस प्रचार के लिये वाराणसी, इलाहाबाद, बरेली और मुरादाबाद के अधिक पिछड़े स्थानों पर गये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वहाँ उन्होंने लोगों को धर्म का सच्चा स्वरूप बतलाया और अपनी भावनाओं में सुधार करने की प्रेरणा दी ।

उन्होंने एक सुधरी हुई अछूत बस्ती के लिये दिल्ली में एक योजना चलाई और उसके लिये शहर से शाहदरा विभाग में जमीन का टुकड़ा भी खरीदा । लगभग सारे देश में प्रचार करने के बाद लालाजी ने गुरुकुल कांगड़ी में एक अखिल भारतीय अछूत-सम्मेलन किया और उसके अध्यक्ष पद से बड़ा ही मार्मिक और सारगर्भित भाषण दिया । इसी सम्मेलन में उन्होंने लोगों से अछूतों के सुधार के लिये तन, मन, धन से सहायता करने की अपील की और एक हरिजनों की स्वयं-सेवक सेना का संगठन किया ।

लाला लाजपतराय ने अछूतों में शिक्षा प्रचार के लिये अपने पास से चालीस हजार रुपये का नकद दान दिया और उसके लिये एक व्यावहारिक योजना भी । लालाजी की इस उदारता का लोगों पर बड़ा अनुकूल प्रभाव पड़ा । जनता का ध्यान अछूतों के सुधार की आवश्यकता की ओर गया और उसने जी-भर कर इस शुभ कार्य में सहायता की । लालाजी ने अपने तत्वावधान में अछूत-बच्चों की कई प्रारंभिक पाठशालायें स्थापित कराईं । उनको चलाने में सहायता और विकास की योजना दी ।

इन सब कार्यों के अतिरिक्त लालाजी ने देश भर में घूम-घूमकर अछूतों की दयनीय दशा का जायजा लिया, उनकी उस दशा के कारण और उनके निवारण के उपाय खोजे और जनता को उससे अवगत कराने के लिये स्थान-स्थान पर भाषण दिये और समाचार पत्रों में लेख लिखे । अछूतों के लिये सरकार की सहानुभूति पाने के लिये वे संयुक्त प्रान्त के तत्कालीन लाट सर जेम्स मेस्टन से मिले हरिजनों की समस्या पर विचार करने के लिये प्रेरित किया । इस प्रकार शायद वे अछूतोद्धार की योजना में तब तक लगे रहते जब तक उसमें उल्लेखनीय सफलता न पा लेते किन्तु उस समय की राजनीतिक हचचलों और विशेषतया बंग-भंग के सरकारी षड्यन्त्र ने उन्हें उस राजनीति के मंच पर जाने के लिये विवश कर दिया और वे अछूतों का सेवा-कार्य जन-सेवक समिति के योग्य कार्यकर्ताओं को सौंप कर मातृभूमि की स्वाधीनता के लिये उस दिशा में चले गये ।

जिस समय लाला लाजपत राय कांग्रेस के इलाहाबाद अधिवेशन में शामिल होने गये, उस समय उनकी आयु केवल तेईस वर्ष की थी किन्तु इस छोटी-सी आयु तक ही वे जनता की इतनी सेवा कर चुके थे कि जब वे इलाहाबाद के स्टेशन पर पहुँचे तो पं. मदन मोहन मालवीय और अयोध्यानाथ जैसे महान नेताओं ने विशाल जन-समूह के साथ उनका स्वागत किया । उस अधिवेशन में लाला लाजपत राय ने दो भाषण दिये, जिनमें उन्होंने अंग्रेजों के पिट्ठू देशद्रोहियों की कड़ी आलोचना की और धारा-सभाओं में सुधार की माँग की । उनके ऐतिहासिक भाषणों ने देश में एक नई ज्योति, एक नई हलचल और एक नई राजनीतिक चेतना पैदा कर दी । लाला लाजपत राय के इस उल्लेखनीय प्रवेश द्वारा कांग्रेस में एक नई जान आ गई । लोगों ने उनका महत्त्व जाना और नेतृत्व स्वीकार किया । भारत के इस नवोदित ने उस अधिवेशन में जो सबसे महत्त्वपूर्ण और उल्लेखनीय काम किया वह यह कि अपना भाषण अंग्रेजी के बजाय हिन्दुस्तानी में दिया और इस प्रकार कांग्रेस की एक हीन परम्परा तोड़ कर आदर्श परम्परा का प्रवर्तन किया । उसके बाद से कांग्रेस का काम भारतीय भाषाओं में भी होने लगा ।

भारतीय शासन में सुधार के प्रस्ताव लेकर जब वे इंग्लैण्ड गये तब उन्होंने राष्ट्र के पक्ष में अन्तर्राष्ट्रीय जनमत का समर्थन पाने के लिये उन्होंने लगभग सारे यूरोप का दौरा किया । इसी क्रम में उन्होंने इण्डिया हाउस की स्थापना में सहयोग किया और मैन्चेस्टर, एडिन्बरा और लिवरपूल जैसे महत्त्वपूर्ण स्थानों और यूरोप के देहातों तक का भ्रमण किया । यूरोप का जनमत पाने के लिये उन दिनों उन्होंने अथक परिश्रम किया । विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में सैकड़ों लेख लिखे और एक-एक दिन में कई-कई भाषण दिये । जिस समय वे विदेश में देश सेवा का काम करके भारत लौटे तो अपने साथ इंग्लैण्ड की पार्लियामेंट का रोष, जनता की सद्‌भावना क्रान्ति की एक नई चेतना और अमेरिका की शिक्षा-पद्धति का ज्ञान लेकर आये थे । भारत आकर उन्होंने अपने अनुभव के आधार पर स्पष्ट घोषणा कर दी कि भिक्षावृत्ति के आधार पर भारत को स्वाधीनता नहीं मिल सकती उसके लिये साहसपूर्वक अपने बल पर अपने ही पैरों खड़े होना होगा और देश में परिवर्तनकारी क्रान्ति का जागरण करना होगा । आगे चलकर लाला लाजपत राय की यह दूरदर्शिता चरितार्थ होकर संसार के सम्मुख आई ।

बंगाल उन दिनों सारे भारत की राजनीतिक चेतना का केन्द्र हो रहा था । बंगाली नौजवान देश की स्वाधीनता के लिये सब से अधिक उत्साह दिखला रहे थे । बंगाल का क्रान्तिकारी जागरण गोरी सरकार की एक समस्या बना हुआ था । बंगाल की शक्ति तथा संगठन कमजोर करने के लिये तत्कालीन वायसराय लार्ड कर्जन ने बंगाल को खण्डों में बाँट देने का कुचक्र चलाया । लार्ड कर्जन के इस अदूरदर्शी कुचक्र ने न केवल बंगाल में ही बल्कि सारे भारत में विरोध की भयानक आग फैला दी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लाला लाजपत राय ने बंग-भंग के विरोधी आन्दोलन में पंजाब को शामिल कर बंगालियों की माँग का बल बढ़ा दिया। उन्होंने सत्याग्रह का आधार बंगाल की अखण्डता, स्वराज, स्वदेशी और बहिष्कार बनाया। उन्होंने न केवल पंजाब ही बल्कि भारत के बहुत से भागों में घूम-घूम कर आन्दोलन का प्रचार किया। लोगों में स्वदेशी वस्त्रों के प्रयोग और विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार की भावना बढ़ाई। बंगाल की अखण्डता और स्वराज की माँग को ऊँचा कराया। आन्दोलन को सफल बनाने के लिये उन्होंने अथक परिश्रम किया और अपार कष्ट उठाये।

विदेशी सरकार ने अपने हित में लाला लाजपत राय को एक भारी खतरा समझा और उन्हें उससे विरत करने के लिये बड़ा भय तथा लोभ दिखलाया और चाहा कि पंजाब का वह सिंह पुरुष किसी तरह कब्जे में आ जाये। पद और प्रतिष्ठा का लोभ जब काम न आया तो सरकार ने उन्हें विविध प्रकार के त्रास दिये और वकालत की डिग्री छीन लेने का भय दिखलाया किन्तु सिद्धान्त के धनी लालाजी जब इससे भी विचलित न हुए तो उसने उन्हें निर्वासन का दण्ड सुना दिया। निदान वे बिना मुकदमा चलाये भारत से माण्डले भेज दिये गये। वहाँ वे एक कष्टदायक एकान्त कोठारी में रखे गये। उनके घूमने-फिरने, पढ़ने-लिखने किसी से मिलने यहाँ तक कि समाचार पत्र पाने तक पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। किसी भी सामाजिक, स्वतन्त्र विचार और अध्ययनशील रुचि वाले व्यक्ति के लिये यह प्राण दण्ड से भी अधिक कष्टदायक था। लाला लाजपत राय को भारत से ही नहीं, एक प्रकार से सारे संसार से ही पृथक् कर दिया गया। सरकार ने उनके इस कष्ट का लाभ उठाकर एक बार फिर उन्हें उनके विचारों, सिद्धान्तों तथा उद्देश्य से विरत करने का प्रयत्न किया। सरकार की कार्य-वाहियों का विरोध न करने के मूल्य पर मुक्त कर देने का लोभ दिखलाया। किन्तु जब उसने उन्हें अपने व्रत में चट्टान की तरह दृढ़ देखा तो परास्त होकर चुप हो गई और उनकी यातनाओं की मात्रा बढ़ा दी। छः-सात माह तक इस प्रकार पाशविक अत्याचार करने के बाद सरकार को जनमत के दबाव और संसार में लोक निन्दा के भय से उन्हें मुक्त करना पड़ा। लाला लाजपत राय माण्डले से पंजाब आये और फिर अपने पावन कर्त्तव्यों में लग गये।

दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गाँधी ने जब प्रवासी भारतीयों के कल्याणार्थ सत्याग्रह छेड़ा तो लाला लाजपत राय ने भारत में उसका बड़ा प्रचार किया। उन्होंने प्रवासी भारतीयों की सेवा के लिये एक स्वयंसेवक दल संगठित किया और हजारों रुपयों की धनराशि एकत्र कर दक्षिण अफ्रीका भेजी।

यह सब काम करते हुए भी उनका मन राजनीति की ओर विरत होता जा रहा था। उसका कारण था कांग्रेस में फूट पड़ जाना, इस दोष के कारण कांग्रेस निकम्मी होती जा रही थी। अब उसका ध्येय जन-सेवा न रह गया था। उसके सारे नेता अपनी विरोधी विचार धारा वालों की आलोचना करने और उन्हें अपदस्थ करने में अपना समय बर्बाद करने में लगे थे। लाला लाजपत राय का जीवन ध्येय जन-सेवा करना था। कोरी नेतागीरी से उन्हें घृणा थी। निदान उन्होंने उस समय कांग्रेस से हटकर अपना समय जन-हित के कार्यों में लगाना ही अच्छा समझा। उन्होंने वैसा किया भी।

कांग्रेस से हटकर लाला लाजपत राय पुनः लाहौर के डी. ए. वी. कॉलेज की सेवा में लग गये। उन्होंने उसके लिये फिर धन संग्रह करना और लोगों में शिक्षा प्रसार का प्रचार करना आरम्भ कर दिया। इस बार भी उन्होंने कॉलेज को हजारों रुपये और सैकड़ों उत्साही छात्रों का लाभ पहुँचाया। कॉलेज में अनेक शाखायें तथा कक्षायें खुलवाईं और राष्ट्रीय तथा उपयोगी शिक्षाओं का समावेश कराया। इन सेवाओं के साथ-साथ वे कॉलेज में समय-समय पर अध्यापन कार्य भी किया करते थे।

उन्हीं दिनों उन्होंने पुनः अछूतों की सेवा का कार्य अपने हाथों में लिया। इस बार उन्होंने हरिजन बच्चों की शिक्षा पर विशेष बल दिया। वे जानते थे कि बिना शिक्षा का प्रचार हुए इस वर्ग का उद्धार होना कठिन है। निदान जालंधर में उन्होंने एक अछूत पाठशाला खोली। उसका सारा खर्च स्वयं अपने पास से दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने ग्राम जरगाँव में एक स्कूल की स्थापना की और जल्दी ही प्रयत्न करके उसे हाईस्कूल करा दिया। इस स्कूल की स्थापना और विकास के लिये उन्होंने अथक परिश्रम किया और पास से धन भी लगाया।

अपनी सेवाओं के श्रेय स्वरूप लाला लाजपत राय जनता द्वारा भारी बहुमत के साथ लाहौर म्यूनिसिपल बोर्ड के अध्यक्ष बनाये गये। उस पद का उन्होंने जनता के हित में बड़ा उपयोग किया। उन्होंने उन्हीं दिनों लाहौर की सड़कों का सुधार कराया। कच्ची गलियाँ, जिनमें कि दिन-रात गन्दगी सड़ा करती थी, पक्की कराईं और उनमें बिजली की रोशनी का प्रबन्ध कराया। नगर के हरिजन दस्तकारों के लिये चमड़े के लघु उद्योग प्रारम्भ कराये जिनमें सैकड़ों शिल्पियों की जीविका का प्रबन्ध हो गया। नगर में आर्थिक विकास के लिये उन्होंने पंजाब नेशनल बैंक का विकास कराया और एक सहकारी जीवन बीमा कम्पनी की स्थापना कराई। इसके अतिरिक्त उदार मना लालाजी ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं को सच्ची और ऊँची राष्ट्रीय शिक्षा दिलाने के लिये एक विशाल प्रशिक्षण संस्था स्थापित की। इस स्थापना में व्यय होने वाला सारा धन उन्होंने अपने पास से ही लगाया। पैसे की कमी पड़ जाने पर उन्होंने अपना 'पंजाबी-पत्र' और प्रेस बेच डाला।

अपने उन दिनों के जन-कार्यों में लालाजी ने जो सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य किया वह था वेश्याओं का सुधार। समाज पर वेश्यावृत्ति का कलंक देखकर लालाजी का हृदय वेदना से तड़प उठता था। उनसे समाज की इन अभागी नारियों की नारकीय दशा देखी न जाती थी। वेश्याओं का अस्तित्व वे समाज की नैतिकता के लिये हलाहल के समान मानते थे और चाहते थे कि समाज का यह विष दूर हो जाये। निदान उन्होंने सबसे पहले उनको अनारकली के बाजार से हटाकर हीरा मण्डी मुहल्ले में बसाया। वेश्यावृत्ति के विरुद्ध प्रचार करने के लिये बहुत से स्वयंसेवक तैयार किये। अनाथ स्त्रियाँ जो प्रायः रोटी के लिये इस भयानक जीवन को अपना लेती थीं—उनके लिये लालाजी ने अनाथालयों में स्थान कराया और बहुत से ऐसे छोटे-मोटे शिल्पों का प्रचार कराया जिनके आधार पर वे सम्मानपूर्वक अपनी आजीविका कमा सकें। उन्होंने वेश्याओं में भी शिल्प तथा शिक्षा का प्रचार करने का प्रयत्न किया। लालाजी के इन प्रयत्नों से वेश्याओं में सुधार के लक्षण दृष्टिगोचर हो चले थे।

लाला लाजपत राय ने स्पष्ट अनुभव किया कि अंग्रेज कूटनीतिज्ञों से प्रेरणा पाकर मुसलमान और ईसाई वर्ग धार्मिक विद्वेष से हतबुद्धि होकर राष्ट्रीय स्वाधीनता और हिन्दू जाति के हितों को गहरी क्षति पहुँचाते जा रहे हैं और इधर हिन्दी जाति-पाँति और ऊँच-नीच के भेद-भाव में फँसी दिन-दिन बिखरती और कमजोर होती जा रही है। अस्तु उन्होंने, राजनीति से पृथक हिन्दुओं के एक सामाजिक संगठन की बहुत बड़ी आवश्यकता समझी। जिसकी पूर्ति उन्होंने हिन्दू महासभा की स्थापना को प्रोत्साहन देकर की। इस स्थापना के विषय में स्पष्टीकरण देते हुए उन्होंने घोषणा की—

"अपने देश के अन्य धर्मावलम्बियों के प्रति मेरे मन में किसी प्रकार का भेद-भाव नहीं है। मै सभी की उन्नति और कल्याण में राष्ट्र का हित देखता हूँ। अपने सम्प्रदायों की दशा में सुधार करने और अपने धर्म बन्धुओं के लिये पद प्राप्त करने के जो भी प्रयत्न वे करते हैं उनसे मेरा कोई विरोध नहीं है। भारत की वर्तमान राजनैतिक अवस्था में उन्हें अपने सम्प्रदाय के हितों की रक्षा करने का पूरा अधिकार है किन्तु इसके साथ शर्त यह है कि वे इसके लिये अभारतीयों के साथ कोई नापाक साँठ-गाँठ न करें और न हिन्दुओं के हितों को हानि पहुँचायें। अहिन्दुओं के मुकाबले में हिन्दुओं को और गैर-हिन्दुस्तानियों के मुकाबले में हिन्दुस्तानियों के लिये मेरा वही कहना है जो दुर्योधन के विरुद्ध मिलकर युद्ध करने का प्रस्ताव लेकर आने वाले शत्रुओं से युधिष्ठिर ने कहा था—"पाण्डव और कौरव आपस में तो एक दूसरे के विरुद्ध पाँच और सौ हैं—किन्तु किसी तीसरे शत्रु के विरुद्ध हम सब एक सौ पाँच हैं।"

यों तो लालाजी एक प्रकार से राजनीति से संन्यास लेने जा रहे थे। तथापि उनके हृदय में भारतीय स्वाधीनता की आग यथावत जलती रहती थी। इसी शिखा ने उन्हें १९२१ के सविनय अवज्ञा आन्दोलन के समय पुनः राजनीतिक कार्यों से सम्बन्धित कर दिया। देश के इस महान आन्दोलन में लालाजी ने जमकर भाग लिया और पंजाब का सफल नेतृत्व किया। पुलिस के अत्याचार और जेल की सजा भुगती।

२ फरवरी, १९२८ को जब साइमन कमीशन पहली बार भारत आया तो लाला लाजपत राय कतिपय कारणों से उसके बहिष्कार में कुछ अधिक सक्रिय भाग न ले सके। उनका ख्याल था कि कमीशन अपने वायदों के अनुसार भारत का कुछ हित साधन करेगा किन्तु जब वह बिना कुछ किये देश की राजनीतिक जासूसी करके इंग्लैण्ड चला गया और वहाँ से नया प्रपंच लेकर ११ अक्तूबर, १९२८ को पुनः भारत आया तो लालाजी ने उसके बहिष्कार का जोरदार नेतृत्व किया। ३० अक्टूबर को साइमन कमीशन लाहौर स्टेशन पहुँचा। लालाजी ने जनता के साथ वहीं जाकर उसका बहिष्कार किया लालाजी ने वहीं जुलूस को सभा में बदल दिया और अपने ओजस्वी भाषण से जनता के हृदय में जोश भर दिया। लालाजी बराबर बोलते गये और जनता सुनती तथा—'साइमन लौट जाओ' का नारा लगाती जाती थी। अन्त में जनता का उत्साह और लालाजी की दृढ़ता देखकर कप्तान सैण्डर्स से न रहा गया। उसने लालाजी पर लाठी चलाने की आज्ञा दे दी। पुलिस ने लालाजी पर लाठियाँ बरसानी शुरू कर दीं। जनता में भयानक विक्षोभ की लहर दौड़ गई किन्तु लालाजी ने उसे शान्त रहने का निर्देश करते हुए कहा—"आप सब लोग शान्तिपूर्वक मेरे ऊपर होते इस अत्याचार को देखें और विश्वास रखें कि—मेरे ऊपर होने वाली लाठी की एक-एक चोट ब्रिटिश साम्राज्य के कफन की एक-एक कील सिद्ध होगी।" जनता शान्त सुनती रही, लालाजी बोलते रहे और पुलिस की लाठी चलती रही। लालाजी तब तक बराबर बोलते और लाठियाँ खाते रहे जब तक कि उन्होंने अपना भाषण पूरा नहीं कर लिया। लोगों को यह देखकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आश्चर्य होता था कि उन भयंकर प्रहारों से गिरना तो दूर लाला लाजपत राय अपने स्थान तक से भी विचलित न हुए—धन्य थे पंजाब केसरी लाला लाजपत राय ! लालाजी का भाषण पूरा हो गया और पुलिस की लाठियों का काम भी ।

शाम को उसी घायल अवस्था में पंजाब केसरी ने लाहौरी गेट पर जनसभा की और जनता को भारत की स्थिति से अवगत कराते हुए उसका कर्त्तव्य बतलाया । देश की स्वाधीनता के लिये अपनी तरह ही शान्ति तथा धैर्यपूर्वक अत्याचार सहन करने का निर्देश दिया । अनन्तर उनसे खड़ा न रहा गया और वे अपने निवास पर लौट आये । पुलिस की निर्दय लाठियाँ अपना काम कर गई थीं । लालाजी के कलेजे में सांघातिक चोटें आ गई थीं । वे चारपाई पर पड़ गये तो फिर उठ न सके और १० नवम्बर, १९२८ को देश-धर्म और समाज के लिये अपना तन, मन, धन और यहाँ तक जीवन देकर स्वर्ग सिधार गये । लालाजी की मृत्यु से देश भर में शोक-सा छा गया और कई दिन मातम मनाया गया ।

लाला लाजपत राय एक आदर्श पुरुष थे । उन्होंने अपने आदर्शों की व्याख्या करते हुए स्वयंमेव स्थान पर कहा है—"मेरा मजहब हकपरस्ती है । मेरी मिन्नत कौम परस्ती है । मेरी इबादत खलक परस्ती है । मेरी अदालत मेरा अन्तःकरण है । मेरी जायदाद मेरी कलम है और मेरा मन्दिर मेरा दिल है और मेरी उमंगें सदा जवान हैं ।"

लाला लाजपत राय ने अपनी सक्रिय सेवाओं के साथ-साथ साहित्य की भी कुछ कम सेवा नहीं की । उन्होंने मेजिनी, गैरीबाल्डी, शिवाजी, कृष्ण, दयानन्द तथा गुरुदत्त आदि महापुरुषों की बहुत सी शिक्षाप्रद जीवनियाँ लिखीं । 'आर्य-समाज और भारत का राजनीतिक भविष्य' नामक उनकी पुस्तकें बड़ी उपयोगी सिद्ध हुईं । उनके यंग इण्डिया (तरुण भारत) नामक ग्रन्थ ने भारतीय स्वाधीनता संग्राम को एक विशेष गति दी थी और उनके दुःखी भारत नामक ग्रन्थ का तो जनता में अभूतपूर्व स्वागत हुआ । यह ग्रन्थ उन्होंने 'मिस मेयो' नामक एक अंग्रेज महिला की लिखी—भारतमाता नामक पुस्तक के उत्तर में लिखा था । यह भारत तथा उसकी तत्कालीन स्थिति पर एक प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है । इसके अतिरिक्त उनके लिखे सामाजिक तथा राजनीतिक लेखों की संख्या अपरिमित है । इस प्रकार कदाचित ही कोई ऐसा क्षेत्र बचा हो जिसमें लाला लाजपत राय ने उपयोगी सेवा न की हो । उनका जीवन एक सफल एवं सार्थक व्यक्ति का जीवन था । उनके विषय में उनके एक जानकार श्री एलाबिलक्काक्स ने ठीक ही तो लिखा है—

"यौवन ने उन्हें बहादुर, समय ने राजनीतिज्ञ, प्रेम ने मनुष्य घोषित किया । मृत्यु ने उन्हें शहादत का ताज पहनाया इस प्रकार वे मंजिल तय करते हुए महानता की ओर बढ़ते गये । मानव-जीवन में सम्भव सब प्रकार की विभूति और यश का उन्होंने अनुभव किया । वे एक पवित्र और ऊँची आत्मा थे ।"

जिस युग में लाला लाजपत राय ने सार्वजनिक सेवा और देशोद्धार का कार्य किया था वह इतना विषम और कठिनाइयों से परिपूर्ण था कि आज हम उसकी कल्पना भी सहज में नहीं कर सकते । उस समय भारत में विदेशी शासन का सिक्का सोलहों आने जमा हुआ था । साम, दाम, दण्ड और भेद की नीति का अवलम्बन करके उन्होंने देश के सभी प्रभावशाली और शक्तिमान् लोगों को अपना अनुगत बना रखा था । किसी के दिल में यह ख्याल भी नहीं आता था कि भारतवासी ऐसी विश्वव्यापी शक्ति का विरोध करके अपने देश को स्वाधीन कर सकते हैं । जब सन् १९०६ में श्री दादाभाई नौरोजी ने 'स्वराज्य' को राष्ट्रीय आन्दोलन का अन्तिम लक्ष्य घोषित किया तो देश के अधिकांश जानकार व्यक्ति चौंक पड़े थे और उन्होंने इसको एक 'काल्पनिक विचार' ही समझा था । पर लाला लाजपत राय आरम्भ से ही सिद्धान्त के पूर्ण समर्थक थे और उन्होंने तत्काल ही इस सम्बन्ध में इतना जोरदार आन्दोलन छेड़ दिया कि सन् १९०७ के आरम्भ में ही सरकार को उन पर कानून का प्रहार करना पड़ा और गिरफ्तार करके देश के बाहर भेज देना पड़ा ।

देश की स्वाधीनता संग्राम में यद्यपि हजारों स्थानीय, प्रान्तीय और अखिल भारतीय नेताओं ने भाग लिया था और एक समय था कि उनमें से अनेकों का डंका बज रहा था, पर अब समय निकल जाने पर उनमें से दो-चार का नाम ही स्मरण आता है । इसका कारण यही था कि उनका काम केवल सामयिक था । जन-आन्दोलन के वेगवान प्रवाह में वे भी मैदान में आ गये और लोगों के जोश को बढ़ाने वाले भाषण करके उन्होंने लोकप्रियता प्राप्त करली । निःसन्देह उनका यह कार्य उस समय महत्त्वपूर्ण था और इसके लिये उन्होंने उस समय स्वार्थ त्याग और कष्ट भी सहन किया, पर उनके कार्य में विशेष स्थायित्व नहीं था । जन-आन्दोलन की ऐसी जोरदार लहरें ज्वार की तरह भीषण वेग से उठती हैं और कुछ समय पश्चात् जोश के कम पड़ जाने से भाटा की तरह नीचे उतर जाती हैं । आन्दोलन के सामयिक नेताओं की ख्याति का उतार-चढ़ाव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी इसी के अनुसार होता है । आज जिस नेता को लोग कन्धों पर उठाकर जुलूस निकालते हैं, एकाध वर्ष बाद प्राय: उसका नाम भी भूल जाते हैं । कारण यही कि किसी विशेष आन्दोलन की तरह ऐसे नेताओं का जोश और सेवा भावना भी अल्पजीवी ही होती है, और कुछ समय पश्चात् वे अपने पुराने ढर्रे पर ही चलने लग जाते हैं ।

देश की स्वाधीनता के लिये उनकी हार्दिक लगन तथा उसकी पूर्ति के लिये सदैव प्रचारात्मक तथा रचनात्मक कार्यों में लगे रहना ही लालाजी का सबसे बड़ा गुण था जिनके कारण इतने वर्ष बीत जाने पर भी उनका नाम बड़ी श्रद्धा के साथ लिया जाता है और उनके स्मारक खड़े किये जा रहे हैं । देश में और अनेक नेताओं ने उनसे बढ़कर प्रचार-कार्य किया था और कई देशभक्तों ने रचनात्मक क्षेत्र में भी बहुत ठोस कार्य करके दिखलाया है । पर लाला लाजपत राय की तरह रचनात्मक और प्रचारात्मक दोनों क्षेत्रों में समान रूप से क्रियाशील रहने और अपने सिद्धान्तों पर आजीवन चलने वाले नेता कठिनता से दो-चार ही मिलेंगे । लालाजी के कुछ अनमोल वचन इस प्रकार हैं—

(१) देश सेवा से बढ़कर हमारा कोई धर्म नहीं है ।

(२) जिस व्यक्ति में जातीय-गौरव और आत्म-सम्मान का विचार नहीं वह नर पशु है ।

(३) मानसिक दासता से अधिक हानिकारक और किसी भी तरह की दासता नहीं होती और न मनुष्य जाति के सदैव के बंधन में जकड़ने से बढ़कर और कोई घोर पाप हो सकता है ।

(४) संसार में मातृ-शक्ति पवित्र और सबसे महान है । यह सृष्टि को रचती है और उसकी रक्षा करती है । माताओं में से सबसे बड़ी और सबसे अधिक पूजा के योग्य मातृभूमि है जो माताओं की माता है । इसलिये हमारा धर्म है कि हम इस मातृभूमि की सेवा से अपने जन्म को सफल करें ।

(५) हिन्दुस्तान की जातियों के वर्तमान संघर्ष में मैं पहले हिन्दू और पीछे हिन्दुस्तानी रहूँगा । किन्तु हिन्दुस्तान के बाहर और हिन्दुस्तान के भीतर भी किसी गैर-हिन्दुस्तानी के सामने मैं पहले हिन्दुस्तानी हूँ और रहूँगा, पीछे हिन्दू ।

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

भारत माता के निर्भय सेनानी : सरदार पटेल

सन् १९४८ का वर्ष भारत की राजनैतिक परिस्थिति की दृष्टि से बड़ा हलचल पूर्ण था । अगस्त, १९४७ में जैसे ही देश को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई चारों तरफ अशान्ति का वातावरण दिखाई पड़ने लगा । सबसे पहले तो पचास-साठ लाख शरणार्थियों को सुरक्षापूर्वक लाने और बसाने की समस्या सामने आई । उसी के साथ-साथ अनेक स्थानों पर साम्प्रदायिक उपद्रव और मारकाट को भी नियंत्रण में लाना पड़ा । एक बहुत बड़ी समस्या देशी राज्यों की भी थी जिनको अंग्रेजी सरकार ने 'स्वतन्त्र' बनाकर राष्ट्रीय सरकार के साथ इच्छानुसार व्यवहार करने की छूट दे दी थी । इस प्रकार भारत के ऊपर उस समय चारों तरफ से काली घटायें घिरी हुई थीं और इन सबको सम्भालने का भार भारत सरकार के गृह मन्त्रालय पर था, जिसके संचालक थे—सरदार पटेल ।

देशी राज्यों की समस्या वास्तव में बड़ी विकट थी । अधिकांश राजागण अपने को प्राचीनकाल के बड़े-बड़े प्रसिद्ध राजा-महाराजाओं तथा 'चक्रवर्ती नरेशों' के वंशज समझ कर देश का वास्तविक स्वामी स्वयं को ही मानते थे । ऐसे राजाओं का भी अभाव न था जो मन ही मन अंग्रेजों के हट जाने पर 'तलवार के बल' से देश पर अपनी हकूमत कायम करने का स्वप्न देखते रहते थे । भारत के देशी और विदेशी 'शत्रु' भी समझते थे कि यह समस्या भारत की आन्तरिक अवस्था को इतना अधिक डाँवाडोल कर देगी कि वह सचमुच लुंज-पुंज हो जायेगा और तब हमको उस पर दाँत गढ़ाने का अच्छा मौका मिलेगा और तो क्या सामान्य लोगों की आमतौर से यह धारणा थी कि इस समय परिस्थितिवश अंग्रेज भारत को स्वराज्य देकर चले तो जा रहे हैं, पर वे जानते हैं कि पाकिस्तान और देशी राज्यों के कारण कांग्रेसी सरकार शासन को चला सकने में समर्थ न होगी और झकमार कर अन्त में उन्हीं को बुलाकर सुरक्षा करानी पड़ेगी ।

पर लोगों के ये सब मंसूबें, अटकलें और भ्रम उस समय हवा में उड़ गये जब सरदार पटेल ने चार पाँच महीने के भीतर ही अधिकांश राजाओं को अपनी रियासतें भारतीय राष्ट्र में सम्मिलित करने को राजी कर लिया । उन्होंने शुरूआत अपने प्रान्त से ही की और वहाँ की कई सौ छोटी-छोटी रियासतों को एक संघ में संगठित करके नवानगर के जाम साहब को उसका राज प्रमुख बना दिया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसके पश्चात् क्रमशः मध्यभारत, पंजाब और राजस्थान की रियासतों के संघ बनाकर उनको भारतीय संघ में सम्मिलित कर लिया गया । जूनागढ़, भोपाल, बड़ौदा आदि तीन चार रियासतों के शासकों ने कुछ विरोध का भाव प्रदर्शित किया पर सरदार ने साम-दाम-दण्ड-भेद की राजनीति द्वारा बिना किसी प्रकार के बल का प्रत्यक्ष प्रयोग किये उनकी समस्या को हल कर दिया ।

हैदराबाद का विजय अभियान

पर सबसे बढ़कर कठिनाई उपस्थित हुई हैदराबाद के मामले में । वह भारत की सबसे बड़ी रियासत थी और मुसलमान उसे अपना गढ़ समझते थे । भारत विभाजन के पश्चात् वहाँ कितने ही कट्टर पन्थी मुस्लिम लीगी जा पहुँचे और कोशिश करने लगे कि हैदराबाद को पाकिस्तान में शामिल किया जाये । उत्तर प्रदेश के कासिम रिजवी नामक व्यक्ति ने वहाँ जाकर 'रजाकार' नाम से एक स्वयं सेवक-दल कायम कर दिया जिसमें दो लाख हथियार बन्द व्यक्ति सम्मिलित थे । हैदराबाद की ४२ हजार सरकारी सेना इसके अतिरिक्त थी । ये सब रियासत के हिन्दुओं पर ही अत्याचार नहीं करने लगे, वरन् आसपास के प्रदेशों की भूमि पर आकर भी लूटमार करने लगे । एक दो बार उन्होंने रेलगाड़ी को रोककर लूट लिया और कई आदमियों को भी मार डाला । सरदार तुरन्त ही हैदराबाद के विरुद्ध कार्यवाही करने को तैयार हो गये पर नेहरू जी तथा अन्य कई मन्त्रियों के राजी न होने से रुके रहे । पर जब हालात बिगड़ गई और कनाडा के राजदूत ने नेहरू जी से ईसाई स्त्रियों पर रजाकारों द्वारा आक्रमण करने की शिकायत की तब कहीं जाकर उसके विरुद्ध सैनिक कार्यवाही करने का निश्चय किया गया । सरदार ने फौज को आदेश दे दिया और मेजर जनरल जे. एन. चौधरी थोड़ी-सी सेना लेकर शोलापुर के रास्ते से आगे बढ़े ।

उस अवसर पर यद्यपि कासिम रिजवी ने यहाँ तक धमकी दी थी कि अगर भारतीय सेना ने हैदराबाद में प्रवेश किया तो उसको यहाँ डेढ़ करोड़ हिन्दुओं की हड्डियों के अतिरिक्त और कुछ न मिलेगा । पर सरदार ऐसी बातों की कब परवाह करते थे । उन्होंने निजाम ने प्रतिनिधि लायक अली से स्पष्ट कह दिया कि "हैदराबाद की समस्या भी उसी तरह सुलझेगी, जिस प्रकार अन्य रियासतों की सुलझी है । इसका दूसरा कोई मार्ग सम्भव नहीं है । हम किसी ऐसे स्थान को अपने देश में पृथक नहीं रहने दे सकते, जो हमारे उसी संघ को नष्ट कर देगा, जिसे हमने रक्त और परिश्रम से बनाया है । हम समस्या का मित्रतापूर्ण हल ही चाहते हैं और उसके लिये प्रयत्न कर रहे हैं, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि हैदराबाद को पूर्ण स्वतन्त्र रह जाने देंगे । यदि वह स्वतन्त्र रहने की अपनी माँग पर अड़ा रहा तो उसे निश्चय ही असफल होना पड़ेगा ।"

यद्यपि हैदराबाद के रजाकार और अन्य धर्मान्ध मुसलमान बड़ा जोर-शोर दिखा रहे थे और समझते थे कि भारतीय सेना का हमला होने पर संसार के मुसलमान देश उनका साथ देंगे, पर भारतीय सेना को देखते ही वे सब बगल झाँकने लगे । कुछ रजाकारों ने दो तीन दिन तक जगह-जगह पर कुछ लड़ाई की, पर भारत की सुशिक्षित सेना के सामने वे भेड़-बकरियों की भीड़ से अधिक प्रभावशाली सिद्ध न हो पाये । तीन दिन के संघर्ष में लगभग एक हजार रजाकार मारे गये जबकि भारतीय सेना की मृत्यु संख्या नाम मात्र को ही थी । १७ सितम्बर, १९४८ को हैदराबाद के प्रधान सेनापति एल. एदरूस ने जनरल चौधरी के सामने बाकायदा आत्म-समर्पण कर दिया और १८ सितम्बर को जनरल चौधरी हैदराबाद के सैनिक गवर्नर नियुक्त कर दिये गये । फरवरी १९४९ में सरदार दक्षिण भारत की यात्रा करते हुए हैदराबाद पहुँचे तो निजाम ने स्वयं हवाई अड्डे पर आकर उनका स्वागत किया और भारतीय-प्रथा के अनुसार हाथ जोड़ कर उनका अभिवादन किया, जो उनके जीवन में एक सर्वथा नई और सर्वप्रथम घटना थी ।

हैदराबाद की समस्या को इस प्रकार ३ दिन में हल करके सरदार ने भारतीय सैनिक शक्ति और राजनीति की धाक समस्त देश में जमा दी । इससे वे सब 'तत्त्व' ठण्डे पड़ गये जो शासन बदलने के कारण जगह-जगह सिर उठा रहे और समझते थे कि हम इन 'अनुभवहीन शासकों' को डरा-धमका कर अपना उल्लू सीधा करते रहेंगे । हैदराबाद की इस शानदार विजय से भारतीय जनता में उत्साह की लहर दौड़ गई और शेष बची रियासतें बहुत शीघ्र भारतीय संघ के अन्तर्गत आने को तैयार हो गईं ।

छः-सात सौ रियासतों का भारतीय संघ में पूर्णतः विलय होकर अखण्ड राष्ट्र का निर्माण कुछ समय पहले तक एक असम्भव कार्य समझा जाता था । पर सरदार पटेल ने उसे ऐसी खूबी से पूरा करके दिखा दिया कि देश-विदेशों के समस्त राजनीतिज्ञ चकित रह गये । यह कहने में कुछ भी अतिशयोक्ति नहीं कि जो कार्य जर्मनी के एकीकरण में बिस्मार्क ने कर दिखाया और जापान को एक सुदृढ़ राष्ट्र बनाने में मिकाडो ने जो महान सफलता प्राप्त की, सरदार पटेल के कर्तृत्व का महत्त्व भी उससे कम नहीं है । जर्मनी और जापान तो उस समय चार-पाँच करोड़ की जनसंख्या के छोटे देश ही थे, पर सरदार ने तो उस भारत को एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर दिखाया जिसको विविधता और विस्तार की दृष्टि से अनेक लोग एक 'महाद्वीप' की संज्ञा देते हैं ।

देशभक्तों का परिवार

सरदार बल्लभ भाई पटेल (सन् १८७५ से १९५०) यद्यपि गुजरात के एक साधारण किसान परिवार में उत्पन्न हुए थे, पर उनका घराना देशभक्ति की दृष्टि से अग्रगामी कहा जा सकता है । उनके पिता झवेर भाई जब बीस वर्ष के तरुण ही थे तो भारत में विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंकने के लिये 'सत्तावनी गदर' फूट पड़ा । यद्यपि उसका प्रभाव गुजरात तक नहीं पहुँचा तो भी झवेरभाई के दिल में देशोद्धार के अभियान में भाग लेने की उमंग उठने लगी और वह बिना किसी से कहे घर से भाग निकले । उन्होंने उत्तर-प्रदेश में आकर नाना साहब और अंग्रेजों का तुमुल संघर्ष देखा और फिर स्वयं भी झाँसी की वीर रानी लक्ष्मीबाई की सेना में भर्ती होकर गोरों से खूब लड़े । गदर के ठण्डा हो जाने पर भी वे तात्या टोपे आदि विद्रोही नेताओं के साथ मिलकर स्वतन्त्रता संग्राम की ज्योति को जगाते रहे और अन्त में अपने ही देशवासी इन्दौर नरेश के द्वारा पकड़े गये । वहाँ से छुटकारा पाकर ३ साल बाद वे घर लौटे और जीवन-निर्वाह के लिये पुनः अपने गृह-व्यवसाय—कृषि कार्य में संलग्न हुए । उनका चरित्र हमको इटली के उन प्रसिद्ध देशभक्तों के तुल्य ही दिखाई पड़ता है जो साधारण समय में खेती-बारी करते रहते थे, पर देशरक्षा की पुकार सुनते ही सब कुछ छोड़ कर रणभूमि में पहुँच जाते थे ।

बल्लभ भाई भी छोटी सी आयु से काफी निडर और सहिष्णु थे । एक बार उनके बड़ा-सा फोड़ा हो गया । उस समय गाँवों के आसपास आपरेशन कर सकने वाले अस्पताल या डाक्टर तो थे नहीं, इसलिये उसे फोड़ने के लिये देशी तरीके के अनुसार लोहे की शलाका गर्म की गई । पर फोड़े का इलाज करने वाला इतने छोटे बालक पर उसका प्रयोग करने में हिचकिचाने लगा । यह देखकर बल्लभ भाई ने कहा—"वाह, तुम तो फोड़ा को फोड़ने में भी डरते हो ।" यह कहकर उन्होंने उस खूब गर्म सलाख को उठाकर स्वयं ही फोड़े में घुसा दिया । दर्शकगण छोटे बालक के साहस को देखकर आश्चर्य करने लगे ।

जिस समय वे स्कूल की छोटी कक्षा में पढ़ते थे, तो उन्होंने एक लालची मास्टर के विरुद्ध आन्दोलन खड़ा किया । बात यह थी कि मास्टर साहब ने स्कूल की नौकरी के साथ ही गाँव में पुस्तकों की दुकान भी खोल रखी थी और सब को इस बात के लिये विवश करते थे कि पढ़ाई की पुस्तकें अन्यत्र से न लेकर उन्हीं की दुकान से ली जायें । यह बात लड़कों को बुरी लगती थी, पर मास्टर के भय से वे कुछ बोल नहीं पाते थे । पर जब यह बात बल्लभ भाई के सामने आई, तो उन्होंने इसे अनुचित समझकर स्वीकार नहीं किया और सब लड़कों को उत्साहित करके स्कूल में हड़ताल करा दी । जब लड़के पाँच छः दिन तक स्कूल नहीं गये तो मास्टर को अपना दुराग्रह त्यागना पड़ा । इस पर बल्लभ भाई ने भी हड़ताल समाप्त करा दी ।

इस प्रकार सरदार पटेल आरम्भ से ही अन्याय के विरोधी रहे और साहस के साथ उसका मुकाबला भी करते रहे । उनका यह गुण जीवन के अन्त तक कायम रहा और इसी के बल से वे शक्तिशाली अंग्रेज शासकों से भी डटकर लोहा ले सके । उनकी बातचीत ही प्रायः इतनी स्पष्ट और निर्भीक होती थी कि अधिकांश मामलों में उनके विरोधी उनके सामने झुककर अन्याय से हट जाते थे ।

भाई के लिये त्याग

घर की आर्थिक अवस्था को देखकर बल्लभ भाई ने कॉलेज की पढ़ाई का विचार स्थगित कर दिया और मुख्त्यारी की परीक्षा देकर अदालत में मुकद्मों की पैरवी करने लगे । अपनी तीक्ष्ण बुद्धि और परिश्रम के फलस्वरूप उनका काम शीघ्र ही जम गया और अपने कस्बे के नामी मुख्त्यार माने जाने लगे । कुछ समय बाद जब काम लायक रुपया इकट्ठा हो गया तो उन्होंने बैरिस्टरी की परीक्षा पास करने का विचार किया और इसके लिये 'पासपोर्ट' माँगा । उनकी अर्जी का जो उत्तर आया वह उनके बड़े भाई विट्ठल भाई के हाथ पड़ गया, क्योंकि दोनों ही मुख्त्यारी करते थे । पासपोर्ट के पत्र को पढ़ कर विट्ठल भाई ने कहा कि मैं तुमसे बड़ा हूँ इसलिये पहले मुझे बैरिस्टरी कर आने दो, तुम बाद में जाना । बल्लभ भाई को अपने बड़े भाई की बात युक्तियुक्त जान पड़ी और उनके खर्च का भी भार स्वयं अपने ऊपर लिया । जब सन् १९०८ में वे वापस आ गये तब सन् १९१० में वे स्वयं विलायत गये । वहाँ उन्होंने सब प्रकार के शौक और व्यसनों से दूर रहकर इतने परिश्रम से पढ़ाई की जिससे आरम्भिक परीक्षा में ही सर्वप्रथम उत्तीर्ण हुए । इस पर ५० पौण्ड (साढ़े सात सौ रुपया) का पुरस्कार मिला और पढ़ाई की फीस माफ हो गई । आपने बैरिस्टरी की परीक्षा सफलता के साथ उत्तीर्ण की । आपके उत्तरों को पढ़कर एक परीक्षक इतना प्रभावित हुआ कि उसने इन्हें ऊँची से ऊँची सरकारी नौकरी देने की सिफारिश की । पर इनको अपने देश की लगन लगी थी । इसलिये परीक्षोत्तीर्ण होने के दूसरे ही दिन इंग्लैण्ड से रवाना होकर अपने घर आकर बैरिस्टरी करने लगे ।

वर्तमान समय में अनेक परिवारों में भाइयों के बीच जैसा वैमनस्य देखने में आता है, पर सम्पन्न परिवारों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो प्रायः धन-सम्पत्ति के बँटवारे के लिये मुकद्‌मेबाजी होती रहती है, उसे देखते हुए सरदार पटेल का भ्रातृ-प्रेम और स्वार्थ-त्याग उच्चकोटि का ही माना जायेगा । जिन लोगों में इस प्रकार की मनोवृत्ति का अभाव होता है, वे संसार में कभी कोई परमार्थ का बड़ा कार्य नहीं कर सकते । आगे चलकर भी सरदार पटेल बैरिस्टरी का ऐश्वर्यशाली जीवन त्यागकर गाँधी जी के अनुयायी बने और असहयोग आन्दोलन में काम करते हुए उन्होंने हर तरह के संकट और कष्ट सहन किये । इन सबमें उनकी यही परोपकार वृत्ति काम कर रही थी । इसमें सन्देह नहीं कि यही मानव-जीवन को सार्थक करने का मार्ग है, अन्यथा जो व्यक्ति संसार में आकर अपनी तमाम शक्ति और समय केवल अपना तथा अपने परिवार के दो-चार व्यक्तियों का पेट भरने में ही लगा देते हैं उनका जन्म लेना न लेना बराबर ही है ।

सत्याग्रह आन्दोलन में

सरदार गाँधी जी के अनुयायी सन् १९१७ में ही बन चुके थे, और जलियाँवाला काण्ड के अवसर पर उन्होंने अहमदाबाद की हड़ताल और जलूस का नेतृत्व करके राजनीतिक आन्दोलन में भाग लेना भी आरम्भ कर दिया था । इसलिये सन् १९२० में जब कांग्रेस ने कलकत्ता और नागपुर के अधिवेशनों में "असहयोग" की घोषणा की तो सरदार ने तुरन्त बैरिस्टरी को त्याग दिया । अपने पुत्र-पुत्रियों को सरकारी शिक्षा-संस्थाओं में पढ़ाना बन्द कर दिया । उसी समय उन्होंने असहयोग करने वाले बहुसंख्यक विद्यार्थियों को राष्ट्रीय शिक्षा प्रदान करने के लिये "गुजरात विद्यापीठ" की स्थापना की और इसके लिये बर्मा तक का दौरा करके दस लाख रुपया इकट्ठा कर लाये ।

इसके कुछ ही समय बाद नागपुर झण्डा सत्याग्रह का अवसर आया । मध्यप्रदेश की सरकार ने नागपुर की सिविल लाइन्स में राष्ट्रीय झण्डे का जलूस निकालने पर प्रतिबन्ध लगा दिया । इस पर वहाँ के कार्यकर्ताओं ने सत्याग्रह आरम्भ कर दिया और प्रतिदिन सत्याग्रही स्वयं सेवकों के जत्थे 'झण्डा ऊँचा रहे हमारा' गाते हुए पुलिस द्वारा गिरफ्तार किये जाने लगे । नागपुर के कार्यकर्ताओं ने उसके लिये समस्त देश से सहायता की अपील की । इस सम्बन्ध में सरदार पटेल के प्रभाव से गुजरात में बहुत कार्य किया और वे लगातार स्वयं सेवकों के जत्थे और रुपया भेजते रहे । फिर जब सरकार ने आन्दोलन के सभी नेताओं और कार्यकर्ताओं को एक साथ पकड़ लिया तब सरदार स्वयं नागपुर पहुँचकर आन्दोलन का संचालन करने लगे । उन्होंने उसका इतना जोरदार संगठन किया कि सरकार घबरा उठी और गवर्नर ने सरदार को बुलाकर स्वयं समझौते की बातें की और बिना किसी शर्त के कैदियों को छोड़कर सर्वत्र झण्डा निकाल सकने की माँग को स्वीकार कर लिया ।

यह झण्डा-सत्याग्रह ऐसे अवसर पर आरम्भ किया गया था जब गाँधी जी ने चौरीचौरा हत्याकाण्ड हो जाने के प्रायश्चित स्वरूप समस्त असहयोग आन्दोलन स्थगित कर दिया था और इस कारण देश में एक अवसाद की-सी स्थिति पैदा हो गई थी । इसलिये क्रियाशील नेता, जिनमें सरदार पटेल अग्रगण्य थे, चाहते थे कि अगर सार्वदेशिक आन्दोलन सम्भव न हो तो कोई स्थानीय आन्दोलन ही ऐसा चलाया जाये, जिससे देश में जागृति बनी रहे । इसलिये यद्यपि नेहरू जी तथा श्री चित्तरंजन दास जैसे नेता 'झण्डा सत्याग्रह' के पक्ष में न थे, फिर भी श्री पटेल ने आरम्भ से ही उसका समर्थन किया और बाद में स्वयं उसका संचालन करके उसे सफल बनाया । इससे वास्तव में समस्त देश में जोश की एक लहर फैल गई और अनुत्साह की भावना कुछ अंशों में दूर हो गई ।

बोरसद का सत्याग्रह

बोरसद का सत्याग्रह अपने ढंग का अनोखा था । वहाँ पर देवर बाबा नाम का एक जबर्दस्त डाकू बहुत लूटमार करता था, पर पुलिस सब कुछ प्रयत्न करके भी उसे न पकड़ सकी । कुछ दिन बाद दूसरा डाकू, जो मुसलमान था उसी इलाके में आ गया । अब जनता की परेशानी और भी बढ़ गई और संध्या होते ही लोग घरों के भीतर ही रहने लगे । तब सरकार ने जनता पर ही इल्जाम लगाया कि गाँवों के लोग ही डाकुओं से मिलकर लूटमार कराते हैं । बोरसद निवासियों पर २ लाख ४० हजार रु. टैक्स लगा दिया, जिससे वहाँ पर तैनात पुलिस का खर्च निकल सके । सरकार की इस धींगा-धींगी की शिकायत कुछ लोगों ने श्री पटेल के पास आकर की । वे बोरसद पहुँचे और वहाँ की परिस्थिति का निरीक्षण करके, लोगों को सलाह दी कि वे सरकार को एक पैसा भी टैक्स का न दें और दो सौ स्वयं सेवक भर्ती करके स्वयं अपने गाँवों में चौकी पहरा का इन्तजाम करें । आपने लोगों में इस बात का साहस भरा कि जब डाकू आवें तो भयभीत होकर भागने की अपेक्षा डटकर उनका मुकाबला किया जावे । दूसरी बात आपने यह की कि गाँव रक्षा के लिये तैनात पुलिस वालों की कारगुजारी के फोटो खिंचवाये । उनसे मालूम हुआ कि जब कोई डाकू दल गाँव में आता है तो पुलिस वाले उनका मुकाबला करने के बजाय या तो छिप जाते हैं या ताला लगाकर भीतर बैठे रहते हैं । इन फोटो के द्वारा उन्होंने पुलिस की कायरता का भण्डाफोड़ करके सरकार से कहा कि ऐसी हालत में उसको जनता से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जुर्माना वसूल करने का क्या अधिकार है ? अन्त में सरकार को सच्चाई के सामने झुकना ही पड़ा और गाँव से पुलिस हटा ली गई । उसके बाद देवर बाबा का भी पता नहीं लगा कि कहाँ चला गया ।

भारत की थर्मापौली बारदौली

पर जिस महान कार्य के फलस्वरूप श्री पटेल को सरदार की उपाधि दी गई और जिसने भारतीय स्वाधीनता-संग्राम के इतिहास में अपने अमिट पदचिह्न छोड़ने का गौरव प्राप्त किया, वह था बारदौली का अहिंसक संग्राम । यूनान देश के इतिहास में "थर्मापौली" के युद्ध की एक घटना तीन हजार वर्ष बीत जाने पर भी आज तक अविस्मरणीय मानी जाती है । उसमें दो-तीन सौ देश-भक्तों की टोली ने एक तंग पहाड़ी मार्ग पर मोर्चा लगाकर आक्रमणकारी विशाल सेना का मुकाबला किया था और अपने वीरता तथा आत्म-त्याग से उसे नाकों चने चबवा दिये थे । भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के उस महान पर्व में गुजरात के छोटे से बारदौली तालुका ने भी संसार में सबसे बड़े साम्राज्य की स्वामिनी कहलाने वाली ब्रिटिश सरकार को ऐसी करारी हार दी कि सब कोई 'वाह-वाह' कहने लगे और तभी भारत के राष्ट्रकवि ने गाया—"धन्य बारदौली तू भारत की थर्मापौली ।"

बारदौली सूरत जिले का एक छोटा भूभाग है, जो जलवायु की निगाह से बहुत उपजाऊ माना जाता है । वहाँ के निवासी मुख्य रूप से 'कणवी' या 'कुनवी' नामक जाति के किसान हैं । वे स्वभाव से ही परिश्रमी होते हैं और अपना पसीना बहाकर उन्होंने अपने खेतों को खूब हरा-भरा और उपजाऊ बना रखा था । यह देख सरकारी अधिकारियों को लालच लगता था और वे भूमि का लगान क्रमशः बढ़ाते जाते थे । भारतीय किसान अशिक्षित और मूक होते ही हैं इसलिये डर कर सरकारी हुक्म को बराबर मानते चले आते थे । पर जब सन् १९२० में महात्मा गाँधी ने सत्याग्रह और असहयोग का शंखनाद किया तो देश के एक कोने से दूसरे कोने तक जागृति और उत्साह की एक लहर व्याप्त हो गई । गुजरात को उसने सबसे अधिक प्रभावित किया क्योंकि गाँधी जी और उनके प्रमुख सहयोगी वहीं रहते थे । इसलिये बारदौली के निवासियों पर उनका प्रभाव अधिक पड़ने लगा और आरम्भ से ही वे चर्खा चलाना, खादी का उपयोग, शराबबन्दी आदि कार्यक्रमों में आगे बढ़कर भाग लेने लगे ।

जब सन् १९२७ में सरकार ने बारदौली तालुका पर पुनः लगान बढ़ाने की घोषणा की तो उनमें असन्तोष की भावना उत्पन्न हो गई और उन्होंने अपने चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा बम्बई की विधान सभा में इसका विरोध किया । जब सरकार ने इस पर कुछ ध्यान नहीं दिया तो वे सरदार पटेल के पास पहुँचे और अपनी विपत्ति की कथा कह सुनाई । कांग्रेस के नेता पहले से ही "करबन्दी सत्याग्रह" आरम्भ करने की योजना बना रहे थे । बारदौली उनको इस प्रयोग के लिये सबसे उपयुक्त क्षेत्र जान पड़ा और इसलिये श्री पटेल शीघ्र ही वहाँ पहुँच गये । उन्होंने देखा कि बारदौली कि जमीन उत्तम है और वहाँ के नर-नारी भी काफी परिश्रम करने वाले हैं, फिर भी उनकी आर्थिक अवस्था और रहन-सहन बहुत सामान्य दर्जे का है । कारण यही है कि वे अशिक्षित और असंगठित होने के कारण सरकारी नौकरों, शराब का व्यापार करने वाले पारसियों और कर्ज देने वाले साहूकारों द्वारा तरह-तरह से लूटे जाते हैं । बल्लभ भाई ने इस अवसर को उनके जागरण और संगठन के लिये सर्वोत्तम समझा । पर वे बड़े स्पष्टवक्ता और अनुशासन प्रिय थे । उन्होंने आरम्भ में ही बारदौली की जनता से साफ-साफ कह दिया कि "अगर तुमको बढ़ा हुआ लगान रद्द कराना है तो उसके लिये जोरदार आन्दोलन करना और उसमें सब तरह के कष्टों और हानि को सहने के लिये तैयार होना पड़ेगा । मैं राजनीति का खेल नहीं करता और न किसी ऐसे साधारण कार्य में हाथ डालता हूँ जिसमें जोखिम-खतरा न हो । जो लोग जोखिम और कष्ट उठाने के लिये तैयार हों मैं उन्हीं का साथ दे सकता हूँ ।"

बल्लभ भाई का जन्म किसान के घर में हुआ था और छोटी आयु में उन्होंने अपने पिता के साथ कुछ खेती का कार्य किया भी था, इससे वे कृषक जीवन की सब कठिनाइयों और असुविधाओं को अच्छी तरह जानते थे । उन्होंने किसानों को सरकार से संघर्ष करने के लिये उत्साहित करते हुए कहा—"किसान क्यों डरे ? वह भूमि को जोतकर धन कमाता है, वह अन्नदाता है, वह दूसरों की लात क्यों खावे ? मेरा यह संकल्प है कि मैं दीन तथा निर्धनों को उठाकर उनके पैरों पर खड़ा कर दूँ, जिससे वह ऊँचा माथा करके चलने लगे । यदि मैं इतना कार्य करके मरा तो मैं अपने जीवन को सफल मानूँगा । जो किसान वर्षा में भीग कर, कीचड़ में सनकर, शीत-घाम को सहन करते हुए मरखने बैल तक से काम लेता है, उसे डर किसका ? सरकार भले ही बड़ी साहूकार हो, पर किसान उसका किरायेदार कब से हुआ ? क्या सरकार इस जमीन को विलायत से लाई है ?"

श्री पटेल के जोशीले भाषणों और उनकी अदम्य, निर्भीक वाणी को सुनकर बारदौली के किसान सोते से जाग पड़े । उन्होंने अन्त तक संघर्ष करने और उसके मध्य जितनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी आपत्तियाँ आवें उन सबको दृढ़ता पूर्वक सहने की प्रतिज्ञा की । यह देखकर पहले तो श्री पटेल ने बम्बई के गवर्नर को लगान बढ़ाने का हुक्म रद्द करने के लिये एक तर्क युक्त और विनम्र पत्र लिखा, और जब उसे अस्वीकार कर दिया गया, तो उन्होंने सरकार के विरुद्ध करबन्दी आन्दोलन की घोषणा कर दी । उन्होंने किसानों का जैसा सुदृढ़ संगठन किया उसे देखकर बम्बई की एक सार्वजनिक सभा में किसी भाषणकर्ता ने उनको 'सरदार' के नाम से पुकारा । गाँधी जी को यह नाम पसन्द आ गया और तब से पटेल जनता के सच्चे 'सरदार' ही बन गये ।

अब सरदार सरकार के साथ लड़ने के लिये पूरी तैयारी करने लगे । पर वे तो महात्मा गाँधी के 'अहिंसाव्रतधारी' सैनिक थे । इसलिये उन्होंने किसानों को समझाया—"देखो भाई ! सरकार के पास निर्दयी आदमी हैं । उनके पास भाले, बन्दूकें, तोपें सभी कुछ हैं । वह संसार की एक बड़ी हथियारबन्द शक्ति है । तुम्हारे पास केवल तुम्हारा हृदय है । अपनी छाती पर इन प्रहारों को सहने का साहस तुममें हो तो आगे बढ़ने की बात सोचो । इस समय सबसे बड़ा प्रश्न स्वाभिमान का है । सरकार निर्दयता के साथ हम पर अत्याचार करना चाहती है और साथ ही अपमानित भी । देखो भाई ! अपमानित होकर जीने की अपेक्षा सम्मान के साथ मर जाने में अधिक शोभा है ।"

जब किसान उनके कार्यक्रम से पूर्ण सहमत हो गये और उन्होंने सब तरह का बलिदान करने की प्रतिज्ञा कर ली तो गाँव-गाँव में फिर कर लोगों को कर्त्तव्य पालन के लिये तैयार करने लगे । वे पुरुषों के साथ स्त्रियों को भी सत्याग्रह संग्राम में सम्मिलित करना आवश्यक समझते थे । इसलिये उन्होंने एक विशाल सभा में कहा—

"भाइयो ! बारदौली में आज मैं एक नवीन चमत्कार देख रहा हूँ । पिछले दिन मुझे स्मरण हैं । उन दिनों सभाओं में पुरुषों के साथ बहिनें भी होती थीं । पर अब तो पुरुष ही पुरुष गाड़ियाँ जोतकर सभाओं में आ जाते हैं । जान पड़ता है, बड़े-बूढ़ों के लिये आप ऐसा करते हैं । पर मैं कहता हूँ कि हमारी बहिनें, मातायें और स्त्रियाँ हमारे साथ न होंगी, तो हम आगे नहीं बढ़ सकेंगे । कल से हमारी वस्तुयें हमसे छीनी जाने लगेंगी । सरकारी कर्मचारी हमारी गाय, भैंस, बर्तन आदि लेने आयेंगे । यदि हमारी बहिनें इस युद्ध से परिचित न होंगी, हम अपने साथ-साथ उन्हें भी चेतावनी नहीं देंगे, तो वे उस समय क्या करेंगी ? आप स्वयं सोंचे कि जब जब्ती वाले आपके बैल खोलकर चलेंगे तो आपकी स्त्रियों के मन पर क्या बीतेगी ?"

जो लोग आजकल के धन कमाने वाले और मोटर तथा बंगलों के बिना निर्वाह न कर सकने वाले 'नेताओं' को देख रहे हैं, वे सहज में इस बात का अनुमान नहीं कर सकते हैं कि सरदार पटेल किस प्रकार के नेता थे । वे नाम के ही 'सरदार' न थे, पर उन्होंने वास्तव में बारदौली के किसानों का संगठन सैनिक ढंग पर किया था और उनमें मर मिटने की भावना फूँक दी थी । वे स्वयं दिन-रात चारों तरफ दौरा करके किसानों की सभायें करके उनके उत्साह को बढ़ाते रहते थे और अपना उदाहरण दिखाकर उनको प्रत्येक परिस्थिति में निर्भय रहने का उपदेश देते थे । वे कहते थे—

"चाहे कितनी ही आपत्तियाँ आयें, कितने ही कष्ट झेलने पड़े, अब तो ऐसी लड़ाई लड़नी चाहिये जिसमें सम्मान की रक्षा हो । सरकार चाहे जो करे, हम स्वयं उसको एक पैसा अपने हाथ से उठाकर नहीं देंगे, बस यही निश्चय कर लीजिये । अपने भीतर लड़ने का साहस बढ़ाइये और एकता को दृढ़ कीजिये । केवल बाहरी कोलाहल से कुछ न होगा । सरकार आपकी कड़ी से कड़ी परीक्षा लेगी । यदि उससे लड़ना हो तो गाँवों को जगाना होगा, सारे वातावरण को बदल देना होगा । अब उत्सव-मंगल की बेला भी नहीं है । अब तो युद्ध का मौका है । भला कहीं युद्ध में विवाह-मंगल का समय होता है ? अब तो हमें लड़ाई लड़ने वाले सिपाहियों जैसा जीवन बिताना होगा । कल से ही आप अपने घरों में ताले लगाकर दिन भर खेतों में घूमते रहें, बालक, बूढ़े, स्त्री सभी अपना काम समझ लें । धनी-दीन सब एक हो जायें और इस तरह काम करें जैसे एक ही शरीर हों । आप ऐसा काम कर दिखायें कि जब्तियाँ कराने को सरकार को एक भी आदमी न मिले । कोई सरकारी अधिकारी अपने सिर पर आपके बर्तन उठाकर ले जाये तो भले ही ले जाये । अधिकारी तो लँगड़े होते हैं । उनका काम गाँव में पटेल, मुखिया बहीवटदार, तलाटी आदि की सहायता से ही चलता है । पर अब ये कोई भी उनकी सहायता न करें । आप इन सबको बता दें कि हमारे गाँव और प्रान्त की प्रतिष्ठा के साथ ही हमारी प्रतिष्ठा है । जिसके कारण गाँव की प्रतिष्ठा नष्ट हो वह मुखिया कैसा ? आइये, हम ऐसी वायु बहा दें जिससे चारों ओर स्वराज्य की सुगन्ध छूट रही हो । प्रत्येक व्यक्ति के मुख पर सरकार के साथ लड़ने का दृढ़ निश्चय हो ।"

"मैं आपको चेतावनी देता हूँ कि अब एक क्षण भी आमोद-प्रमोद में बैठने का समय नहीं है । बारदौली की कीर्ति समस्त भूमण्डल में फैल रही है । अब तो हमें मर-मिटना है या पूर्ण सुखी होना है । अब तो रामबाण छूट ही गया है । हमारे गिर जाने में सारे देश की हानि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, हमारे डटे रहने में ही बेड़ा पार है । इसलिये आप पूर्ण सावधान रहें, कोई भूल न कर बैंठे । सरकार आपको गिराने में कोई बात उठा न रखेगी । वह आप में फूट डालने की चेष्टा करेगी, आपसी झगड़े भी पैदा करना चाहेगी और भी कई ढंग के जंजाल खड़ा करने की कोशिश करेगी, इसलिये आप अपने आपसी झगड़ों को भी इस समय भूल जाइये । बाप-दादों के समय की शत्रुता को त्याग दीजिये । जीवन भर जिससे कभी न बोले हों, उससे बोलना आरम्भ कर दीजिये । आज गुजरात की महिमा आपके ही हाथों में है । यदि आप में एका होगा तो कोई दूसरा मनुष्य आपके खेतों में हल नहीं चला सकता । जिस दिन ऐसा हुआ भी तो सारा गुजरात आपकी सहायता को दौड़ पड़ेगा और तमाम भारत आपका साथ देगा । आपस में कभी ईर्ष्या मत कीजिये । जहाँ एक को बिगड़ते हुए देखकर दूसरा हँसता है तो ऐसे देश का कभी भला नहीं हो सकता । अस्तु, युद्ध की घोषणा हो चुकी है । अब प्रत्येक गाँव को सेना की छावनी समझिये प्रत्येक गाँव के समाचार निरन्तर केन्द्र में आने चाहिये ।"

वास्तव में सरदार पटेल ने बारदौली के किसान-सत्याग्रह का संचालन ऐसी योग्यता और मुस्तैदी से किया कि सरकार की समस्त चालें और अनेक प्रकार का दमन प्रभावहीन हो गया । वहाँ जब किसी इक्का-दुक्का किसान को लगान देने के लिये दबाया जाता तो वह यही जबाव देता कि बिना पंचायत की आज्ञा के हम कुछ नहीं दे सकते । जब उनके गाय, बैलों, गृहस्थी के सामान को कुर्क करने की धमकी दी जाती तो भी वह जरा भी न घबराता, न भयभीत होता । अनेक किसानों का सामान सरकारी कर्मचारी उठा ले गये, पर उसको खरीदने वाला कोई न मिला । वह सरकारी दफ्तरों में ज्यों का त्यों पड़ा रहा । एक पटवारी ने एक गरीब किसान से कहा—

"अरे भले आदमी ! जब सारे गाँव में फूट पड़ जाएगी तब तू भी झख मारकर लगान देगा, तो अभी क्यों नहीं दे देता ?"

"ऐसी बात मुँह से न निकालिये साहब ! सारे जिले के लोग भले ही लगान दे दें, पर हम तो थूक कर नहीं चाटते ।"

पटवारी—"अरे भाई हमारी बात चाहे मत रख । जब बड़े अधिकारी आयेंगे तब उनकी बात तो मानेगा ।"

किसान—"उनका बड़प्पन हमारे किस काम का । अब तो बल्लभ भाई हमारे सरदार हैं, उनकी जैसी आज्ञा होगी वही मैं करूँगा ।"

एक तहसीलदार ने किसी किसान से लगान देने को कहा तो उसने उत्तर दिया—"पुराने हिसाब से लगान लेकर आप तमाम पुराने-नये लगान की रसीद दे दें और साथ ही यह भी लिख दें कि तीस वर्षों तक लगान नहीं बढ़ाया जायेगा तो अभी लगान चुका दिया जायेगा ।"

तहसीलदार ने इतना ही कहा—"भाई ! यह तो मेरे अधिकार की बात नहीं है ।" यह कहकर वे चले गये ।

बारदौली में नई दुनिया की रचना

उस समय बारदौली की स्थिति कहाँ तक गम्भीर हो गई थी, इसका कुछ अनुमान बम्बई के अंग्रेजी के मुख पत्र 'टाइम्स आफ इण्डिया' के निम्न लेखांश से हो सकता है—

"आर्य देश के बम्बई प्रांत में बारदौली नाम का एक मण्डल है । वहाँ महात्मा गाँधी ने बॉलशेविज्म का प्रयोग करना आरम्भ कर दिया है । प्रयोग सफल भी होता जा रहा है । वहाँ सरकार के सारे कल-पुर्जे मन्द पड़ गये हैं । गाँधी जी के शिष्य पटेल का बोलवाला है । वही वहाँ का 'लेनिन' है । स्त्रियाँ, बालकों और पुरुषों में एक नई ज्वाला धधक रही है । इस ज्वाला में राजभक्ति की अन्त्येष्टि क्रिया हो रही है । स्त्रियों में नवीन चैतन्यता भर गई है । बल्लभ भाई में वे असीम भक्ति रखती हैं । उनके गीतों में राज-विद्रोह की भयंकर आग सुलग रही है । उनको सुनते ही कान जलने लग जाते हैं । यदि ऐसा ही रहा तो वहाँ रक्त की नदियाँ बहने लगेंगी ।"

एक तरफ अंग्रेजों के पत्र इस प्रकार किसान आन्दोलन के विरुद्ध विष वमन कर रहे थे और अपनी समझ से बारदौली के किसानों को संसार की दृष्टि में विद्रोही और बागी सिद्ध करके वहाँ खून-खराबी होने का भय दिखला रहे थे, और दूसरी ओर बम्बई के पारसी नेता श्री नरीमैन, भड़ोंच जिला परिषद् के अधिवेशन में अपने भाषण में कह रहे थे—

"आज से दस-बीस वर्ष पहले जो किसान था वह किसान अब नहीं रहा । बारदौली में आज अंग्रेजों को पूछता कौन है ? आज मारपीट कर जबर्दस्ती ही किसान को वे कहीं ले जा सकते हैं । नहीं तो, वहाँ अब कौवे उड़ते हैं । लोगों की सच्ची कचहरी तो 'स्वराज्य-आश्रम' है और उनकी सच्ची सरकार है सरदार बल्लभ भाई । पर बल्लभ भाई के पास न तो तोप है और न भाले, बन्दूक । वह तो केवल प्रेम और सत्य के सहारे बारदौली में राज कर रहे हैं । अब तो सारे गुजरात को ही बारदौली बन जाना चाहिये । जब सारे भारत में यह भावना फैल जायेगी, तब स्वराज्य अपने आप हो जायेगा ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस प्रकार सरदार पटेल ने बारदौली में एक नई ही दुनिया की रचना करके दिखा दी । अंग्रेजों का राज और उनकी पुलिस, फौज सब कुछ होने पर भी वहाँ उनकी शक्ति बिल्कुल समाप्त हो गई थी । सरदार पटेल ने सब प्रकार की खबरों को प्राप्त करने के लिये गुप्तचरों और स्वयंसेवकों की ऐसी व्यवस्था की कि सरकारी कर्मचारी किसानों को दबाने के लिये जो कोई भी चाल सोचते उसकी खबर तुरन्त "स्वराज्य आश्रम" में पहुँच जाती थी और वहाँ से उसे उसी समय छापकर तमाम गाँवों में फैला दिया जाता था । आन्दोलन के सभी प्रमुख समाचार प्रतिदिन 'सत्याग्रह समाचार' में छापकर वितरित किये जाते थे ।

अब समस्त देश में बारदौली का नाम और यश छा गया । प्रत्येक समाचार पत्र के कालम वहाँ के समाचारों से भरे रहते थे । अंग्रेजों के समाचार पत्रों में वे समाचार यद्यपि निन्दा के रूप में छपते थे, पर उनके द्वारा बारदौली के आन्दोलन का नाम विदेशों में भी पहुँच गया । मालवीय जी और लाजपत राय जैसे भारत पूज्य नेता भी उसका समर्थन करने लगे । बम्बई विधान सभा के १५ भारतीय सदस्यों ने सरकार की दमन नीति के विरोध में त्याग-पत्र दे दिये । पं. हृदयनाथ कुँजरू, श्री अमृतलाल ठक्कर, जमनालालजी बजाज आदि ने बारदौली जाकर वहाँ की स्थिति को अच्छी तरह देखा उसकी जाँच की । सबने सरकार की निन्दा की और उसको चेतावनी दी कि उसे अन्याय बन्द करके किसानों की उचित माँगों को स्वीकार करना चाहिये, अन्यथा इसका परिणाम उसके लिये हितकर नहीं हो सकता ।

जब सरकार जब्ती, कुर्की, नीलामी, मार-पीट आदि सब उपाय करके थक गई और किसान टस से मस न हुए तो उसने अपनी हार स्वीकार कर ली और बम्बई के गवर्नर ने सरदार पटेल को समझौते के सम्बन्ध में बातें करने को बुलाया । सरकार की तरफ से यह वायदा किया गया कि सरकार उचित मामलों की जाँच करके बढ़े हुए लगान को माफ कर देगी । इसके बदले में सरकार चाहती थी कि सत्याग्रह आन्दोलन बन्द कर दिया जाये और लोग पहले की तरह स्वेच्छा से लगान देने लगें । सरदार ने जिन लोगों की जमीन और माल जब्त किया गया था उसको वापस करने की माँग की । साथ ही यह भी कहा कि प्रजा का साथ देने के कारण जिन पटेलों तथा तलाटियों (पटवारियों) को नौकरी से अलग कर दिया गया था उनको उसी पुरानी तारीख से नौकरी पर माना जाये । कहना न होगा कि ये सभी माँगे स्वीकार कर ली गईं । बारदौली की विजय का सम्पूर्ण देश में बड़ी धूमधाम से स्वागत किया गया और एक कवि ने 'गीता' के शब्दों में घोषित किया—

यत्र योगेश्वरो गाँधी वल्लभश्च धुर्धुरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥

सरदार पटेल का घर जेल में

पटेल साहब बड़े नामी बैरिस्टर और कानून की बारीकियों को जानने वाले थे । इसलिये उन्होंने इतने बड़े-बड़े आन्दोलन करके भी सरकार को इस बात का मौका न दिया कि वह उनके विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाई कर सके । इधर बारदौली सत्याग्रह ने उनको प्रांतीय नेता के पद से उठाकर अखिल भारतीय नेता के मंच पर खड़ा कर दिया और उधर गाँधी जी ने तैयारियाँ पूरी करके तथा सरकार को अपनी हठधर्मी पर कायम देखकर कानून-भंग सत्याग्रह का शंखनाद कर दिया । उन्होंने सरकार को चुनौती दी अगर सरकार भारतीयों की स्वराज्य की माँग के प्रति उपेक्षा का ही भाव प्रकट करती है तो वे भी उसकी सत्ता को न मानकर उसके बनाये कानूनों का उल्लंघन करेंगे । इसके लिये नमक-कानून चुना गया और गाँधी जी ने घोषणा की कि वे १२ मार्च, १९३० को अहमदाबाद से एक सत्याग्रही टोली के साथ पैदल रवाना होंगे और दाण्डी नामक स्थान में पहुँच कर सरकारी हुक्म के विरुद्ध नमक बनायेंगे । इस पर सरदार पटेल उनसे पहले ही दाण्डी-यात्रा के मार्ग में पड़ने वाले गाँवों में प्रचार करने पहुँच गये, जिससे गाँधी जी की यात्रा पूर्ण सफल हो । सरकार बारदौली के अनुभव से जान चुकी थी कि गुजरात की ग्रामीण जनता पर पटेलजी का कितना प्रभाव है और किस प्रकार वह निःसंकोच उनके पीछे चलने को तैयार हो जाती है । इसलिये जैसे ही वे दो-चार दिन प्रचार करते हुए 'रास' नामक स्थान में पहुँचे तो जिला के कलक्टर ने उनके भाषण पर प्रतिबन्ध लगा दिया । पर अब तो सत्याग्रह की घोषणा हो ही चुकी थी, इसलिये उन्होंने सरकारी हुक्म मानने से इन्कार कर दिया और गाँधी जी की यात्रा आरम्भ होने के चार दिन पूर्व ही गिरफ्तार करके जेल भेज दिये गये । चार मास पश्चात् जब ये यरवदा जेल से अपनी सजा पूरी करके बाहर निकले तो देश में घोर सत्याग्रह संग्राम छिड़ा हुआ था और हजारों सत्याग्रही सैनिक जेलखानों को भर रहे थे । सरकार एक आर्डिनेंस निकाल कर कांग्रेस के समस्त संगठन को गैर कानूनी घोषित कर चुकी थी और कांग्रेस के अध्यक्ष होने के नाते पं. जवाहरलालजी और उनके पिता मोतीलालजी गिरफ्तार किये जा चुके थे । पं. मोतीलालजी जेल जाते हुए सरदार पटेल को अपना स्थानापन्न नियुक्त कर गये थे । इसलिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

२६ जून, १६३० को जेल से बाहर आते ही वे कांग्रेस संगठन को सुदृढ़ करने और सत्याग्रह-संग्राम को तीव्र करने में संलग्न हो गये । गुजरात के बारदौली और बोरसद तालुकाओं को उन्होंने सत्याग्रह की जो शिक्षा दी थी, वह इस समय काम आई । वहाँ के किसानों ने कर-बन्दी का ऐसा घोर आन्दोलन किया कि सरकार घबरा गई । उसने भी पुलिस और फौज द्वारा अन्धाधुन्ध दमन आरम्भ कर दिया । फलस्वरूप ८० हजार किसान ब्रिटिश भारत के गाँवों को छोड़कर आसपास बड़ौदा रियासत के गाँवों में चले गये, पर उन्होंने सरकारी आदेशों को नहीं माना ।

सरदार पटेल जानते थे कि वे भी ज्यादा दिन जेल से बाहर नहीं रह सकते इसलिये उन्होंने जहाँ तक सम्भव हो सकता था । कांग्रेस के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष संगठन को मजबूत किया और अपने पश्चात् कितने ही अन्य नेताओं को नामजद कर दिया कि एक के गिरफ्तार होने के बाद दूसरा अखिल भारतीय कांग्रेस के अध्यक्ष पद का कार्य संचालन करता रहे । इसके पश्चात् १ अगस्त को लोकमान्य तिलक की सम्वतसरी के जुलूस का नेतृत्व करते हुए वे गिरफ्तार कर लिये गये और तीन महीने के लिये जेल भेज दिये गये ।

इस प्रकार वे राष्ट्रीय संग्राम के अग्रिम मोर्चे पर डटकर बार-बार सरकार के प्रहारों को झेलते रहे । यद्यपि जेल के कष्टों से उनका स्वास्थ्य खराब हो गया, पर बीमारी की दशा में भी उन्होंने बड़े-बड़े महत्त्वपूर्ण कार्यों को पूरा किया और अन्त में सन् १६३६-३७ में वह समय आ गया जब सरकार कांग्रेस की शक्ति के सामने बहुत झुक गई और भारत के अधिकांश प्रान्तों में कांग्रेस के चुने हुए प्रतिनिधि शासन-संचालन करने लगे । इस समस्त शासनों का सूत्र सरदार पटेल के ही हाथों में था और वे ही 'पार्लियामेण्टरी बोर्ड' के अध्यक्ष थे, जो विधान सभाओं के लिये कांग्रेसी उम्मीदवारों तथा मन्त्रिमण्डलों के प्रमुख मंत्रियों का निर्णय करता था । यद्यपि सन् १६३६ में द्वितीय यूरोपीय महायुद्ध आरम्भ हो जाने पर कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों ने इस्तीफे दे दिये पर इस ढाई वर्ष के बीच में ही उन्होंने राष्ट्रीय प्रगति की दृष्टि से जो विशेष कार्य किये उनसे कांग्रेस की सामर्थ्य का सिक्का देश और विदेशों में अच्छी तरह जम गया ।

सन् १६४२ का विद्रोह

कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों के भंग किये जाने के बाद देश में फिर सरकार विरोधी आन्दोलन जोर पकड़ने लगा । अब कांग्रेस की शक्ति काफी बढ़ गई थी और अनेक लोगों की दृष्टि में वह भारत की अप्रत्यक्ष शासनकर्ता बन चुकी थी । भारतीय सरकारी कर्मचारी का भी मनोभाव बदलता जा रहा था वे जानते थे कि देश की जनता कांग्रेस के साथ है और वह किसी भी दिन शासन की बागडोर ग्रहण कर सकती है । इसलिये अब कांग्रेसी नेताओं के परामर्श और भावी कार्यक्रम इसी दृष्टिकोण को लेकर होते थे कि भारत का शासन भारतीय जनता के प्रतिनिधियों की दृष्टि से किस प्रकार चलाया जाये ? उन्होंने माँग की भारत सरकार को अपने युद्ध सम्बन्धी निर्णयों में भारतीय जनता के प्रतिनिधियों की सम्मति लेनी चाहिये अन्यथा हम युद्ध का विरोध करेंगे । जब ब्रिटिश सरकार ने इस बात पर कोई ध्यान न दिया तो कांग्रेस की कार्य-समिति ने "युद्ध विरोधी सत्याग्रह" आरम्भ कर दिया । इसमें गाँधी जी द्वारा चुने हुए व्यक्तियों को एक-एक करके युद्ध विरोधी भाषण करके जेल जाना था । सबसे पहला सत्याग्रही होने का गौरव बिनोवा भावे को दिया गया, क्योंकि गाँधी जी की दृष्टि में वे आदर्श अहिंसावादी और सत्याग्रह के मर्म को समझने वाले व्यक्ति थे । इस सम्बन्ध में गुजरात और सौराष्ट्र को विशेष रूप से तैयार करने के लिये सरदार पटेल विभिन्न स्थानों का दौरा करने लगे और जनता को अपने जन्मसिद्ध अधिकार 'स्वराज्य' के लिये पूर्ण रूप से तैयार हो जाने को समझाने लगे । उन्होंने कहा—

"राष्ट्रीय भावना को संसार की कोई शक्ति नष्ट नहीं कर सकती । ब्रिटिश सरकार पूछती है कि "यदि वे इस देश को छोड़ कर चले जायें तो हमारा क्या बनेगा ? निश्चय ही यह एक विचित्र प्रश्न है । यह ऐसा प्रश्न है जैसे चौकीदार अपने स्वामी से कहे कि 'यदि मैं चला जाऊँ तो आपका क्या होगा ?" इसका उत्तर यही होगा कि "तुम अपना रास्ता नापो । या तो हम दूसरा चौकीदार रख लेंगे या हम अपनी रखवाली आप करना सीख जायेंगे ।" पर हमारा यह चौकीदार जाता नहीं वरन् मालिक को धमकाता है ।"

सरदार पटेल ने १७ नवम्बर, १६४० को व्यक्तिगत सत्याग्रह करने की घोषणा की पर पुलिस ने दिन निकलने से पहले ही उनको गिरफ्तार कर लिया । पर जेल में वे बीमार हो गये और उनका आँतों का रोग ऐसे भयंकर रूप में उमड़ आया कि जीवन की आशंका होने लगी । सरकारी डाक्टरों ने इसका इलाज ऑपरेशन करना बताया । पर यह ऑपरेशन भी इतना भयंकर होने को था कि उसमें जान जोखिम का प्रश्न था । सरकारी अधिकारियों ने इस जिम्मेदारी से बचने के लिये सरदार को नौ-दस महीने बाद ही जेल से छोड़ दिया । बाहर आने पर जब उनके निजी डाक्टरों ने जाँच की तो उन्होंने ऑपरेशन के बजाय दवाओं का प्रयोग करने की सम्मति दी । कई महीने तक ऐलोपैथिक और हौम्योपैथिक चिकित्सक दवायें देते रहे पर किसी से विशेष लाभ न हुआ । तब गाँधी जी ने उनको सेवाग्राम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(वर्धा) बुलाकर प्राकृतिक चिकित्सा की सलाह दी । प्राकृतिक चिकित्सा से हालात में काफी सुधार हुआ, पर उस समय निरन्तर बदलने वाली राजनीतिक परिस्थितियों के कारण उनका एक स्थान पर जम कर कई महीने तक रह सकना असम्भव था । इसलिये दो महीने तक वर्धा में रहकर वे पुनः अपने कार्य क्षेत्र में आ गये ।

"अंग्रेजो भारत छोड़ो"

जब कांग्रेस के मुख्य नेताओं की दृष्टि में वह समय आ गया था, जब उनको अन्तिम रूप से स्वतन्त्र होने का निश्चय करके अंग्रेजों से खुले तौर पर कह देना चाहिये कि "आप यहाँ से चले जायें ।" जवान से तो इन शब्दों को कहना कोई कठिन काम न था और सभी उग्र राजनीतिज्ञ बरसों से यही कह रहे थे । पर इस बार केवल मुँह से कह देने की बात न थी, वरन् निश्चय किया गया था कि जो कुछ कहा जाये उसे कार्य रूप में भी परिणित किया जाये । इस सम्बन्ध में कांग्रेस कार्यसमिति की जो बैठक जुलाई १९४२ में हुई उसमें देश को एक नया आदेश देने का प्रस्ताव पास किया गया, जिसका सारांश था 'अंग्रेज चले जाओ !' यद्यपि इस उद्देश्य को किस विधि से पूरा किया जाये इस सम्बन्ध में सब नेताओं के मनोभाव एक से न थे, तो भी वर्धा में यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास किया गया और यह निश्चय किया गया कि ९ अगस्त को बम्बई में 'अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी' की बैठक करके इसकी पुष्टि कराई जाये और देश भर में एक विशाल आन्दोलन खड़ा कर दिया जाये, जिसे सरकार सँभाल न सके । नेताओं में से कुछ के मन में अभी तक अहिंसात्मक सिद्धान्त की भावना काम कर रही थी, पर सरदार पटेल अब देशव्यापी क्रान्ति के लिये तैयार हो गये । उस समय देश का वातावरण ऐसा गर्म हो गया था कि किसी को यह भरोसा न था कि किस समय देश में अशान्ति का दौरदौरा हो जायेगा, अथवा किस समय सरकार का दमनचक्र चल पड़ेगा और सब राजनीतिक कार्यकर्ताओं को युद्ध सम्बन्धी आर्डिनेंस के अन्तर्गत एक ही दिन गिरफ्तार करके जेल के सींखचों में बन्द कर दिया जायेगा । सरदार पटेल अपनी मानसिक स्थिति के कारण इस बात को बहुत अच्छी तरह समझते थे, इसलिये उन्होंने एक दिन का समय भी न खोकर वर्धा से लौटते ही अहमदाबाद की एक लाख व्यक्तियों की विराट सभा में अपना सन्देश कह सुनाया—

"ऐसा समय फिर नहीं आयेगा । आप मन में भय न रखें । किसी को यह कहने का मौका न मिले कि गाँधी जी अकेले थे । जब वे ७४ वर्ष की आयु में हिन्दुस्तान की लड़ाई लड़ने के लिये, उसका भार उठाने के लिये निकल पड़े हैं, तब हमें भी समय का विचार कर लेना चाहिये । आपसे माँग की जाये या न की जाये, समय आये या न आये, किन्तु अब आपके लिये कुछ पूछने की बात नहीं रह जाती । सन् १९१९ में रौलट एक्ट के विरोध से लेकर अब तक जितने भी कार्यक्रम रहें हैं उन सबका समावेश इसमें हो जायेगा । 'टैक्स मत चुकाओ आन्दोलन' कानून-भंग और इसी तरह की दूसरी लड़ाइयाँ जो सीधे रूप में सरकारी शासन के बन्धन तोड़ने वाली हैं, उन्हें कांग्रेस अपना लेगी । रेलवे वाले रेलें बन्द करके, तार विभाग वाले तार विभाग बन्द करके, डाकखाने वाले डाक का काम छोड़कर, सरकारी नौकर अपनी नौकरियाँ छोड़कर और स्कूल, कॉलेज बन्द करके सरकार के तमाम यंत्रों को स्थगित कर दिया जाये । यह लड़ाई इसी किस्म की होगी । इसमें आप सब भाई साथ दीजिये । इसमें आपका हार्दिक सहयोग होगा, तो यह लड़ाई थोड़े ही दिनों में खत्म हो जायेगी और अंग्रेजों को यहाँ से चला जाना पड़ेगा । काम करने वालों को सरकार पकड़ भी ले, तो हर एक हिन्दुस्तानी अपने आपको कांग्रेसी समझे और उसी तरह अपना फर्ज अदा करे । अगर वह पुकार होते ही लड़ने को तैयार हो जाये, तो स्वतन्त्रता हमारा दरवाजा खटखटाती हुई आकर खड़ी हो जायेगी ।"

इन बातों को सरदार पटेल ने कई सभाओं में दुहराया और इस प्रकार अपने साथियों और अनुयायियों को आगामी देशव्यापी विद्रोह का संकेत देकर वे एक अगस्त को ही बम्बई चले गये और वहाँ उन्होंने चौपाटी पर सार्वजनिक सभा में अपने अहमदाबाद वाले संदेश को और भी संक्षिप्त और स्पष्ट करते हुए कहा—

"आपको यही समझ कर यह लड़ाई छेड़नी है कि महात्मा गाँधी और नेताओं को पकड़ लिया जायेगा । गाँधी जी को पकड़ा जाये तो आपके हाथ में ऐसा करने की ताकत है कि २४ घण्टे में ब्रिटिश सरकार का शासन समाप्त हो जाये । आपको सब कुंजियाँ बता दी गई हैं, उनके अनुसार अमल कीजिये । सरकार का शासन चलाने वाले अगर सभी लोग हट जायें, तो सारा शासन भंग हो जायेगा ।"

७ और ८ अगस्त की कांग्रेस कमेटी की मीटिंग में तो गाँधी जी के 'अंग्रेज चले जाओ' प्रस्ताव का समर्थन करते हुए सरदार पटेल ने जो कुछ कहा वह एक प्रकार से अगले दिन ९ अगस्त से आरम्भ होने वाले विद्रोह का श्रीगणेश करना ही था । उन्होंने कांग्रेस के अहिंसा सिद्धान्त का जिक्र करते हुए कहा—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"लड़ाई के समय हमारा कार्यक्रम हमेशा गाँधी ने तैयार किया है । जब तक वे बैठे हैं, वे जो हुक्म देंगे वहीं हम मानेंगे । नरम हो या गरम, जो वे कहें वही करना सिपाहियों का काम है । हमें बड़ी-बड़ी धमकियाँ दी जा रही हैं । हुकूमत का तरीका सबको मालूम है । वह सबको पकड़ेगी । बहुत-सी सूचियाँ और आर्डिनेंस तैयार किये गये हैं और तैयार किये जायेंगे । वह तो पिछली लड़ाइयों के समय से दफ्तरों में तैयार रखे थे, उनमें नई बात क्या है ? मगर हमें अपनी जिम्मेदारी सोच लेनी है, समझ लेनी है । जब तक गाँधी जी मौजूद हैं, तब तक वे जो हुक्म दें, जो हिदायत जारी करें, एक के बाद एक जो कदम उठाने को कहें, वही उठाना है, न जल्दबाजी की जाये, न पीछे रहा जाये । हर एक व्यक्ति को आज्ञा और अनुशासन का पालन करना है । लेकिन मान लीजिये सरकार ने ही कुछ किया, सबको पहले से ही पकड़ लिया, तो क्या किया जाये ? ऐसा हो, अगर सरकार गाँधी जी को पकड़ ले, तो ऐसे मौके पर कदम-कदम की बात नहीं हो सकती । फिर तो हर एक हिन्दुस्तानी का—जिन्होंने इस देश में जन्म लिया है उन सबका—यह फर्ज होगा कि अपने देश की आजादी तुरन्त हासिल करने के लिये उसे जो सूझे वही कर डाले । जो यहाँ बैठे हैं, वे सब इतनी बात यहीं से लेते जायें, जब तक गाँधी जी हैं, वे हमारे सेनापति हैं । परन्तु वह पकड़े जायें तो किसी की जिम्मेदारी किसी पर नहीं रहेगी । सारी जिम्मेदारी अंग्रेजों के सिर रहेगी । अराजकता की जिम्मेदारी भी उन्ही पर होगी । अराजकता का डर अब देश को नहीं रोक सकेगा ।"

अखबारों के साधारण पाठक सन् १९४२ के विद्रोह के समय समझते थे कि ये दुर्घटनायें नेताओं की गिरफ्तारी से उत्तेजित होकर की जा रही हैं । पर सरदार पटेल के ऊपर दिये उद्गार साफ बतलाते हैं कि विद्रोह की योजना पहले ही निश्चित कर ली गई थी और सभी नेताओं को उसका पता था । पर सरदार पटेल तो उसके लिये पूरी तरह तैयार थे और उनको आगामी सप्ताह में ही होने वाली तोड़-फोड़ और घोर अशान्ति का अच्छी तरह पता था । उन्होंने अपने अहमदाबाद के भाषण में जो रेल, तार, डाक आदि के बन्द हो जाने का संकेत किया तो लोगों ने भी विद्रोह के पहले दिन इन्हीं को रोकने की व्यवस्था की । उस दिन समस्त देश में सैकड़ों स्थानों पर रेल की पटरियाँ उखाड़ी गईं, तार काटे गये और डाकखाने जलाये गये । जनता के बड़े-बड़े दलों ने अनेक कस्बों तथा छोटे नगरों के कलक्टरी के कार्यालय और खजानों पर हमला किया और बहुत से स्थानों में दो चार दिन के लिये अपनी 'सरकार' भी कायम कर दी । पर सरदार पटेल को अपनी जनता की शक्ति का पूरा अनुमान था । इसलिये उन्होंने गिरफ्तारी से कुछ पहले ही कह दिया था "बस, हमारी क्रान्ति सात दिन की होगी । इसमें जो कुछ कर सकते हो बड़ी तेजी से कर डालो ।"

क्या यह एक आश्चर्य की बात नहीं है कि देश को स्वतन्त्र कराने का इतना बड़ा काम एक ऐसे व्यक्ति ने किया, जिसका स्वास्थ्य नष्ट हो चुका था, आन्तरिक अंगों में खराबी आ जाने से जो सदैव रोगी ही बने रहते थे ? अहमदनगर के जेलखाने में भी अपने जीवन से निराश थे । हमेशा परहेज करते रहने की जिन्दगी उनको पसन्द नहीं आती थी, तो भी देश की खातिर वे सब कुछ चुपचाप सहन करते रहे और उसी रोगी शरीर का भार ढोते हुए भारत को एक सुदृढ़ राष्ट्र बनाने का सर्वोच्च कार्य पूरा कर गये । महापुरुषों का यही लक्षण होता है कि वे परमार्थ के लिये स्वार्थ को छोड़ सकने की पूरी सामर्थ्य रखते हैं ।

जानकार लोगों का कहना है कि यद्यपि कांग्रेस कार्यकारिणी ने सर्वसम्मति से 'अंग्रेजो चले जाओ' वाला प्रस्ताव पास किया था, पर आपस के वाद-विवाद में मौलाना आजाद, डॉ. सैयद महमूद और आसफअली की राय यह थी कि महात्मा गाँधी और कांग्रेस को यह आन्दोलन आरम्भ नहीं करना चाहिये था । नेहरू जी और पंतजी भी कुछ अंशों में इस मत के समर्थक थे । इन लोगों का कहना था कि इस प्रकार के आन्दोलन से अमरीका और चीन, जो भारत को स्वतन्त्र किये जाने के पक्ष में हैं, हमसे सहानुभूति न रखेंगे । वे हमारे इस कार्य को इस निगाह से देखेंगे कि मानो हम युद्ध-प्रयत्नों में बाधा डाल रहे हैं और इस प्रकार हिटलर की सहायता कर रहे हैं । पर सरदार पटेल का मत इसके विपरीत था और वे अन्त तक १९४२ के 'अंग्रेज चले जाओ' आन्दोलन का पूर्ण रूप से समर्थन करते रहे ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात्

यद्यपि स्वतन्त्रता-संग्राम में सरदार पटेल ने जितने महत्त्वपूर्ण कार्य किये उनका महत्त्व देश के किसी अन्य नेता के कार्यों से न्यून न था पर स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाने के पश्चात् कांग्रेस के सामने जो परीक्षा की घड़ी आई कि वह शासन-संचालन कर सकने की योग्यता रखती है या नहीं, उस समय लोगों ने उनकी वास्तविक शक्ति और योग्यता का अनुभव किया । पाकिस्तान के बनते ही वहाँ के हिन्दुओं पर जो आपत्ति आई और लाखों व्यक्ति घरवार छोड़कर प्राण बचाने के लिये भारत में चले आये उनकी सुरक्षा और पुनर्वास की व्यवस्था करना एक बड़ी विकट समस्या थी । एक तरफ देश में जगह-जगह हिंसा और खून-खराबा का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ताण्डव हो रहा था और दूसरी ओर लाखों बेघरबार के व्यक्ति स्त्री-बच्चों को लेकर नगर की सड़कों पर पड़े थे । चारों तरफ भयंकर और निराशापूर्ण दृश्य दिखाई पड़ रहे थे, और लोग सोचने लगे थे कि इससे तो अंग्रेजों का राज्य ही अच्छा था ।

पर सरदार पटेल, जिनके ऊपर गृह विभाग के मन्त्री की हैसियत से इन सब समस्याओं को सुलझाने की जिम्मेदारी थी जरा भी न घबड़ाये और उन्होंने अपने अदम्य साहस और विलक्षण बुद्धि कुछ ही दिनों में शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित करके देश को प्रगति के मार्ग पर गतिशील कर दिया । जो पंजाबी बन्धु शरणार्थी के रूप में एक भार की तरह प्रतीत होते थे वे ही थोड़ी-सी आवश्यक सहायता और साधन मिल जाने पर 'पुरुषार्थी' के रूप में परिवर्तित हो गये । दूसरी काली घटा देशी रियासतों की तरफ से उठी, जहाँ सभी अपने को 'खुदमुख्तार' समझने लगे थे । वास्तव में अगर स्वतन्त्रता प्राप्त हो जाने के बाद भी भारत पूर्ववत् सात सौ हिस्सों में बँटा रहता तो उस स्वतन्त्रता का मूल्य कम बहुत हो जाता है और वे रियासतें कदम-कदम पर देश की प्रगति में रोड़ा अटकाने वाली ही सिद्ध होतीं । पर सरदार ने ऐसा चमत्कार कर दिखाया कि एक वर्ष के भीतर ही अधिकांश रियासतें स्वेच्छा से भारतीय संघ में विलीन होकर उसका एक उपयोगी अंग बन गईं ।

गाँधी जी की हत्या उस युग की सबसे अधिक सनसनी की घटना थी । कुछ लोगों ने उसके सम्बन्ध में सरदार पटेल पर भी दोष लगाया कि उन्होंने गाँधी जी की रक्षा में अकर्मण्यता दिखलाई । कुछ लोगों ने घुमा-फिराकर यहाँ तक शंका प्रकट की कि श्री पटेल ने जानबूझकर ऐसी घटना हो जाने दी, पर जो लोग गाँधी जी और पटेल के सम्बन्धों को जानते थे और उनके मनोभावों से परिचित थे, उन्होंने इस प्रकार की आशंका को भी 'शत्रुओं' का कार्य बतलाया । इसमें एक भेद की बात यह थी कि पटेल 'हिन्दुत्व' के समर्थक अवश्य थे और जवाहरलाल नेहरू 'असाम्प्रदायिकता' के जरूरत से ज्यादा पक्षपाती हो जाते थे, इससे इन दोनों में शासन सम्बन्धी मामलों में कुछ मतभेद बना रहता था । अनेक अवसरों पर मन्त्रिमण्डल के कुछ सदस्य, जिनमें मौलाना आजाद और हुमायूँ कबीर का नाम लिया जाता है, इस मतभेद को बढ़ाने और प्रधानमन्त्री को अपने अनुकूल करने की चेष्टा करते रहते थे । ऐसे ही लोग और उनके दल वाले सरदार पटेल पर प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में तरह-तरह के आक्षेप लगाकर उनके महत्त्व को घटाने की चेष्टा किया करते थे, पर जनता में सरदार का इतना अधिक प्रभाव था कि कोई उनका कुछ बिगाड़ न सका ।

इधर सरदार को किसी प्रकार के मन्त्री पद की कुछ परवाह भी न थी । उनकी खरी देशभक्ति और साहसपूर्ण कारनामों ने उनको इतना लोकप्रिय बना दिया था कि वे जिस स्थिति में रहते देश पर उनका प्रभाव अद्वितीय रूप में बना रहता । जब उन्होंने कुछ लोगों को अपने विरुद्ध जवाहरलालजी के कान भरते देखा, तो उसी ३० जनवरी, १९४८ को, जिस दिन सन्ध्या के ५ बजे गाँधी की हत्या की गई, दोपहर के समय गाँधी से भेंट की थी और अनुरोध किया था कि वे उनको मन्त्री पद से त्यागपत्र देने की अनुमति दे दें । उनकी यह बात सुनकर गाँधी जी ने उनके सामने अपना हृदय खोलकर रख दिया । उन्होंने कहा—"पहले मेरा विचार होता था कि नेहरू और पटेल में से कोई एक मन्त्रिमण्डल से पृथक हो जाये । पर अब स्थिति को देखते हुए मैं इस दृढ़ निश्चय पर पहुँचा हूँ कि मन्त्रिमण्डल में दोनों का रहना आवश्यक है । लार्ड माउण्टबेटन ने भी मुझसे जोर देकर कहा है कि राष्ट्रहित की दृष्टि से दोनों का रहना अनिवार्य है । मैं आज प्रार्थना के पश्चात् इसी विषय पर भाषण करूँगा ।" पर उनको उस सम्बन्ध में कुछ कहने का अवसर ही न मिला क्योंकि प्रार्थना सभा में घुसते ही एक आततायी ने उनको गोली मार दी । श्री पटेल ने बातचीत के अन्त में गाँधी जी का आग्रह देखकर यह वचन दे दिया था कि वे मन्त्री बने रहकर नेहरू जी को सदा पूर्ण सहयोग देते रहेंगे ।"

गाँधी जी की मृत्यु होने पर सरदार पटेल को इतना मानसिक धक्का लगा कि उनकी स्वाभाविक हँसी बिल्कुल गायब हो गई और बीस दिन के भीतर ही उनको हृदय रोग हो गया । यह देखकर उनकी पुत्री मणिबेन को महादेव भाई की डायरी के ये शब्द याद आने लगे कि—"सरदार ने गाँधी जी से कहा था कि आपके स्वर्गवास के पश्चात् मेरी भी जीने की इच्छा नहीं है । मैं भगवान् से प्रार्थना करता हूँ कि हम दोनों की मृत्यु साथ-साथ हो ।"

दो सच्चे और राष्ट्र-सेवक मित्र

नेहरू जी और सरदार पटेल के मतभेद की यह कहानी बड़ी दिलचस्प और साथ ही शिक्षाप्रद भी है । इसका विश्लेषण करने से हम जान सकते हैं कि गीता में भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को अनासक्त कर्मयोग का जो उपदेश दिया था उसका पालन किस प्रकार किया जाता है । वास्तव में नेहरू जी और पटेल साहब दोनों ही इतने महान् व्यक्ति थे कि देश का शासन-संचालन करना उनके लिये कठिन न था । पर दोनों में एक-एक गुण की प्रमुखता थी जिसे देखकर महामानव गाँधी जी ने नेहरू जी को अन्तर्राष्ट्रीय और पटेलजी को राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाने के लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिक उपयुक्त समझा । सरदार पटेल नेहरू जी से चौदह वर्ष बड़े थे और राष्ट्रीय संग्राम में उनकी सेवायें भी कम न थीं, पर गाँधी जी के भाव को समझकर उन्होंने नेहरू जी को प्रधानमन्त्री और स्वयं को उपप्रधानमन्त्री रहना स्वीकार किया । इन दोनों का यह सहयोग भारतीय इतिहास में ही नहीं संसार के इतिहास में भी महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है । यदि हम चाहें तो इसकी तुलना 'गीता' के धनुर्धर अर्जुन और सारथी कृष्ण से भी कर सकते हैं । तभी इसका जिक्र करते हुए 'भारतीय कांग्रेस' के इतिहास लेखक तथा सुप्रसिद्ध राजनीतिक नेता डॉ. पट्टाभि सीतारमैय्या ने लिखा था—

"इस बात पर प्रायः आश्चर्य प्रकट किया जाता है कि यदि इन दोनों विरोधियों का सहयोग इतना सुखदायक, इतना उपयुक्त और इतना एकाकार न होता तो दिल्ली की केन्द्रीय सरकार की कैसी दशा होती ? यदि दो मित्र एक-दूसरे की बात को हमेशा काटते रहें तो उनका सहयोग आदर्श नहीं हो सकता । यदि दो साथी एक-दूसरे के ऊपर सदा आक्रमण करते रहें, तो वे कोई उन्नति नहीं कर सकते और न कोई निर्णय कर सकते हैं । पर हमारे यह दोनों नेता बिल्कुल भिन्न प्रकार के हैं । अतएव हमको उनकी पृथक-पृथक विशेषताओं को समझना चाहिये जिसके कारण वे एक दूसरे को उपयोगी सहयोग देते रहे ।"

यह कहना तो अतिशयोक्ति होगी कि "सरदार पटेल और नेहरू जी का दृष्टिकोण एक था किन्तु वे विभिन्नता में भी एकता के अद्भुत उदाहरण थे । एक हाथ की कोई भी दो अंगुलियाँ एक जैसी नहीं होतीं । एक माता-पिता की सन्तान कोई दो भाई एक जैसा न तो सोचते, न अनुभव करते और न कार्य करते हैं । एक-दूसरे से मतभेद रखना और भिन्न-भिन्न मार्ग पर चलना स्वाभाविक है । हमारे इन दोनों नेताओं के मतभेद केवल अपनी-अपनी प्रकृति के कारण ही नहीं थे वरन् भारत सरकार में अपने-अपने विभागों के कारण भी थे । गृहमन्त्री को आंतरिक सुरक्षा तथा शान्ति की उच्चतम भावना को बनाये रखना पड़ता है, जबकि परराष्ट्रमन्त्री को किसी विशेष मामले या स्वीकृत नीति के सम्बन्ध में विदेशों की प्रतिक्रिया को ध्यान में रखना पड़ता है । पर हमारे पूज्य सरदार और प्यारे नेहरू दोनों ने ही सहयोग कला में अपनी उच्च योग्यता का परिचय दिया ।"

इन दोनों महान् नेताओं का सहयोग व्यावहारिक रूप से किस प्रकार प्रकट हुआ, यह कांग्रेस के उच्च कार्यकर्ता तथा सभी नेताओं से संपर्क रखने वाले श्री हरिभाऊ उपाध्याय के इस लेखांश से विदित हो सकता है—

"पं. जवाहरलाल नेहरू तथा सरदार के मिजाज में बहुत अन्तर था यहाँ तक कि उन दोनों की कार्यप्रणाली भी एक-दूसरे से भिन्न प्रकार की थी, किन्तु भारत के स्वतन्त्र होने के पश्चात् सरदार, नेहरू जी को अपना नेता मानने लगे थे । इसके बदले नेहरू जी, सरदार को परिवार का सबसे वृद्ध पुरुष मानते थे । दोनों के मतभेद के विषय में प्रायः अफवाहें फैल जाती थीं और विभेदात्मक नीति वाले अत्यन्त प्रसन्न होकर उनमें फूट पड़ जाने की आशा करने लगते थे । किन्तु सरदार ने कभी पानी को सिर से ऊपर नहीं निकलने दिया । यदि कोई उन दोनों में से किसी की भी नीति पर आक्रमण करता तो उक्त आलोचक को वह दोनों फटकार देते । वे दोनों एक-दूसरे के कवच थे । एक कांग्रेसी कार्यकर्ता ने, जिसे सरदार का विश्वासपात्र समझा जाता था, बतलाया कि—"सरदार ने मुझसे अपनी मृत्यु शय्या पर गुप्त रीति से कहा था कि हमको नेहरू जी की अच्छी तरह देखभाल करनी चाहिये, क्योंकि मेरी मृत्यु से उनको बहुत दुःख होगा ।" इसी प्रकार की घटना नेहरू जी की भी है । सरदार पटेल अपने व्यंग के लिये प्रसिद्ध थे और एक दिन नेहरू जी भी उनके व्यंग के शिकार हो गये । उस समय उपस्थित एक मित्र ने इसका जिक्र नेहरू जी से कर दिया, तो नेहरू जी ने उत्तर दिया—"इसमें क्या बात है ? आखिर एक बुजुर्ग के रूप में उनको हमारी हँसी उड़ाने का पूर्ण अधिकार है । वे हमारी चौकसी करने वाले हैं ।" नेहरू जी के उत्तर से लाजवाब होकर वे सज्जन शीघ्र ही वहाँ से चले गये ।"

भारतीय राष्ट्र का निर्माण करने वाले इन दोनों महापुरुषों की महिमा इतनी अधिक है कि बहुत वर्ष बीत जाने पर भी लोग उनका स्मरण करते रहेंगे । आज भी किसी राष्ट्रीय संकट के समय जनता सरदार पटेल की याद करती है । इसी प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के गम्भीर हो जाने पर लोग नेहरू जी को याद करते रहते हैं । वर्तमान समय के खाने-कमाने वाले नेताओं से उनकी कोई तुलना नहीं की जा सकती । उनको राजनीतिक नेता के बजाय राजनीतिक तपस्वी कहना अधिक उचित होगा । उन्होंने देश के लिये कितना त्याग और कष्ट सहन किया इसे सब कोई जानता है । उनका बड़े से बड़ा विरोधी यह नहीं कह सका कि उन्होंने इन कार्यों से किसी प्रकार का निजी लाभ उठाया । यदि अन्य व्यक्तियों की तरह ये भी अपना धन्धा करते रहते तो सहज में धनीमानी बनकर खूब आराम का जीवन बिता सकते थे । पर इसके बजाय उन्होंने दिन-रात कठिन परिश्रम करके बदले में जेल का जीवन व्यतीत किया और जान-बूझकर हर तरह की हानि उठाई ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रत्येक 'नेता' कहे जाने वाले को इस कसौटी पर किसी हद तक खरा उतरना ही चाहिये।

सरदार पटेल राष्ट्रभक्त होने के साथ ही भारतीय संस्कृति के भी महान् पृष्ठपोषक थे। वे सदा अत्यन्त सादी देशी ढंग की वेशभूषा में रहते थे और घर का वातावरण प्राचीन ढंग का ही रखते थे। भारत का बँटवारा हो जाने के पश्चात् नवम्बर १९४७ में जब वे सौराष्ट्र का दौरा करने गये तो आरम्भिक मुसलमान आक्रमणकारियों द्वारा तोड़े गये सोमनाथ के मन्दिर को भी देखा। उसकी दुर्दशा देखकर उनको हार्दिक कष्ट हुआ और उसी समय उसके पुनः निर्माण का संकल्प कर लिया। सरदार की अपील पर बहुत थोड़े समय में ही देश के सभी भागों से एक बड़ी धनराशि इकट्ठी हो गई और सौराष्ट्र के राजप्रमुख जामसाहब की अध्यक्षता में ट्रस्टियों का एक बोर्ड मन्दिर के निर्माण कार्य की देखभाल के लिये नियुक्त कर दिया गया। कहना न होगा कि मन्दिर पुनः भारत के गौरव के अनुरूप तैयार हो गया, जिसकी मूर्तिप्रतिष्ठा के महोत्सव में भारत के राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने भाग लिया।

सन् १९४८ में जब सरदार एक भारतीय युद्धपोत में बैठकर गोआ के पास होकर गुजर रहे थे तो जहाज के कमाण्डिंग अफसर से कहा कि हमारे सामने अभी गोआ पर अधिकार कर लो। जब कमाण्डर ने इस सम्बन्ध में कानूनी कठिनाइयाँ बतलाईं तो कहा—"खैर, अभी रहने दो, ऐसा करने से जवाहरलाल (नेहरू जी) इस पर एतराज करेगा।"

सरदार पटेल का जीवन प्रत्येक मनुष्य के लिये एक बहुत बड़ा आदर्श उपस्थित करता है, वह यह कि मनुष्य को केवल कमाने-खाने की जिन्दगी ही व्यतीत नहीं करनी चाहिये, वरन् देश और समाज की रक्षा का प्रश्न उपस्थिति होने पर निजी स्वार्थ त्यागकर उसी को प्राथमिकता देनी चाहिये। यदि देश और समाज का पतन हो गया तो हमारी व्यक्तिगत उन्नति भी बेकार हो जाती है इसलिये जो कोई अपने मानव-जन्म को सार्थक करना चाहता है उसको अवश्य ही अपनी शक्ति और साधनों का एक अंश समाज सेवा के निमित्त लगाना चाहिये जो इसकी उपेक्षा करता है, वह एक प्रकार से बेईमानी करता है। हमारा जीवन-निर्वाह समाज के आश्रय से ही सम्भव होता है। यदि हम समाज-सेवा के कर्त्तव्य को पूरा नहीं करते तो इसका अर्थ यह है कि हम जीवन के अन्त तक समाज के ऋणी बने रहते हैं और उसका कुपरिणाम हमको आगामी जन्म में सहन करना पड़ेगा। इसलिये हमको अपने ही युग के महापुरुषों से, जिनमें सरदार पटेल का प्रमुख स्थान है, प्रेरणा लेकर देशभक्ति और समाज-सेवा के मार्ग पर चलना ही चाहिये।

स्वातंत्र्य यज्ञ के हुतात्मा : वीर सावरकर

रत्नगर्भा भारत माता ने समय-समय पर जिन विभूतियों को उत्पन्न किया है, स्वनाम धन्य नर-शार्दूल सावरकर का स्थान उनमें बहुत ऊँचा है। सांसारिक अभ्युदय के लिये जिन साधनों, जिन योग्यताओं और जिन सुविधाओं की आवश्यकतायें हैं उन सबके होते हुए भी सावरकर जी ने अपनी जवानी में अपने उज्ज्वल भविष्य, सुख-समृद्धि-सम्पन्न, सफल पारिवारिक जीवन, इष्टमित्रों, बन्धु-बान्धवों की सुनहरी आशाओं पर पानी फेर कर भारत माता की एक-एक आह पर अपनी अनेक अतृप्त चाहों को बलिदान कर दिया था।

महाराष्ट्र के चिरपावन ब्राह्मणों का वंश भारत में प्रसिद्ध है। विगत दो शताब्दियों से इस वंश में निरन्तर ऐसे महापुरुष जन्म लेते रहे हैं, जिन्होंने अपनी प्रिय भारत-भूमि कि स्वतन्त्रता के लिये विदेशियों से जूझते हुए अपने प्राण तक देना गौरव का चिन्ह समझा है। १८५७ के क्रान्ति-युद्ध के नाना साहब पेशवा, ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध सशस्त्र विद्रोह करने वाले वासुदेव बलवन्त फड़के, पूना के अंग्रेजी अधिकारियों को मारकर प्राण-दण्ड पाने वाले चापेकर बन्धु और रानाडे तथा लोकमान्य तिलक भी इसी वंश में पैदा हुए थे, इसी वंश में नासिक के समीप भगूर नामक गाँव में श्री दामोदर पंत सावरकर के यहाँ २८ मई सन् १८८३ को हमारे चरित्र-नायक श्री विनायक सावरकर का जन्म हुआ था, जो आगे चलकर क्रान्तिकारियों के अग्रणी बने जिनको विदेशियों ने 'हुतात्मा' कहकर सम्बोधित किया, जिसे यूरोपीय राजनीतिज्ञों ने मेजिनी, गैरीवाल्डी, वुल्फटोन आदि कहकर उसकी प्रशंसा की और जिसे अखिल भारतवर्ष ने 'स्वतन्त्र वीर' की उपाधि से विभूषित किया। सावरकर-बन्धु तीन भाई थे बड़े श्री गणेश, मझले हमारे चरित्र-नायक श्री विनायक और छोटे श्री नारायण।

शैशव काल

किशोरावस्था में विनायक में ईश्वरप्रदत्त दैवी शक्तियाँ दृष्टिगोचर होने लगी थीं। इनके पिता इनमें ऊँची भावनायें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भरने के लिये महाभारत और रामायण की कहानियाँ तथा छत्रपति शिवाजी, महाराणा प्रताप आदि राष्ट्रीय वीर-पुरुषों की गाथायें सुनाया करते थे । इनके पिता स्वयं एक अच्छे कवि थे और वे अपने पुत्र में भी काव्य प्रतिभा पैदा करने के उद्देश्य से उन्हें मराठी के प्रख्यात कवि वापन, मोरोपन्त और सन्त तुकाराम की कवितायें सुनाया करते थे । इससे इनमें बचपन में ही ऐसी प्रेरणा पैदा हुई कि दस वर्ष की आयु में ही इन्होंने कविता करना आरम्भ कर दिया और मराठी के प्रसिद्ध पत्र उन्हें चाव से छापने लगे थे, यद्यपि वे यह न जानते थे कि इनका रचियता दस-बारह वर्ष का बालक है ।

घर में बहुत से ग्रन्थ एवं पत्र-पत्रिकायें पड़ी रहती थीं इनमें महाभारत का मराठी अनुवाद 'केसरी' पत्र की प्रतियाँ तथा मराठा वीरों की विजय गाथाओं से भरी पुस्तकें प्रमुख थीं । फुरसत के समय में विनायक इन्हें पढ़ा करते और अपने साथियों में राष्ट्रीयता के भाव भरा करते थे । इसके कारण वे अपने मित्रों में विद्वान्, देशभक्त और ओजस्वी वक्ता के रूप में पूजे जाते थे ।

अपने पिता के साथ विनायक प्रतिदिन देव-पूजा किया करते थे । घर में दुर्गा की एक भव्य मूर्ति थी । उन्हें विदित था कि शिवाजी देवी दुर्गा (भवानी) के एकनिष्ठ भक्त थे । इनके लिये भी दुर्गा प्रेरणा-शक्ति थी । वे घण्टों तक उसके समीप बैठे रहते और अपने देश को पराधीनता से मुक्त करने हेतु सहायता की याचना किया करते ।

सन् १८९७ में महाराष्ट्र में राजनीतिक जागरण का जोर था । राष्ट्रीय महासभा का शानदार सफल अधिवेशन, शिवाजी-जयन्ती और सार्वजनिक गणेशोत्सव आदि समारोहों ने मराठा युवकों में एक अभूतपूर्व जोश पैदा कर दिया । पूना इस आन्दोलन का केन्द्र था । इस जोशीले राजनैतिक वातावरण से विनायक बहुत प्रभावित हो रहे थे । उसी समय पूना में भयानक प्लेग की बीमारी फैल गई और प्रतिदिन सैकड़ों व्यक्ति उचित चिकित्सा के अभाव में काल के ग्रास बन रहे थे । जिस पर अंग्रेज अफसरों ने प्लेग के चूहों का निर्मूलन करने के नाम पर घरों में घुसकर सम्भ्रान्त परिवारों की स्त्रियों के साथ में अभद्र व्यवहार करना शुरू कर दिया था । अंग्रेजों के इस अशिष्ट एवं उद्दण्ड व्यवहार से कुपित होकर एक दिन चापेकर बन्धुओं ने एक अंग्रेज अधिकारी मि. रैण्ड को गोली से उड़ा दिया । यह समाचार बिजली की भाँति सर्वत्र फैल गया । धर-पकड़ आरम्भ हुई । चापेकर बन्धु निर्वासित किये गये । लोकमान्य तिलक गिरफ्तार कर जेल भेज दिये गये । चापेकर बन्धुओं को प्राण दण्ड दिया गया । जिस दिन चापेकर बन्धु यर्वदा जेल में फाँसी पर लटकाये गये, उसी दिन उन्होंने प्रातः उठकर प्रार्थना की और भगवद्गीता का पाठ करते हुए हँसते-हँसते फाँसी पर झूल गये । किशोर विनायक सावरकर पर इस घटना का गहरा असर हुआ । वे आप ही आप बोलने लगे—"चापेकर बन्धुओं ने मातृभूमि की प्रतिष्ठा के लिये अपने प्राण न्यौछावर कर दिये तो क्या मैं मौज-शौक में ही अपना जीवन बिताते हुए अंग्रेजों के अत्याचारों को केवल दर्शक बनकर देखता रहूँ ? चापेकर का कार्य अधूरा पड़ा है, मैं उसे पूरा करूँगा, अन्यथा उसके प्रयत्नों में अपनी प्राणाहुति दे दूँगा ।" वे तत्काल घर में प्रतिष्ठित दुर्गा के सम्मुख उपस्थिति हुए और थोड़ी देर तक आँखें मूँदकर शान्त खड़े रहने के बाद उन्होंने प्रतिज्ञा की कि "मैं भारत माता की दासता की जंजीरें तोड़ने के लिये अपना जीवन अर्पण करता हूँ । मैं गुप्त संस्थायें खोलूँगा, शस्त्र बनाऊँगा और समय आने पर हाथ में लेकर भारत माता की स्वतन्त्रता के लिये लड़ता-लड़ता मरूँगा ।"

उस दिन से विनायक ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये नियमित कार्य आरम्भ कर दिया । उन्होंने सन् १९०० में नासिक में एक 'मित्र मेला' नाम से एक संस्था बनाई, जो आगे चलकर 'अभिनव भारत' के रूप में परिवर्तित हो गई थी । यह आरम्भ से ही एक क्रान्तिकारी संस्था थी, जिसका उद्देश्य सशस्त्र क्रान्ति द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्त करना था । यह संस्था अपना कार्य गुप्त और प्रकट दोनों प्रकार से करती थी और धीरे-धीरे इसकी शाखायें सारे भारत में फैल गई थीं ।

इस संस्था द्वारा महाराष्ट्र के प्रमुख नगरों में शिवाजी जयन्ती और सार्वजनिक गणेशोत्सव मनाये जाते थे और इनके द्वारा जनता में राष्ट्रीयता की ज्योति जगाई जाती थी । आम सभाओं में क्रान्तिकारी विचार का प्रचार कर नवयुवकों को 'मित्र मेला' में भर्ती किया जाता था ।

यौवन काल

राजनैतिक आन्दोलनों में प्रमुख रूप से भाग लेते हुए उन्होंने अपने अध्ययन की कभी उपेक्षा नहीं की और न अपने साथियों को ही करने दी । यही कारण है कि विनायक परीक्षा में कभी भी अनुत्तीर्ण नहीं हुए । १९०१ में इन्होंने मैट्रिक की परीक्षा पास की और कॉलेज की शिक्षा के लिये नासिक छोड़कर पूना जाने का निश्चय किया । पूना के फर्ग्यूसन कॉलेज में प्रविष्ट होते ही उन्होंने निश्चय किया कि मैं महाराष्ट्र के कोने-कोने से पूना में विद्याध्ययन के लिये आने वाले छात्रों में राष्ट्रीय विचारों का प्रसार कर सारे प्रान्त को थोड़े ही समय में हिला दूँगा । ताकि यहाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से स्नातक बनकर निकले हुए विद्यार्थी अपने-अपने स्थानों में जाकर प्रान्त भर में क्रान्ति की लहर को फैला दें।

कॉलेज के अध्ययन काल में वे लगातार इस दिशा में प्रयत्नशील रहे। इतिहास में इनकी स्वाभाविक रुचि थी और संसार की समग्र क्रान्तियों के इतिहास का उन्होंने गहन अध्ययन किया था। उनकी वक्तृत्व शक्ति अत्यन्त प्रभावोत्पादक थी, महाराष्ट्र के प्रसिद्ध नेता लोकमान्य एवं शिवराम पंत, परांजपे तक उनकी वक्तृता से प्रभावित हो गये थे। उस समय जबकि अनेक भारतीय नेतागण तक 'होमरूल आन्दोलन' चलाते हुए भी खुल्लमखुल्ला स्वराज्य की माँग करने में डरा करते थे, विनायक सावरकर खुलेआम स्वतन्त्रता और क्रान्ति के लिये जनता का आह्वान कर रहे थे। जब कॉलेज के आरामतलब और फैशनेबल लड़के सहभोजों और खेलों में व्यस्त होते थे, उस समय सावरकर की 'मित्र-मेला' के सदस्य रविवार की संध्या को पहाड़ियों के आँचल में छिपे हुए किसी जन-शून्य खण्डहर में एकत्रित होने और वहाँ स्वाधीनता के लिये लड़े जाने वाले स्वातन्त्र्य-युद्ध की योजनायें निर्धारित करते।

सावरकर की इन उग्र प्रवृत्तियों से कॉलेज के अधिकारी सतर्क हो गये। वे इन क्रान्तिकारी विचारों को विद्यार्थियों के लिये हानिकारक समझने लगे। कुछ लोगों ने इन्हें नरम दल में लाने का काफी प्रयत्न भी किया परन्तु सभी प्रयत्न पूर्णरूप से विफल ही सिद्ध हुए। क्योंकि सावरकर के लिये मेजिनी, गैरीवाल्डी, शिवाजी और समर्थ रामदास ही आदर्श थे। सावरकर तथा उनके संगी-साथी सब एक जैसे कपड़े पहनते निर्धनता का जीवन बिताते, कठोर अध्ययन करते, नियमपूर्वक परीक्षाओं में उत्तीर्ण होते, स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करते, शारीरिक व्यायाम करते और साथ-साथ राजनैतिक विषयों पर विचार करते हुए सदा यह सोचा करते थे किस प्रकार अन्य पराधीन राष्ट्रों ने अपनी परतन्त्रता की बेड़ियाँ तोड़ीं और किस प्रकार भारत भी इन बेड़ियों को काटा जा सकता है?

कभी-कभी ये अपने दल के साथ पूना के समीपस्थ पहाड़ी दुर्गों में जाया करते जहाँ उनके पूर्वजों ने अपनी वीरता की छाप अंकित की थी। कभी वे सिंहगढ़ को देखने जाते और उनके विजयी सेनापति ताना जी मालसुरे की वीरता का स्मरण करके ईश्वर से प्रार्थना किया करते थे कि वह उन्हें भी ऐसा बल दे ताकि वे अपने राष्ट्र के प्रति स्वकर्त्तव्य का यथोचित पालन कर सकें।

१९०५-१९०६ में देश में स्वदेशी आन्दोलन का जोर हुआ। सावरकर इसमें उत्साहपूर्वक कूद पड़े। इन्होंने पूना, नासिक तथा महाराष्ट्र के अन्य स्थानों में स्वदेशी-प्रचार पर ओजस्वी भाषण दिये। ग्रीष्मावकाश में वे दिन में तीन-तीन, चार-चार जगह सभायें कर भाषण देते। इनके भाषणों का जनता पर इतना हृदयग्राही प्रभाव पड़ता था कि सहस्त्रों मनुष्य उन्हें मन्त्र-मुग्ध हो सुना करते। जनता में विदेशी वस्तुओं के प्रति घृणा उत्पन्न करने के लिये सावरकर-दल ने विदेशी वस्त्रों की एक बड़ी होली जलाने का निश्चय किया। यह विचार उस जमाने में इतना उग्र था कि स्वयं लोकमान्य तिलक भी ऐसा साहस करने में आगा-पीछा सोच रहे थे, परन्तु सावरकर ने इस काम को करने का बीड़ा उठा लिया और अनेक सभाओं में जोशीले भाषण देकर पूना की जनता को इसके लिये तैयार कर लिया। इस विषय में बुलाई गई अन्तिम सभा में सावरकर ने ओजस्वी वाणी से जनता को सम्बोधित करते हुए कहा—

"विदेशी वस्त्रों को घृणित और अपवित्र समझ कर अग्नि की भेंट कर दो और इस पवित्र अग्नि को साक्षी रखकर आज और अभी से स्वदेशी का व्रत धारण करो।" इस आह्वान का जनता ने सहर्ष स्वागत किया और जिसने जो कुछ विदेशी वस्त्र धारण किया था—कुरता, पाजामा, पैन्ट, कोट, टोपी सब कुछ होली में फेंक दिया। भीड़ में से एक व्यक्ति ने आपत्ति करते हुए कहा—"वस्त्रों को जलाने से क्या फायदा? यह तो उसका अपव्यय हुआ।" इस पर विनायक ने बड़ी तेजी से उत्तर दिया—"इस विदेशी वस्त्रों की होली द्वारा उत्पन्न स्वदेश की भावना को पैसे से नहीं गिना जा सकता।" विदेशी वस्त्रों की नहीं, विदेशी समर की होली का प्रतीक है। पूना शहर के मध्य एक भव्य मैदान में विदेशी वस्त्रों का विशाल ढेर लगाया गया, अग्नि प्रज्ज्वलित हुई और उसकी ऊँची-ऊँची लपटों से चारों ओर खड़ी जनता उत्साहित और प्रकाशित हो उठी। भारत में विदेशी वस्त्रों की यह सर्वप्रथम होली थी, जिसका सारा श्रेय सावरकर को था। इस अवसर पर स्वयं लोकमान्य तिलक उपस्थित रहे और उन्होंने भी अपने जोशीले भाषण से जनता को स्वदेशी-व्रत के लिये प्रोत्साहित किया।

इस होली काण्ड से समाचार-पत्रों में बड़ी हलचल मच गई। 'केसरी', 'अमृत बाजार पत्रिका', 'बंगवासी' आदि पत्रों में यह समाचार प्रमुख रूप से प्रकाशित हुआ और उस पर कई दिनों तक टीका-टिप्पणियाँ होती रहीं। सरकार परस्त एवं अधगोरे पत्रों ने इसकी तीव्र आलोचना की, जिसके कारण कॉलेज के अधिकारी आतंकित हो गये और उन्होंने सरकारी कोप से बचने के लिये आन्दोलन के नेता सावरकर को दस रुपये दण्ड तथा चौबीस घण्टे के भीतर छात्रावास छोड़ने का आदेश दिया। इस पर 'केसरी काल' आदि महाराष्ट्र के अगण्य राष्ट्रीय पत्रों ने कॉलेज अधिकारियों की घोर निन्दा की। नासिक की जनता ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसके उत्तर में सावरकर के समर्थन में वहाँ भी विदेशी वस्त्रों की प्रचण्ड होली जलाई । अनेक शहरों और कस्बों की सभाओं में सावरकर की प्रशंसा में प्रस्ताव पास किये गये और उनके लिये धनराशि एकत्रित की गई, जिससे सावरकर न केवल कॉलेज की—दण्ड राशि ही चुका सके बल्कि उन्होंने शेष धन सार्वजनिक निधि को दान दिया । बाद में बम्बई विश्वविद्यालय ने उन्हें बी. ए. की परीक्षा में सम्मिलित होने की आज्ञा दे दी और वे प्रथम श्रेणी में बी. ए. में उत्तीर्ण हुए ।

क्रान्ति का श्रीगणेश

सन् १९०५ में सावरकर ने स्नातक बनते ही अपना राजनैतिक आन्दोलन पुनः तीव्रगति से जारी करने की ठानी, उन्होंने अनेक राष्ट्रीय संस्थाओं के प्रतिनिधियों की एक सभा गुप्तरूप से बुलाई, जिसमें महाराष्ट्र के विविध संस्थाओं के लगभग दो-सौ प्रतिनिधि शामिल हुए । सबने खड़े होकर एक स्वर से देश की स्वतन्त्रता के लिये प्राणपन से लड़ने की प्रतिज्ञा की इसके पश्चात् सावरकर ने उसी सभा में 'अभिनव भारत' नाम से एक क्रान्तिकारी संस्था का संगठन किया और वे स्वयं इस संस्था की शाखायें सर्वत्र स्थापित करने हेतु महाराष्ट्र के विविध नगरों में घूम-घूम कर प्रचार कार्य करने लगे ।

यह सब करते हुए सावरकर बम्बई में वकालत भी पढ़ रहे थे । उन्हीं दिनों लन्दन में 'होमरूल सोसाइटी' के जन्मदाता डॉ. श्यामजी कृष्ण वर्मा ने भारतीय विद्यार्थियों को विदेश के स्वतंत्र वातावरण में राजनीति का अध्ययन करने के लिये एक छात्रवृत्ति देने की घोषणा की । सावरकर ने इसे प्राप्त करने के लिये लोकमान्य तिलक के प्रशस्ति-पत्र के साथ एक प्रार्थना-पत्र भेजा, जो स्वीकार हो गया । सावरकर के श्वसुर चिपलूनकर ने उन्हें विलायत यात्रा के लिये आवश्यक आर्थिक सहायता प्रदान की । सावरकर इस समय अंग्रेजों की निगाह में खतरनाक सिद्ध हो चुके थे और फलतः इन पर पुलिस की निगरानी भी आरम्भ हो गई थी । नासिक का उनका एक भाषण इतना क्रान्तिकारी था कि सरकार उन्हें गिरफ्तार करने की सोच ही रही थी पर उनकी विदेश यात्रा की खबर पाकर वह चुपचाप बैठ गई । ब्रिटिश राजनीतिज्ञ शायद यह सोचते होंगे कि इंग्लैण्ड जाकर सावरकर सम्भवतः ब्रिटिश साम्राज्य की महान शक्ति को देखकर अपना दृष्टिकोण बदल देंगे अथवा बैरिस्टर होने के बाद आर्थिक प्रलोभनों में पड़कर राजनैतिक आन्दोलन से हट जायेंगे परन्तु उनकी यह धारणा बिल्कुल भ्रमपूर्ण थी क्योंकि भारत से विदा होने के पूर्व की एक गुप्त सभा में अपने साथियों के समक्ष भाषण देते हुए उन्होंने स्पष्ट घोषणा की थी कि "अब तक मैं केवल महाराष्ट्र भर के युवकों में राष्ट्रीय भावना भरता रहा हूँ पर अब इंग्लैण्ड जाकर वहाँ मुझे भारत के विभिन्न प्रान्तों के होनहार विद्यार्थियों में प्रचार करने का सुअवसर मिलेगा ।" वे सब लोग बाद में बैरिस्टर, डाक्टर, प्रोफेसर आदि बनकर जब स्वदेश लौटेंगे, तब देश भर में क्रान्ति मचा देंगे । मुझे यह अच्छा स्वर्ण अवसर मिला है, जिसका मैं समुचित लाभ उठाऊँगा । मैं शत्रु के गढ़ में जाकर उसे भारत की अदम्य शक्ति का परिचय कराऊँगा ।

इंग्लैण्ड के लिये प्रस्थान

मई १९०६ में बाईस वर्ष की आयु में सावरकर ने लन्दन के लिये प्रस्थान किया । जहाज पर यात्रा में सावरकर खाली न बैठे । वे उसी जहाज से विदेश जा रहे थे अन्य भारतीय विद्यार्थियों से बातचीत करते हुए उनमें राष्ट्रीयता की भावना भरते थे । इंग्लैण्ड पहुँचने पर श्यामजी कृष्ण वर्मा ने इनका हार्दिक स्वागत किया । उन्होंने उस समय इंग्लैण्ड में भारतीय स्वतन्त्रता के लिये 'होमरूल लीग' की स्थापना की थी और उसके अन्तर्गत अपना आन्दोलन चला रहे थे । पर सावरकर ने लन्दन पहुँचने के एक वर्ष के भीतर ही वहाँ 'फ्री इण्डिया सोसायटी' नामक दूसरी उग्र संस्था खोली । इसके तत्वावधान में वे हर सप्ताह लंदन के विभिन्न क्षेत्रों में सभायें करते और उनमें इटली, फ्रांस, अमेरिका आदि देशों की क्रान्तियों पर ओजस्वी भाषण देते । इन सभाओं में काफी तादाद में भारतीय युवक सम्मिलित होते थे । इनमें से जो कुछ कर गुजरने की इच्छा प्रकट करते उन्हें सावरकर अपनी 'फ्री इण्डिया सोसायटी' का सदस्य बना लेते थे ।

श्री श्यामजी कृष्ण वर्मा भी सावरकर की प्रतिभा एवं प्रवृत्तियों से बड़े प्रभावित हुए और उन्होंने अपना 'होमरूल लीग' बन्द कर सावरकर की सोसायटी में सम्मिलित हो गये और अपना 'इण्डिया हाउस' नामक भवन सावरकर को सौंपकर स्वयं पेरिस चले गये । इसी समय लाला हरदयाल जी भी, जो आई. ए. एस. की परीक्षा पास करने लन्दन गये थे, सावरकर के सम्पर्क में आये और उन्होंने भी भारतीय स्वतन्त्रता के लिये जीवन अर्पण करने की प्रतिज्ञा की । उन्होंने सरकारी एवं विश्वविद्यालय से प्राप्त होने वाली छात्रवृत्ति त्याग दी और क्रान्तिकारी विचारों के कारण आजीवन भारत से निर्वासित रहे । इनके अतिरिक्त स्व. सरोजनी नायडू के भाई हरिन्द्र चट्टोपाध्याय, प्रसिद्ध क्रान्तिकारी भाई परमानन्द, श्री ज्ञानचन्द वर्मा, सेनापति जापट, पारसी समाज की प्रथम क्रान्तिकारी महिला भीकाजी कामा आदि लोग सावरकर के तेजस्वी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यक्तित्व एवं प्रखर देश-प्रेम से प्रभावित होकर उनके सहयोगी बन गये ।

इसी समय भारत में 'बंग-भंग आन्दोलन' ने उग्र रूप धारण कर लिया और देश में खासकर बंगाल, पंजाब और महाराष्ट्र में हिंसात्मक कार्यवाही आरम्भ हो गई । पंजाब के लाला लाजपतराय और अजितसिंह निर्वासित किये गये । इस समस्या से इंग्लैण्ड के भारतीयों पर मानों बिजली कौंध गई । तत्काल भारत-सरकार की इस कुटिल कार्यवाही की निंदा करने हेतु लन्दन में एक आम सभा की जिसमें सावरकर ने ब्रिटिश सरकार की कटु आलोचना करते हुए भारतीय युवकों से अपील की कि वह इसका बदला चुकाने के लिये अपने सर्वस्व की बाजी लगा दें । सावरकर ने लन्दन में एक निर्वासित रूसी क्रान्तिकारी से बम बनाने की विधि सीख ली और उसे भारत में भी गुप्त रीति से भेजकर प्रचारित किया । सावरकर स्वयं भी बम बनाकर अपने साथियों को इसकी क्रियात्मक शिक्षा देते थे ।

इस समय लन्दन का 'इण्डिया हाउस' सावरकर की विविध प्रवृत्तियों का केन्द्र बन गया था । वहाँ प्रतिदिन हजारों पोस्टर और पैम्पलेट छापे जाते और उन्हें गुप्त रूप से भारत के विविध नगरों में प्रचारार्थ भेजा जाता था । साथ ही गुप्त सभायें भी हुआ करती थीं । इसी बीच सावरकर ने इटली के क्रान्तिकारी नेता जोजेफ मैजिनी की आत्म-कथा का मराठी अनुवाद प्रकाशनार्थ भारत भेज दिया, जो नासिक में प्रकाशित हुआ । जनता में इस पुस्तक की आशातीत बिक्री हुई । अनेक समाचार पत्रों ने इस पुस्तक पर सम्पादकीय लेख लिखकर उनकी प्रशंसा की । सरकार को यह असह्य हुआ और उसने उक्त पुस्तक को जब्त कर लिया । सावरकर जी का दूसरा ग्रन्थ '१८५७ का स्वतन्त्रता-संग्राम' था । मैजिनी के चरित्र द्वारा सावरकर भारतीयों को पश्चिमी ढंग की क्रान्ति का पाठ पढ़ाना चाहते थे और '१८५७ के स्वतत्रता संग्राम' द्वारा विषम परिस्थिति में भी क्रान्ति के लिये प्रेरित करना चाहते थे । सरकार ने इसे भी शीघ्र ही जब्त कर लिया ।

सावरकर द्वारा संस्थापित 'अभिनव भारत' संस्था की बढ़ती हुई ब्रिटिश विरोधी गतिविधियों से घबराकर ब्रिटिश सरकार ने इस संस्था को कुचलने का निश्चय किया । तदनुसार लन्दन का गुप्तचर विभाग भारतीय विद्यार्थियों की सभी गतिविधियों पर सतर्कता के साथ कड़ी नजर रखने लगा । इतना सब होते हुए भी 'अभिनव भारत' द्वारा मैडम कामा के सम्पादकत्व में लन्दन में 'वन्देमातरम्' नामक पत्र प्रकाशित होता रहा और इसके जोशीले लेखों से भरी हुई प्रतियाँ ब्रिटिश सरकार की आँखों में धूल झोंककर भारत के अनेक नगरों में पहुँच जाती थीं ।

लन्दन में सावरकर के 'इण्डिया हाउस' पर खुफिया पुलिस का सख्त पहरा था । जिस पर भी सावरकर-दल अपना कार्य सुचारू रूप से चलाता रहा । कुछ भारतीय युवक तो खुफिया विभाग में भी भर्ती हो गये थे और अपना वेतन 'अभिनव भारत संस्था' को दे दिया करते थे । कुछ दिनों बाद सरकार पर इसका रहस्य खुल गया और सावरकर की गिरफ्तारी के लिये वारण्ट जारी किया गया परन्तु ज्यों ही उन्हें पता लगा वे लन्दन छोड़कर अचानक वेल्स चले गये ।

वेल्स में भी राजनीतिक कार्यों में अत्यधिक लगन एवं चिन्ताओं से सावरकर का स्वास्थ्य निरन्तर गिरता गया, पर इनके मित्रों ने माता से भी बढ़कर इनकी परिचर्या की, रोग शय्या पर पड़े हुए भी ये क्रान्तिकारी पत्रों में लेख लिखते रहे । उन दिनों 'तलवार' नामक पत्र में इन्होंने जो लेख लिखा था, वह क्रान्तिकारियों की आन्तरिक भावनाओं का परिचायक है । लेख में क्रान्तिकारी आन्दोलन की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालते हुए कहा गया था—

"हमें गुप्त संस्थाओं और गुप्त तरीकों से लड़ने में कोई विशेष आनन्द नहीं आता । परन्तु जहाँ सच्चाई की बात दमन से दबा दी जाती हो, वहाँ गुप्त संस्थाओं का अस्तित्व अनिवार्य हो जाता है । जहाँ किसी राष्ट्र के राजनीतिक विकास एवं विचार को आतंक से कुचल दिया जाता हो, वहाँ सत्य को पुनः उसके उच्चासन पर प्रतिष्ठित करने के लिये विद्रोह ही एकमात्र प्रभावशाली साधन शेष रह जाता है । जिन देशों के लोग वैधानिक मार्ग से राज्य में अपना बहुमत स्थापित कर सकते हैं, जैसे इंग्लैण्ड, फ्रांस, अमेरिका आदि है, वहाँ गुप्त संस्थाओं द्वारा षड्यन्त्रकारी आन्दोलन चलाना अलबत्ता निन्दनीय हो सकता है । हमारे देश में भी जिस दिन वैध उपायों द्वारा अपने उद्देश्य को प्राप्त करना सम्भव प्रतीत होगा, उस दिन हम भी गुप्त एवं आतंकवादी मार्ग से मुँह मोड़ लेंगे । भारत को हमें हर हालत में स्वतन्त्र कराना है । हम हृदय से चाहते हैं कि हमारा यह उद्देश्य शान्तिपूर्ण और केवल शान्तिपूर्ण मार्ग से ही प्राप्त हो, परन्तु ब्रिटिश शासन के अमानुषिक अत्याचारों ने हमें मजबूर होकर इस आतंकवादी मार्ग को अपनाने के लिये बाध्य किया है । आज भारत में केवल बन्दूकों के बल पर शासन चल रहा है । ऐसी दशा में जब देश में कोई प्रजातांत्रिक विधान ही नहीं है तब वैधानिक आन्दोलन की बात करना मूर्खता है । हाँ, जहाँ वैधानिक मार्ग खुले हों,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वहाँ हिंसक क्रान्ति की बात सोचना मूर्खता ही नहीं, भयंकर अपराध भी है ।"

चूँकि आप बन्दूक रखने नहीं देते, इसलिये हम पिस्तौल उठाते हैं चूँकि "आप प्रकाश में इकट्ठा होने से रोकते हैं, इसलिये हम भारत माता को दास्य-शृंखला से मुक्त करने के उपायों पर विचार करने के लिये अँधेरे में इकट्ठे होते हैं ।" ये विचार उस परिस्थिति पर स्पष्ट प्रकाश डाल रहे हैं, जिनके कारण सावरकर को क्रान्तिकारी, षड्यंत्रकारी, मार्ग का अवलम्ब करना पड़ा था ।

सावरकर को वेल्स गये पन्द्रह दिन भी नहीं बीते थे कि एक दिन इन्होंने अखबार में आश्चर्यचकित हो यह समाचार पढ़ा कि अनन्त कान्हेरे नामक एक ब्राह्मण युवक ने सावरकर के बड़े भाई गणेश सावरकर को दिये गये आजन्म कारावास का बदला लेने के लिये नासिक के कलेक्टर जैक्शन को गोली से उड़ा दिया है । दूसरे दिन यह खबर मिली कि उनके छोटे भाई नारायण तथा अन्य अनेक मित्र हत्या, षड्यन्त्र और राजद्रोह के अपराध में पकड़े गये हैं ।

अंग्रेजी पत्र खुल्लमखुला भारत में जारी हिंसक उपद्रवों एवं जैक्शन की हत्या का सारा दोष सावरकर पर मढ़ने लगे और इन्हें गिरफ्तार करने पर जोर देने लगे । अंग्रेजों की यह मनोदशा देखकर इनके मित्रों ने इन्हें इंग्लैण्ड छोड़ फ्रांस जाने की सलाह दी । परन्तु सावरकर ने अंगीकृत कार्य को अधूरा छोड़कर फ्रांस जाना अनुचित समझा । इस पर 'अभिनव भारत' की कार्यकारिणी ने सावरकर से अनुरोध किया कि हमारे उचित मार्गदर्शन एवं आपके स्वास्थ्य की दृष्टि से आपका जेल से बाहर रहना अत्यन्त आवश्यक है अतः आप फौरन इंग्लैण्ड से फ्रांस चले जायें । पेरिस से इसी आशय के कई पत्र आये । श्यामजी कृष्ण वर्मा को भी पेरिस आने के लिये अत्यन्त आग्रहपूर्ण आमन्त्रण मिले । अतः दुःख भरे एवं भारी हृदय से वे लन्दन के अपने मित्रों से विदाई लेकर पेरिस के लिये रवाना हुए ।

पेरिस पहुँचने पर उनका भव्य स्वागत हुआ । वे वहाँ पारसी क्रान्तिकारी महिला मैडम कामा के यहाँ ठहरे । कामा ने माता के समान सावरकर की सब प्रकार से सेवा की, जिससे उन्हें शीघ्र ही स्वास्थ्य लाभ हो गया । श्रीमती कामा पेरिस से 'वन्देमातरम्' नामक एक पत्र प्रकाशित करती थीं, जिसमें वे इंग्लैण्ड, अमेरिका, जर्मनी आदि देशों में अंग्रेजों द्वारा भारत के बारे में फैलायी जाने वाली झूठी खबरों का निराकरण किया करती थीं । श्रीमती कामा ने भारतीय कांग्रेस के जनक दादाभाई नौरोजी को ब्रिटिश पार्लियामेण्ट का सदस्य निर्वाचित कराने में अथक प्रयत्न किया था । बाद में 'होमरूल आन्दोलन' में सम्मिलित हुईं और कुछ दिन पश्चात् वे सावरकर की क्रान्तिकारी संस्था 'अभिनव भारत' की सक्रिय सदस्या बन गईं । एक बार वे बर्लिन में आयोजित अखिल जर्मन समाजवादी सम्मेलन में सम्मिलित हुईं । साथ में वे सावरकर द्वारा स्वीकृत भारतीय तिरंगे राष्ट्रध्वज को भी ले गई थीं निकाल कर फहराते हुए बोलीं—

"यह है भारत का स्वतन्त्र राष्ट्रीय ध्वज, जो आपके सामने फहरा रहा है । भारतीय देशभक्तों के रक्त से वह पवित्र हो चुका है । अतः मैं उपस्थित सज्जनों से अनुरोध करती हूँ कि आप सब लोग खड़े होकर भारत की इस स्वतन्त्र पताका का सम्मानपूर्वक अभिवादन करें ।" श्रीमती कामा के शब्दों का सदस्यों पर जादू-सा असर हुआ और तत्काल सभी लोगों ने खड़े होकर भारतीय ध्वजा की टोप उतार कर वन्दना की । इतिहास में यह प्रथम अवसर था जबकि किसी भारतीय ने विदेश में अपने राष्ट्र की स्वतन्त्र पताका फहराने का साहस किया था ।

जैक्शन हत्याकाण्ड की अदालती कार्यवाही के समाचार पेरिस पहुँचने लगे । अभियुक्तों ने न्यायालय में पुलिस द्वारा किये गये अमानुषिक अत्याचारों की रोमांचकारी कहानियाँ विस्तार से वर्णन की थीं । अपने मित्रों एवं सहयोगियों पर होने वाले अत्याचारों को सुनकर सावरकर सोचने लगे—"क्या यह मनुष्यता है कि मैं अपने साथियों को जो मेरी ही प्रेरणा से इस षड्यन्त्रकारी मार्ग को अपना रहे थे, आग में ढकेल कर स्वयं फ्रांस की इस सुन्दर राजधानी में आराम से बैठा तमाशा देखता रहूँ ? जब मैं स्वयं ही प्रत्यक्ष आन्दोलन से अलिप्त हूँ, तो अपने साथियों को मैदान में शत्रु से मोर्चा लेने का आदेश देने का मुझे क्या नैतिक अधिकार है ? मेरे मित्र श्यामजी वर्मा मुझसे कहते हैं कि तुम सेनापति हो, इसलिये तुम्हें सेना के साथ न चलकर पीछे रहना चाहिये परन्तु सेनापति भी सेना की अगली टुकड़ी में लड़कर वीरता दिखाने के बाद ही बनता है, अतएव मैं सेनापति कैसा ? यदि संकटों से घबराने वाला ही सेनापति बनने लगा, तो प्रत्येक सिपाही अपने को सेनापति समझकर घर बैठना पसन्द करेगा । तब मैदान में लड़ने कौन जायेगा ? फिर कायरों और वीरों में अन्तर ही क्या रहा ? तब तो कायरों को अपनी कायरता छिपाने का अच्छा साधन मिल जायेगा ।

इस प्रकार सोचते हुए सावरकर वायु सेवन को निकल पड़े । घूमते-घूमते इन्होंने जेब से ताजा अखबार निकाला । इसमें जैक्शन को गोली से उड़ा देने वाले कान्हेरे को प्राण-दण्ड का समाचार था, जिसे पढ़कर वे उत्तेजित हो आप ही कहने लगे—"एक वह कान्हेरे हैं, जो मेरे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपदेश से प्रेरित होकर फाँसी पर झूलने जा रहा है और एक मैं हूँ जो यहाँ नदी के किनारे पक्षियों और फूलों की सुन्दरता में विहार कर रहा हूँ । एक वे हैं जो मेरे द्वारा कराई प्रतिज्ञाओं के कारण बेड़ियाँ और हथकड़ियाँ पहने भूखे और प्यासे कारावास की अन्धेरी कोठरियों में पड़े सड़ रहे हैं और एक मैं हूँ, जो यहाँ नदी तट पर आनन्द से घूम रहा हूँ । नहीं, मुझे अब कुछ कर गुजरना ही होगा । यदि मुझे भारत नहीं जाने दिया तो मैं पुनः इंग्लैण्ड जाऊँगा । मुझे वे सब कष्ट सहने चाहिये, जो मेरे साथी सह रहे हैं । मुझे संसार को बताना होगा कि में केवल दूसरों को प्रेरणा ही नहीं देता, स्वयं भी विपत्तियों का वरण कर सकता हूँ । यदि वहाँ मैं पकड़ा गया, तो और भी अच्छा होगा और यदि प्राणदण्ड मिला तो प्रसन्नता होगी । मातृभूमि की सेवा में प्राणार्पण करने की मेरी प्रतिज्ञा पूरी हो जायेगी । मैं अवश्य इंग्लैण्ड जाऊँगा और अपने को जानबूझ कर संकट में डालूँगा । कठिन से कठिन विपत्तियों को सहकर ही दूसरों को कष्ट-सहन करने की प्रेरणा देने का अधिकारी हो सकूँगा ।"

इन विचारों में डूबे हुए सावरकर जैसे-तैसे घर लौटे और अपने साथियों को लन्दन लौट जाने के अपने निश्चय से अवगत कराया । दूसरे ही दिन वे लन्दन के लिये जहाज से रवाना हो गये । पेरिस के सभी भारतीय इन्हें विदाई देने बन्दरगाह पर पहुँचे । जहाज पर चढ़कर सबसे अन्तिम विदाई लेते हुए सावरकर बोले—"अब तक मैंने केवल बातूनी कार्य किया है पर अब प्रत्यक्ष कार्य द्वारा विपत्तियों का सामना करने जा रहा हूँ । केवल भाषणों और लेखों से देश का उद्धार नहीं हो सकता ।"

लन्दन में गिरफ्तारी

जहाज फ्रांस से इंग्लैण्ड पहुँचा । बन्दरगाह से सावरकर लन्दन जाने वाली रेल पर सवार हुए यद्यपि वे गिरफ्तारी की आशंका अवश्य कर रहे थे, पर उन्हें यह कल्पना नहीं थी कि वे रेल से उतरते ही गिरफ्तार कर लिये जायेंगे । शुरू से ही उनके डिब्बे पर सशस्त्र पुलिस का पहरा था और ज्यों ही वे लन्दन स्टेशन पर डिब्बे से प्लेटफार्म पर उतरे, उन्हें वारण्ट दिखाकर तत्काल गिरफ्तार कर लिया गया । यह घटना १३ मार्च, १९१० की है । दूसरे ही दिन संसार के प्रायः सभी समाचार-पत्रों में इनकी गिरफ्तारी का समाचार प्रकाशित हुआ । बाद में उन्हें अदालत में पेश किया गया । ज्यों ही सावरकर ने न्यायालय में प्रवेश किया, अदालत द्वारा इन पर राजद्रोह एवं हत्या के लिये प्रोत्साहन का अभियोग लगाकर इन्हें जेल में रखा गया और बाकायदा अदालती कार्यवाही भारत में चलाने का निश्चय किया गया । लन्दन की जेल से छुड़ाने के लिये इनके मित्रों ने कई षड्यन्त्र रचे पर वे उनमें असफल रहे ।

यद्यपि सावरकर को भारत ले जाने की आज्ञा हो चुकी थी । उन दिनों भारत आने के लिये जहाज से इंग्लिश खाड़ी को पार कर फ्रांस के किनारे उतरना पड़ता था और वहाँ से रेल द्वारा इटली होकर फिर जहाज द्वारा भारत आना पड़ता था । ब्रिटिश सरकार सावरकर को फ्रांस होकर भारत नहीं लाना चाहती थी क्योंकि उसे भय था कि फ्रांसीसी सरकार सावरकर को फ्रांस की भूमि पर छुड़ा लेगी और उल्टे ब्रिटिश सरकार पर सावरकर को बलपूर्वक कैद करने का दावा चलायेगी । इसलिये उन्हें इस मार्ग को छोड़ बिस्के की खाड़ी द्वारा ले जाने का निश्चय किया गया । इस प्रकार सावरकर २६ वर्ष की आयु में बैरिस्टर के स्थान पर कैदी के रूप में मातृभूमि के दर्शनों को चल पड़े । जहाज पर इनकी देख-रेख के लिये भारत से विशेष रूप से बुलाये गये हिन्दुस्तानी सिपाही तथा लन्दन के खुफिया विभाग के अधिकारी रखे गये थे । अंग्रेज सिपाही इस खुशी में फूले न समाते थे कि इस भयंकर क्रान्तिकारी को हमने किस चतुराई से बन्दी बनाया है । उधर सावरकर मन ही मन सोच रहे थे कि किस प्रकार जहाज से निकल भाग कर इन अंग्रेजों का घमण्ड चूर-चूर कर दिया जाये ।

सावरकर उचित अवसर की ताक में थे सौभाग्य से उन्हें ऐसा अवसर मिल गया । जहाज को किसी कारण वश फ्रांस के मार्सेलस बन्दरगाह पर लंगर डालना पड़ा । वीर सावरकर ने दूर तक नजर डाली पर कोई सहायक उन्हें नजर नहीं आया, जो उन्हें छुड़ाने या भाग निकलने में सहायता करता । अतः अब वे अपने ही बलबूते पर भाग निकलने की युक्ति सोचने लगे । पुलिस सिपाहियों की उन पर कड़ी नजर थी । वे उन्हें अकेला छोड़कर एक मिनट के लिये भी इधर-उधर नहीं जाते थे । स्नान, शौच आदि के समय भी सिपाही दरवाजे से अड़कर खड़े रहते और सामने लगे हुए शीशे में उनका प्रतिबिम्ब देखकर प्रत्येक हलचल पर कड़ी निगाह रखते थे । सुबह जहाज चलने का समय हुआ । सावरकर अपनी तंग कोठरी में बैठकर सोच रहे थे कि कुछ भी हो आज किसी प्रकार जहाज से निकलना है । पास में दो अंग्रेज अधिकारी सोये हुए थे और एक सिपाही खड़ा पहरा दे रहा था । उन्होंने पहरे वाले गोरे सिपाही से कहा—मुझे शौच के लिये जाना है, ले चलिये ।

सिपाही ने अफसर को जगाया और अफसर तथा सिपाही तीनों उन्हें पकड़कर शौचालय में ले गये । सावरकर ने देखा कि शौचालय की कोठरी के ऊपर एक छोटा-सा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

छेद (पोर्टहोल) है, जहाँ से समुद्र में कूदकर भागा जा सकता है उन्हें एक तरकीब सूझी, पहने हुए गाऊन को उन्होंने कोठरी के दरवाजे पर डाल दिया ताकि अन्दर का दृश्य बाहर दिखाई न दे सके और फौरन उचक कर खिड़की के रास्ते समुद्र में कूद पड़े । ज्योंही पुलिस अधिकारियों को इस अकल्पित घटना का भान हुआ, वे घबरा गये । एक भारतीय कैदी के इस प्रकार के अदम्य साहस एवं अनुपम् बहादुरी को देखकर गोरों ने आश्चर्य से दाँतों तले अँगुली दबाली । सावरकर तैरते हुए डुबकी लगाते हुए फ्रांस के किनारे की ओर तेजी से बढ़ते जा रहे थे और इधर गोरे सिपाही पीछे से सावरकर पर गोलियों की बौछार कर रहे थे किन्तु सावरकर एक विजयी सिंह की भाँति मीलों तैरने के बाद आखिर फ्रांस के किनारे पर आ पहुँचे । सागर तट फ्रांस की सीमा में था । अतः उन्होंने तट पर खड़े होकर फ्रांसीसी सिपाही से खुद को गिरफ्तार कर लेने को कहा पर सिपाही उनकी भाषा न समझ सका और उसने सावरकर को पीछा करने वाले अंग्रेज सिपाहियों को चुपचाप सौंप दिया । फलतः सावरकर पुनः बेड़ियों से जकड़कर जहाज की उसी तंग कोठरी में बन्द कर दिये गये ।

भारत की ओर प्रस्थान

सावरकर को लेकर जहाज पुनः भारत की ओर चला । अब उन पर पहरा इतना कड़ा रहने लगा कि कोठरी के बाहर की खुली वायु भी उनके लिये दुश्वार हो गई । दोनों अफसर भी उनकी कोठरी में ही रात-दिन रहने लगे । सावरकर मन ही मन सोचने लगे—"अब क्या किया जाये । मेरे इतने भयंकर साहस का भी कोई नतीजा नहीं निकला । स्वतन्त्र तो हो ही न पाया, उल्टे पाँव की बेड़ियाँ और ज्यादा मजबूत हो गई खैर, मैंने अपनी शक्ति भर यत्न किया है । सफलता-असफलता तो ईश्वराधीन है । कर्त्तव्य करना ही मनुष्य के स्वाधीन है, फल की प्राप्ति नहीं ।"

२२ जुलाई को जहाज बम्बई बन्दरगाह पर पहुँचा और नंगी संगीनों के पहरे में सावरकर ने अपनी मातृभूमि पर पैर रखते हुए लौह जंजीरों से जकड़े हुए हाथों से इस पुण्य भूमि को भक्ति भावना से नतमस्तक हो नमस्कार किया । बन्दरगाह से वे बन्द मोटर में बिठाकर नासिक पहुँचाये गये और वहाँ उन्हें कड़े पहरे में नजरबन्द रखा गया । नासिक जेल में रहते हुए एक दिन एक अंग्रेजी पत्र में सावरकर ने पढ़ा कि फ्रांसीसी सरकार इन्हें ब्रिटिश सरकार से वापस माँग रही है, क्योंकि इन्हें फ्रांसीसी भूमि पर गिरफ्तार किया गया था, जो कि अन्तर्राष्ट्रीय कानून के खिलाफ है । इन्हें सन्तोष हुआ कि आखिर उनका प्रयत्न विफल न गया । अंग्रेज अफसर चकित थे कि मार्सेलस की घटना पत्रों में कैसे छप गई । यह समाचार पहले पहल पेरिस से साम्यवाद के जनक कार्लमार्क्स के पौत्र के सम्पादकत्व में प्रकाशित होने वाले पत्र "लहमैनिटी' में छपा था उसे सावरकर से बहुत सहानुभूति थी । बाद में फ्रांस के दूसरे पत्रों ने भी इसके लिये तीव्र आन्दोलन किया पर ब्रिटिश सरकार ने सावरकर को फ्रांस लौटाने से साफ इन्कार कर दिया और विवाद को शान्त करने के लिये यह मामला हेग के अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय को सौंपा गया ।

सावरकर ने नासिक जेल में रहते हुए फ्रांस की प्रतिष्ठा पर एक बड़ा ही हृदयस्पर्शी लेख लिखा जो गुप्तरूप से पेरिस के भारतीय क्रान्तिकारियों के पास पहुँचा । उन्होंने उसे छापकर यूरोप के अनेक प्रगतिशील देशों में वितरित किया । उधर यूरोप में इस प्रकार ब्रिटिश विरोधी आन्दोलन चल रहा था और इधर ब्रिटिश सरकार सावरकर को कठोर से कठोर दण्ड देने हेतु हेग के न्यायालय के लिये मामला तैयार कर रही थी । दूसरी ओर भारत में भी क्रान्तिकारियों को दण्ड देने के लिये 'स्पेशल ट्रिब्यूनल-एक्ट' बनाकर विशेष ट्रिब्यूनल नियुक्त किये जा रहे थे । इन पंच-फैसलों की अपील न हो सकती थी । हेग के अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में अन्त में फ्रांस ने अंग्रेजों से दबकर सावरकर को मुक्त कर देने की माँग वापस ले ली ।

अब उनका मामला बम्बई के स्पेशल ट्रिब्यूनल के सामने पेश हुआ । सशस्त्र सिपाहियों से लैस बन्द मोटर में सावरकर को जेल से हाईकोर्ट पहुँचाया गया । न्यायालय में प्रवेश करते ही तालियों की गड़गड़ाहट ने सावरकर का स्वागत किया । चकित होकर जब उन्होंने दशकों की गैलरी की ओर देखा तो वहाँ एक भी दर्शक न था । तब उन्होंने नीचे नजर दौड़ाई, जहाँ ३०-४० अन्य अभियुक्त दिखाई दिये इन्हीं युवकों ने जंजीरों से जकड़े हुए हाथों से सावरकर का स्वागत किया था । ऐसे स्वागत शायद ही संसार के किसी नेता का आज तक हुआ हो । इन अभियुक्तों में से बहुतों का अपराध केवल सावरकर से सम्पर्क रखना ही था । इनका छोटा भाई नारायण भी इन्हीं अभियुक्तों में था । तीन मास तक मुकद्मा चलने के बाद २३ दिसम्बर, १९१० को ट्रिब्यूनल ने उन्हें आजन्म काले पानी की सजा सुनादी । सावरकर सजा सुनते ही 'वन्दे मातरम्' का नारा लगाकर पीछे हट गये । इसके बाद अन्य अभियुक्तों को भी चौदह से लेकर तीस वर्ष के लिये कठोर कारावास का दण्ड दिया गया ।

सावरकर पर सरकार ने दो गम्भीर अभियोग लगाये थे । पहला नासिक षड्यन्त्र में सहायता देने का और दूसरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जैक्शन की हत्या के लिये प्रोत्साहन देने का । दोनों अभियोगों में उन्हें आजन्म कारावास का अर्थात् ५०—५० वर्ष की काले पानी की सजा सुनाई गई थी पर दोनों सजायें एक साथ चलने वाली थीं । सजायें सुनकर सावरकर जरा भी विचलित नहीं हुए और उन्होंने बड़ी गम्भीर और निर्भीक वाणी में न्यायाधीश को सम्बोधित करते हुए कहा—

"आपने कानून के अनुसार अधिक से अधिक कड़ी सजा मुझे बहाल की है, उसे मैं सहने के लिये सहर्ष तैयार हूँ क्योंकि मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि कष्ट-सहन और स्वार्थ त्याग के द्वारा ही हम अपनी प्रिय मातृभूमि का उद्धार कर सकेंगे । हमारी भारत माता अवश्य स्वतन्त्र होगी । कब होगी, यद्यपि आज नहीं बताया जा सकता पर वह स्वतन्त्र होगी, यह निश्चित है ।"

सावरकर को काले पानी की सजा सुनाने के बाद उन्हें कुछ दिन बम्बई के समीप डोंगरी नामक कारागृह में रखा गया । बाद में वहाँ से उन्हें अण्डमान भेजा जाना था । उस समय जिन्हें आजन्म कारावास की सजा होती थी, उन्हें भारत से ६०० मील दूर बंगाल के उपसागर में स्थित अण्डमान नामक द्वीप में रखा जाता था, जहाँ साल में करीब नौ महीने तक लगातार वर्षा हुआ करती है । चारों ओर घना जंगल, सर्द हवा और मच्छरों की भरमार, ऐसे नरक तुल्य स्थान पर कठोर यम-यातनाओं से भरे कारागार में सावरकर को भेजा जा रहा था । अण्डमान रवाना होने से पूर्व उन्हें एक बार अपनी पत्नी के भेंट करने की अनुमति मिली थी ।

उनकी पत्नी सजल नेत्रों से जब उनसे मिलने गई तब वे कैदियों के कपड़े पहिने हुए लौह सींकचों से बन्द खिड़की के पास खड़े हुए उन्हें दिखाई दिये । बैरिस्टरी की शानदार वेश में देखने की अभिलाषा से प्रेरित उनकी पत्नी ने जब उन्हें इस प्रकार जाँघियाँ और बनियान पहिने कैदी के भेष में देखा तो वे भावावेश में एक बारगी रो पड़ीं । धीरोद्दात वीर सावरकर अपनी पत्नी की तीव्र मनोव्यवस्था का अनुभव कर रहे थे पर वे स्थितप्रज्ञ हो गम्भीर वाणी से पत्नी को सांत्वना देने लगे । उन्होंने कहा—

"धीरज रखो ! केवल सन्तान पैदा करना और खाना-पीना, मौज करना यही मात्र मानव जीवन का उद्देश्य नहीं है । ऐसा जीवन तो पशु-पक्षी भी बिता रहे हैं । हमें तो समाज और देश की दुर्दशा को मिटाने और भारत माता की गुलामी की बेड़ियाँ चूर-चूर करना है । इसी उद्देश्य से हमने अपने व्यक्तिगत सुखोपभोगों का त्याग कर यह कंटकाकीर्ण मार्ग-स्वेच्छा से अपनाया है । हमने स्वयं अपने हाथों अपने व्यक्तिगत स्वार्थ को तिलांजलि दी है, ताकि भारत के करोड़ों लोगों के कष्ट दूर हों । इसलिये चिन्ता न करो और धैर्य के साथ आने वाली आपदाओं को सहर्ष सहन करो यही सच्ची मानवता है । इसी में सच्चा पुरुषार्थ है ।"

अण्डमान की काल-कोठरी में

मद्रास से 'महाराजा' जलयान द्वारा वीर सावरकर को अण्डमान द्वीप में लाया गया । सागर-तट से रवाना होते ही सावरकर के मन में एकबारगी यह विचार कौंध गया—"क्या मैं अपनी प्यारी मातृभूमि के पुनः दर्शन कर सकूँगा ? क्या मेरी मातृभूमि से यह अन्तिम विदाई है ?" इस विचार से वे क्षणमात्र को विह्वल हो गये ।

४ जुलाई, १९११ को सावरकर अण्डमान पहुँचे, जहाँ उन्हें नरकतुल्य कठोर कारागार में बन्दी बनाकर रखा गया । उन्हें वहाँ कैसी-कैसी असह्य यंत्रणायें सहनी पड़ीं, यह वर्णन करना असम्भव है । उन्हें वर्षों तक रस्सी कूटने, कोल्हू चलाने जैसे परिश्रम का काम करना पड़ा । आठ दिन तक उन्हें हाथों में हथकड़ियाँ पहनाकर टाँगकर रखा गया । एक महीना तक एकान्त काल कोठरी में उन्हें रहना पड़ा । इन असह्य यातनाओं से ऊबकर कई बार उनके मन में आत्महत्या तक के विचार आते थे । अनेक राजबन्दियों ने अण्डमान की यम-यातनाओं से ऊबकर के प्राण भी दे दिये थे और कुछ बन्दी पागल बन गये थे ।

अण्डमान के कारावास में रहते हुए भी वे राजबन्दियों के विषय में निरन्तर आन्दोलन करते रहे । इस समय तक इनका छोटा भाई नारायण जेल से मुक्त हो चुका था । उसे वर्ष में एक बार पत्र लिखने का इन्हें अवसर मिलता था । वे पत्र द्वारा भाई को आन्दोलन की प्रेरणा दिया करते थे । बन्दियों में से जो लोग अपनी सजायें समाप्त कर स्वदेश लौटते थे उन्हें सावरकर अपनी कवितायें तथा सन्देश कण्ठस्थ करा देते थे । जो लोग स्मरण न कर सकते थे, उन्हें लिखकर देते थे । साथ ही उन्हें पत्र छिपाने की विधि भी बता देते थे । इस प्रकार इनकी अनेक कवितायें और लेख ६०० मील की दूरी पार करके भारत पहुँचे और समाचार-पत्रों द्वारा जनता में वितरित हुए ।

करीब आठ वर्ष तक अण्डमान में सावरकर का स्वास्थ्य ठीक रहा और वे सब शारीरिक यातनायें चुपचाप सहते रहे परन्तु ऐसी बात सदा तो नहीं चल सकती थी । अतः इनका स्वास्थ्य निरन्तर गिरने लगा । संग्रहणी के रोग से शरीर अस्थिपंजर हो गया । इनका वजन ११६ पौण्ड से घटकर ९८ पौण्ड रह गया । फिर भी इन्हें अस्पताल न भेजकर कारागार की कोठरी में ही रखा गया । वे १९१९ से १९२१ तक लगातार दो वर्ष रोगशय्या पर ही पड़े

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहे । इस अवस्था में अपनी मृत्यु निकट देखकर इन्होंने मृत्यु का आह्वान करते हुए 'मरणोन्मुख शय्या पर' नामक एक मराठी कविता भी रची थी ।

यद्यपि सावरकर अपने देश से ६०० मील दूर अण्डमान की काल-कोठरी में बन्द थे, तथापि भारतीयों ने अपने इस वीर देश-भक्त को एक दिन के लिये भी नहीं भुलाया था । इनके साहसिक कृत्यों की जनता में सर्वत्र प्रशंसा की जाती थी और समाचार-पत्रों एवं सार्वजनिक सभाओं द्वारा इनकी शीघ्र रिहाई के लिये लगातार प्रयत्न किये जाते थे । इनके छुटकारे के लिये एक 'सावरकर सप्ताह' मनाया गया और करीब सत्तर हजार हस्ताक्षरों से युक्त एक प्रार्थना-पत्र सरकार के पास भेजा गया । उस समय तक किसी नेता की रिहाई के लिये इतना बड़ा आन्दोलन कभी नहीं हुआ था । अन्त में सरकार को विवश होकर सावरकर को १९२१ की मई में अण्डमान से कलकत्ता बुलाना पड़ा । वहाँ से उन्हें रत्नागिरी जेल भेज दिया गया । बाद में ६ जनवरी, १९२४ को उनकी जेल से मुक्ति हुई और उन्हें रत्नागिरी जिले में स्थानबद्ध करके रखा गया । केवल जिले भर में घूमने फिरने की स्वतन्त्रता इन्हें दे दी गई । इसका लाभ उठाकर इन्होंने रत्नागिरी में हिन्दू-संगठन का कार्य आरम्भ किया ।

यह कार्य इतनी लगन से किया गया कि नजर बन्दी के तेरह वर्षों का इतिहास हिन्दू-संगठन का ही इतिहास कहा जा सकता है । महाराष्ट्र के इस प्रदेश में छुआछूत उग्ररूप में फैली हुई थी । सावरकर ने सर्वप्रथम इसी बुराई पर कुठाराघात करने का निश्चय किया । इन्होंने घूम-घूमकर जिले के विभिन्न स्थानों पर व्याख्यान देकर धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक दृष्टि से छुआछूत को हटाने की आवश्यकता बतलाई । सावरकर की तर्कपूर्ण दलीलों से प्रभावित होकर अनेक शिक्षित नवयुवक इनके साथ हो लिये । अवकाश के दिन ये लोग दलित अस्पृश्य परिवारों में जाते, उनके साथ सहभोज करते, उन्हें उपदेश देते और उनसे साफ-सुथरा रहने एवं मद्य-माँस छोड़ने का आग्रह करते । इस पारस्परिक मिलाप से दलितों में अपने को हीन समझने की भावना धीरे-धीरे जाती रही । सावरकर की प्रेरणा से भागोजी नामक एक श्रीमान ने ढाई लाख रुपये व्यय करके रत्नागिरि में 'श्री पतित पावन मन्दिर' का निर्माण करा दिया । इसमें प्रत्येक हिन्दू-मात्र, चाहे वह अछूत जाति का ही क्यों न हो, पूजा कर सकता है । इस प्रकार सावरकर व इनके सहयोगियों के इस क्रान्तिकारी कार्य से सनातनी हिन्दुओं का कोप भड़क उठा । उन्होंने इसका न केवल विरोध ही किया, अपितु इसमें रोड़े अटकाने का भरसक प्रयत्न किया परन्तु सावरकर के साहस के सम्मुख विरोधी हार मान कर बैठ गये ।

सावरकर केवल अछूतोद्धार से ही अन्तुष्ट न हुए । ईसाई पादरियों और मुल्लाओं द्वारा भोले-भाले हिन्दुओं को बहकाकर किये जा रहे धर्मान्तरण के विरोध में सावरकर ने शुद्धि-आन्दोलन चलाने का निश्चय किया । रत्नागिरि में उन्होंने अपने निवास काल में लगभग ३५० धर्म-भ्रष्ट हिन्दुओं को पुनः हिन्दू-धर्म में दीक्षित किया । साथ ही उन्होंने इसी समय अखिल भारतीय हिन्दू संगठन के लिये भी अथक परिश्रम किया ।

सावरकर एक उच्चकोटि के कवि, वक्ता और साहित्यकार भी थे । नागरी लिपि में छपाई के कुछ दोष देखकर उन्होंने इसकी वर्णमाला में आवश्यक सुधार किया ताकि छपाई में अधिक सुविधा हो । आज तो उन सुधारों को प्रायः सभी मराठी पत्रों ने अपने टाइपों में परिवर्तन कर लिया है और हिन्दी प्रेसों में भी उनका तेजी से अनुसरण किया जा रहा है ।

सावरकर ने अपनी नजरबन्दी काल में अंग्रेजी और मराठी में अनेक मौलिक ग्रन्थ भी लिखे हैं, जिनमें मैजिनी, गैरीवाल्डी की जीवनियाँ, १८५७ का स्वातन्त्र्य-समर, 'मेरी कारावास कहानी', 'हिन्दुत्व' आदि मुख्य हैं । 'हिन्दुत्व' पुस्तक में उन्होंने 'हिन्दू' की अपनी स्वतन्त्र व्याख्या की है, जिसे आगे चलकर हिन्दू महासभा ने अधिकृत मान्यता प्रदान कर दी । 'हिन्दू' की परिभाषा इस प्रकार है—

आसिंधु सिन्धु पर्यंता यस्य भारतभूमिका ।
पितृभूः पुण्यभूश्चैव सवै हिन्दुरितिस्मृतः ।।

अर्थात्—"सिन्धु (नदी) से सिंधु (समुद्र) तक फैली हुई भारत भूमि को जो अपनी पितृ-भूमि और पुण्य-भूमि मानता है वह 'हिन्दू' है ।"

इस व्याख्या के अनुसार, वे सनातनी, आर्य-समाजी बौद्ध, सिख, जैन सभी सम्प्रदाओं को हिन्दू-धर्म के अन्तर्गत ही मानते हुए सबको 'हिन्दू' नाम से ही सम्बोधित करते थे ।

सावरकर के रत्नागिरि वासव्य-काल में महात्मा गाँधी भी महाराष्ट्र के दौरे के सिलसिले में रत्नागिरी गये थे और उन्होंने सावरकर से भेंट की थी । बाद में उनके तथा उस समय के बम्बई राज्य मन्त्रिमण्डल के मन्त्री श्री जमनादास मेहता के प्रयत्न से सरकार ने सावरकर पर से सारे निर्बंध हटा लिये और उन्हें ८ मई, १९३७ को बिना शर्त नजरबन्दी से मुक्त कर दिया ।

उनकी नजरबंदी समाप्त होते ही विभिन्न राजनैतिक दलों ने उन्हें अपने दल में सम्मिलित होने के लिये आमंत्रित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किया । कांग्रेस के प्रमुख नेता पं. जवाहर लाल नेहरू ने भी एक विशेष वक्तव्य द्वारा सावरकर का अभिनन्दन किया और उन्हें कांग्रेस में सम्मिलित होने पर ऊँचा पद देने का प्रलोभन भी दिया पर उन्हें कांग्रेस के मुसलमानों को हर कीमत पर सन्तुष्ट करने की नीति पसन्द नहीं थी । अत: उन्होंने कांग्रेस में जाना स्वीकार नहीं किया ।

बाद में सावरकर ने हिन्दू-संगठन के कार्य को ही जीवन का एक मात्र उद्देश्य बनाया । वे हिन्दू महासभा के सक्रिय सदस्य बने । उन्होंने शस्त्र-बंदी कानून रद्द करने के लिये आन्दोलन कर १९३८ के जून में पूना में शस्त्र-बंदी के खिलाफ विशाल जलूस निकाला ।

हिन्दू-संगठन के लिये उन्होंने महाराष्ट्र, पंजाब, बंगाल, बिहार और उत्तर प्रदेश आदि प्रान्तों में घूम-घूमकर जोरदार प्रचार किया । १९३९ में सावरकर कलकत्ता में आयोजित अ. भा. हिन्दू महासभा अधिवेशन के अध्यक्ष नियोजित किये गये । उसी वर्ष हैदराबाद में आर्य-समाज द्वारा सत्याग्रह आन्दोलन शुरू हुआ था । सावरकर ने सदल-बल इस सत्याग्रह में भाग लेकर उसे यशस्वी बनाया । इसके बाद सन् १९४१ में हिन्दू-महासभा का अधिवेशन सावरकर की अध्यक्षता में भागलपुर में निर्धारित किया गया था, बिहार सरकार ने उस पर पाबन्दी लगादी थी । इसके बाबजूद भागलपुर में अधिवेशन सम्पन्न हुआ । सावरकर को अधिवेशन के लिये जाते हुए मार्ग में ही गिरफ्तार कर लिया और उन्हें एक सप्ताह तक जेल में रखा गया । बाद में उनका अध्यक्षीय भाषण अधिवेश में पढ़कर सुना दिया गया था ।

सन् १९४२ में ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के एक मन्त्री श्री स्टैफर्डक्रिप्स भारतीय स्वतन्त्रता के प्रश्न पर चर्चा करने हेतु भारत आये थे । उन्होंने देश के दलों के प्रमुख नेताओं को इस सम्बन्ध में चर्चा के लिये आमंत्रित किया था, हिन्दू-महासभा के अध्यक्ष के नाते सावरकर से भी उन्होंने भेंट की और उनके सम्मुख भारत के विभाजन की योजना रखी । सावरकर ने अखण्ड भारत पर जोर देते हुए क्रिप्स योजना का कड़ा विरोध किया । इसके बाद वायसराय ने भी सावरकर से इसी सिलसिले में दो-बार भेंट की पर वे अन्त तक अखण्ड भारत के ही पक्षपाती रहे ।

सन् १९४२ के क्रान्तिकारी आन्दोलन के बाद देश में स्वतन्त्रता की भावना तीव्र हो गई थी अंग्रेज अब भारत से शीघ्र ही विदा होंगे, यह धारणा जनता में दृढ़ हो चली थी पर भारत छोड़ने के पूर्व-देश का बँटवारा न कर जायें, इस आशंका से नेतागण बेचैन थे । मुस्लिमलीग पाकिस्तान की माँग पर अटल थी । ऐसे समय में सावरकर ने भारत-विभाजन के खिलाफ जोरदार आन्दोलन शुरू कर दिया पर अन्त में कांग्रेस नेताओं ने पाकिस्तान की माँग स्वीकार कर ली और १५ अगस्त, १९४७ को भारत का विभाजन होकर रहा । इस महान दुर्दैवी घटना से यद्यपि सावरकर के हृदय को गहरी ठेस लगी फिर भी वे इस बात से हर्षित थे कि किसी प्रकार भी भारत को चिरवांछित स्वतन्त्रता का लाभ मिल गया है । उन्हें भारत को स्वतन्त्र देखने का उनका जो स्वप्न था पूरा हो गया । उन्होंने १५ अगस्त, १९४७ को स्वयं अपने निवास स्थान पर भारत का तिरंगा राष्ट्र-ध्वज बड़े अभिमान के साथ फहराया था ।

भारत की स्वतन्त्रता-प्राप्ति से जहाँ आम-जनता में हर्षोल्लास का वातावरण फैला हुआ था, वहाँ अनेक लोग-देश-विभाजन से अत्यन्त दु:खी हो रहे थे । ऐसे लोगों को सांत्वना देते हुए सावरकर ने कहा था—"आज भारत का तीन चौथाई प्रदेश स्वतन्त्र हो गया है । इसलिये हमें हर्ष मनाना चाहिये आज सदियों के बाद हमारा इतना बड़ा प्रदेश परतन्त्रता से मुक्त हुआ है । हमें विभाजित एक चौथाई हिस्से से (पाकिस्तान से)—भयभीत होने की आवश्यकता नहीं । आज हमें जो कुछ मिला है उसी की प्राणपण से रक्षा करें और अपने देश की स्वतन्त्रता पर जरा भी आँच न आने दें । अब हमें अपने देश को प्रजातांत्रिक ढंग से समृद्ध और बलवान बनाना है ताकि निकट, भविष्य में हम अखण्ड-भारत के अपने अन्तिम साध्य को प्राप्त करने में समर्थ हो सकें ।"

स्वातंत्र्य-प्राप्ति से भारतीय जनता आनन्द से बेहोश थी पर उधर देश विभाजन के कारण पाक-अधिकृत प्रदेश में हिन्दुओं का जीवन ध्वस्त और बरबाद हो रहा था । लाखों व्यक्ति पाकिस्तान से अपनी जमीन-जायदाद, धन-सम्पत्ति छोड़कर निर्वासित बने भारत आ रहे थे । उनकी करुण-कहानी सुन-सुनकर भारतीय जनता में रोष की भावना प्रज्ज्वलित हो रही थी । पाकिस्तान में चल रहे अत्याचारों को रोकने के लिये भारतीय नेताओं ने भरकस कोशिश की पर उसका कोई नतीजा नहीं निकला । इधर महात्मा गाँधी भारतीय जनता की प्रखर भावनाओं को शान्त करने में जी-जान से जुटे हुए थे । इसी बीच ३० जनवरी, १९४८ की शाम को नाथूराम गोडसे नामक एक महाराष्ट्रीय ब्राह्मण युवक ने महात्मा गाँधी की अमानुष ढंग से गोली चलाकर हत्या कर दी । सारा देश इस महान दुर्दैवी घटना से शोकाकुल हो गया । गोडसे को घटनास्थल पर ही गिरफ्तार कर लिया गया । हत्याकाण्ड के षड्यन्त्र की अदालती जाँच शुरू हुई और इस षड्यन्त्र में सम्मिलित होने के सन्देह पर सावरकर को भी गिरफ्तार कर लिया गया पर अन्त में जाँच-पड़ताल के बाद सरकार ने उन्हें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

निर्दोष घोषित कर फरवरी १९४९ में जेल से मुक्त कर दिया।

२६ जनवरी, १९५० को भारतीय गणतन्त्र की वैधानिक रूप से घोषणा की गई और प्रथम राष्ट्रपति के नाते डॉ. राजेन्द्र प्रसाद निर्वाचित हुए तब सावरकर ने उनको तार भेजकर अभिनन्दन किया था। साथ ही राष्ट्र के लिये अपनी सेवायें अर्पण करने की इच्छा भी प्रदर्शित की थी पर दुर्भाग्य से उनकी सेवाओं का लाभ न उठाकर सरकार ने नेहरू—लियाकतअली समझौते के लिये अनुकूल वातावरण निर्माण करने के बहाने हिन्दू-महासभा एवं राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के नेताओं को हिरासत में ले लिया, जिनमें सावरकर भी थे। इस सिलसिले में एक वर्ष तक उन्हें जेल में स्थानाबद्ध रखने के बाद मुक्त किया गया। बाद में १२ मई, १९५७ को १८५७ के स्वतन्त्रता-संग्राम का शताब्दी-समारोह सारे देश में मनाया गया। उसमें सावरकर जी ने प्रमुख रूप से योगदान दिया था और दिल्ली में हुए समारोह की उन्होंने अध्यक्षता भी की थी। उस समय सावरकर ने भारतीय जनता को सम्बोधित करते हुए कहा था—

"स्वतन्त्रता-प्राप्ति का महान ऐतिहासिक कार्य हमारी पीढ़ी ने सम्पन्न कर दिया है। अब स्वतन्त्रता की प्राणपण से रक्षा करने की जिम्मेदारी भारत की नई पीढ़ी को हिम्मत के साथ अपने कन्धे पर लेनी चाहिये। भारत के भाग्य-निर्माता हमारे नवयुवक ही हैं।" इस स्फूर्तिदायक सन्देश को सुनकर उस प्रचण्ड सभा में उपस्थित लाखों व्यक्तियों ने तालियों की गड़गड़ाहट और स्वतन्त्र्य वीर सावरकर की जय के जयकारों से आकाश गुँजा दिया था।

सन् १९६२ में भारत पर चीन के आक्रमण और सन् १९६५ में पाकिस्तानी आक्रमण के समय सावरकर बड़ी बेचैनी महसूस कर रहे थे। सन् ६५ के भारत-पाकिस्तान के संघर्ष के बाद उनका स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन गिरता गया और ताशकन्द समझौते से तो उनके हृदय को गहरा आघात लगा। तब से वे शीघ्र मृत्यु की कामना कर रहे थे। इसके लिये उन्होंने जानबूझ कर शरीर को प्राणहीन बनाने की प्रक्रिया शुरू कर दी थी। प्रथम कुछ दिनों तक उन्होंने अन्न त्यागकर चाय, दूध आदि पेय पदार्थों पर ही निर्भर रहने का व्रत लिया। बाद में सावरकर केवल जल पर ही रहने लगे। डाक्टरों ने अन्त तक उन्हें किसी रोग से पीड़ित नहीं बताया था। वह तो उनकी जीवित समाधी ही थी। इस प्रकार सावरकर दि. २६ फरवरी, ६६ को स्वेच्छा से इस नश्वर शरीर को त्यागकर स्वर्ग को सिधार गये।

नर-शार्दूल सावरकर के क्रान्तिकारी जीवन का रोचक इतिहास भारतीय युवकों के लिये अत्यन्त प्रेरणास्पद है। आज हमारे राष्ट्र के सम्मुख राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय भीषण समस्यायें मुँह फैलाये खड़ी हैं, जिससे राष्ट्र का भविष्य धूमिल दिखाई दे रहा है। ऐसे समय में सावरकर जैसे दूरदर्शी, राजनीतिज्ञ का अभाव बेहद खटक रहा है। वे राष्ट्र को भावी संकट के समय पर सही चेतावनी देने वाले सावरकर थे। उन्होंने वर्षों पूर्व चीन और पाकिस्तान जैसे आततायियों के आक्रमण की चेतावनी देकर राष्ट्र के कर्णधारों को सचेत करने का प्रयास किया था। वे अन्त तक अखण्ड भारत के हामी रहे और उसकी रट लगाते-लगाते ही उनका प्राणोत्क्रमण हुआ था।

हिन्दू और हिन्दुत्व की व्याख्या

हिन्दु और हिन्दुत्व की व्याख्या करते हुए उसकी प्राचीनता, श्रेष्ठता और उपयोगिता का श्री सावरकर ने बड़ी योग्यता और शोध (खोज) के आधार पर प्रतिपादन किया था। अनेक लोग इस शब्द को मुसलमानों की देन समझते हैं, अनेक इसका अर्थ 'दास' या 'गुलाम' बतलाते थे। श्री सावरकर ने इस प्रकार की मान्यताओं का जोरदार खण्डन किया और कहा—

"हिन्दू स्वयमेव एक राष्ट्र है। 'एक भौगोलिक निवास स्थान, एक संस्कृत भाषा, एक इतिहास, साहित्य का एक समान, आविष्कार और एकता'—ये पाँच कसौटियाँ लगाकर देखा जाये तो स्वयमेव एक राष्ट्र है, ऐसी धारणा तुरन्त बन जायेगी। जिनके पास एक निश्चित भौगोलिक निवासस्थान नहीं था वह यहूदी जाति भी आज इस्राइल राष्ट्र के रूप में हमारे सामने उपस्थित है। फिर हिन्दू-राष्ट्र की कल्पना कैसे असत्य हो सकती है? हिन्दुओं के लिये निश्चित रूप से एक भौगोलिक आश्रयस्थान है और वह है भारतवर्ष। इतिहास बताता है कि जब-जब किसी हिन्दू पर आपत्ति आई तो वह इसी भूमि के हिन्दू नागरिकों की ओर आशा भरी दृष्टि से देखता रहा। यद्यपि भारत में अनेक भाषायें हैं, पर वे सब देव वाणी संस्कृत के वंश की हैं। यवन, हूण, शक, कुषाण, अरब, तुर्क, पठान, मुगल आदि जातियों के आक्रमण भारत पर हुए, लेकिन हम उनसे अपनी परम्परा की रक्षा के हेतु लड़ते रहे। विजय नगर के हिन्दू राज्य की, राजपूतों के बलिदान की, सिखों के उत्थान की तथा मराठा वीरों द्वारा स्वराज्य स्थापना की प्रेरणा एक ही थी। 'हिन्दुत्व' की रक्षा के अतिरिक्त उनका और कोई उद्देश्य न था।

"इसी प्रेरणा-सूत्र को अपनाकर हमारे पूर्वज पोर्तुगीज, अंग्रेज, फ्रेंच आदि शासकों के साथ गोवा, भारत,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पाण्डिचेरी आदि में लड़ते रहे । एक समय अखिल भारतवर्ष में इस्लामी आक्रमण की बाढ़ आ गई थी लेकिन उसको समाप्त करके महाराष्ट्रीय सेनाओं ने दिल्ली से आगे तक अपना झण्डा फहराया । राजा रणजीत सिंह और उनके सरदार हरीसिंह नलुआ ने भी उसी हिन्दू ध्वजा को समर्थ हाथों से काबुल तक फहराया । गुरु गोविन्दसिंह के शब्द स्पष्ट थे—"हिन्दू ही सदा कहलायेंगे । निजधर्म सदैव बढ़ायेंगे ।" साढ़े चार सौ वर्ष पुर्तगाली शासन से गोवा में हिन्दू लड़ते रहे । वहाँ के ईसाई शासकों ने इतने भयानक अत्याचार किये कि उनकी तुलना किसी से नहीं की जा सकती । अंग्रेजों का आक्रमण विज्ञान के बल पर था । चतुराई के साथ वे इस देश पर अधिकार जमा कर बैठ गये थे, पर उनसे भी लड़कर हमने स्वतन्त्रता प्राप्त की, अंग्रेजों के साथ कौन लड़े ? उग्रवादी, क्रान्तिकारी, युवकों जिनके नाम लिये जाते हैं ? सुभाष की सेना में अधिकांश कौन थे ? कांग्रेस के नेतागणों में अधिकांश कौन थे ? सत्याग्रह आन्दोलन में अधिकांश कौन थे ? इसका एक उत्तर यही है कि देश के लिये बलिदान के हर एक कार्य में हिन्दू ही आगे आये । कारण यह कि हिन्दू ही सोचता है कि 'देश मेरा है, उसके लिये बलिदान करना मेरा कर्त्तव्य है ।' इस दृष्टि से जो कोई हिन्दुओं के पक्ष को निर्बल करता है, उनके साहस को घटाने का काम करता है वह अवश्य ही देश के साथ द्रोह करता है ।"

सावरकर का मत था कि हमारे देश का 'भारतवर्ष' नाम तो थोड़े ही समय का है, इसका प्राचीन नाम 'सप्त-सिन्धु' या 'सिन्धुस्थान' था । उज्जैन के सम्राट विक्रमादित्य के पौत्र शालिवाहन ने समस्त विदेशी आक्रमण-कारियों को हराकर आर्य-राष्ट्रीय सीमा सिन्धु नदी निश्चित कर दी और उसके आगे 'म्लेच्छा-देश' नियत किया । इस घटना के महत्त्व को बतलाते हुए उन्होंने लिखा है—

"राष्ट्र सम्बन्धी यह व्याख्या वैसे ही शाही फरमान द्वारा हो चुकी थी जैसे शाही फरमान 'सिन्धुस्थान' में होते थे । शक्तिशाली लोकमत के निर्णय का महत्त्व शाही फरमान से भी अधिक था । अटक नदी को 'सिन्धुस्थान' की पश्चिमी सीमा निर्धारित करने का निश्चय किसी महत्त्वाकांक्षी राजा के हृदय की अभिलाषा मात्र नहीं था । यह निश्चय शताब्दियों के इतिहास ने तथा राष्ट्रीय भावनाओं से भरी जनता ने सर्वसम्मति से किया था । सिन्धु को अपनी राष्ट्रीय सीमा निर्धारित करना और इस निर्णय को जी-जान से निभाना, बड़ी से बड़ी कठिनाई को इस निर्णय की रक्षा के लिये तुच्छ समझना किसी थोथी महत्त्वाकांक्षा का परिणाम नहीं हो सकता । आज भी ये शब्द असंख्य जनता के हृदय में देश-प्रेम का प्रवाह ला देते हैं । लाखों आदमी जो 'सिन्धुस्थान' (अब हिन्दुस्तान) शब्द के सच्चे अर्थ को नहीं समझते फिर यह उनको उनकी राष्ट्रीयता की याद दिला देते हैं । इस नाम को धार्मिक रंग देना भूल है, यह विशुद्ध राष्ट्रीय नाम है ।"

आगे चलकर उन्होंने बतलाया कि यद्यपि संस्कृत का प्रचार घटकर जनता में प्राकृत भाषा का प्रचार हो जाने से 'सिन्धुस्थान' का उच्चारण 'हिन्दुस्तान' किया जाने लगा । जितने भी प्राचीन से प्राचीन हिन्दी-ग्रन्थ' मिलते हैं उनमें 'हिन्दू' और हिन्दुस्तान शब्द का ही प्रयोग मिलता है । ये प्रमाण उस समय के हैं जब मुसलमानों का इस देश में आगमन भी नहीं हुआ था—

"हिन्दी में लिखे गये सब ऐतिहासिक ग्रन्थों में 'पृथ्वीराज रासो' जिसे चन्दवरदाई ने लिखा था, सबसे प्राचीन और प्रामाणिक माना जाता है । उसके पूर्व केवल एक काव्य ही और लिखा गया था । आश्चर्य की बात है कि उस सर्वप्रथम काव्य में भी हिन्दुस्तान' का स्मरण बड़ी श्रद्धा और राष्ट्रीय-भावना से किया गया है । वह काव्य चन्दवरदाई के पिता 'वेन' अजमेर के राजा पृथ्वीराज के पिता को सम्बोधन करके लिखा था—

अटल ठाट महिमाट, अटल तारागढ़ थाने ।
अटल नग्र अजमेर अटल हिंदव अस्थाने ॥

हिन्दी भाषा के आदि कवि चन्दवरदाई ने 'हिन्दु, हिन्दवान और हिन्द' शब्दों का प्रयोग इतनी बार किया है कि हमें इन शब्दों के उस समय अच्छी तरह प्रचलित और लोकप्रिय होने में कोई सन्देह नहीं रह जाता । पृथ्वीराज द्वारा शाहबुद्दीन की गिरफ्तारी और इस शर्त पर कि वह पुनः भारत पर आक्रमण नहीं करेगा—रिहाई का वर्णन करते हुए चन्दवरदाई ने लिखा है—

किय सलाम तिन बार जाहु अपन्ने सुथानह ।
मति हिन्दु पर साहि सज्जिआऔ स्वस्थानह ॥

पर शाहबुद्दीन पर इस उदार व्यवहार का कोई प्रभाव न पड़ा और बार-बार आक्रमण करता रहा । इन युद्धों के वर्णन में बार-बार 'हिन्दू' शब्द आया है—

जब हिन्दु दल जोर हुआ छुट्टि मीरधर भ्रम ।
असमय अरवस्तान चला करन उद्वसाक्रम ॥
जुरे हिन्दु मीरं बहे खग्ग तारं ।
मुखे मारमारं वहे सूरसारं ॥
आज भाग चहुआन घर आज भाग हिन्दवान ।
इन जीवित्त दिल्लीश्वर गंज न सकै आन ॥

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हिन्दी प्राचीन कवियों में सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रीय भावना रखने वाले महाकवि भूषण ने अपनी रचनाओं में जगह-जगह 'हिन्दवान' का उल्लेख किया है ।

हिन्दुन के पति सों न विसात
सतावत हिन्दु गरीवन पाय के ।
लीजै कलंक न दिल्ली के बालक
आलम आलमगीर कहायके ।
राखी हिन्दुवानी, हिन्दुवान को तिलक राख्यौ ।
स्मृति औ पुरान राख्यौ, वेद विधि सुनि मैं ॥

इस प्रकार अनेक उदाहरणों से 'हिन्दुत्त्व' की प्राचीनता और महत्ता सिद्ध करके श्री सावरकर ने यही निष्कर्ष निकाला था कि हमको अपने समस्त देशवासियों में ऐसी भावना उत्पन्न करनी चाहिये और प्रत्येक व्यक्ति को ऐसी प्रेरणा देनी चाहिये जिससे हमारी राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ बने और हम संसार के अन्य राष्ट्रों के सामने गौरव के साथ मस्तक ऊँचा कर सकें—

इस प्रकार हमने देखा कि 'हिन्दुत्त्व' की विशेषतायें ही हमारी राष्ट्रीय विशेषतायें हैं । हम इसी आधार पर विशाल राष्ट्र की इमारत खड़ी कर सकते हैं । शर्त यही है कि हम अपनी खूबियों को समझें और उनका उपयोग करें । इस जमाने में छोटे राष्ट्रों की कोई हैसियत नहीं, सम्मिलित राष्ट्रों का ही यह युग है । आज छोटे-छोटे राष्ट्र मिलकर अपना विशाल राष्ट्रों के रूप में सम्मान करा रहे हैं। पृथक रहने से उनका अस्तित्व संकट में पड़ जाता है । जिन राष्ट्रों को भौगोलिक, सांस्कृतिक सुविधायें प्राप्ति नहीं हैं वे भी अन्य राष्ट्रों के साथ संगठित होने का उद्योग कर रहे हैं और हम हैं जो राष्ट्र निर्माण की उत्कृष्टतम सुविधायें प्राप्त होने पर भी उनका उपयोग नहीं करते । आज हम हैं कि जाति, धर्म, प्रान्त आदि के नाम पर बने-बनाये संघ को तोड़ने में अपनी शक्ति खर्च कर रहे हैं । हम न केवल भविष्य में अपने को हिन्दुत्व से पृथक करके अलग जातीयता कायम करने का आन्दोलन कर रहे हैं बल्कि सदियों के सूत्र को भी तोड़ने में प्रयत्नशील हैं ।

वे यद्यपि हिन्दू राष्ट्र की कल्पना से अभिभूत थे पर उनकी हिन्दू की व्याख्या विस्तृत और मानवता की पर्यायवाची थी । जीवन के पूर्वार्द्ध में वे सशस्त्र क्रान्तिकारी एवं उत्तरार्द्ध में हिन्दू संगठन के वे प्रबल समर्थक रहे पर उनकी आन्तरिक भावना अत्यन्त उदार थी । अनेक अवसरों पर उनके मुख से ये उद्गार सुने गये थे—

हमारी सच्ची जाति मनुष्य है ।
हमारा सच्चा धर्म मानवता है ॥
हमारा देश अखिल विश्व है ।
और हमारा सच्चा शासक ईश्वर है ॥

आओ हम सब भारतवासी क्रान्तिवीर शार्दूल सावरकर की इस पुण्य-भावना से अभिभूत होकर उसे अपने आचरण द्वारा सत्य प्रमाणित करने का संकल्प करें ।

स्वाधीनता के पुजारी : सुभाषचन्द्र बोस

महापुरुषों की अनेक श्रेणियाँ होती हैं । कोई विद्या, बुद्धि की दृष्टि से अग्रगण्य होते हैं कोई, परोपकार के लिये सर्वस्व अर्पण करने वाले होते हैं, कोई धर्म-कर्त्तव्य और आदर्श चरित्र की दृष्टि से अनुकरणीय होते हैं कोई अन्याय के प्रतिकार निर्बलों की रक्षा के लिये आत्म-बलिदान करने वाले होते हैं । इस प्रकार महापुरुष अनेक क्षेत्रों में कार्य करके मानवता की सेवा, सहायता, मार्गदर्शन करके अपने जीवन को सार्थक करते हैं और अन्य लोगों के सम्मुख एक ऐसा उच्च उदाहरण—आदर्श उपस्थित करते हैं जिससे अनगिनती मनुष्य बहुत समय तक प्रेरणा प्राप्त करते रहते हैं ।

नेताजी श्री सुभाषचन्द्र बोस ऐसे ही महामानवों में से थे । उनको उच्च विद्या, बुद्धि, पदवी, पारिवारिक सुख, सार्वजनिक सम्मान सब कुछ प्राप्त था । अन्य अनेक माननीय और उच्च पदवी पर प्रतिष्ठित व्यक्तियों के समान सुख-सुविधा का सार्वजनिक जीवन बिता सकना उनके लिये कुछ भी कठिन न था, पर इस सबका त्याग कर उन्होंने स्वेच्छा से ऐसा जीवन मार्ग ग्रहण किया जिसमें पग-पग पर काँटे और खाई-खन्दक थे । उनका त्याग और साहस इतना उच्चकोटि का था कि इसे देखकर हजारों व्यक्ति उनके सामने ही अपने देशवासियों को मनुष्योचित अधिकार दिलाने के लिये तन, मन, धन सर्वस्व अर्पण करने को तैयार हो गये । किसी ने सच कहा है कि वास्तविक प्रचार भाषणों, लेखों, वक्तव्यों से नहीं होता, वरन् जो कुछ कहा जाये उसे स्वयं कार्यरूप में कर दिखाने का ही लोगों पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है और साधारण व्यक्ति भी असाधारण कार्य करने को तैयार हो जाते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जन्म और परिवार

सुभाष बाबू के वंश का मूल निवास स्थान बंगाल का '२४ परगना' जिला है, पर उनके पिता श्री जानकीनाथ बहुत वर्षों तक कटक (उड़ीसा) में काम करते रहे और वहीं २३ जनवरी, १८९७ को उनका जन्म हुआ। उनके पिता आधुनिक अंग्रेजी शिक्षा के विशेष पक्षपाती थे, इसलिये उन्होंने अपने सब बच्चों को आरम्भ से ही कटक के 'यूरोपियन स्कूल' में शिक्षा दिलवाई और बाद में यूरोप भेजकर उच्च शिक्षा की व्यवस्था की। सुभाष ने भी मैट्रिक तक की शिक्षा कटक में ही पाई। उसके पश्चात् कलकत्ता के प्रेसीडेन्सी कॉलेज में दाखिल होकर बी. ए. पास किया। इसी बीच में एक बार वे किसी आध्यात्मिक गुरु की खोज में घर से बिना कहे चले गये और हरिद्वार, वृन्दावन, काशी, बौद्ध, गया आदि स्थानों में घूम फिरकर वापस आ गये। इस यात्रा में उनको यही अनुभव हुआ कि इस समय देश में आध्यात्मिकता का ऊपरी ढाँचा मात्र रह गया है, उसका सार तत्त्व निकल गया है। जितने भी साधु-संन्यासियों से वे मिले, उन सबने उनको छोटे-बड़े ग्रन्थों में पढ़ी हुई बातें तोते की तरह सुनादीं। पर व्यावहारिक जीवन में उनका कोई लक्षण न दिखाई दिया और न देश, काल के अनुसार कोई महत्त्वपूर्ण कार्य करने की प्रवृत्ति किसी में जान पड़ी।

घर लौटने पर माता को इन्होंने बड़ी दुःखित अवस्था में देखा। इनके बिना कुछ कहे-सुने चले जाने और बहुत ढूँढ़ने पर भी कुछ पता न लगने पर वह शोक से बीमार हो गई थी। उसने बड़े क्षोभ से कहा—"तूने मेरी मृत्यु के लिये जन्म लिया है।" इन्होंने बहुत समझा-बुझाकर और फिर ऐसा काम न करने की प्रतिज्ञा करके उसे शान्त किया। पिता का व्यवहार बहुत सहानुभूति पूर्ण था। शोक तो उनको भी कम नहीं हुआ था, पर वे अपने पुत्र के उच्च विचारों और धर्म-भावना का मूल्य समझते थे। उन्होंने सुभाष के कार्य को बुरा नहीं कहा, पर उनकी सम्मति में धर्म-साधन संसार में रहकर भी हो सकता है। फिर यदि संसार-त्यागकर संन्यासी जीवन व्यतीत करना हो तो उसके लिये कुछ तैयारी भी करना आवश्यक है। अच्छा यही है कि पहले सांसारिक कर्त्तव्यों का पालन करके और जीवन का अनुभव प्राप्त करके संन्यास के मार्ग पर पैर रखा जाये। सुभाषचन्द्र ने पिता की बातों को बड़ी श्रद्धा और सम्मान के साथ सुना और फिर अपना मत इस प्रकार व्यक्त किया—

(१) संसार में रहकर भी धर्म किया जा सकता है, पर सबके लिये एक ही नियम काम नहीं दे सकता, क्योंकि सबका रोग और सामर्थ्य एक समान नहीं होती। अतएव प्रत्येक को उसकी प्रकृति के अनुसार ही मार्ग बतलाना पड़ता है।

(२) त्याग के लिये अभ्यास और तैयारी की बात ठीक है, पर विभिन्न लोगों के संस्कार पृथक्-पृथक् होते हैं और त्याग का आधार मुख्यतः मनुष्य के संस्कारों पर ही होता है।

(३) कर्त्तव्य का निर्णय भी सापेक्ष दृष्टि से करना पड़ता है। उच्च कर्त्तव्य-पालन की आवश्यकता उपस्थित होने पर निम्न कर्त्तव्य को दबा देना पड़ता है।

पिता ने फिर पूछा कि—"शास्त्रों में जो कहा गया है कि 'ब्रह्म-सत्य जगत् मिथ्या'—इसके सम्बन्ध में तुमने क्या समझा है?" सुभाष ने कहा—"जब तक यह बात केवल मुख से कही जाती है तब तक वह एक सिद्धान्त मात्र है, पर जब उसके अनुसार व्यवहार किया जाता है तब वह 'सत्य' और उसे व्यवहार में लाया जा सकता है। जिन्होंने इस वाक्य को प्रचारित किया था वे उसके अनुसार चलते भी थे और वे कह गये हैं कि अन्य सब लोग भी इस पर चल सकते हैं।" जब पूछा गया कि—"इसको कौन व्यवहार में लाया था और उसका प्रमाण क्या है?" तो सुभाष ने उत्तर दिया—"प्राचीन ऋषि इस सिद्धान्त के अनुसार आचरण करते थे। उन्होंने जो कहा है 'वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्' (मैं उस परम पुरुष को जानता हूँ) यही इसका प्रमाण है। इस समय भी विवेकानन्द ने इस आदर्श को कार्यान्वित किया और वही मेरा आदर्श है।" इस प्रकार पिता ने उस नवीन अवस्था में ही पुत्र की आत्म-त्याग और आत्म-समर्पण की मनोवृत्ति का परिचय प्राप्त कर लिया।

आध्यात्मिक-भाव की वृद्धि

इस प्रकार किशोरावस्था में ही सुभाषचन्द्र की मनोवृत्ति का झुकाव सांसारिक धन, वैभव, पदवी के बजाय जीवन की वास्तविकता को जानने और अपनी शक्ति तथा सामर्थ्य का उपयोग देश की प्रगति के लिये करने की तरफ होने लगा। उनके मित्र उनको 'संन्यासी' के नाम से पुकारते थे तो उनको इससे एक प्रकार की प्रसन्नता ही होती थी। इसी समय उन्होंने अपने जीवन के सम्बन्ध में विचार करते हुए एक पत्र में लिखा था—

"मैं दिन पर दिन अनुभव करता जाता हूँ कि हमारे जीवन का एक विशेष लक्ष्य या उद्देश्य है और उसी के लिये हम इस संसार में आये हैं। लोग तो इस सम्बन्ध में भला-बुरा कहते ही रहते हैं पर मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं प्रचलित विचारधारा में कभी नहीं बहूँगा। मैं अपनी सूक्ष्म अन्तरात्मा में यह अनुभव करता हूँ कि मेरे ऊपर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसी भावना का प्रभाव नहीं पड़ सकता । यदि संसार के व्यवहार से प्रभावित होकर मैं अपने मन में दुःख, निराशा आदि का अनुभव करूँ तो मैं समझूँगा कि यह मेरी दुर्बलता है पर जिसकी दृष्टि आकाश की तरफ लगी है उसे इस बात का कुछ पता नहीं रहता कि सामने पहाड़ है या कुआँ है । इसी प्रकार जिसका लक्ष्य एक मात्र अपने उद्देश्य और आदर्श की तरफ होता है उसका अन्य विषयों की तरफ ध्यान नहीं जाता । कुछ भी हो अब मुझे यह अनुभव होता है कि हमको अपना मनुष्यत्व सार्थक करने के लिये तीन बातें करनी चाहिये—

(१) भूतकाल को साकार बनाना ।

(२) वर्तमान काल को उत्पन्न करना ।

(३) भविष्य काल का निर्माण करना ।

"इन तीनों बातों की व्यवस्था इस प्रकार कि (१) मैं प्राचीन काल के समस्त इतिहास और संसार की समस्त सभ्यताओं का अध्ययन करूँगा ।

(२) मुझे अपना अध्ययन भी करना चाहिये— अपने चारों तरफ की दुनिया को अच्छी तरह समझना चाहिये । मुझे भारतवर्ष और दुनिया की वर्तमान अवस्था की पूरी जानकारी प्राप्त करनी चाहिये और इसके लिये विदेशों की यात्रा करना आवश्यक है । (३) मुझे भविष्य संदेशवाहक (प्रॉफिट) होना है तो इसके लिये प्रगति के नियमों का पता लगाना आवश्यक है । पूर्वीय और पाश्चात्य दोनों सभ्यताओं की प्रवृत्तियों को समझना जरूरी है, जिससे मनुष्य-जाति के भावी लक्ष्य को निर्धारित किया जा सके । इस सन्दर्भ में जीवन-दर्शन का अध्ययन और मनन करना भी सहायक होगा । इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये हमको अपना कार्य भारतवर्ष से ही आरम्भ करना चाहिये ।"

"क्या यह एक महान् उद्देश्य नहीं है ? निःसन्देह इस विचार को कार्यान्वित करना बड़ा कठिन है । पर इसकी चिन्ता नहीं । हम सब मिलकर आगे बढ़ेंगे तो सिद्धि प्राप्त होगी ही । हम अपनी दृष्टि को जितनी अधिक ऊपर की तरफ उठायेंगे, उतना ही हम भूतकाल के कटु अनुभवों को भूलते जायेंगे और तब भविष्यकाल पूर्ण प्रकाशयुक्त रूप में हमारे सामने प्रकट होगा ।"

इससे श्री सुभाष की मानसिक अवस्था का बहुत कुछ पता चल जाता है । उनको छोटी आयु से ही यह अनुभव हो गया कि मानव-जीवन केवल खाने-पीने और भोग करने के लिये नहीं है, वरन् भगवान् ने हम सबको इस जगत् में किसी उच्च आदर्श की पूर्ति के लिये भेजा है । प्रायः यह कहा जाता है कि "मनुष्य संसार का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है"—पर यह सिद्धान्त उसी समय चरितार्थ हो सकता है जब हम धन-वैभव और सुख-सुविधा प्राप्त करने की सामान्य मनोवृत्ति को त्याग कर अपनी निगाह ऊपर की तरफ उठाते हैं । जब हम परमात्मा के आदेश का पालन करने के लिये अपने संकीर्ण स्वार्थ को छोड़ कर त्याग और तपस्या द्वारा मानव-प्रगति में सहयोग देने के लिये आगे बढ़ेंगे तभी हम इस स्वर्णिम भविष्य को प्राप्त करने में सफल मनोरथ हो सकेंगे । इनका मनन करते-करते जब अपने देश और यहाँ के निवासियों की स्थिति को समझा तो उन्होंने फिर एक अन्य पत्र में अपनी भावनाओं को प्रकट करते हुए लिखा—

"जीवन-सरिता में दो परस्पर विरोधी स्रोत बहते रहते हैं । एक स्रोत मंगल (कल्याण) की तरफ ले जाता है और दूसरा नीचे की तरफ बहा ले जाता है । इन दोनों के साथ संघर्ष करते रहना ही जीवन का पुरुषार्थ है ।"

"इस समय भारतवर्ष एक नये जीवन में प्रवेश कर रहा है । तमोमयी अँधेरी रात्रि का अवसान होकर मंगलमयी उषा का प्रकाश भारतीय गगन को सुशोभित कर रहा है । इस दृश्य को इस समय कौन भारतीय युवक नहीं देख रहा है और अनुभव कर रहा है ? हम लोग धन्य हैं जिन्होंने इस समय जन्म लिया है और वर्तमान 'अश्वमेध यज्ञ' की पूर्ति के लिये 'समिधायें' एकत्रित करने का सौभाग्य प्राप्त किया है । एक बार नेत्र खोलकर देखो कि पूर्वीय आकाश में नवीन सूर्योदय की कैसी शोभा हो रही है । चारों तरफ भविष्य द्रष्टा महापुरुष उच्च स्वर से शंखनाद करके अगामी प्रकाशयुक्त भविष्य का आवाहन कर रहे हैं । क्या तुम इसमें भाग लेने के लिये अपनी अन्तरात्मा का स्वर नहीं मिलाओगे ?"

सुभाषचन्द्र के ये उद्‌गार निश्चय ही उनकी अन्तरात्मा से निकल रहे थे । तभी आगे चलकर उन्होंने देशोद्धार के लिये इतना त्याग और साहसपूर्ण कदम उठाया जिससे आज तक उनका यश देश भर में फैल रहा है । अपनी मातृभूमि और स्वदेश बान्धवों की कष्टपूर्ण अवस्था उनको उसी समय व्याकुल कर रही थी और उनका मन बार-बार कुछ करने के लिये उद्वेलित हो रहा था । पर वे समझते थे कि बिना पूरी तैयारी किये, बिना अपने को योग्य और शक्तिशाली बनाये हम कोई बड़ा काम नहीं कर सकते । इसीलिये आरम्भ में ही उन्होंने संसार भर के इतिहास और सभ्यताओं के उत्थान-पतन के कारणों का अध्ययन और मनन करने का निश्चय किया । वे जैसे-जैसे इस मार्ग पर आगे बढ़ते गये उनको अपने देश की वास्तविक दशा, उसके पतन के कारण और ऊँचा उठने के लिये भावी कार्यक्रम का ज्ञान होता गया । इससे उनकी अन्तरात्मा निरन्तर देश और समाज के प्रति अपना कर्त्तव्यपालन करने अपने स्वार्थ का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बलिदान करने के लिये छटपटाने लगी। वे बारम्बार अपने साथियों को समझाते हुए इस प्रकार के प्रेरणादायक उद्गार प्रकट करने लगे—

"तुम फिर से मनुष्य बनो" किसी कवि की यह बात मुझे अत्यन्त प्रिय जान पड़ती है, क्योंकि इसमें बड़े उच्च भाव का समावेश है। तुम्हारे मेरे—राम, श्याम, हरि, मोहन आदि के सम्मिलित होने से ही तो भारत बना है। यदि हम मनुष्य बन सकें तो भारत जागृत हो जायेगा। भारत की कंकाल मात्र देह के भीतर अब भी प्राण धक-धक कर रहा है—भारत के उच्चकोटि के विचारक बारम्बार यही बात हमको समझा रहे हैं। इसलिये अब सोच-विचार किस बात का है? इतना अभाव, दुःख, दरिद्रता, पारस्परिक ईर्ष्या, द्वेष, कायरता आदि के होते हुए भी भारत के लिये मन में आशा का उदय होता है, इसका क्या कारण है यह कहा नहीं जा सकता।"

"इसलिये अपने आपको पहिचान कर अपने कर्त्तव्य का पालन करो। तुमको जो शक्ति प्राप्त हुई है उसको और विकसित करो। अपने हृदय को नवीन उत्साह से भरो—अपनी कल्पना पर नवीन आशा का आधिपत्य स्थापन करो—यौवन के आनन्द और शक्ति को अपनी एक-एक नस में संचारित करो। इससे तुम्हारा आन्तरिक जीवन सूर्य की किरणों से प्रकाशित मार्ग के समान सुस्पष्ट और विकसित बन जायेगा। तुम जीवन की पूर्णता अनुभव करके धन्य बनो यही मेरी विनीत आकांक्षा और प्रार्थना है।"

हमें तरस आता है आजकल के अधिकांश नवयुवकों पर जो जानते ही नहीं कि 'जीवन का उच्च आदर्श' क्या चीज होती है। सिनेमाओं के अश्लील गीतों और सिगरेट आदि ने उनके मनुष्यत्व को प्रायः नष्ट कर डाला है और वे 'लैला-मजनू' बनने में ही अपने जीवन की सार्थकता समझते हैं। अगर कुछ जोश आया भी तो वह गुण्डागर्दी करने में ही खर्च होता है और आपस में ही छुरे-बाजी करना बड़ी वीरता का चिह्न माना जाने लगा है। वे सुभाष चन्द्र के उद्गारों को पढ़ें और समझें कि नवयुवकों के मनोभाव कैसे होने चाहिये और उनको किस प्रकार अपने जीवन को ऊँचा बनाना चाहिये। जान पड़ता है आजकल के युवकों के सामने जैसे कोई श्रेष्ठ आदर्श रह ही नहीं गया है और उन्होंने इन्द्रिय-परायणता को ही सबसे बड़ा काम और जीवन का उद्देश्य मान रखा है। सुभाषचन्द्र का जीवन बतलाता है कि किस प्रकार उन्होंने घर में सब प्रकार की सुख-सामग्री होने पर भी, इन तुच्छ बातों की तरफ आँखें न उठाकर मानवता के लिये त्याग और बलिदान को ही मनुष्य जन्म का चरम फल माना और उसे कार्य रूप में परिणत कर दिखाया। वे स्वयं ही महानता के इस मार्ग पर अग्रसर नहीं हुए वरन् अन्य भी हजारों व्यक्तियों को प्रेरणा देकर देशभक्त और स्वाधीनता का सैनिक बना दिया।

आज भी सुभाष के जीवन से हम अपने जीवन को उच्च और सार्थक बनाने की शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। उन्होंने विश्वविद्यालय की उच्च शिक्षा प्राप्त की, उस जमाने की सबसे बड़ी परीक्षा आई. सी. एस. पास की, पर अपना लक्ष्य सदा दूसरों के उद्धार और उपकार के लिये ही अपनी शक्ति और योग्यता का उपयोग करना मानते रहे और उसे बहुत अच्छी तरह पूरा करके दिखा दिया।

विदेश-यात्रा और राष्ट्रीय आन्दोलन में योगदान

तीर्थ-भ्रमण से लौटकर घर वालों की इच्छानुसार सुभाषचन्द्र ने फिर पढ़ना आरम्भ कर दिया और इण्टरमीडिएट की परीक्षा पास करके प्रेसीडेन्सी कॉलेज में पढ़ने लगे। कॉलेज में पढ़ते उनको थोड़ा ही समय हुआ था कि वहाँ के एक अंग्रेज अध्यापक ने किसी भारतीय छात्र को गालियाँ दीं। जातीयता के अभिमानी सुभाष को यह सहन नहीं हुआ और उन्होंने समस्त विद्यार्थियों को संगठित करके कॉलेज में हड़ताल कर दी। इससे कॉलेज के अधिकारी, जो अधिकांश अंग्रेज ही थे, आपसे बहुत असन्तुष्ट हुए। आप पर गाली देने वाले प्रोफेसर को पीटने का दोषारोपण किया गया और कॉलेज से निकाल दिया गया। इस पर आप अपने पिता के पास कटक चले गये और वहीं दो वर्ष तक निवास करते रहे। अन्त में श्री आशुतोष मुकर्जी के प्रयत्न से, जो उस समय कलकत्ता यूनीवर्सिटी के वाइस चांसलर थे उनको फिर स्काटिशचर्च कॉलेज में पढ़ने की अनुमति मिली और सन् १९१८ में बी. ए. पास करके एम. ए. में दाखिल हो गये। पर घर वालों और पिता की इच्छा थी कि वे विलायत जाकर आई. सी. एस. (इण्डियन सिविल सर्विस अर्थात् उच्च सरकारी अधिकारी की परीक्षा) पास करें। सुभाषचन्द्र सरकारी नौकरी के लिये बिल्कुल तैयार न थे, पर घर वालों के बहुत दबाने से विलायत चले गये। इसमें उनका एक उद्देश्य यह भी था विदेश यात्रा करके अपने ज्ञान और अनुभव को परिपक्व करें। वे अच्छी तरह जानते थे कि जब तक हम संसार की दशा का निरीक्षण करके विदेशियों की शक्ति और अपनी निर्बलता का कारण न समझ लेंगे तब तक देशोद्धार का कोई प्रभावशाली उपाय किया जा सकना सम्भव नहीं। इस विषय में उनके मनोभाव क्या थे यह उनके अपने मित्र को लिखे एक पत्र से प्रकट होता है—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"मैं एक विषम समस्या में पड़ गया हूँ । कल ही घर से सम्वाद आया है कि मैं विलायत जाकर अध्ययन करूँ । मुझे इसी समय वहाँ की यात्रा करनी पड़ेगी, पर इस समय जाने से वहाँ की किसी नामी यूनीवर्सिटी में दाखिल हो सकने की आशा नहीं है । घर वालों की इच्छा तो यह है कि कुछ महीने पढ़ कर आई. सी. एस. (इण्डियन सिविल सर्विस) की परीक्षा में बैठ जाऊँ । मेरी अपनी इच्छा यह है कि विलायत जाकर किसी अच्छी यूनीवर्सिटी की उपाधि प्राप्त करूँ जिससे आगे चलकर मैं अपने देश के शिक्षा सम्बन्धी क्षेत्र में काम कर सकूँ । पर यदि मैं इस समय घर वालों से यह कह दूँ कि मैं 'सिविल-सर्विस" की परीक्षा नहीं दूँगा, तो फिर मेरी विदेश-यात्रा का प्रस्ताव सदा के लिये समाप्त हो जायेगा । इस अवस्था में मैं इस अवसर को छोड़ दूँ या किसी प्रकार उसे स्वीकार कर लूँ यह निश्चय नहीं कर पाता । फिर एक कठिनाई यह है कि यदि मैं 'सिविल-सर्विस' की परीक्षा में पास हो गया, तो क्या होगा ? सरकारी नौकरी कर लेने पर तो मेरा उद्देश्य ही समाप्त हो जायेगा ।"

इस प्रकार घर वालों के आग्रह और विदेशों का अनुभव प्राप्त करने के उद्देश्य से श्री सुभाष विलायत-यात्रा के लिये सहमत हो गये और इंग्लैण्ड पहुँचकर कैम्ब्रिज यूनीवर्सिटी में अध्ययन करने लगे । पर वहाँ भी आपका ध्यान 'सिविल सर्विस' की परीक्षा पास करने के बजाय भारतीय समस्याओं की ओर ही अधिक था । इस सम्बन्ध में अपने एक पत्र में बतलाया था ।

यहाँ पर 'इण्डियन मजलिस' नाम की भारतवासियों की एक संस्था है जिसका प्रति सप्ताह एक अधिवेशन होता है और बीच-बीच में बाहर के प्रसिद्ध वक्ताओं को भी बुलाया जाता है । एक बार श्रीमती सरोजिनी नायडू ने 'युवकों का साम्राज्य' विषय पर भाषण दिया था । पिछली बार श्री पियरसन का व्याख्यान सुनने में आया । मेरे आने से कुछ समय पहले ही तिलक महाराज भी इसमें पधारे थे । सरकार के इण्डिया आफिस ने उसमें बाधा डालने की चेष्टा की थी, पर सफलता न मिल सकी । यहाँ रहने वाले भारतवासियों के विचार बड़े उग्र हैं पर तिलक महाराज ने जब अपने विचार नर्मी के साथ प्रकट किये तो सबने उसका प्रतिवाद किया ।

"यहाँ के लोग बड़े उद्यमशील हैं । सब को समय की कीमत का ज्ञान है और काम करने का एक नियत ढंग है । ये लोग सब काम घड़ी की तरह नियत घण्टा-मिनट पर करते हैं । ये लोग पक्के आशावादी भी हैं । जब कि हम जीवन में दुःखों के विषय में ही अधिक विचार करते हैं, ये लोग अधिकतर जीवन के सुख और प्रकाश के विषय में ही सोचते हैं । इनका सामान्य व्यावहारिक ज्ञान बड़ा प्रशंसनीय है और अपने जातीय हित को ये खूब समझते हैं । हम लोग अपने शरीर और स्वास्थ्य की तरफ भी बहुत कम ध्यान देते हैं । हमारे यहाँ विद्वान् समझे जाने वालों के मुख से भी प्रायः ऐसे उद्‌गार सुनने में आते हैं—"शरीर की ज्यादा चिन्ता करने से क्या लाभ, यह तो दो दिन के बाद मिट्टी में ही मिलेगा ।" इस प्रकार का उदासीनता का भाव देश सेवकों के लिये तो कदापि उचित नहीं कहा जा सकता है । इस सम्बन्ध में हमारा आदर्श होना चाहिये—'शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम्' अर्थात् शरीर ही समस्त धर्म साधन का आधार है ।"

शरीर की तरफ से लापरवाह रहना एक अपराध है । यह केवल अपने ही प्रति नहीं होता, वरन् देश के प्रति होता है । हमारे देश के युवकों की शारीरिक सामर्थ्य यदि छोटी उम्र में ही नष्ट हो जाये तो हमको समझना चाहिये कि उनके भीतर कोई गलती या संकीर्णता रह गई है । हममें से प्रत्येक को मन में यह भाव रखना चाहिये कि यह शरीर हमारा नहीं है, वरन् हम इसके एक 'ट्रस्टी' (संरक्षक) के समान हैं ।"

एक सच्चा समाज हितैषी और मानव-सेवा का व्रतधारी ही संसार के अग्रणी और महान् माने जाने वाले देश में पहुँच कर वहाँ की चमक-दमक और पचासों तरह के नये-नये आकर्षणों से बचकर अपने देश और छोटे-बड़े स्वदेशबान्धवों की इस प्रकार चिन्ता कर सकता है । सुभाषचन्द्र ने इंग्लैण्ड में अंग्रेज जाति की उन्नति के कारणों पर ध्यान दिया और उनमें जो बातें उनको लाभदायक जान पड़ीं उनके विषय में तुरन्त अपने भारतीय मित्रों को सूचित किया, ताकि कम से कम वे तो उनसे कुछ शिक्षा ग्रहण करके अपने को देश सेवा के अधिक उपयुक्त बनावें ।

उन्होंने स्वास्थ्य-रक्षा के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा वह वास्तव में बहुत आवश्यक और उपयोगी है । देश-सेवा या समाज-सेवा केवल बातों से नहीं हो सकती और न मन में संकल्प या अभिलाषा करने से हो सकती है । जब तक हम में इस प्रकार की सेवा करने लायक योग्यता और शक्ति न होगी तब तक हम इस सम्बन्ध में कितनी ही चर्चा, परामर्श करें, उत्साह दिखलायें पर उसका कोई परिणाम नहीं निकल सकता । अगर मनुष्य का स्वास्थ्य ही ठीक नहीं है, वह रोगी बनकर चारपाई पर पड़ा रहता है या कोई परिश्रम का काम नहीं कर सकता, तो वह हार्दिक इच्छा रखने पर भी सेवा और परोपकार के मार्ग में कोई उल्लेखनीय कार्य कर नहीं दिखला सकता । शरीर यद्यपि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक भौतिक चीज है, पर वह आत्मा का आवास है और हमारी आत्मा और मन बुद्धि भी अपनी अभिव्यक्ति के लिये उसी के आश्रित हैं । इसीलिये भारतीय ऋषियों ने 'धर्म-साधन' का एक प्रमुख उपकरण अथवा सहायक शरीर को भी बतलाया है । सुभाषचन्द्र के हृदय में देशभक्ति का जो सागर हिलोरें मार रहा था वह तब तक अपना कुछ प्रभाव नहीं दिखला सकता था, जब तक ये उसके लिये आवश्यक परिश्रम और कष्ट सहन करने की शक्ति न रखते हों ।

इसलिये वे निरन्तर इस तरफ दृष्टि रखते थे और अपने साथियों को भी सदा इसकी प्रेरणा देते रहते थे ।

नारी-जागरण का महत्त्व

सुभाषचन्द्र का ध्यान भारतीय नारियों के जागरण की तरफ भी जाता रहता था । वे जानते थे कि किसी समाज का उद्धार केवल पुरुषों की चेष्टा से नहीं हो सकता । पुरुष यदि क्रान्ति, सशस्त्र-संग्राम द्वारा स्वाधीनता प्राप्त कर भी लें, तो भी समाज की प्रगति, जो कि सब प्रकार की उन्नतियों का मूल मन्त्र है, बिना नारी जागरण के नहीं हो सकती । इसीलिये जिस दिन 'इण्डियन मजलिस' में श्रीमती नायडू का भाषण सुना, उसी दिन उन्होंने लिखा—"आज आनन्द से मेरा कलेजा दस हाथ फूल गया । मैंने देखा कि आज भी भारत रमणी में इतनी शिक्षा, दीक्षा, गुण चरित्र पाया जाता है कि वह पाश्चात्य जगत् के सामने खड़ी होकर आत्म-परिचय देने में समर्थ है । लन्दन में ही एक दिन श्रीमती मित्र से बात-चीत हुई । मैंने देखा कि उनके पति तो राजनीति में नर्म विचारों के हैं, पर श्रीमती मित्र पूर्ण रूप से उग्रवादी थीं । श्रीमती धर भी गर्म दल की हैं । यह सब देखकर मन में विश्वास होता है कि जिस देश की महिलाओं का आदर्श इतना ऊँचा है वह अवश्य उन्नति करेगा । यहाँ जितनी भारतीय महिलायें आती हैं, उन सबके हृदय में गम्भीर स्वदेश प्रेम पाया जाता है । कारण यही है कि मातृ-हृदय बड़ा कोमल और साथ ही गम्भीर भी होता है ।"

किसी भी देश तथा समाज के उत्थान के लिये नारियों का प्रगति क्षेत्र में अग्रसर होना एक अनिवार्य शर्त है । सन्तान-पालन के रूप में पुरुष-जाति का निर्माण तो उसका प्रत्यक्ष कार्य है ही, साथ ही गहरी निगाह से विचार करने पर यह भी स्पष्ट जान पड़ता है कि किसी जाति की संस्कृति और सभ्यता का विकास भी बहुत कुछ स्त्रियों पर निर्भर होता है । पुरुष तो प्रायः बाहर रहता है और शारीरिक श्रम करके जीवन-निर्वाह की सामग्री प्राप्त करता है, पर स्त्री घर में रहकर जीवन को सुन्दर और सुरुचिपूर्ण बनाने का उद्योग करती रहती है । भारतीय संस्कृति में नारी को आदि काल से बहुत ऊँचा पद दिया गया है उसको देवी और जगत्-जननी कहा गया है, वह इसी बात का प्रमाण है कि समाज में नारी की स्थिति वास्तव में बड़ी महत्त्वपूर्ण है और जब तक वह अपना कर्त्तव्य भली प्रकार पालन कर सकने योग्य न होगी तब तक समाज की उचित प्रगति हो सकनी सम्भव नहीं ।

राजनीति आन्दोलन में

सुभाषचन्द्र के घर वालों ने तो उनको विलायत इस आशा से भेजा था कि वे आई. सी. एस. की उच्च परीक्षा पास करके कोई बहुत बड़ी सरकारी नौकरी पायेंगे और अपने परिवार की समृद्धि और यश की रक्षा करेंगे । पर हुई इससे उलटी बात, विलायत जाकर वे अंग्रेजों की नौकरी करके उनको सहयोग देने के बजाय उलटे उनके कट्टर विरोधी बन गये । जिस समय वे विलायत में थे उसी समय अंग्रेजी सरकार के अन्यायपूर्ण नियमों के विरुद्ध गाँधी जी ने सत्याग्रह संग्राम छेड़ दिया और वकील, विद्यार्थी, सरकारी नौकर सबसे सरकार के साथ असहयोग करके उसका संचालन कठिन बना देने की अपील की । जब सुभाषचन्द्र को यह समाचार मालूम हुआ तो वे सोचने लगे कि जब गाँधी जी देश की मुक्ति के नाम पर देशवासियों का आह्वान कर रहे हैं, और उन्हें अन्यायी सरकार से असहयोग करने का आदेश दे रहे हैं तो मैं किस प्रकार सरकारी नौकरी करके उनका सहायक और सार्थक बन सकता हूँ ? यह बात अच्छी तरह उनकी समझ में आ गई और उन्होंने आई. सी. एस. की परीक्षा ऊँचे दर्जे में पास कर लेने पर भी और उसी समय एक बड़ी सरकारी नौकरी मिलने का निश्चय हो जाने पर भी, उससे त्यागपत्र दे दिया ।

आई. सी. एस. की परीक्षा पास करके भी सरकारी नौकरी को छोड़ देने वाले सबसे पहले व्यक्ति सुभाष ही थे । उनके उदाहरण से अन्य अनेक युवकों पर भी बड़ा प्रभाव पड़ा और उन्होंने आई. सी. एस. की परीक्षा में बैठने का विचार त्याग दिया । अनेकों ने नौकरी पाकर भी उसे अस्वीकार कर दिया । सन् १९२१ की मई में उन्होंने आई. सी. एस. की परीक्षा पास की और उसी समय उसे त्यागकर भारत के राजनैतिक संग्राम में भाग लेने चल दिये । अनेक इष्ट-मित्रों और स्वयं ब्रिटिश सरकार के भारत मन्त्री ने उनको ऐसा न करने के लिये बहुत समझाया पर आपने अंग्रेजी सरकार की सेवा करके कलेक्टर या कमिश्नर बनने की बजाय मातृभूमि का सेवक बनकर गिरफ्तारी और जेल का जीवन अधिक श्रेयस्कर समझा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उस समय बंगाल के नेता श्री चित्तरंजन दास थे । उन्होंने लाखों रुपये आमदनी की बैरिस्टरी को त्यागकर गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन में भाग लिया था और इस समय बंगाल में राष्ट्रीय भावना का जोरों से प्रचार कर रहे थे । सुभाषचन्द्र के त्याग का समाचार जानकर उनको भी बड़ी प्रसन्नता हुई और उन्होंने उनको नव स्थापित नेशनल कॉलेज का अध्यक्ष और अपने दैनिक समाचार पत्र का संचालक नियुक्त कर दिया । देशबन्धु दास के त्यागमय जीवन से सुभाषचन्द्र और भी अधिक प्रभावित हुए और अपनी पूरी शक्ति के साथ आन्दोलन में कूद पड़े । उन्होंने बंगाल के गाँव-गाँव में जाकर सरकार के अन्याय अत्याचारों का वर्णन करना और लोगों को उसके साथ असहयोग की प्रेरणा देना आरम्भ किया । उनका भाषण ऐसा ओजस्वी होता था कि हजारों विद्यार्थियों, वकीलों और सरकारी नौकरों ने सब कुछ छोड़कर आन्दोलन में भाग लेना आरम्भ किया । समस्त बंगाल में एक नवीन जागृति का दृश्य दिखाई पड़ने लगा और युवकगण विशेष रूप से सुभाषचन्द्र के अनुयायी बनकर सरकार की जड़ उखाड़ने में प्रवृत्त हो गये ।

सुभाषचन्द्र के इस प्रकार बढ़ते हुए प्रभाव और आन्दोलन की तीव्रता को देखकर सरकार डर गई । उसके कुछ ही समय पश्चात् देशबन्धु दास और सुभाष दोनों को पकड़ कर मुकदमा चला दिया । अदालत ने इनको ६ महीने की सादी कैद की सजा दी । सजा का हुक्म सुनकर सुभाष ने हँसते हुए कहा "क्या मैंने मुर्गी की चोरी का अपराध किया है जो इतनी कम सजा दी गई ।" जेलखाने में सुभाषचन्द्र देशबन्धु दास के साथ ही रहते थे और स्वयं भोजन बनाकर उनको खिलाया करते थे । वे श्री दास को अपना राजनीतिक गुरु मानते थे और उनके प्रति अत्यन्त आदर और श्रद्धा का भाव रखते थे । दास बाबू भी उन्हें पुत्र की तरह स्नेह करते थे और उनको आगे बढ़ाने के लिये निरन्तर प्रयत्न करते रहते थे ।

सन् १९२३ की गया कांग्रेस के अवसर पर कांग्रेस के नेताओं में कौंसिल प्रवेश के प्रश्न पर मतभेद हो गया और देशबन्धु दास तथा पं. मोतीलाल नेहरू ने 'स्वराज्य-पार्टी' की स्थापना की । सुभाषचन्द्र यद्यपि कौंसिल प्रवेश को देश के लिये विशेष हितकर नहीं मानते थे, पर देशबन्धु दास के प्रधान सहकारी होने के कारण आपने उसमें भाग लिया और जब चुनाव का अवसर आया तो भाषणों और लेखों के द्वारा इतना अधिक प्रचार किया कि बंगाल में स्वराज्य पार्टी को बहुत अधिक सफलता मिली । इस समय 'फारवर्ड' और 'बाँगलार कथा' नामक दो दैनिक पत्रों की देखरेख का भार भी आप पर ही था । इन सब कार्यों में आपको इतना समय लगाना पड़ता था और परिश्रम करना पड़ता था कि कितने ही मित्रों के आग्रह करने पर भी वे स्वयं कौंसिल के लिये खड़े न हो सके ।

समाज-सेवा और किसान-संगठन

इस प्रकार परिस्थितियों के कारण सुभाषचन्द्र एक प्रसिद्ध राजनीतिक नेता बन गये, पर फिर भी उनका लक्ष्य केवल भाषण देना और लेख लिखना न हो सका । वे प्रत्यक्ष कार्यों में ही अधिक विश्वास रखते थे । इसलिये जब कांग्रेस की तरफ से एक वालंटियर सेना बनाई गई तो उसके अध्यक्ष सुभाषचन्द्र ही नियत किये गये । बंगाल के वालंटियर दल की तो पूरी व्यवस्था उन्हीं के हाथ में थी और जब उत्तरी बंगाल में भंयकर बाढ़ के कारण लाखों व्यक्ति बेघरवार हो गये और अपार कष्ट पाने लगे तो अपने वालंटियर दल द्वारा उन्होंने स्थान-स्थान पर जाकर सेवा कार्य आरम्भ कर दिया । ये लोग पानी से घिरे लोगों को बाहर निकाल कर लाते थे और उनके लिये भोजन वस्त्र का प्रबन्ध करते थे । स्वयं सुभाषचन्द्र एक स्वयं सेवक की तरह सब तरह के कामों को अपने हाथ से करते थे । अन्य कार्यकर्त्ताओं पर इसका बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता था और जनता भी उनके साथ पूरा सहयोग करने को तैयार रहती थी । उन्होंने बाढ़-पीढ़ितों की रक्षा का कार्य इतनी योग्यता और परिश्रम से किया कि सरकारी अधिकारियों को भी उनकी प्रशंसा करनी पड़ी ।

सुभाष ने समाज-सेवा के विविध कार्यों को नियमित रूप से सदैव करते रहने के लिये एक 'युवक-दल' की स्थापना की थी, कुछ समय पश्चात् इस दल ने किसान आन्दोलन का कार्य आरम्भ कर दिया । यह प्रचार किया जाने लगा कि जमीन किसानों की है, जमींदारी प्रथा वर्तमान समय के अनुपयुक्त और अन्यायपूर्ण है । किसानों को अपनी जमीन में कुआँ खोदने, तालाब बनाने, मकान बनाने, पेड़ लगाने व काटने की स्वतन्त्रता होनी चाहिये । इस प्रकार के आन्दोलन से कांग्रेस के बड़े नेताओं को आपस में ही फूट पैदा हो जाने की आशंका हुई, इस कारण उन्होंने इसका विरोध भी किया । परन्तु सुभाषचन्द्र अपनी धुन के पक्के थे । वे अपने मार्ग से नहीं हटे और किसानों के अधिकारों के लिये लगातार चेष्टा करते रहे ।

इसी समय 'युवक दल' ने कलकत्ता कारपोरेशन के चुनाव में भाग लिया और सुभाषचन्द्र बोस बहुमत से उसके सदस्य चुन लिये गये । आपकी योग्यता को देखकर कारपोरेशन के एक्जीक्यूटिव अफसर का पद आपको प्रदान किया गया । इसका पद का वेतन उस समय तीन हजार रुपया प्रतिमास था, पर आपने केवल डेढ़ हजार लेना ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वीकार किया । इस पद का कार्य सम्भालने पर आपने ऐसे अनेक युवकों को कारपोरेशन के दफ्तर में काम दिया जो अब तक अपने उग्र राजनीतिक विचारों के कारण सरकार के कोपभाजन बने रहते थे । आप इस बात का भी ध्यान रखते थे कि टैक्सों का भार गरीबों पर कम पड़े और उनको किसी प्रकार का कष्ट न हो । आपने नगर की स्वच्छता की तरफ विशेष रूप से ध्यान दिया, कम वेतन पाने वालों को तरक्की दी गई । यद्यपि आपको और भी अनेक कार्यों में थोड़ा-बहुत समय लगाना ही पड़ता था, तो भी कारपोरेशन का प्रबन्ध इतनी अच्छी तरह किया कि जनता को उनकी योग्यता और कर्मठता का पूरा विश्वास हो गया ।

देश निर्वासन और बीमारी

सुभाषचन्द्र के प्रभाव को इस प्रकार बढ़ते देखकर सरकार को उनसे बड़ा डर पैदा हो गया । वे बड़े निडर और साहसी थे और अपने भाषणों में सरकार की कड़ी आलोचना करने में जरा भी संकोच नहीं करते थे । इसके फल से भारतीय प्रजा में विद्रोही-भाव उत्पन्न होते थे और अंग्रेजी सरकार का प्रभाव क्षीण होता था । दूसरी बात यह भी थी कि सरकार को अपने सी. आई. डी. विभाग (जासूसों) से यह खबर मिली थी कि सुभाष केवल कांग्रेस और युवक-दल का ही आन्दोलन नहीं चलाते वरन् गुप्त रूप से बम और पिस्तौल चलाने वाले क्रान्तिकारियों से भी छिपे तौर पर सम्बन्ध रखते हैं और उनकी सहायता करते रहते हैं । कुछ समय तक कलकत्ता की जेल में रखकर आपको मांडले (बर्मा) की जेल में भेज दिया गया जहाँ इसमें सोलह-सत्रह वर्ष पूर्व लाला लाजपतराय और लोकमान्य तिलक को रखा गया था । वहाँ पर न तो कोई आपका परिचित था और न वहाँ के लोगों की भाषा आप समझते थे । इसलिये उस एकान्तवास में धार्मिक साहित्य पढ़ने लगे । आपका विचार पहले ही इन विषयों की तरफ था और आप लड़कपन में एक बार किसी संन्यासी गुरु की खोज में भटक भी चुके थे । इसलिये इस प्रकार के अध्ययन का प्रभाव आप पर बहुत कल्याणकारी सिद्ध हुआ ।

पर बर्मा का जलवायु आपके लिये अनुकूल सिद्ध नहीं हुआ और कुछ ही समय बाद अस्वस्थ रहने लगे । इसी समय देशबन्धु दास की मृत्यु हो गई और इसका प्रभाव भी आपकी मानसिक अवस्था और स्वास्थ्य पर बहुत खराब पड़ा । रहन-सहन और खान-पान में बहुत परिवर्तन हो जाने से आपको कई प्रकार की उदर-व्याधि हो गई और धीरे-धीरे निर्बलता इतनी बढ़ गई कि अधिकतर चारपाई पर ही पड़े रहने लगे । जब यह समाचार भारत में पहुँचा तो जनता में रोष की एक लहर व्याप्त हो गई और लोग सरकार पर दोषारोपण करने लगे कि वह देश के प्रसिद्ध नेताओं को इसी प्रकार जेल में घुला-घुला कर मार डालना चाहती है । सुभाषचन्द्र के घर वाले और इष्ट मित्र भी सरकार से लिखा-पढ़ी करने लगे । पर सुभाषचन्द्र के मन में उस समय भी एक आध्यात्मिक भाव प्रस्फुटित हो रहा था और साथ ही भारतीय जेलों के सुधार की योजना बन रही थी । उन्हों[illegible] समय अपने एक मित्र श्री दिलीपकुमार को लिखा था—

"तुमको मेरे जेल में रखे जाने से मानसिक आघात लगा, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ । पर जब हम इस विषय में गम्भीर भाव से विचार करते हैं तो हमको यह एक आध्यात्मिक घटना की तरह जान पड़ती है । मैं यह तो नहीं कहता कि जेल में रहना मुझे पसन्द है । ऐसा कहना तो स्पष्ट ढोंग होगा । इतना ही नहीं मैं यह कह सकता हूँ कि कोई सज्जन और सुशिक्षित व्यक्ति जेल में रहना पसन्द नहीं करेगा । क्योंकि जेलखाने की सम्पूर्ण आवोहवा ही ऐसी होती है कि वह मनुष्य को विकृत—अमानुष बना देती है । मेरा यह कथन समस्त जेलों पर लागू होता है । मेरा विचार है कि अधिकांश अपराधियों की जेल में नैतिक उन्नति नहीं होती, वरन् वे और भी हीन हो जाते हैं । कितनी ही जेलों में रहकर और वहाँ की दशा का निरीक्षण करने से उनके सुधार की आवश्यकता मुझे स्पष्ट जान पड़ने लगी है । भविष्य में इस सम्बन्ध में आवश्यक कदम उठाना हमारा कर्त्तव्य होगा ।"

"इस व्यवस्था में सबसे आवश्यक बात है एक नवीन मनोभाव और अपराधी के प्रति एक सहानुभूति । अपराधी में दोष को एक प्रकार की बीमारी ही समझना चाहिये और उसी भावना से उसका उपाय करना चाहिये । अभी तक जेलों में दण्ड-विधान का आधार वास्तव में 'प्रतिशोध-मूलक' है, अब हमको उसे 'संस्कार-मूलक' बनाने का प्रयत्न करना चाहिये ।"

"मेरे मन में आता है कि मुझे स्वयं जेलों में रहना न पड़ा होता तो मैं जेल में रहने वाले किसी अपराधी को सहानुभूति की दृष्टि से नहीं देख सकता था । इसलिये मेरी ऐसी धारणा बनती जाती है कि हमारे साहित्यिकों तथा कलाविदों को यदि जेल-जीवन की कुछ जानकारी होती तो उनकी रचनायें इस दृष्टि से कहीं उच्चकोटि की हो सकती थीं ।"

"जब मैं इस समस्त घटना पर गम्भीरतापूर्वक विचार करता हूँ तो मेरे हृदय में यह धारणा उत्पन्न होती है कि मेरे इस समस्त दुःख और कष्ट सहन के पीछे एक महान् उद्देश्य छिपा है । प्रायः सभी सुशिक्षित व्यक्तियों की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कारावास की दशा में इस प्रकार का एक दार्शनिक भाव उनके हृदय में शक्ति का संचार करता रहता है । मैं भी ऐसा ही कर रहा हूँ । अब तक मैंने जो पढ़ा और सुना है और जीवन के सम्बन्ध में मेरी जो धारणा है, उसके आधार पर अपने मनोबल को ऊँचा रख सकता हूँ । पर मेरा कष्ट केवल मानसिक अथवा आध्यात्मिक नहीं है, वह तो शरीर का कष्ट है । आत्मा तो प्राय: शक्तिशाली रहती है पर देह समय-समय पर दुर्बल हो जाती है ।"

"मैं अनुभव द्वारा इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि जेल में किसी लम्बी मियाद वाले कैदी के लिये सबसे बड़ी विपत्ति यही है कि अनजान में ही उसके ऊपर अकाल वार्द्धक्य (समय से पूर्व की वृद्धावस्था) का आक्रमण हो जाता है । तुम बाहर रहने वाले इस बात की कल्पना नहीं कर सकते कि लम्बी कैद के फलस्वरूप मनुष्य की देह और मन धीरे-धीरे कैसे अकाल-वृद्ध हो जाते हैं । इसके कितने ही कारण होते हैं, जैसे—खराब भोजन, व्यायाम अथवा चलने-फिरने का अभाव, समाज से दूर रहना, पराधीनता का बन्धन, इष्ट मित्रों का अभाव और संगीत आदि जैसे मनोरंजन का न होना ।"

"इनमें से कुछ अभाव ऐसे हैं । जिनकी पूर्ति मनुष्य अपने भीतर से कर सकता है और कई ऐसे हैं जो बाहर से ही पूर्ण हो सकते हैं । अलीपुर जेल में यूरोपियन कैदियों के लिये सप्ताह में एक बार संगीत की व्यवस्था थी, पर भारतवासियों के लिये वैसी कोई व्यवस्था नहीं है । वन-भोज, हास्य-विनोद, संगीत:-चर्चा, सभा-सम्मेलन, खुले मैदान में खेल-कूद, रुचि के अनुसार काव्य-साहित्य की चर्चा, ये समस्त हमारे जीवन को कितना सरस और समृद्ध बना देते हैं इस तथ्य को हम बहुत कम समझ पाते हैं । पर जब हमको जबर्दस्ती जेल में बन्द कर दिया जाता है तभी उनका वास्तविक मूल्य ज्ञात होता है । जब तक जेलों में स्वास्थ्यजनक और उच्च सामाजिकता के नियमों का प्रचार न होगा तब तक कैदियों का सुधार—संस्कार होना असम्भव है और तब तक जेलें उन्नति के पथ पर अग्रसर करने वाली के बजाय आजकल की तरह अवनति के केन्द्र स्वरूप ही बनी रहेंगी ।"

वास्तव में अपराध और अपराधियों की समस्या बड़ी दुरूह है । विचारशील लोग यह स्वीकार करते हैं कि अधिकांश अपराध आजकल की विपरीत, अन्यायपूर्ण सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों के कारण होते हैं । अन्यथा एक तुच्छ से तुच्छ व्यक्ति भी जेल में बन्द होकर तरह-तरह के कष्ट, यंत्रणा, असुविधा सहन करना पसन्द नहीं कर सकता । इसलिये जैसा सुभाषचन्द्र ने लिखा है अनेक सहृदय व्यक्तियों का यही मत है कि अपराधियों और जेल में बन्द कैदियों के साथ वैसा ही व्यवहार किया जाना चाहिये जैसा किसी बीमार के साथ किया जाता है अर्थात् उसके साथ जो व्यवहार किया जाये उसमें दण्ड या प्रतिशोध की भावना बिल्कुल न रहे, पर उसने जिस कारणवश अपराध किया है उस कारण को दूर करके मानसोपचार द्वारा उसके स्वभाव को बदलने की चेष्टा की जानी चाहिये । आदर्श और सिद्धान्त की दृष्टि से इस विचार में कोई गलत बात नहीं है, और हमारा विश्वास है कि एक समय आयेगा जब यह सिद्धान्त पूर्ण रूप से व्यवहार में लाया जाने लगेगा ।

यह आशा करना कि यह उद्देश्य आज या शीघ्र ही पूरा हो सकता है, ठीक नहीं, इस समय अनेक व्यक्ति वर्षों से अपराध करते-करते इतने कट्टर और निर्लज्ज बन गये हैं कि वे इस प्रकार के सहृदयता के भावों से भी प्रभावित नहीं होते और सौ में से नब्बे के उदाहरणों में उपकारी के साथ भी अपकार करने में संकोच नहीं करते । ऐसे स्वभाव से ही दुष्ट और समाज के लिये वन्य-पशुओं के समान खतरनाक लोगों को क्षमा कर देने या कुछ मानसोपचार करके स्वाधीनतापूर्वक रहने का अधिकार देना हानिकारक ही हो सकता है, ऐसे अपराधियों का सुधार क्रमश: ही हो सकेगा । श्री बर्नार्ड शा ने एक बार लिखा था कि जो दुष्ट व्यक्ति समाज के लिये सर्प और भेड़ियों की तरह भंयकर और स्वभावत: हानि पहुँचाने वाले हों उनको वैज्ञानिक साधनों से शीघ्र से शीघ्र खत्म कर देना चाहिये जिससे वे स्वयं कष्ट पाने और दूसरों को कष्ट देने के बजाय शान्तिपूर्वक दुनिया से विदा हो जाये ।

कुछ भी हो, जेलों की समस्या नि:सन्देह समाज की सुख-शान्ति और भावी प्रगति के लिये विशेष महत्त्वपूर्ण है और स्वयं बीमार रहते हुए भी उस पर इतनी गहराई के साथ विचार करना यह प्रकट करता है कि सुभाषचन्द्र ने वास्तविक रूप से अपना जीवन समाजोत्थान के लिये समर्पित कर दिया था और वे प्रत्येक दशा में उसकी समस्याओं को सुलझाने के सम्बन्ध में चिन्तन करते रहते थे । उसकी सम्मति थी कि 'जेल' जैसी संस्था को मनुष्य चाहे तो आध्यात्मिक विचारधारा द्वारा निश्चित रूप से सुधार और उत्थान का साधन बना सकता है—

"मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि यदि जेलों में अत्याचार और अपमान का व्यवहार बन्द हो जाये तो वहाँ रहना बुरा न जान पड़ेगा । पर इनके अतिरिक्त जो मानसिक आघात जेल में अनुभव होते हैं, वे वास्तव में किसी अदृश्य शक्ति द्वारा ही प्रेरित होते हैं, जेल के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिकारियों का जान-बूझकर उनमें कोई हाथ नहीं होता। यदि मनुष्य के भीतर आध्यात्मिक भाव जाग्रत कर दिया जाये तो वह इस प्रकार के कष्टों और अरुचिकर व्यवहार से आत्मसुधार की प्रेरणा ग्रहण कर सकता है। जेल-जीवन से उसे ज्ञात हो जाता है कि यह संसार केवल मौज मजा उड़ाने का स्थान नहीं है, वरन् इसका आन्तरिक स्वरूप बड़ा कठोर और आनन्द से रहित है। यह प्रेरणा मनुष्य को स्वार्थ से परमार्थ की ओर प्रेरित करने में बहुत उपयोगी हो सकती है।"

संसार में प्रत्येक पदार्थ के दो पहलू होते हैं और वही बात जेलखानों पर लागू होती है। एक व्यक्ति उसे कष्ट, उत्पीड़न और अमानवता का घर समझकर भयभीत होता है अथवा वहाँ जाकर इसी प्रकार का नर-पशु बन जाता है। दूसरा व्यक्ति जो संसार के सब कार्यों में परमात्मा का हाथ देखता है जेल-जीवन का उपयोग बहुत अच्छी तरह से आत्म सुधार के लिये कर सकता है। बाह्य दृष्टि से देखने पर भी जेल में मनुष्य का जीवन जैसा नियमित, समयानुसार प्रत्येक कार्य करने का अभ्यस्त और संयमपूर्ण बन जाता है वैसा गृह-जीवन में बड़ी कठिनता से हो सकता है। यही कारण है कि जहाँ निर्बल मन और बिगड़ी हुई आदतों के व्यक्ति वहाँ जाकर रोते-धोते रहते हैं और किसी प्रकार मर-गिरकर वहाँ से निकलते हैं, वहाँ एक विचारशील व्यक्ति उसमें रहकर अपनी शारीरिक और मानसिक दशा को पहले से अधिक उन्नत बना लेते हैं और कितने ही उपयोगी कार्य सम्पन्न कर सकते हैं।

जब तक मानव-प्रकृति जड़-मूल से बिल्कुल नहीं बदल जाती तब तक जेल जैसी संस्था की आवश्यकता सर्वत्र खत्म नहीं हो सकती। यह अवश्य है कि वर्तमान राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक नियमों में विचारशीलता तथा न्यायपरायणता का समावेश हो जाने से अपराधियों की संख्या बहुत घट सकती है, तो भी मानव-प्रकृति की त्रुटियों के कारण कुछ अपराध होते ही रहेंगे और जेल जैसी किसी संस्था की आवश्यकता बनी ही रहेगी। इसलिये जेलों की समस्या पर ध्यान देना और उनमें प्रचलित अन्याय और अनाचार को मिटाकर उन्हें वास्तविक सुधार का स्थल बना देना समाज हितैषियों का एक महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य है।

देशबन्धुदास के प्रति श्रद्धांजलि

जैसा आरम्भ में लिखा जा चुका है श्री सुभाषचन्द्र को देश के राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश करने की प्रेरणा देने और बाद में मार्गदर्शन करके एक उच्च श्रेणी का नेता बनाने का श्रेय मुख्यतः देशबन्धु चित्तरंजन दास को ही था। इसलिये जब उनके आकस्मिक देहावसान का समाचार मॉडले जेल में मिला तो सुभाषचन्द्र की दशा एक वज्राहत वृक्ष की सी हो गई। उस समय की अवस्था का वर्णन करते हुए उन्होंने एक पत्र में लिखा था—

"तुम जानते हो, आज के दिन हमारा मन किस भाव से आच्छन्न हो रहा है ? मेरा विश्वास है हम सब का ध्यान इस समय एक ही तरफ लगा है और वह है महात्मा देशबन्धु का देह त्याग। जब मैंने अखबार में यह दारुण समाचार पढ़ा तो आँखों पर विश्वास न कर सका। पर हाय ! वह समाचार निश्चय ही एक निर्मम सत्य था। इसके परिणामस्वरूप समस्त बंगाली जाति का भाग्य लुट गया, यही कहना पड़ता है।"

"जो सब विचार इस समय मेरे मन में उथल-पुथल मचा रहे हैं, उनको प्रकट करके मन के शोक को कम करने का उपाय भी मेरे पास नहीं है। क्योंकि ये विचार इतने पवित्र—इतने मूल्यवान हैं कि उनको अनजान लोगों के सामने प्रकट नहीं किया जा सकता। पर मेरे सब पत्र तो सरकारी 'सेंसर' द्वारा पढ़कर ही भेजे जाते हैं, जो हमारे लिये एक अपरिचित व्यक्ति ही है।"

"इसके अतिरिक्त आज मेरा मन इतना विचलित और शोकाकुल हो रहा है और साथ ही मानसिक जगत् में मैं अपने को उस स्वर्गीय महात्मा के इतना निकट अनुभव कर रहा हूँ कि इस समय उनके गुणों पर ठीक-ठीक विचार करके कुछ लिख सकना बिल्कुल सम्भव नहीं है। मैंने उनके अत्यन्त निकट रहकर आकस्मिक अवसरों पर उनकी जो छवि देखी है उसका कुछ आभास समय आने पर दे सकूँगा, ऐसी आशा है।"

"साथ ही मैं यह भी स्वीकार करता हूँ कि इन बातों को अधिक कहने-सुनने से हमारे हृदय का शोक बढ़ता है। जीवन अधिकांश में एक 'ट्रेजेडी' (दुःखान्त नाटक) है, यह हमारे ऊपर आने वाली इस शोकपूर्ण घटना से सिद्ध होता है। हम किसी प्रकार इसको शान्त चित्त से सहन नहीं कर सकते। न तो हम इतने बड़े तत्वज्ञानी (दार्शनिक) हैं और न ऐसे ढोंगी हैं कि हम कह सकें कि चाहे कैसा भी कष्ट और दुःख आ जाये हम उसको सन्तुलित भाव से सहन कर सकते हैं। बरट्रैण्ड रसल ने कहा है कि 'जीवन निश्चय ही सम्पूर्ण रूप से एक ऐसा दुःखान्त दृश्य है कि जिससे सब कोई बचना चाहता है।' मेरा विश्वास है कि केवल कोई निष्कलंक साधु अथवा साधुत्व का ढोंग करने वाला ही इस उक्ति का प्रतिवाद कर सकता है।"

"पर ऐसे भी कुछ व्यक्ति होते हैं जो तत्वज्ञानी अथवा भावुक न होते हुए भी सब प्रकार की यन्त्रणाओं को शान्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भाव से सहन कर लेते हैं । ऐसे तत्त्वज्ञान हीन व्यक्ति अपना एक पृथक् ही 'आदर्श' बना लेते हैं और उसे बड़ा महत्त्वपूर्ण और श्रेष्ठ मानकर उसी की उपासना करते रहते हैं । वे तरह-तरह के दुःखों और यन्त्रणाओं के साथ संघर्ष करते समय उसी 'आदर्श' से साहस और भरोसा प्राप्त करते हैं । यहाँ पर जेल में मेरे साथ अनेक ऐसे कैदी हैं जो भावुक अथवा दार्शनिक नहीं हैं, तब भी वीरों की तरह सब कष्टों को शान्त भाव से सहन कर लेते हैं । जेल के एक अधिकारी ने मुझे बताया कि फाँसी पाने वाले एक कैदी ने उसके सामने स्वीकार किया कि उसने वास्तव में एक व्यक्ति की हत्या की थी । जब उससे पूछा गया कि उस कार्य के लिये अब तुमको कुछ पश्चाताप होता है कि नहीं तो उसने कहा कि 'मुझे बिल्कुल खेद नहीं है, क्योंकि उस व्यक्ति के विरुद्ध मेरा दोषारोपण न्याययुक्त था ।' इसके बाद वह फाँसी के तख्ते पर खड़ा हुआ और प्राण दे दिये, पर उसके चेहरे पर एक शिकन भी नहीं आई । जेलखानों में ऐसे उदाहरण बहुत पाये जाते हैं ।"

यह सत्य है कि अपराध करने वाले और जेल जाने वाले व्यक्तियों में से अनेक ऐसे होते हैं जो अशिक्षित होने पर भी अच्छा चरित्र और ऊँचा मनोबल रखते हैं और किसी विशेष परिस्थिति में पड़कर ही वैसा दण्डनीय कार्य कर बैठते हैं । ऐसे अपराधियों के साथ यदि विशेष व्यवहार किया जाये तो वे बहुत अच्छे और उपयोगी नागरिक बन सकते हैं । सुभाषचन्द्र ने इस सम्बन्ध में देशबन्धुदास का एक उदाहरण दिया है । जब वे असहयोग आन्दोलन के सम्बन्ध में जेल जीवन व्यतीत कर रहे थे तो उनको सेवा-कार्य के लिये एक कैदी दिया गया था । देशबन्धु का हृदय बड़ा कोमल था, इसलिये उनका ध्यान इस कैदी की तरफ चला गया । वह कैदी एक 'पुराना पापी' था, आठ बार जेल की सजा काट चुका था । वह देशबन्धु के प्रभाव से अन्जान में ही बहुत कुछ बदल गया और अपनी इच्छा से ही उनके समस्त कार्यों को बहुत अच्छी तरह सम्पन्न करने लगा, और एक प्रकार से उनका भक्त बन गया । जेल से छूटते समय देशबन्धु ने उससे कहा कि जब वह अपनी सजा काटकर छुटकारा पावे तो अपने पुराने साथियों के पास न जाकर उनके घर चला आवे । कैदी ने इसे स्वीकार कर लिया और ऐसा ही किया । कुछ ही समय में उसका स्वभाव बदल गया और वह एक बहुत अच्छा कार्यकर्ता बन गया ।

बंगाल के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय ने देशबन्धु दास के सम्बन्ध में एक लेख 'स्मृति कथा' 'वसुमती' (मासिक पत्रिका) में प्रकाशित कराया था । सुभाषचन्द्र ने उसे माँडले जेल में पढ़ा तो वह उनको बहुत पसंद आया और उन्होंने वहीं से एक पत्र चट्टोपाध्याय महोदय को धन्यवाद देने के लिये लिखा । श्री शरतचन्द्र ने देशबन्धु के जीवन प्रसंगों को प्रकट करते हुए लिखा था कि—"पराधीन जाति का एक बड़ा अभिशाप यह होता है कि हमको अपने मुक्ति-संग्राम में विदेशियों की अपेक्षा अपने देश के लोगों से ही अधिक लड़ाई लड़नी पड़ती है ।" सुभाषचन्द्र ने भी इसका समर्थन करते हुए कहा—"यद्यपि यह एक कठोर सत्य है, पर हमारा रोम-रोम इसका अनुभव अच्छी तरह कर चुका है और अब भी कर रहा है ।"

सन् १९२७ में गया कांग्रेस के समय देशबन्धु दास की स्थिति अकस्मात् बहुत बदल गई थी । जो व्यक्ति बैरिस्टरी में प्रति वर्ष लाखों रुपया कमाता था और उसे उदारतापूर्वक लोगों की सहायतार्थ खर्च कर डालता था, इस समय राजनीतिक आन्दोलन के सम्बन्ध में मतभेद हो जाने से छोटे-छोटे लोगों को भी उसकी निन्दा-कुत्सा करने का अवसर मिल गया था । श्री शरत्चन्द्र ने उस स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा था—"कोई सहायक नहीं है, धन नहीं है, अपने अधिकार में कोई समाचार-पत्र नहीं है ! अत्यन्त छोटे लोग भी बिना गाली बात नहीं करते—देशबन्धु की यह कैसी दशा हो गई ? जब वे गया से लौटकर कलकत्ता आये तो बंगाल के सब अखबार असत्य और अर्द्धसत्य बातें लिखकर विरोधी प्रचार कर रहे थे । हमारे पक्ष की बात कहने वाला अथवा हमारे वक्तव्य को भी स्वेच्छापूर्वक स्थान देने वाला कोई समाचार-पत्र न था । जिस घर में एक समय बैठने को स्थान नहीं मिलता था, उसमें क्या मित्र और क्या शत्रु किसी के पैरों की धूल नहीं पड़ती थी । फिर जब समय बदला तो बाहरी लोगों और पद प्राप्त करने के अभिलाषियों की इतनी भीड़ वहाँ पर होने लगी कि अपने खास कार्यकर्त्ताओं को बात करने का मौका भी नहीं मिलता था ।"

स्वार्थ में डूबी हुई दुनिया का यह एक स्पष्ट चित्र है । जिससे किसी प्रकार के लाभ की आशा होती है, अपना कोई मतलब पूरा होता जान पड़ता है, उससे लोग अनेक बहानों से जान-पहचान निकाल कर ठकुरसुहाती बातें करने लगते हैं और जब मतलब निकल जाता है अथवा वह स्वयं शक्तिहीन हो जाता है तो कोई उसकी तरफ आँख उठाकर भी नहीं देखता । पर देशबन्धु दास इतने अधिक उदार और विशाल हृदय वाले महापुरुष थे कि लोगों की इस स्वार्थपरता को खूब अच्छी तरह समझते हुए और उसकी दुरंगी नीति को देखते हुए भी किसी को यथासम्भव निराश नहीं करते थे । वे तन-मन-धन से प्रत्येक आगन्तुक की अभिलाषा को परिस्थिति के अनुसार पूरा करने का प्रयत्न अवश्य करते थे । इस कार्य में उन्होंने प्रायः अपना सर्वस्व

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगा दिया था और इसीलिये लाखों रु. प्रतिवर्ष कमाने पर भी सदा सामान्य आर्थिक अवस्था में रहते थे ।

स्वदेश प्रेम और कर्त्तव्य-भावना

कलकत्ता की 'सेवक-समिति' के एक कार्यकर्त्ता श्री अनाथबन्धु दत्त ने मॉंडले जेल में श्री सुभाषचन्द्र को एक पत्र भेजा था । जिसमें अपनी श्रद्धा और सद्भावना प्रकट करते हुए लिखा था कि "आज आप देश से दूर कर दिये गये हैं इसलिये आपके प्रति हम सब लोगों का प्रेम पहले की अपेक्षा भी अधिक हो गया है ।" इसका उत्तर देते हुए सुभाषचन्द्र ने लिखा था—"मुझे मॉंडले जेल में रहते हुए ११ महीना हुए हैं । कभी तो मन में आता है कि ये ११ महीने देखते-देखते कट गये, और कभी ये कितने ही युगों के समान लम्बे जान पड़ते हैं । इस समय अपने घरबार की बात मुझे स्वप्न की तरह जान पड़ती है और ऐसा प्रतीत होता है कि यह लोहे का फाटक और पत्थर की दीवारें ही एकमात्र सत्य हैं । कभी-कभी मेरे मन में आता है कि जिसने जेलखाना नहीं देखा उसने दुनिया में कुछ नहीं देखा । मैंने तो निश्चय ही जेलखाने में आकर बहुत कुछ सीखा है । अनेक 'सत्य' जो किसी समय छाया की तरह थे, यहाँ आकर बहुत स्पष्ट दिखाई देने लगे हैं । अनेक नवीन अनुभूतियों ने मेरे जीवन को सबल और गम्भीर बना दिया है ।"

"मुझे इस बात का तनिक भी दुःख नहीं है कि मुझे जेलखाने में रहना पड़ रहा है । 'माता' के लिये कष्ट सहना तो गौरव की बात है । कष्ट सहन करने में भी आनन्द है । अगर ऐसा न होता तो लोग पागल हो जाते । यही कारण है कि अनेक समय कष्ट होने पर भी—आनन्द से भरकर खूब हँसते हैं । जो चीज बाहर से कष्टप्रद जान पड़ती है, वही भीतर की तरफ से देखने पर 'आनन्द' बन जाती है । यह सच है कि साल के ३६५ दिन और एक दिन के २४ घण्टों में निरन्तर मेरा मनोभाव ऐसा ही नहीं बना रहता, तो भी जिस देश-सेवी जेल-यात्री में यह भावना न्यूनाधिक परिमाण में न होगी, वह न तो कष्ट-सहन द्वारा जीवन को परिपुष्ट कर सकता है और ऐसी अवस्था में मन को संयत रख सकता है ।

"पर यह ख्याल मुझे अवश्य आता है कि अगर इन ११ महीनों में मैं बंगाल की जेलों में रहता तो न मालूम आध्यात्मिक साधना में कितना अग्रसर हुआ जा सकता । पर वह तो होने वाला नहीं । इसलिये अब मैं भगवान से यही प्रार्थना करता हूँ—तुम अपनी पताका जिसको दो उसे उसके ले चलने की शक्ति भी दो ।"

"आज बंगाल से दूर रहने के कारण वह मुझे पहले से भी अत्यन्त सुन्दर और सत्य जान पड़ने लगा है । स्वर्गीय देशबन्धु ने अपनी एक रचना में कहा था—"बंगाल के जल, बंगाल की मिट्टी में एक चिरन्तन सत्य निहित है ।" अगर मैं एक वर्ष तक यहाँ मॉंडले की जेल में न रहता तो मुझे उक्त कथन की सत्यता का अनुभव नहीं हो सकता था । अब मुझे बंगाल की शस्यश्यामला भूमि, वहाँ के मधु-गन्ध से पूरित आम्रकानन, मंदिरों में धूप आदि का देना, संध्या काल की आरती सबका स्मरण होता रहता है और कल्पना में भी न जाने कितने सुन्दर लगते हैं ।"

"प्रातःकाल अथवा संध्या के समय जब मैं बादलों के छोटे-छोटे टुकड़ों को सामने से जाते हुए देखता हूँ, तो मन में आता है कि 'मेघदूत' के किसी यक्ष की तरह उनके द्वारा अपने हृदय की श्रद्धा-भावना बंग-जननी के चरणों में भिजवा दूँ ।"

जेल से रिहाई और पुनः गिरफ्तारी

मॉंडले जेल में बहुत अधिक बीमार हो जाने के कारण सरकार ने सुभाषचन्द्र को छोड़ने का हुक्म दे दिया । कलकत्ता कांग्रेस के अवसर पर (सन् १९२९) आप स्वयं-सेवक दल के कमाण्डर बनाये गये । उस समय वे फौजी पोशाक में थे और प्रेक्षकों का कहना है कि इतना संगठित और अनुशासित स्वयं-सेवक दल पहले कभी नहीं देखा गया था । इस अधिवेशन में सुभाषचन्द्र और जवाहर लाल नेहरू जी ने मिलकर यह चेष्टा की कि कांग्रेस में देश की पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास हो जाये । पर महात्मा गाँधी और कांग्रेस के सभापति पं. मोतीलालजी ने एक वर्ष की मुहलत सरकार को और देने का आग्रह किया, जिससे सुभाषचन्द्र का प्रस्ताव पास नहीं हो सका ।

इसी वर्ष लाहौर जेल में क्रान्तिकारी दल के कैदी श्री यतीन्द्रनाथ ने ६३ दिन तक भूख-हड़ताल करके प्राण दे दिये । इस पर कलकत्ते में बड़ा जोश पैदा हो गया और शहीद के शव का बड़ी धूमधाम से जलूस निकाला गया । इस अवसर पर सुभाषचन्द्र ने एक जोशीला भाषण दिया जिसके कारण आपको गिरफ्तार करके पुनः छः मास के लिये जेल भेज दिया ।

इस प्रकार कई बार मुकदमा चलाकर जेल भेजते-भेजते जब सरकार थक गई तो उसने इनको भारत-रक्षा कानून में नजरबन्द कर दिया । इस हालत में आपका स्वास्थ्य पुनः खराब हो गया । इस पर जनता ने जब आन्दोलन किया तो उन्हें पहले लखनऊ और बाद में भुवाली भेजकर इलाज कराया । पर जब इससे कोई फायदा न पड़ा तो सरकार ने प्रस्ताव किया कि वह आपको छोड़ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को तैयार है, बशर्ते आप जेल से निकलते ही इलाज कराने विदेश चले जायें। इष्ट-मित्रों के बहुत समझाने पर उन्होंने इसे स्वीकार किया और एक खास हवाई जहाज द्वारा आपको स्विट्जरलैण्ड भेज दिया गया।

विदेश में रहकर भी आपने अपना देश सेवा का कार्य बन्द नहीं किया और वहाँ की राजनीतिक हलचल पर बराबर निगाह रखे रहे। सन् १९३४ में जब महात्मा गाँधी ने सत्याग्रह आन्दोलन स्थगित कर दिया तो आपने उसके विरोध में एक तार महात्मा गाँधी के पास भेजा। आप इटली जाकर मुसोलिनी और आयरलैण्ड में डी. बेलेरा से मिले। ये दोनों अपने देश की स्वाधीनता के लिये लड़े थे। सुभाषचन्द्र ने इनसे अपने भावी कार्यक्रम के विषय में प्रेरणा ग्रहण की।

इसी बीच में आपके पिता बहुत बीमार हो गये। उनकी इच्छा थी कि सुभाष को अन्तिम समय में देख लें। इधर सुभाष का हृदय भी उनके दर्शनों को आकुल हो उठा। पर बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी सरकार ने उनको भारत लौटने की अनुमति नहीं दी। अन्त में सरकारी आज्ञा का उल्लंघन करके भारत आ गये और जहाज से उतरते ही पकड़ लिये गये। तब पिता को देखने के लिये आप इस शर्त पर छोड़े गये कि जब तक देश में रहेंगे किसी राजनीतिक कार्य में भाग नहीं लेंगे। फिर भी छुटकारे में देर हो जाने से आप समय पर घर नहीं पहुँच सके और उससे पहले ही पिता का देहान्त हो गया। इससे सुभाष का हृदय सरकार के प्रति और भी विरोधी भावना से भर गया। पिता का क्रिया-कर्म हो जाने पर आपको फिर विदेश लौट जाना पड़ा।

दो वर्ष बाद जब वे पुनः गिरफ्तार कर लिये गये और डेढ़ वर्ष तक जेल में रहे। अन्त में जब सब प्रान्तों में कांग्रेसी सरकारें बन गईं तब आपका जेल से छुटकारा हुआ। सन् १९३८ में हरिपुरा कांग्रेस के सभापति बनाये गये। सन् ३९ की कांग्रेस त्रिपुरी में हुई और इस बार भी सुभाषचन्द्र को ही सभापति चुना गया। पर गाँधी जी और कांग्रेस के अन्य प्रमुख नेता समझते थे कि सुभाषचन्द्र के विचार अधिक उग्र हैं, इधर यूरोपीय महायुद्ध प्रारम्भ हो गया है, इसलिये पूर्ण सोच-विचार कर कदम उठाना उचित है। सुभाषचन्द्र को यह स्थिति पसन्द नहीं आई और उन्होंने कांग्रेस को छोड़ दिया।

सन् १९४० में रामगढ़ कांग्रेस के अधिवेशन के अवसर पर सुभाषचन्द्र ने 'समझौता विरोधी कॉन्फ्रेन्स' का आयोजन किया और उसमें बहुत जोशीला भाषण दिया। इसके बाद आपने 'ब्लेक-हाल स्मारक' को देश के लिये अपमानजनक बतला कर उसके विरुद्ध आन्दोलन छेड़ दिया। सरकार ने इनको पकड़कर फिर जेल भेज दिया। पर जब वहाँ पर उन्होंने भूख हड़ताल की तो छोड़ देना पड़ा। सरकार ने इनकी माँग को स्वीकार करके 'ब्लैक-हाल' को हटाना स्वीकार कर लिया, पर साथ ही इनको अपने घर में नजरबन्द रहने का आदेश जारी कर दिया, जिससे आपका किसी से मिलना जुलना बन्द हो गया।

सन् १९४१ की २५ जनवरी को कलकत्ता की अदालत में सुभाष का मुकदमा पेश होने वाला था। पर उस समय मालूम हुआ कि वे घर को छोड़ कर न मालूम कहाँ गायब हो गये हैं। घर के बाहर पुलिस का पहरा बराबर लगा रहता था, पर सुभाषचन्द्र वेश बदल कर पहरेदार के सामने ही बाहर निकल गये और उसी वेश में पेशावर पहुँचकर काबुल पहुँच गये। वहाँ से स्थल मार्ग द्वारा ही यात्रा करते हुए जर्मनी पहुँच कर इंग्लैण्ड के कट्टर शत्रु हिटलर से भेंट की। फिर एक गोताखोर नाव द्वारा आप जापान पहुँचाये गये।

उस समय जापान ने अंग्रेजों द्वारा अधिकृत बर्मा पर आक्रमण करके अपना शासन स्थापित कर लिया था। सुभाषचन्द्र ने वहाँ जाकर पकड़े हुए भारतीय सैनिकों तथा अन्य भारतवासियों की आजाद हिन्द सेना बनाई और एक 'आजाद हिन्द सरकार' भी स्थापित कर दी। इसकी तरफ से अंग्रेजों पर हमला किया गया और 'इम्फाल' (आसाम) में एक बड़ी लड़ाई हुई। कुछ समय बाद अंग्रेजों की कितनी ही नई सेनायें आ जाने से आजाद हिन्द सेना को पीछे हटना पड़ा। इस प्रकार सुभाषचन्द्र अंग्रेजों को भारत से हटाने की चेष्टा करते रहे, जिसका भारतवर्ष तथा संसार के अन्य देशों पर भी बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। पर अगस्त १९४५ में जब जापान ने हारकर आत्मसमर्पण कर दिया तो आजाद हिन्द सेना भंग कर दी गई और सुभाषचन्द्र एक हवाई जहाज में जापान जाते हुए जहाज के गिर जाने से मृत्यु को प्राप्त हुए।

सुभाषचन्द्र का जीवन-व्रत

इस प्रकार देश के एक महान् आत्म-बलिदानी के जीवन का अन्त असमय में हो गया। इतनी अल्प आयु में और इतनी शीघ्रता से देशवासियों के हृदय में ऐसा उच्च स्थान प्राप्त करने का उदाहरण शायद ही एकाध मिल सके। सुभाषचन्द्र ने अठारह वर्ष की आयु में ही पिता से यह कहा था—"विवेकानन्द का आदर्श ही मेरा आदर्श है।" और वास्तव में उन्होंने उसे कार्य रूप में चरितार्थ कर दिखाया। स्व. विवेकानन्द ने भी यौवन में प्रवेश करते ही अपनी समस्त शक्ति, विद्या, प्रतिभा देशवासियों के कल्याणार्थ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समर्पित कर दी थी। वे संन्यासी बने थे, पर उस संन्यास-ग्रहण का अर्थ वर्तमान समय के अधिकांश संन्यासियों की तरह बिना कुछ परिश्रम, परोपकार किये दूसरों की कमाई पर सुख का जीवन व्यतीत करना नहीं था। स्वामी विवेकानन्द ने देश के उच्च से उच्च पदवीधारी की अपेक्षा अधिक योग्यता और कर्मठता होते हुए भी उसका उपयोग अपने लिये न करके मातृभूमि के उद्धार—उत्थान के लिये किया। यही कारण है कि जहाँ देश अन्य असंख्यों संन्यासियों—स्वामियों को भूल गया वहाँ इस संन्यासी की शताब्दी समस्त भारतीय राष्ट्र ने अपूर्व उत्साह के साथ मनाई।

सुभाषचन्द्र ने भी अपना जीवन पूर्ण रूप से इसी आदर्श के अनुकूल सिद्ध करके दिखा दिया। शिक्षा प्राप्त करने के क्षेत्र में अपने परिश्रम और प्रतिभा के बल पर उन्होंने ऊँची से ऊँची परीक्षायें सम्मान सहित उत्तीर्ण कीं, और इतनी योग्यता प्रदर्शित की कि लोगों को यह विश्वास हो गया कि अगर वे सरकारी नौकरी करें तो अंग्रेजी राज्य के ऊँचे से ऊँचे पद तक पहुँच सकते हैं। उस दशा में राजा- महाराजाओं जैसा जीवन व्यतीत करना उनके लिये सर्वथा सम्भव था। सुभाषचन्द्र ने उधर आँख भी न उठाकर अपना सर्वस्व—अपार योग्यता और कार्य-शक्ति मातृभूमि के चरणों में अर्पित कर दी। वे देशोद्धार के लिये कैसा पूर्ण आत्म-समर्पण कर चुके थे इसका कुछ अनुमान उनके उस "निवेदन" से मिलता है जो उन्होंने माँडले जेल में से 'उत्तरी कलकत्ता क्षेत्र' के मतदाताओं (वोटरों) के नाम लिखकर भेजा था। श्री सुभाष के राज-बंदी होने पर भी बंगाल की कांग्रेस ने उनको इस क्षेत्र से एक उम्मीदवार के रूप में खड़ा किया था और उसी सम्बन्ध में उन्होंने यह 'निवेदन' लिखकर भेजा था—

"मेरे इस अल्प और साथ ही घटनाओं से भरे जीवन के ऊपर होकर जो आँधी-तूफान गुजर चुका है उसी की कसौटी पर मैं अपने को कुछ जान पहिचान चुका हूँ। इससे मुझे यह निश्चय हो गया है कि युवावस्था के प्रभात काल में ही मैंने जिस कण्टकमय मार्ग की यात्रा आरम्भ की है उस पर मैं अन्त तक चल सकूँगा। अज्ञात भविष्य को सामने रखकर जो व्रत एक दिन ग्रहण किया था उसका उद्यापन किये बिना मैं इस मार्ग से पैर न हटाऊँगा। अपने समस्त जीवन के अनुभव और शिक्षा के द्वारा खोज करके मैंने इसी सत्य सिद्धान्त को प्राप्त किया है कि "पराधीन जाति का सब कुछ व्यर्थ है—उसकी शिक्षा-दीक्षा, धर्म-कर्म सब व्यर्थ है, यदि उसका उपयोग स्वाधीनता प्राप्त करने के लिये न किया जा सके।"

सुभाषचन्द्र के उपर्युक्त आदर्श और जिस सचाई के साथ उन्होंने जीवन के अन्तिम क्षण तक उसका पालन किया उसे देख-समझकर हम भी अपने पाठकों से यही कहेंगे कि वर्तमान समय में यद्यपि 'देश की पराधीनता' की समस्या हल हो चुकी है, पर उससे भी बढ़कर दूसरी समस्या भारत के नर-नारियों में उनके कर्तव्य-पालन की, सत्य-व्यवहार की, आत्म-त्याग की भावना उत्पन्न करने की है। स्वाधीनता प्राप्त होने से जहाँ हमको इन सब सद्गुणों में उन्नति करके भारत को पुनः 'जगत्-गुरु' की प्राचीन पदवी के योग्य बनाना था, वहाँ निम्न कोटि की स्वार्थपरता और भ्रष्टाचार की दिन पर दिन वृद्धि होते देखकर थोड़े से सच्चे देशसेवकों को बड़ा परिताप हो रहा है। यद्यपि जबसे सुभाषचन्द्र का देहावसान हुआ है तबसे लोगों ने बार-बार उनके जीवित होने की चर्चा उठाकर उनके प्रति अपने प्रेम का ही परिचय दिया है, पर इस प्रेम की वास्तविकता को तभी स्वीकार किया जा सकता है जब हम उन्हीं की तरह अपना स्वार्थ त्यागकर अपनी शक्ति और साधनों को पूरा नहीं तो उसका कुछ भाग ही देशवासियों के उत्थान के लिये लगाते रहें।

अमर बलिदान के उन्नायक वीर-शिरोमणि चन्द्रशेखर आजाद

सन् १९३१ के फरवरी महीने की सत्ताईसवीं तारीख थी। सुबह के आठ बजे के लगभग दो युवक इलाहाबाद के एलफ्रेड पार्क में टहल रहे थे और आपस में क्रान्तिकारी दल की तत्कालीन परिस्थिति पर विचार विमर्श करते जाते थे। उन दिनों दल के एक महत्त्वपूर्ण सदस्य कैलाशपति ने दिल्ली पुलिस को क्रान्तिकारियों की सभी नई पुरानी योजनाओं का रहस्य प्रकट कर दिया था और छोटे-बड़े अधिकांश सदस्यों का पता भी बतला दिया था। इससे तीन-चार महीने के भीतर एक-एक करके सदस्य पकड़े या मारे जा चुके थे और बचे हुए व्यक्तियों की खोज पुलिस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बड़ी सरगर्मी से कर रही थी । ऐसी परिस्थिति में उनकी रक्षा के लिये क्या उपाय किया जाये इस पर चर्चा की जा रही थी । एक सुझाव यह था कि कुछ लोग बर्मा के रास्ते चीन या रूस चले जायें और वहीं से क्रान्तिकारी आन्दोलन में सहयोग देते रहें ।

इन दोनों युवकों में से एक "हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र सेना" के सेनापति चन्द्रशेखर आजाद थे और दूसरा उनके एक सहयोगी श्री सुखदेव राज । चन्द्रशेखर पिछले साढ़े छः वर्षों से फरार थे, उन पर कितनी ही भंयकर वारदातों के लिये वारण्ट जारी थे और गिरफ्तारी के लिये पाँच हजार के इनाम की घोषणा कर दी गई थी । यह निश्चय था कि पकड़े जाने पर उन्हें मृत्युदण्ड दिया जायेगा, पर इधर आजाद ने भी प्रतिज्ञा कर रखी थी कि कोई पुलिस वाला मेरे जीवित शरीर को हाथ नहीं लगा सकता और न मुझे जेलखाने में बन्द किया जा सकता है । मैं "आजाद" हूँ तो सदा आजाद रह कर ही दिखला दूँगा ।

घण्टा-पौन घण्टा तक इस तरह पार्क का चक्कर लगाने के पश्चात् वे थार्नहिल रोड से मिले हुए भाग में एक पेड़ के नीचे बैठ गये और क्रान्तिदल की वर्तमान समस्याओं पर विचार करने लगे । उसी समय एक पुलिस अफसर—ठाकुर विश्वेश्वर सिंह ने उनको देखा और अनुमान किया कि यह कदाचित् चन्द्रशेखर आजाद हैं । उसने तुरन्त पार्क की बगल में ही रहने वाले सी. आई. डी. के सुपरिण्टेण्डेण्ट नाट बाबर को खबर दी । वह अपनी मोटर पर बैठकर उस जगह पहुँचा जहाँ आजाद और सुखदेव राज बैठे बातें कर रहे थे । पार्क के भीतर होते हुए भी यह एक जंगल जैसा स्थान था, जहाँ अनेक पेड़ बेतरतीब उगे हुए थे और पास में ही एक छोटा-सा नाला बरसाती पानी के लिये बना हुआ था । नाट बाबर मोटर से उतर कर सीधा आजाद की तरफ चला । उसने अपनी पिस्तौल निकाल ली और पूछा—"तुम लोग कौन हो ।"

परिस्थिति को समझकर आजाद ने भी तुरन्त ही अपनी भरी हुई पिस्तौल निकाली और दोनों तरफ की गोलियाँ एक साथ छूटीं । नाट बाबर की गोली आजाद की जांघ में और आजाद की गोली नाट बाबर के दाहिने हाथ में लगी जिससे उसकी पिस्तौल छूटकर गिर पड़ी । नाट बाबर भाग कर एक पेड़ के पीछे खड़ा हो गया और आजाद भी सुखदेव राज के साथ दूसरे पेड़ की ओट में चले गये । उन्होंने सुखदेव राज को तो वहाँ से बचकर चले जाने को कह दिया और स्वयं उस घायल अवस्था में ही पुलिस वालों से युद्ध करने लगे । ठाकुर विश्वेश्वर सिंह ने दूर से बन्दूक चलाकर उनको गोली मारी तो आजाद ने पड़े-पड़े पिस्तौल से ही ऐसा निशान लगाया कि आक्रमणकारी का जबड़ा टूट गया । आजाद की इस अचूक निशानेबाजी की उनके शत्रुओं ने भी जी खोलकर प्रशंसा की ।

पर जब आजाद ने देखा कि वे चारों तरफ पुलिस वालों से घिरे हैं और घायल होने के कारण चल भी नहीं सकते तो अपने पिस्तौल की अंतिम गोली उन्होंने अपनी कनपटी में मार ली । एक महान् देशभक्त और वीरात्मा ने इस खुले संग्राम में शत्रुओं से जूझते हुए वीरगति पाई । आजाद का नाम सदा के लिये अमर हो गया ।

आरम्भिक जीवन

चन्द्रशेखर आजाद के पिता श्री सीताराम तिवारी उन्नाव (उ. प्र.) के बदरका गाँव के निवासी थे पर, जीविका के लिये झाबुआ (मध्य भारत) के भाँवरा नामक स्थान में जा बसे थे । वहीं पर २३ जुलाई सन् १९०६ को आजाद का जन्म हुआ । बचपन में घर की गरीबी के कारण उनकी शिक्षा बहुत कम हो सकी । अपने पिता के कठोर व्यवहार से असन्तुष्ट होकर १२-१३ वर्ष की अवस्था में ही ये बम्बई भाग गये और कुछ महीने मजदूरी करके अपना निर्वाह किया । फिर संस्कृत पढ़ने की मन में आई तो काशी जाकर एक पाठशाला में भर्ती हो गये जहाँ विद्यार्थियों की पढ़ाई और भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती थी । जब सन् १९२१ में महात्मा गाँधी के असहयोग आन्दोलन ने जोर पकड़ा और सरकारी स्कूलों के बायकाट की घोषणा हुई तो बहुसंख्यक लड़के पढ़ना-लिखना छोड़कर कांग्रेसी-स्वयं सेवक बन गये । आजाद भी अपनी उत्साही और निर्भीक प्रकृति के कारण उस दल में शामिल हो गये । प्रसिद्ध क्रान्तिकारी लेखक मन्मथनाथ गुप्त और श्री रघुनाथसिंह (बाद को एम. पी.) भी इनके साथियों में थे । ये सभी १५ वर्ष से कुछ कम आयु के थे ।

जब हड़ताल और जलूस के सम्बन्ध में वे गिरफ्तार किये गये तो मजिस्ट्रेट की अदालत में अंग्रेजी सरकार की अवहेलना के भाव से उन्होंने अपना नाम "आजाद" पिता का "स्वाधीन" और घर "जेलखाना" बताया । इससे गुस्सा होकर मजिस्ट्रेट ने उनको १५ बेंतों की सजा दी । उन बेंतों को खाकर आजाद सदा के लिये सरकार के पक्के दुश्मन बन गये ।

क्रान्तिकारी दल के नेता

असहयोग आन्दोलन से भी कई वर्ष पहले बनारस में क्रान्तिकारी दल की गतिविधियाँ चलती रहती थीं । उसके प्रधान नेता शचीन्द्रनाथ सान्याल थे जिनको सन् १९१६ में काले पानी का दण्ड दिया गया था । जब आजाद बेंत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खाकर काशी विद्यापीठ में दाखिल हो गये तो वहाँ उनका परिचय श्री मन्मथनाथ गुप्त और प्रणवेश चटर्जी से हुआ। वे दोनों क्रान्तिकारी दल से परिचित और सम्बन्धित थे। इन्हीं के द्वारा आजाद का परिचय पहले बनारस के क्रान्तिकारी राजेन्द्र लाहिड़ी आदि और फिर रामप्रसाद बिस्मिल से हो गया। राम प्रसाद शीघ्र ही आजाद की बहादुरी और सूझ-बूझ के कायल हो गये और दल में उनका एक महत्त्वपूर्ण स्थान बन गया। काम करने में उनकी तेजी को देखकर उनका गुप्त नाम "क्विक सिल्वर" (पारा) रख दिया गया।

यद्यपि आरम्भ में आजाद ने क्रान्तिकारी पर्चे बाँटने में भी अच्छा कार्य किया, पर उनका नाम विशेष रूप से तब प्रसिद्ध हुआ जब काकोरी रेलवे डकैती के सब अभियुक्तों के पकड़ लिये जाने पर भी वे फरार हो गये। उनकी गिरफ्तारी के लिये दो हजार के इनाम की घोषणा की गई। पर बड़े-बड़े चतुर गुप्तचर पूरा प्रयत्न करने पर भी उनका पता न लगा सके। इस रहस्य का वर्णन करते हुए मन्मथनाथ गुप्त ने लिखा है—"आजाद कहाँ डुबकी लगा गये, यह या तो वही जानते थे या ईश्वर। आजाद में यह गुण था कि मौके पर वह अकेला कदम उठा सकते थे और निर्णयात्मक रूप से उठा सकते थे। इसी कारण वह रेकार्ड समय तक पुलिस के चंगुल से बचते रहे।"

आजाद अपने नाम वारण्ट और इनाम होने पर भी सक्रिय बने रहे। इतना ही नहीं उन्होंने छिन्न-भिन्न क्रान्तिकारी दल के पुनर्गठन का काम भी आरम्भ किया और झाँसी में जहाँ वे गुप्त रूप से निवास करने लगे थे, अनेक नवयुवकों को दल में भर्ती करके एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र स्थापित कर दिया। इन नवयुवकों में से भगवान दास माहौर, सदाशिवराव मलकापुरकर, विश्वनाथ वैशम्पायन आदि आगे चलकर दल के प्रसिद्ध और सुदृढ़ कार्यकर्त्ता निकले। यद्यपि हम इस सम्बन्ध में बहुत छान-बीन तो नहीं कर सके पर अनेक क्रान्तिकारियों के लिखे वर्णन को पढ़कर यही जान पड़ता है कि जिन लोगों को आजाद ने शिक्षित किया और ट्रेनिंग दी उनमें से शायद ही कोई अविश्वस्त सिद्ध हुआ होगा, इसके विपरीत पंजाब तथा दिल्ली की तरफ के सदस्य बड़ी संख्या में इकवाली गवाह ही नहीं बने वरन् उनमें से "बड़े" कहलाने वालों ने भी प्राय: चालाकी से काम लिया और कमजोरी भी दिखाई।

झाँसी में सबसे पहले वे मास्टर रुद्रनारायण के यहाँ ठहरे। मास्टर साहब भी रामप्रसाद बिस्मिल के दल से सम्बन्ध रखते थे और एक बार शाहजहाँपुर में आजाद से परिचित हो चुके थे। यद्यपि उन्होंने आजाद को भाई के समान घर में रखा और अपनी स्त्री का पर्दा करने का नियम भी उनके लिये हटा दिया। पर वे उनका वहाँ रहना खतरनाक समझते थे। उन पर सरकारी अधिकारियों को सन्देह था और इसलिये पुलिस का एक गुप्तचर उनके घर के सामने प्राय: बैठा रहता था। इससे सुरक्षा के ख्याल से उन्होंने झाँसी से कुछ मील के फासले पर ढिमरपुरा गाँव में, जो ओरछा रियासत में पड़ता था, उनके रहने की व्यवस्था की। वहाँ हनुमानजी के मन्दिर में वे एक साधु के भेष में रहते थे और उनका नाम हरिशंकर ब्रह्मचारी प्रसिद्ध हो गया था।

हरिशंकर बीच-बीच में झाँसी भी आ जाते थे, और उनके मित्र भी कभी ढिमरपुरा पहुँच जाते थे। इस बीच एक ऐसी घटना हो गई जो काफी खतरनाक थी, पर आजाद अपनी सूझ-बूझ के बल पर उससे सहज में छुटकारा पा गये। एक दिन वे किसी अन्य साधु के साथ झाँसी से वापस लौट रहे थे कि शहर के बाहर पुलिस के दो सिपाहियों को उन पर सन्देह हो गया और वे उनके पास आकर पूछने लगे "क्या तू आजाद है?" आजाद ने तुरन्त हँसते हुए कहा—"हैं-हैं, बच्चा हम तो आजाद ही हैं। साधुओं को क्या बन्धन है बाबा! महावीरजी के भक्त हैं, भजन करते हैं और मस्त रहते हैं। तो चलें बच्चा! हनुमानजी को चोला चढ़ाने में देर हो जायेगी।" पर पुलिस वाले उनको थाने ले जाने की जिद करने लगे। कुछ दूर तक तो आजाद उनके साथ चलते-चलते उन्हें समझाते रहे, पर जब देखा कि ये तो मानते ही नहीं, तो दृढ़ता से बोले-"तुम्हारे थाने के दरोगा से हनुमानजी बड़े हैं। मैं तो हनुमानजी का हुक्म मानूँगा, तुम मानों अपने दरोगा-फरोगा को।" यह कह कर अपने रास्ते पर तेजी से चल दिये और सिपाही देखते ही रह गये।

चरित्र सम्बन्धी दृढ़ता

ढिमरपुरा में ही एक ऐसी घटना हो गई जिससे आजाद की चरित्र सम्बन्धी दृढ़ता की छाप सभी परिचित व्यक्तियों पर पड़ गई। जिन ठाकुर मलखानसिंह के मकान में ये कुछ समय बाद रहने लगे थे, उनकी एक बहिन भी उसी में रहती थी, जिसे आजाद और उनके साथी जीजी कहकर पुकारते थे। किसी समय उसकी एक सहेली विवाह का निमन्त्रण देने वहाँ आई। वह आजाद के स्वास्थ्य और शरीर संगठन को देखकर आसक्त हो गई और मौका पाकर रात के समय अकेली इनके पास आकर चारपाई पर बैठ गई। आजाद चौंक कर खड़े हो गये और इस प्रकार के व्यवहार के लिये उसे डाँटने लगे। पर जब वह न मानी और इनके पास रहने की हठ करने लगी तो ये सीढ़ी के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दरवाजे की तरफ गये । उसको जब बाहर से बन्द देखा तो वे छत से नीचे कूद पड़े और हनुमानजी के मन्दिर में जाकर सो गये । इसके पश्चात् सुबह वे मलखान सिंह के मकान पर गये और वहाँ चौपाल पर नियमित रूप से लड़कों को पढ़ाया, पर जब तक वह स्त्री वहाँ ठहरी रही वे भीतर नहीं घुसे और भोजन भी बाहर ही किया । अन्त में लज्जित होकर उस स्त्री ने इनसे अपनी गलती के लिये क्षमा प्रार्थना की और तब से ठाकुर तथा अन्य लोगों की दृष्टि में इनकी श्रेष्ठता और प्रामाणिकता और भी बढ़ गई ।

आजाद केवल किसी धार्मिक या नैतिक आदर्श को ध्यान में रखकर ही स्त्रियों के सम्पर्क से दूर नहीं रहते थे, वरन् वे इसको क्रान्तिकारी दल की सुदृढ़ता और सुरक्षा का एक मुख्य नियम मानते थे । इसमें सन्देह नहीं कि रमणी का प्रेम और वह भी अवैध-ढंग का, मनुष्य में कमजोरियाँ अथवा कई प्रकार के दुर्गुण उत्पन्न कर देता है । उच्चकोटि के क्रान्तिकारी इस सम्बन्ध में पूर्ण संयम से काम लेते आये हैं । रूस के क्रान्तिकारी अपनी वास्तविकता को छिपाने के लिये दल की किसी सदस्या को अपनी पत्नी बतलाकर गृहस्थ जीवन का अभिनय किया करते थे । लेनिन और क्रुप्सकाया बरसों तक ऐसे ही दिखावटी पति-पत्नी बन कर रहे थे, पर उन्होंने कभी यौन-सम्बन्ध की बात नहीं सोची । लेनिन यही विचार करता था कि "यदि मैं ऐसी चेष्टा करूँगा तो क्रुप्सकाया समझेगी कि मैं परिस्थिति का अनुचित लाभ उठा रहा हूँ ।" बहुत वर्षों तक साथ रहते-रहते जब दोनों ने एक-दूसरे के मन की भावना समझ ली तब कहीं जाकर उनमें दाम्पत्य-सम्बन्ध स्थापित हुआ ।

पर हमारे यहाँ के क्रान्तिकारी दल के सदस्यों ने इस सम्बन्ध में कोई अच्छा उदाहरण उपस्थित नहीं किया । यशपाल और प्रकाशवती तथा कैलाशपति और चन्द्रावती का सम्बन्ध दल के लिये हानि का कारण बना । वीरभद्र यद्यपि विवाहित था पर उस पर भी कुछ इसी प्रकार का आरोप लगाया गया था । काकोरी-केस के बनबारीलाल से भी यही शिकायत थी । भोग की लालसा मनोबल को क्षीण कर देती है ।

आजाद इस विषय में बहुत सख्त थे और अनुशासन की दृष्टि से उन्होंने यशपाल को प्राणदण्ड देने का निर्णय किया था । कैलाशपति ने तो इस सम्बन्ध में बड़ी नीचता का परिचय दिया और पुलिस के सामने क्रान्तिकारी दल के समस्त रहस्यों का ऐसा भण्डाफोड़ किया कि पूरा संगठन छिन्न-भिन्न हो गया और अधिकांश सदस्य गिरफ्तार कर लिये गये । इस सम्बन्ध में उनके चरित्र लेखक वैशम्पायन ने लिखा है—

"आजाद का सबसे बड़ा सम्बल था उनका चरित्र । इसको उन्होंने सदा महत्त्व दिया और इस धारणा पर जीवन के अन्त तक दृढ़ रहे । चरित्रहीन व्यक्ति से वे सदा घृणा करते । कुछ साथियों ने उनके इस गुण की हँसी उड़ाई । पर वे अपने सिद्धान्त पर अटल रहे । विवाह उनकी दृष्टि में पाप नहीं था, परन्तु जब नारी दल के किसी सदस्य के कर्त्तव्य में बाधक होती दिखाई दी, अथवा किसी सदस्य ने दल की सदस्यता को विवाह का साधन बनाया और उसके लिये दल का दुरुपयोग किया, तो ऐसे सदस्यों को आजाद कड़ी से कड़ी सजा देने में न हिचके । उनके इस महान् गुण की कुछ स्वार्थी तत्त्वों ने खिल्ली उड़ाई, उसे आजाद की भूल बतलाया परन्तु स्वार्थियों का यह प्रयत्न अपने अवगुण छिपाने का प्रयास मात्र था । पार्टी के अनेक सदस्य विवाहित थे और आजाद की उनके प्रति पूर्ण श्रद्धा थी । भाई भगवतीचरण भी विवाहित थे । आजाद उन्हें बहुत मानते थे । उनसे परामर्श लिये बिना कोई योजना कार्यान्वित नहीं करते थे । परन्तु जिन लोगों ने प्रगतिशीलता के नाम पर दल को अपनी प्रेम-लीला का साधन बनाना चाहा उनको आजाद ने कभी क्षमा नहीं किया ।"

निःसन्देह चरित्र मनुष्य की श्रेष्ठता का बहुत बड़ा प्रमाण है । इसका सम्बन्ध केवल नारी से ही नहीं है, वरन् सचाई, ईमानदारी, नैतिकता आदि भी चरित्र के ही अंग हैं । चरित्रहीन व्यक्ति का सभी दृष्टियों से पतन हो जाता है । ऐसे व्यक्ति यदि विद्वान तथा प्रतिभाशाली हों और सांसारिक सफलतायें भी प्राप्त कर लें, तब भी विचारशील और निष्पक्ष व्यक्ति उनको सम्मान की दृष्टि से नहीं देख सकते ।

अन्याय का विरोध

आजाद स्वभाव से ही अन्याय और जोर-जुल्म के विरोधी थे । स्वयं खतरा उठाकर भी वे अन्याय पीड़ितों का पक्ष लेते थे और दुष्ट लोगों से भिड़ जाते थे । इस बात के उदाहरण उनके क्रान्तिकारी जीवन में ही नहीं मिलते, वरन् जब काशी में वे किसी संस्कृत पाठशाला के सामान्य विद्यार्थी थे तब भी यह विशेषता उनमें देखी जाती थी । वहाँ एक गुण्डा राह चलती बहू-बेटियों को छेड़ा करता था वह पुलिस से भी मिला रहता था, इसलिये लोग उससे डरते थे और उसकी जोर जबर्दस्ती सहन करते रहते थे । एक दिन उसने बाजार में एक युवती को छेड़ा और उसका हाथ पकड़ लिया । आजाद ने, जो उसी मार्ग से जा रहे थे यह दृश्य देखकर गुण्डे को डाँटा । वह हँसकर कहने लगा—"अपने रास्ते चला जा, एक रैपट (तमाचा) मारूँगा, तो बत्तीसों दाँत झड़ जायेंगे ।" आजाद यद्यपि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उस समय लड़के ही थे, पर संयम तथा व्यायाम की बदौलत उनका शरीर काफी तगड़ा हो गया था। साहस उनके स्वभाव में सदा से ही था। बस उन्होंने गुण्डे को ललकारा और जैसे ही वह इनकी ओर बढ़ा, उसे उठाकर जमीन पर दे मारा। वे उसकी छाती पर चढ़ बैठे और कहा कि "जब तक उस युवती को बहिन कहकर न पुकारेगा तब तक मैं नहीं हटूँगा।" अन्त में उसे ऐसा ही करना पड़ा। उस दिन से उसका स्त्रियों को छेड़ना बन्द हो गया।

ऐसी ही दो-एक घटनायें झाँसी में उन दिनों भी हुईं, जब वे ढिमरपुरा को छोड़कर, श्री रामानन्द के पास रहकर मोटर ड्राइवरी की शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। रामानन्द के कारखाने के पास ही रामदयाल ढीमर रहता था, जो मास्टर रुद्रनारायण के यहाँ ड्राइवरी का काम करता था। वैसे तो वह दुष्ट या बदमाश नहीं था, पर शराब पीकर प्रायः अपनी स्त्री को पीटा करता था। रात को उसका रोना चिल्लाना सुनकर आजाद को बड़ा बुरा लगता था और पड़ौस के अन्य लोग भी उससे नाराज रहते थे। एक दिन सुबह वह टट्टी जाने के लिये निकला कि आजाद उससे मिल गये। उन्होंने उसे समझाया "भाई, तू बड़ा भला आदमी है, पर फिर भी शराब पीकर अपनी स्त्री पर ऐसा अत्याचार क्यों करता है?" रामदयाल को अपने घरेलू मामलों में किसी का हस्तक्षेप बड़ा बुरा लगा और गुस्से से बोला— "हरीशंकर, मैं अपनी घरवाली को पीटता हूँ। मैं चाहूँ तो उसे जान से मार डालूँ, तुम्हारी वह क्या लगती है, जो उसकी तरफदारी कर रहे हो?"

आजाद को ऐसी बातें कहाँ सहन हो सकती थीं। वे क्रोधित होकर कहने लगे—"अच्छा, आज रात को मारके देख, अगर उसी समय तेरा नशा न उतार दूँ तो कहना।"

"अजी रात ही क्यों, और नशे की ऐसी-तैसी, अभी होश में हूँ उसको तुम्हारे सामने यहीं सड़क पर मारता हूँ, देखूँ कौन क्या करता है?" यह कह कर वह घर में से अपनी स्त्री को बाल पकड़कर घसीट लाया और कहने लगा—"लो इस हरामजादी को मारता हूँ, देखूँ क्या करते हो?" उसने जैसे ही मारने को हाथ उठाया कि आजाद ने उसको पकड़कर गाल पर ऐसे जोर का तमाचा मारा कि वह सिर पकड़ कर बैठ गया। हमको मालूम है कि इसके दो तीन वर्ष बाद ही कानपुर की "कच्छी डकैती" के अवसर पर वहाँ का मुनीम आजाद के एक थप्पड़ से मर ही गया था। बस रामदयाल भी एक तमाचे के असर से सीधा हो गया और उस दिन से स्त्री को पीटना बन्द कर दिया।"

उसी समय की दूसरी घटना जो वैशम्पायन ने लिखी है, आजाद की गरीबों के प्रति हमदर्दी पर और भी प्रकाश डालती है। उनके मोहल्ले में एक धनीराम बढ़ई रहता था। एक बार वह पन्द्रह दिन तक बीमार पड़ा रहा। फिर जब उठकर काम पर जाने लगा तो, बड़े सबेरे ही एक पठान उससे अपना कर्ज वसूल करने आ पहुँचा। धनीराम ने कहा—"खान बाबा, मैं तुम्हारा रुपया जरूर लौटा दूँगा, पर अभी बीमारी से उठा हूँ, दस-पाँच दिन ठहर जाओ।" पर खान गुस्सा होकर कहने लगा—"हम कुछ नहीं जानता। तुम सुअर का बच्चा हमारा रुपया इसी वक्त दो।"

आजाद धनीराम का घिघियाना सुनकर बाहर निकल आये। वे इन काबुली लोगों के दुर्व्यवहार से अच्छी तरह परिचित थे। उन्होंने समझाया—"खान भाई, इसे छोड़ दो। इस तरह पकड़ने से क्या फायदा। अगर वह मजदूरी पर नहीं जायेगा तो न तो तुम्हारे पैसे मिल सकेंगे और न उसके बाल-बच्चों को खाना मिलेगा।"

खान अपनी आदत के अनुसार जोर से बोला—"तुम कौन है इसका?"

आजाद—"मैं इसका हूँ तो कोई नहीं, पर यह मेरा पड़ौसी है और मैं जानता हूँ कि यह ईमानदार आदमी है।"

खान—"तुम अपना काम देखो। हम आज इससे पैसा वसूल करेगा। इसके लिये वह अपना बीबी-बच्चा बेच दे।"

यह सुनकर आजाद को क्रोध चढ़ आया। उन्होंने खान के हाथ को एक जोर का झटका देकर धनीराम को छुड़ा दिया और कहा—"देखूँ, तू उसे काम पर कैसे नहीं जाने देता।"

खान बड़ा लम्बा-चौड़ा और तगड़ा था। वह आजाद को मारने को बढ़ा तो उन्होंने एक ही दाव लगा कर उसे जमीन पर ऐसा फेंका कि पगड़ी, जूता इधर-उधर जा गिरे। लोगों की भीड़ जमा हो गई और खान को बुरा भला कहने लगे। खान ने समझ लिया कि वह हार गया, इससे चुप-चाप उठकर चला गया।

इस प्रकार आजाद स्वभाव से ही अन्याय के विरोधी और गरीबों का पक्ष लेने वाले थे। अन्याय करने वाला कोई भी हो, ऐसी घटना पर उन्हें क्रोध आ जाता था। एक बार झाँसी के सदर बाजार में उन्होंने कुछ गोरे सिपाहियों को उपद्रव करते, औरतों को छेड़ते और लोगों को मारते तथा गालियाँ बकते देखा। इस पर उनको बड़ा गुस्सा आया। वे भगवानदास के पास आये और अपना पिस्तौल उसको देकर कहने लगे—"ले, इसे अपने पास रख ले। अगर गुस्से में आकर मैं कुछ कर बैठा तो यहाँ के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समस्त दल वालों पर आफत आ जायेगी । यों तो बदमाश और शरारती लोग कदम-कदम पर मिलते ही रहते हैं । पर आँखों के सामने बदमाशी देखकर क्रोध आ जाना स्वाभाविक है, इसी से तुम्हारे पास चला आया ।"

भूखे रहकर देश-सेवा

फरार अवस्था में आजाद को केवल पुलिस के दूतों का ही खटका नहीं रहता था, वरन् निर्वाह की समस्या भी बड़ी गम्भीर हो जाती थी । बनारस में भागते समय उनके पास कुछ रुपया-पैसा तो था नहीं । किसी से रेल भाड़े आदि के लिये कुछ रुपया लेकर चल दिये । झाँसी में आरम्भ में मास्टर रुद्रनारायण के यहाँ ठहरे तो वहीं भोजन करते । पर एक साधारण गृहस्थी में सदैव उचित व्यवस्था हो सकनी कठिन है । फिर आजाद का पहलवानी शरीर, अतएव उनको अनेक बार भूखों भी रह जाना पड़ता था । फिर जब मोटर ड्राइवरी की शिक्षा प्राप्त करने लगे तब भी उनको पैसे की तंगी बनी रहती थी । उस समय का वर्णन करते हुए वैशम्पायन ने अपनी पुस्तक—"अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद" में लिखा है—

"जिन दिनों रामानन्द जी के साथ आजाद रेलवे लाइन की गुमटी पर रहते थे उन दिनों उन्हें भीषण आर्थिक संकट का सामना करना पड़ता था । कई दिन तो केवल एक समय चबैना खाकर ही गुजारा कर लेते थे । एक बार उनके पास केवल एक आना ही बाकी था, जिससे एक दिन की भूख की समस्या हल हो सकती थी । यह भी विचार आता था कि आज यह एक आना खर्च हो गया तो कल क्या होगा ? फिर भी आज भूख की ज्वलन्त समस्या का हल करना आवश्यक था । इसलिये एक आने के चने ले आये और खाने लगे । खाते-खाते आखिरी मुट्ठी जो भरी तो उसमें कुछ गोल-गोल सा लगा । मुट्ठी खोलकर देखा तो वह इकन्नी थी । आजाद ने कहा—"उस इकन्नी को देखकर मुझे हँसी आ गई यह सोचकर कि चलो कल की भी व्यवस्था हो गई । पर फिर यह ध्यान आया कि यह तो उस गरीब चने वाले की गाढ़ी कमाई का पैसा है, उस पर मेरा कोई अधिकार नहीं ।" चबैना खाकर पानी पिया और इकन्नी उस चना वाले को लौटा आये, यह कहकर कि तुमने मुझे जो चने दिये थे उसमें यह इकन्नी आ गई थी । दुकानदार ने उस इकन्नी की ओर देखा और एक बार मेरी ओर देखकर मुस्करा दिया । मैं भी मुस्करा कर अपने रास्ते चल दिया । पर कल की भूख प्रश्न चिह्न बनी रही और ऐसे निराहार दिवस तो उनके संगी साथी ही थे । लगातार कई दिनों तक ठीक से भोजन मिलना उनके लिये अनहोनी बात थी ।

आजाद को उन दिनों सूखी रोटियों से पेट भरने में भी कितनी कठिनाई उठानी पड़ती थी, यह श्री भगवानदास माहौर के उस वर्णन से विदित होता है जो उन्होंने "यश की धरोहर" में लिखा है—

"श्री आजाद की भोजन व्यवस्था के लिये हम लोगों को घर से रोटियाँ चुरानी पड़ती थीं । भोजन मुझे माँ के हाथों चौके में बैठकर मिलना था । रोटियों के बर्तन तक तो मेरी पहुँच थी नहीं । चौके के अन्दर जो एक भीतरी चौका रहता है, उसकी रेखा तो मेरे लिये लक्ष्मण-रेखा थी । इस रेखा को लाँघ कर बर्तन में से दो-चार रोटियाँ चुरा लेने का साहस मैं नहीं कर सकता था । बस यही एक रास्ता था कि बहुत-सी रोटियाँ माँ से अपनी थाली में परोसवा लूँ, और थाली उठाकर अपने कमरे में चल दूँ । उनमें से कुछ मैं खालूँ और कुछ आजाद के लिये बचा लूँ । जब मैंने ऐसा किया तो माँ भंयकर रूप से नाराज हुई । एक रोज तो खाने को ही नहीं मिला । मगर मैं अपनी 'जिद' पर डटा रहा कि "चौका में धुँआ बहुत होता है और मेरी आँखों में रोहे हैं । कॉलेज के डॉक्टर ने धुयें से बचे रहने को कहा है । मुझे अंधा थोड़े ही होना है । खाना दो, चाहे मत दो, मैं धुयें में हर्गिज नहीं खाऊँगा ।" यह तर्क भी आजाद का सिखाया हुआ था । भला कौन माँ चाहेगी कि बेटे की आँखें खराब हो जायें ?"

"आजाद घर आये तो माँ ने उनसे शिकायत की । माँ को सुनाने के लिये आजाद ने भी मुझे झिड़का और चौका-विज्ञान पर एक लेक्चर दिया । जब मैंने अपनी आँखों का तर्क पेश किया तो आजाद निरुत्तर हो गये और कहने लगे 'आखिर अपना-धर्म भी तो होता है । कुछ कट्टर ब्राह्मण और आदर्श बेटा हरिशंकर ने जब मान लिया तो माँ के लिये तो मानो खुदा ने ही मान लिया और रोटियों की चोरी करने का मेरा मार्ग खुल गया । मुझे अधिक भूख लगती देख माँ और प्रसन्न होती । भाई सदाशिव और विश्वनाथ भी इसी प्रकार घर से रोटियाँ चुरा लाते । आजाद को इस प्रकार चुराई हुई रोटियों से पेट भरते देख एक बार मेरी भावुकता उमड़ी कि "हम सब तो बड़े आराम से तरह-तरह का भोजन करते हैं, और आपको प्रायः नित्य ही इसी प्रकार बासी सूखी रोटियों और अचार से पेट भरना पड़ता है ।" तो आजाद बोले—"अरे बेबकूफ हुआ है । तीन घर से तीन तरह की रोटियाँ आती हैं । किसी के यहाँ से आम का अचार, किसी के यहाँ से नीबू का । तेरे घर से करेले का अचार तो मुझे बहुत अच्छा लगता है । इतना विविध प्रकार का खाना खाता हूँ और क्या चाहिये ?"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आप इस दृश्य की तुलना आजकल के "देश भक्तों" से करें जिन्हें खाने के लिये दूध मलाई ही नहीं फलों के रस की जरूरत पड़ती है। जिनकी नित्य प्रति होने वाली दावतों में सैकड़ों रुपये के खाद्य पदार्थ रकाबियों में ही छोड़ दिये जाते हैं। और वहाँ देश के लिये प्राणों की बाजी लगाने वाले आजाद के लिये बासी सूखी रोटियाँ भी नियामत थीं। उनका भी सदा मिलना कठिन होता था। इसी को सच्चा त्याग और तपस्या कहें तो क्या अनुचित है। देशोद्धार के लिये की गई इस तपस्या का ही परिणाम है, कि वह आज भी मरने के बाद पूजे जा रहे हैं।

दल का पुनर्गठन

काकोरी-काण्ड में उत्तर प्रदेश के अधिकांश क्रान्तिकारी कार्यकर्त्ताओं के पकड़ लिये जाने और दल का संगठन छिन्न-भिन्न हो जाने पर, उससे निराश न हो आजाद ने अदम्य साहस और सूझ-बूझ से दल को फिर से संगठित करना आरम्भ कर दिया, यह उनके नेतृत्व का एक उत्कृष्ट उदाहरण था। झाँसी में सातार नदी के तट पर हनुमान जी के मन्दिर में रहते हुए ही, जब कि देश में सैकड़ों गुप्तचर उनको खोजते फिर रहे थे, उन्होंने चुने हुए सदस्यों को अपने पास बुलाना और जंगल में निशानेबाजी की शिक्षा देना आरम्भ कर दिया था। इस भू-भाग में दतिया, खनियाधाना, ओरछा आदि देशी रियासतें थीं, जहाँ कानून और शासन-व्यवस्था का अधिक जोर न था। वहीं आजाद ने शस्त्र-शिक्षा के कई केन्द्र खोल रखे थे। इनमें झाँसी तथा ग्वालियर के सदस्य तो आते ही थे, कभी-कभी कानपुर के और पंजाब के कार्यकर्त्ता भी आ जाते थे, आगरे में बने बमों की परीक्षा भी यहीं के जंगलों में भगतसिंह ने स्वयं की थी।

जब काकोरी-केस का फैसला हो चुका और पुलिस की दौड़-धूप कुछ कम हुई तो आजाद कानपुर तथा उत्तर प्रदेश के अन्य नगरों में भी जाकर नये-पुराने कार्यकर्त्ताओं से सम्पर्क स्थापित करने लगे। वे इसके लिये कैसी सावधानी से काम लेते थे और संगठन को सुदृढ़ बनाते थे, इसका एक संस्मरण सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी श्री शिव वर्मा ने अपनी पुस्तक "संस्मृतियाँ" में लिखा है—

"एक दिन जब सुरेन्द्र पाण्डे ने आकर धीरे से मेरे कान में कहा कि नम्बर दो (चन्द्रशेखर आजाद का उस समय का सांकेतिक नाम यही था) आ गये हैं और आज रात तुम्हें उनसे मिलना है, तो मेरे सारे शरीर में बिजली-सी दौड़ गई। दूसरों से आजाद के बारे में जो कुछ सुना था, उसके सहारे कल्पना के सहयोग से दिमाग में मैंने उनकी एक तस्वीर बना ली थी। सुरेन्द्र की बात से वह तस्वीर चलती-फिरती-सी लगने लगी।"

"विजय और सुरेन्द्र उस समय तक सी. आई. डी. की नजरों पर चढ़ चुके थे और उनकी गतिविधि पर पुलिस की कड़ी निगाह थी लेकिन मैं अभी उस अभिशाप से बरी था। फिर भी उस दिन शाम से ही मैंने अपने चारों ओर निगाह रखनी शुरू कर दी कि कहीं ऐन मौके पर कोई पीछा न कर ले। गर्मियों के दिन थे। निश्चित समय से काफी पहले ही कॉलेज से निकल पड़ा और यह जानने कि लिये कि कोई पीछा तो नहीं कर रहा है मैंने इधर-उधर के काफी चक्कर लगाये, कई पार्कों में बैठा, सुनसान से गुजरा और जब यकीन हो गया कि मैं अकेला ही हूँ तो रात के लगभग नौ बजे श्री राधामोहन गोकुल जी के मकान पर जाकर दरवाजा खटखटाया। राधामोहन जी ने दरवाजा खोला और बिन कुछ कहे ऊपर छत की ओर इशारा कर दिया। वहाँ खुली छत पर फैले चाँद के रुपहले प्रकाश में एक व्यक्ति चटाई पर उघारे बदन पाल्थी लगाये अकेला बैठा हम लोगों की प्रतीक्षा कर रहा था। सांवला रंग, गठा हुआ तगड़ा जिस्म, औसत लम्बाई से कुछ नाटा कद, छोटी तेज चुभती हुई आँखें, चेहरे पर चेचक के गहरे दाग। यह काकोरी केस के फरार अभियुक्त चन्द्रशेखर आजाद थे, जिसका नाम ब्रिटिश साम्राज्यशाही के लिये आतंक बन चुका था और जिनकी गर्दन के इन्तजार में अंग्रेजी सरकार के जल्लाद का फन्दा बेकरार था। उनके दाहिने घुटने के पास जिस्म से सटा हुआ उनका रिवाल्वर पड़ा था।"

"मुझे सामने देखकर पास ही पड़ी दूसरी चटाई की ओर इशारा करते हुए 'आओ भाई' कह कर उन्होंने मेरा स्वागत किया, फिर प्रश्नवाचक स्वर में पूछा "प्रभात ?" उत्तर में संक्षेप-सा 'जी' कह कर मैं पास वाली चटाई पर बैठ गया। "विजय और पाण्डे भी आ रहे होंगे, तभी बात करेंगे।" फिर कुछ ठहर कर स्वयं ही बोले—"विजय से मैं तुम्हारे काम के सम्बन्ध में सुन चुका हूँ। बिखरे सूत्रों को फिर से जोड़ कर नये सिरे से नया संगठन खड़ा करने का जो प्रयास तुम लोगों ने शुरू किया है, इससे लगता है कि अभी सब कुछ गया नहीं है और शीघ्र ही शायद हम लोग फिर से कुछ करने में समर्थ हो सकें।" आजाद का वाक्य पूरा होते-होते विजय और पाण्डे भी आ गये।

इस तरह आजाद ने पुराने और नये बिखरे सूत्रों को इकट्ठा करके एक नया संगठन तैयार करने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया और कुछ ही दिनों में झाँसी तथा कानपुर ही नहीं ग्वालियर, सहारनपुर, देहरादून, इलाहाबाद, दिल्ली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदि सभी नगरों में दल की शाखायें स्थापित करने की व्यवस्था की जाने लगी । इतना ही नहीं दूरवर्ती अजमेर, जयपुर, पूना आदि से भी सम्बन्ध हो गया । इस प्रकार उन्होंने दिखला दिया कि वे युद्ध में ही बढ़े-चढ़े नहीं हैं बल्कि एक कुशल संगठनकर्त्ता भी हैं ।

कुछ ही समय पश्चात् उनका सम्बन्ध भगत सिंह और सुखदेव आदि लाहौर के क्रान्तिदल वालों से भी हो गया । आगरा में एक 'केन्द्रीय समिति का कार्यालय' खोला गया, जहाँ विभिन्न स्थानों के सदस्यों को इकट्ठा करके दल की ट्रेनिंग दी जाने लगी । वहाँ की परिस्थितियों का जो वर्णन श्री भगवानदास माहौर ने किया है, वह पढ़ने योग्य है—

"सन् १९२८ में मैं ग्वालियर में विक्टोरिया कॉलेज में बी. ए. का विद्यार्थी था और वहीं होस्टल में रहता था । काकोरी केस के बाद पुनः संगठित क्रान्तिकारी संगठन के प्रमुख सदस्यों में से उस समय तक मेरा परिचय केवल श्री चन्द्रशेखर आजाद, कुन्दनलाल, विजयकुमार सिन्हा और सुरेन्द्रनाथ पाण्डेय से ही था । एक रोज अचानक भाई विश्वनाथ गंगाधर वैशम्पायन मेरे पास होस्टल में आये और मुझे अपने साथ आगरा ले गये । यहीं मुहल्ला नूरी दरवाजा में एक मकान में दुमंजले में क्रान्तिकारी दल की 'छावनी' पड़ी हुई थी । भाई विश्वनाथ के साथ मैं उक्त कमरे के द्वार पर पहुँचा तो निश्चित संकेत करने के बाद किसी ने भीतर से टार्च जलाकर हम दोनों को सिर से पैर तक देखा और फिर साँकल खोलकर भीतर आने दिया । कमरे में घुसते ही सबसे पहले मेरा सामना एक अच्छे बड़े रिवाल्वर की नली से हुआ । उससे नजर हटा कर जो आगे देखा तो एक अच्छे बलिष्ठ और सुन्दर नौजवान सावधान और सतेज आँखों को अपनी ओर घूरता पाया । यह नौजवान ही भगतसिंह थे, जो इस समय रात के लगभग ग्यारह बजे शिविर के पहरे पर अपनी ड्यूटी दे रहे थे । कमरे में कुछ नौजवान जो देखने में विद्यार्थी जैसे ही लगते थे, जमीन पर धोती और अखबार बिछाये एक कतार में पड़े सो रहे थे । हमारे आने से जो आहट हुई उससे दो एक की आँख खुल गई । एक ने उठकर मिट्टी के तेल की कुप्पी के मन्द प्रकाश में हमें घूरा और इसके पहले कि मैं उसे पहचान पाऊँ उसने मुझे पहचान कर होस्टल के विद्यार्थियों की तरह निहायत बेतकुल्लफाना ढंग से पाद प्रहार करके और अपनी भावी पत्नी का एक निकट सम्बन्धी घोषित करते हुए मेरा स्वागत किया । इससे मुझे भाई विजयकुमार सिन्हा को पहचानने में आसानी हुई और फिर मैंनें भी उत्तर में उनके सत्कार का समुचित उत्तर दिया ।"

क्रान्तिकारियों की 'छावनी' का यह वर्णन करने के पश्चात् माहौर जी ने दूसरे दिन का हाल लिखते हुए बतलाया है—"इसके बाद नहाने का कार्यक्रम शुरू हुआ । नहाने के पहले भगतसिंह ने आजाद की पीठ में तेल मला और आजाद ने भगतसिंह की । धीरे-धीरे दोनों एक दूसरे के हाथ मलने लगे । फिर जोर होने लगा तो आपस में हुँ-हाँ भी होने लगी । धीरे-धीरे यह नौबत आई कि दोनों भिड़ गये और भगतसिंह ने आजाद को अपने दोनों हाथों से उठाकर फर्श पर धर पटका । मैं आजाद की ताकत का लोहा मानता था और यह भी समझता था कि वे अपनी पूरी ताकत अभी नहीं लगा रहे हैं । फिर भी भगतसिंह के बल की धाक मेरे मन पर जम गई ।"

क्रान्तिकारियों की फाकामस्ती

ये तरुण क्रान्तिकारी, जो संसार के सबसे अधिक प्रतापशाली और प्रभावशाली ब्रिटिश-साम्राज्य के अधिकारियों से टक्कर लेने को खड़े हुए थे, कितने साधनहीन थे, इसको जानकर पाठकों को आश्चर्य हुए बिना न रहेगा । आगरे के जीवन के विषय में वैशम्पायन ने लिखा है-"एक बार आजाद, भगत सिंह बगैरह लाहौर में थे । उस समय उस मकान में मैं, विजय तथा जयदेव ही रह गये थे । घर में बिजली नहीं थी इसलिये लालटेन से प्रकाश की व्यवस्था थी । कमरे में केवल एक दरवाजा था जो सदा बन्द रहता था । जो भी बाहर से आता दरवाजे पर दस्तक देता । एक व्यक्ति जाकर दरवाजा खोलता और बाकी सचेत हो जाते । अपना साथी आया देख हथियार पर से हाथ हट जाते । आर्थिक संकट इतना था कि भूख लगने पर सोचा जाता कि पास में कितना पैसा है और कम से कम कितने में गुजारा हो सकता है । जयदेव ने बताया कि इस घर में एक बार तो तीन दिन तक केवल एक-एक कप चाय पर ही गुजारा करना पड़ा था । मैं जिन दिनों था तब एक बार खाना बनता था । दो साथी बनाते, दो खाने को बैठते । हर खाने वाले का यही प्रयत्न रहता था कि वह कम खाकर बाद में खाने वालों के लिये बाकी छोड़ दे । कई बार आजाद तथा भगतसिंह 'भूख नहीं है' कह कर भूखे ही रह जाते ।"

"यही स्थिति काकोरी के समय भी थी । श्री शचीन्द्रनाथ बख्शी ने ऐसी ही एक घटना का वर्णन करते हुए बताया था कि एक बार सम्भवतः बनारस या शाहजहाँपुर में काफी सदस्य एकत्रित थे । उन दिनों लोग खिचड़ी पर ही गुजारा करते थे । खिचड़ी बन चुकी, सभी सदस्य बैठे खा रहे थे और सबको परोसने वाले थे कुन्दनलाल । सब खाना खा चुके । कुन्दनलाल वैसे ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बर्तन मांजने लगे। उन्हें बर्तन मलते देख आजाद और बख्शी बाबू भी सहायता के लिये आ गये। बख्शी बाबू ने सहज ही कुन्दनलाल से पूछा—"तुमने भोजन किया या नहीं?" इस पर कुन्दनलाल चुप ही रहे। बहुत पूछने पर उन्होंने बताया कि खाना बचा ही नहीं था। इस पर सभी को दुःख हुआ और कुन्दनलाल के लिये तुरन्त व्यवस्था की गई। आगरे में अनेक बार जितना आटा होता उसकी ही रोटियाँ बनाई जातीं और दाल की देगची बीच में रख कर सभी चारों ओर बैठकर एक साथ खाते। श्री माहौर ने इसे 'भक्षण-चक्र' के नाम से सम्बोधित किया है।" बात यह थी कि इन लोगों के पास वर्तन थे ही नहीं, इसी तरह हाथ में रोटी लेकर खा लेते थे।

इन सुशिक्षित और अच्छे घरों के नवयुवकों ने देश की खातिर केवल अपने जीवन को ही खतरे में नहीं डाला वरन् खाने-पीने तक का इतना कष्ट उठाया, यह एक ऐसी बात है कि जिससे आज भी सभी सार्वजनिक कार्यकर्त्ता प्रेरणा ग्रहण कर सकते हैं। सेवा के क्षेत्र में वही व्यक्ति कुछ ठोस कार्य कर सकता है जो सब तरह के शौकों और आराम का ख्याल छोड़ कर सादगी का जीवन बिता सकता है अन्यथा जो लोग ऐसे कार्यों में भाग लेकर भी भोग विलास की भावना रखते हैं वे सेवा और परोपकार का कार्य तो दूर रहा, उल्टा अपने और दूसरों के पतन तथा संकट के कारण सिद्ध होते हैं। क्रान्तिकारी दल में ही कैलाशपति का उदाहरण इस तथ्य को स्पष्ट कर देता है। वह कहता था कि एक क्रान्तिकारी के लिये चार-पाँच सौ रुपया मासिक खर्च को चाहिये। उसने अपने ही एक साथी की पत्नी को फँसा लिया था और उसके लिये पचास खद्दर की साड़ियाँ और ब्लाउज लाकर रख दिये थे। पकड़े जाने पर कैलाशपति सब से पहले मुखबिर बना। उच्च आदर्शों से अनभिज्ञ और भोग-विलास की अभिलाषा रखने वाले ऐसे महान् कार्यों में अगर भाग लेते हैं तो ऐसा ही नतीजा होता है। सार्वजनिक क्षेत्र में सेवा करने वालों को त्यागवृत्ति और कष्ट सहन की शिक्षा दी जानी अनिवार्य है। आजाद इसके प्रत्यक्ष उदाहरण थे।

साथियों की सुरक्षा

आजाद को अपने साथियों की सुरक्षा का सदा पूरा ध्यान रहता था, चाहे उनको अपना कार्यक्रम कितनी ही बार क्यों न बदलना पड़े और चाहे इसके कारण कुछ लोग नाराज भी क्यों न हो जायें। इसी ख्याल से वे प्रायः सभी "एक्शनों" (डकैती, मार-काट आदि) में स्वयं भी उपस्थित रहते थे। अनेक सदस्य उनका महत्त्व और अनिवार्यता समझकर उनको छोटी-मोटी घटनाओं से पृथक् रखने की चेष्टा करते, पर आजाद जब तक स्वयं उसमें सम्मिलित न होते उन्हें सन्तोष ही नहीं होता। एक बार बहुत अधिक आर्थिक तंगी के कारण एक मन्दिर पर डकैती करने का निश्चय किया गया। उसमें भाग लेने को शिव वर्मा, राजगुरु और भगवानदास को चुना गया। इस पर आजाद नाराज होकर चुप हो गये। उन्हें यही शंका हो रही थी कि कहीं कुछ उल्टा-सीधा न हो जाये। शिव वर्मा ने इस बात को समझ कर उनसे भी साथ चलने के लिये कहा। इसका परिणाम यह हुआ कि सब लोग सकुशल वापस आ सके। यदि आजाद न होते तो इस बात की पूरी सम्भावना थी कि दो-चार व्यक्ति मारे जाते और हाथ भी कुछ न लगता।

आजाद को क्रान्तिकारी दल की सम्मान रक्षा का भी सदा ध्यान रहता था, और वे कोई ऐसा काम न करना चाहते थे जिससे दल की बदनामी हो। यही कारण था कि सबसे पहली डकैती में ही जब वे रामप्रसाद बिस्मिल के साथ किसी गाँव में गये थे तो दो स्त्रियों ने उनसे पिस्तौल ही छीन ली और वे स्त्रियों पर हाथ न उठाने के सिद्धान्त के कारण उनका कुछ न कर सके। इसी प्रकार बुन्देलखण्ड में रहते समय एक घटना हुई जिसमें आजाद ने सिद्धान्त की रक्षा के लिये आर्थिक लाभ के प्रस्ताब को ठुकरा दिया। इसका वर्णन करते हुए वैशम्पायन ने लिखा है—

"बुन्देलखण्ड की एक रियासत के किसी सरदार का परिचय आजाद से कराया गया। उन्होंने प्रस्ताव किया कि आजाद वहाँ के राजा को मारने में सरदार को सहयोग दें। इस कार्य के लिये वे दल को काफी आर्थिक सहायता दे सकेंगे। दल के एक सदस्य इसके पक्ष में थे। उनकी दलील यह थी कि "आखिर डकैती के अवसर पर भी अनिवार्य परिस्थिति में हम को हत्या करनी पड़ती है, तो इस हत्या में क्या दोष है?" आजाद ने एक दम इनकार न करके उनको मीठे शब्दों में समझाया—"ऐसा करना अनुचित है। मजबूरी में किसी को मारना और बात है और जान बूझकर हत्या करनी दूसरी बात। हमारा क्रान्तिकारियों का दल है, हत्यारों का नहीं। पास में पैसे हों या न हों, हम भूखे रह कर फाँसी पर भले ही लटक जायें, पर पैसे के लिये ऐसा घृणित कार्य नहीं कर सकते। यह सब हमारे सिद्धान्तों के प्रतिकूल है।"

वैशम्पायन से ही सम्बन्धित दूसरी घटना इस प्रकार है कि "एक बार झाँसी के ही एक सदस्य ने, जो मुझसे अवस्था और अनुभव में बड़े थे, मेरे सामने एक प्रस्ताव रखा कि एक व्यक्ति के साथ डकैती में चला जाऊँ। वह व्यक्ति नकली सिक्के बनाता था और वह जिस प्रकार का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काम करने जा रहा था, वह डकैती नहीं चोरी थी । उसमें सोने के जेवर हाथ लगने की आशा थी । उन दिनों झाँसी में आजाद, भगवानदास या सदाशिव कोई नहीं थे, जिनसे मैं परामर्श करता । मैंने सोचा, पार्टी को पैसा मिल ही जायेगा, इसलिये इस कार्य के करने में क्या हानि है ? मैं उस व्यक्ति के साथ जाने को तैयार हो गया । दो दिन बाद जाने का निश्चय हुआ । इसी बीच आजाद झाँसी आ गये । उनका नियम था कि आते ही सब लोगों से मिल कर हाल-चाल पूछ लेते थे । बातों के सिलसिले में मैंने उनको इस "एक्शन" की चर्चा की और उसमें जाने के लिये सहमत होने की बात बताई । वे बड़े धैर्य से सारी बात सुनते रहे फिर हँसकर बोले—"आपको किसने यह सलाह दी ?" जब मैंने नाम बताया तो रुष्ट होकर बोले—'उस मूर्ख को मैं देखता हूँ । और खबरदार, अपने आप जो ऐसा मूर्खतापूर्ण कार्य किया तो । वहाँ पकड़े गये तो चोर कहलाओगे, दूसरे जेवर मिल भी गये तो उन्हें कहाँ बेचते फिरोगे ? और हम लोग क्या चोर उचक्के हैं ? इक्के-सिक्के डालना हमारा काम नहीं ।" बाद में उन सलाह देने वाले सज्जन की भी जोरदार खबर ली गई । वे मुझसे बहुत बिगड़े कि मैंने आजाद को यह सब क्यों बताया ? मैंने स्पष्ट कह दिया कि एक नेता के नाते मुझे उन्हें सारी बातें बताना आवश्यक था और ऐसे कामों में उनकी सलाह और नेतृत्व तो अत्यन्त आवश्यक था ही ।"

खतरे के समय सबसे आगे

इस सम्बन्ध में अपने अनुभव में आई एक घटना का वर्णन श्री शिव वर्मा ने किया है, जिससे अपने साथियों के प्रति आजाद के अगाध स्नेह का पता चलता है । वे एक कट्टर और शक्ति का प्रदर्शन करने वाले अफसर की तरह अपने सहकारियों को आग में झोंकना नहीं चाहते थे, वरन् उनकी रक्षा के लिये सदैव अपना बलिदान करने को तैयार रहते थे । यह घटना असेम्बली बम काण्ड के बाद की है । उस दिन शिव वर्मा दो नई योजनाओं (एक्शन) का प्रस्ताव लेकर आजाद के पास झाँसी गये थे । उस दिन झाँसी केन्द्र में सदस्यों का काफी जमघट था । झाँसी के तीन प्रमुख कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त राजगुरु और कुन्दनलाल भी आ गये थे । जब शिव वर्मा पहुँचे तो सबने घेर लिया और भगतसिंह तथा दत्त के समाचार पूछने लगे । कुछ देर बाद उन्होंने आजाद के सामने सहारनपुर केन्द्र में सोची गई दो योजनायें रखीं । एक देहरादून में शिकार खेलने के अवसर पर वायसराय पर बम फेंकने की और दूसरी दिल्ली से लाहौर ले जाते समय भगतसिंह और दत्त को छुड़ाने की । आजाद ने कैदियों को छुड़ाने की बात से तो सहमति प्रकट की, पर वायसराय पर बम फेंकने की योजना को बिल्कुल नामंजूर कर दिया । वे कहने लगे—"अब मैं अलग-अलग साथियों को एक्शन में नहीं झोंकूँगा । दल के सेनापति के नाते क्या मेरा यही काम है कि लगातार नये-नये साथी जमा करूँ, उनसे अपनापन बढ़ाऊँ, फिर योजना बनाकर उन्हें मौत के हवाले कर दूँ ? अगर चलना होगा तो इस बार सब एक साथ चलेंगे ।" आगे चलकर शिव वर्मा लिखते हैं—

"उसी दिन झुटपुटा होते ही कानपुर से सुरेन्द्र पाण्डे आ गये । वे काफी परेशान से लग रहे थे, उन्होंने बताया कि पुलिस को आजाद के झाँसी में होने का पता चल गया है और कानपुर का सी. आई. डी. सब-इन्सपेक्टर शम्भूनाथ उनकी तलाश में झाँसी आया है । वे कानपुर से यही सूचना देने आये थे और उन्होंने झाँसी स्टेशन पर शम्भूनाथ को गाड़ी से उतरते देख लिया था । सुरेन्द्र को यह सूचना कानपुर सी. आई. डी. आफिस में काम करने वाले पार्टी के किसी हमदर्द से मिली थी । पाण्डे का यह भी अनुमान था कि सम्भवतः उसी रात झाँसी में विभिन्न स्थानों पर आजाद की तलाश में पुलिस छापे मारेगी ।"

"उस समय वैशम्पायन को छोड़कर मकान में दोपहर वाली पूरी मण्डली मौजूद थी । उस सूचना के बाद पूरा अंधेरा होने के पहले किसी के मकान से बाहर निकलने का अब कोई प्रश्न नहीं था ।"

"जब रात का अँधेरा घना हो गया तो यह सवाल उठा कि कौन सबसे पहले बाहर निकले । इतने आदमियों के एक साथ निकलने से किसी को भी शक हो सकता था । हम चाहते थे हमारे रहते ही आजाद सही सलामत किसी सुरक्षित स्थान पर चले जायें । आजाद इसके लिये राजी न थे ।"

"मकान पर किसी भी समय पुलिस छापा मार सकती थी और जो जितनी देर तक वहाँ अटका रहेगा उसके लिये उतना ही अधिक खतरा भी होगा । इसलिये हम लोग जल्द से जल्द आजाद को वहाँ से हटा देना चाहते थे । उधर अन्य साथियों को छोड़कर केवल अपनी फिक्र करना आजाद के स्वभाव के विपरीत था । काफी देर तक इस मसले पर बहस होती रही, लेकिन आजाद पर हमारे तर्क, अनुनय-विनय, प्रार्थना आदि का कुछ भी असर न पड़ा ।"

उनको अकेला छोड़कर बाकी लोग वहाँ से हटने को राजी न हुए तो उन्होंने अपना आखिरी ब्रह्मास्त्र फेंका—"दल के सेनापति के नाते मैं तुम चारों को आदेश देता हूँ कि फौरन एक-एक करके मकान के बाहर हो जाओ ।" उन्होंने सदाशिवराव मलकापुरकर और भगवानदास माहौर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

को, जो एक मानी में उनके दाहिने और बायें हाथ थे, अपने पास रख लिया। बाकी लोगों में सबसे पहले मुझे निकलना था, फिर राजगुरु को, उसके बाद पाण्डे को, फिर कुन्दनलाल को। उनके फैसले से हम लोग काफी परेशान थे, लेकिन चलना तो था ही। आजाद भी उठकर खड़े हो गये। मैंने आँखें उठाकर उनकी ओर देखा। मेरी आँखें छलक आईं। राजगुरु भी अपने को सँभाल नहीं पाया। आजाद बोले "चिन्ता मत करो प्रभात, जीते जी कोई इस शरीर पर हाथ नहीं लगा सकेगा।" फिर कुछ रुककर बोले—"और ये तीनों तो मेरे पास हैं ही।"

"रास्ते भर हमें आजाद की चिन्ता लगी रही। बाद में पता चला कि हमारे निकलने के बाद दोनों साथियों के साथ आजाद भी सही सलामत बाहर हो गये और उसी रात प्रायः अँधेरे में जब पुलिस ने दल-बल के साथ आकर वह मकान घेरा तो आजाद की जगह कुछ पुराने अखबार ही उनके हाथ लगे।"

यही कारण था कि आजाद के प्रमुख साथी उनके इशारे पर प्राण झोंकने को तैयार रहते थे और किसी प्रकार की 'गद्दारी' करने का विचार भी उनके मन में नहीं आता था। पर आज-कल 'नेता' का लक्षण यह हो गया है कि लच्छेदार भाषण देकर आराम कुर्सी पर लेटे रहें, और अपने अनुयायियों से सेवा कराने की अभिलाषा रखें। ऐसे स्वार्थी लोगों में परस्पर कभी सच्चा अनुराग नहीं हो सकता और न वे किसी बड़े सार्वजनिक उद्देश्य की पूर्ति कर सकते हैं।

साण्डर्स काण्ड

लाला लाजपत राय की मृत्यु का बदला लेने का योजना जब क्रान्तिकारी दल ने बनाई तो उसमें आजाद का मुख्य हाथ था। लालाजी की मृत्यु का समाचार पाते ही वे स्वयं लाहौर पहुँच गये और भगतसिंह तथा सुखदेव के साथ मिलकर योजना के विभिन्न पहलुओं पर विचार करने लगे। पुलिस सुपरिण्टेण्डेन्ट पर गोली चलाने का काम भगतसिंह तथा राजगुरु को दिया गया था और उनको बचाकर वापस लाने भार आजाद ने अपने ऊपर लिया। इसलिये आजाद ने अपनी तैयारी लालाजी के मरते ही आरम्भ कर दी और कहते हैं कि जिस समय लालाजी की अर्थी निकल रही थी उस समय आजाद और भगतसिंह "एअर पिस्टल" से निशाना साधने का अभ्यास कर रहे थे। आजाद ने इस 'एक्शन' की योजना बड़ी पूर्णता से बनाई थी और प्रत्येक को अपने अपने कार्य को अच्छी तरह समझकर अभ्यास कर लेने का आदेश दिया था, जिससे किसी तरह की भूल की गुंजायश न रहे।

१७ दिसम्बर, १९२८ को दोपहर के बाद जब वह बाहर निकले तो जयदेव को इशारा करने के लिये पुलिस दफ्तर की तरफ भेज दिया गया। कुछ देर पीछे राजगुरु पैदल तथा भगतसिंह और आजाद बाईसिकलों पर उसी तरफ रवाना हुए। साण्डर्स को मारने के बाद हैडकांस्टेबिल चननसिंह, जो साण्डर्स का अर्दली था अपना कर्त्तव्यपालन करने के लिये भगतसिंह आदि के पीछे दौड़ा। आजाद यथासम्भव किसी भारतवासी को मारना नहीं चाहते थे। उन्होंने चननसिंह को डाँटकर पीछे लौट जाने को कहा, पर जब वह गालियाँ देता तेजी से पीछे दौड़ता ही रहा तो उन्होंने एक गोली से उसका काम तमाम कर दिया। पर बाद में भी वे चननसिंह की प्रशंसा ही करते रहे। उन्होंने वैशम्पायन से इसकी चर्चा करते हुए कहा—"बच्चन! एक हिन्दुस्तानी और एक अंग्रेज की निष्ठा का अन्तर देखो। फर्न (साण्डर्स हत्याकाण्ड के समय उपस्थित एक अंग्रेज इन्सपेक्टर) को गोली की आवाज सुनते ही प्राणों का मोह हो गया और चननसिंह ने अपने कर्त्तव्य के लिये गोली और मौत की परवाह न की। मैंने बहुत कोशिश की कि चननसिंह को गोली न मारनी पड़े, पर जब कोई चारा ही न रहा तो मारनी पड़ा।" इससे प्रकट होता है कि जिन लोगों ने आजाद का चित्रण केवल एक कठोर अनुशासनकर्त्ता या मार-काट करने वाले खूनी व्यक्ति के रूप में किया है; वे वास्तविकता से अनजान थे। आजाद मानवता में बड़ी श्रद्धा रखने वाले थे और अकारण मानव-रक्त बहाना निन्दनीय समझते थे। केवल राष्ट्रोद्धार के महान् आदर्श के लिये ही वे ऐसा कोई काम करने को तैयार होते थे।

असेम्बली बम काण्ड

यही बात असेम्बली बम-काण्ड के अवसर पर सामने आई। उस समय असेम्बली का अधिवेशन होते समय बम फेंकना ऐसा काम था जिसमें बहुसंख्यक व्यक्ति मारे जा सकते थे। इसलिये यह निश्चय कर लिया गया कि बम घातक न हों और उनको पूर्ण सावधानी से सब को बचा कर फेंका जाये। इस घटना के अवसर पर जो पर्चा असेम्बली भवन में फेंके गये थे उनमें भी "मानवता" की इस भावना को स्पष्ट कर दिया गया था—

"हम मनुष्य के जीवन को पवित्र समझते हैं। हम ऐसे उज्ज्वल भविष्य में विश्वास रखते हैं जिसमें प्रत्येक व्यक्ति पूर्ण शान्ति और स्वतन्त्रता का उपभोग करेगा। हम मानव-रक्त बहाने के लिये अपनी विवशता पर दुःखी हैं। परन्तु क्रान्ति द्वारा सबको समान स्वतन्त्रता देने और मनुष्य का शोषण समाप्त कर देने के लिये क्रान्ति में कुछ व्यक्तियों का बलिदान अनिवार्य है।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इस अवसर पर यह भी प्रकट हुआ कि आजाद अपने साथियों को कितना अधिक प्यार करते हैं । उन्होंने असेम्बली में बम फेंकने के पश्चात् भगतसिंह के वहाँ जानबूझ कर पकड़े जाने का लगातार विरोध किया था, पर जब अन्य सदस्यों ने इस पर जोर दिया और खासकर सुखदेव ने भगतसिंह पर आक्षेप भी किये, तब वे चुप रह गये । फिर भी उनको भगतसिंह की गिरफ्तारी चिन्ता का कारण ही बनी रही । इस सम्बन्ध में "अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद" में लिखा है—

"भगतसिंह को आजाद केवल पार्टी के एक सदस्य के नाते ही नहीं देखते थे, बल्कि अपने भाई की तरह, अपने परिवार के व्यक्ति की तरह मानते और अत्यधिक स्नेह रखते थे । असेम्बली बम-काण्ड में वे भगतसिंह को नहीं भेजना चाहते थे । वे यह तो मानते थे कि उसके जाने और अदालत में वक्तव्य देने से पार्टी को देश की राजनीति में बहुत बड़ा स्थान मिलेगा—इतना ही नहीं, वरन् विश्व के लोग जान जायेंगे कि भारतीय क्रान्तिकारी देश की स्वतन्त्रता के लिये बड़ी से बड़ी कुर्बानी दे रहे हैं । पर साथ ही वे यह भी अनुभव करते थे कि पार्टी को इससे बहुत बड़ा धक्का भी लगेगा ।" वे कहा करते थे कि "काकोरी के बाद संगठन कार्य में जो साथी मिले उनमें भगतसिंह एक हीरा था ।" जब हम देखते हैं कि आजकल राजनीति में भाग लेने वाले परस्पर प्रायः प्रतिद्वन्द्विता का भाव ही रखते हैं और एक ही पार्टी में भी सत्ता के लिये बड़ी लागडांट होती रहती है, तब चन्द्रशेखर और भगतसिंह का यह भ्रातभाव हमारे लिये एक श्रेष्ठ आदर्श सिद्ध हो सकता है ।

उनको भगतसिंह और अपने अन्य साथियों से कितना प्रेम था इसका एक उदाहरण "यश की धरोहर" में मिलता है—"जब भगतसिंह और दत्त दिल्ली की असेम्बली में बम फेंककर गिरफ्तार हो गये तो दो-चार दिन बाद साथी शिव वर्मा उन दोनों के फोटो लेकर झाँसी आये । शिव वर्मा ने बड़ी भावुकता से सुनाया कि किस प्रकार वे पिस्तौल की नोक पर, अपने आपको खतरे में डालकर, फोटोग्राफर के यहाँ से ये चित्र लाये हैं । हम सभी भावुकतावश अपनी भीगी आँखों को पोंछ रहे थे । उस समय आजाद बिल्कुल "स्थित प्रज्ञ" की तरह अविचलित रहे । पर कुछ देर बाद वे अकेले में बैठे कुछ सोच रहे थे, तो मैंने देखा कि उनकी आँखों में आँसू हैं । मैं उनके पास जाकर सहानुभूति की बातें करने लगा तो आजाद बोले—"मुझे इसका दुःख नहीं है कैलाश ! कि भगतसिंह और दत्त चले गये । वह तो आगे-पीछे पकड़े जाकर या गोली खाकर हम सभी को जाना है । भगतसिंह को तो फाँसी होगी ही, पर उसको फाँसी होने से पहले हमको भी कुछ कर दिखाना है ।"

आजाद का बौद्धिक विकास

यद्यपि अपने दल में आजाद सबसे कम पढ़े-लिखे थे, तो भी बौद्धिक विकास की दृष्टि से वे किसी से कम न थे । हिन्दी के समाचार-पत्रों को नियमित रूप से ध्यानपूर्वक पढ़ते रहना उनका स्वभाव हो गया था । अंग्रेजी के पत्रों और पुस्तकों को भी वे किसी साथी से पढ़वाकर सुनते समझते रहते थे । इससे उनका सामान्य ज्ञान बहुत से लोगों से बढ़ा-चढ़ा था । इस तथ्य का विवेचन करते हुए श्री भगवानदास माहौर ने लिखा है—

"आजाद के साथियों में, उनके नेतृत्व में काम करने वालों में से शायद ही किसी को उनसे कम स्कूली शिक्षा मिली होगी । शायद ही कोई उनसे अधिक गरीबी की दशा में उत्पन्न हुआ होगा । उनके साथ उनके पिता, भाई या अन्य किसी सम्बन्धी की देशभक्ति, त्याग-तपस्या, वीरता या अन्य किसी प्रकार के बड़प्पन की छाया भी नहीं लगी हुई थी । अमर शहीद भगतसिंह आदि अपने साथियों में उन्होंने नेता का पद, पुस्तकीय ज्ञान के बल पर नहीं, वरन् अपनी व्यावहारिक सूझ-बूझ, अदम्य साहस और सर्वोपरि अपने साथियों और सम्पर्क में आने वाले लोगों के जीवन में केवल एक राजनीतिक मूल्य के रूप में ही नहीं, एक व्यक्तिगत भाव-मूल्य के रूप में घर कर लेने के अपने गुण में ही आजाद की सफलता निहित थी । उनके अकृत्रिम, स्नेहपूर्ण व्यवहार ने ही उन्हें साथियों का प्रिय नेता बना दिया था और उनके हृदय में ऐसा विश्वास उत्पन्न करा दिया था कि वे आजाद के संकेत मात्र पर प्राण देने को तैयार रहा करते थे । दल में आजाद के नेतृत्व को स्वीकार करने के सम्बन्ध में कभी कोई झंझट या झगड़ा नहीं हुआ ।"

श्री अर्जुन अरोड़ा ने आगरा में "श्री राधामोहन गोकुल जी स्मृति समारोह" के अवसर पर कहा था कि "चन्द्रशेखर आजाद ने मुझे दो पुस्तकें दीं—"ए. बी. सी. आफ कम्यूनिज्म" और "सोवियत रूस की पंचवर्षीय योजना" । उस समय एक बम के धड़ाके से हाथ घायल हो जाने के कारण मैं फरार था । आजाद ने तब कहा कि तुम अब पुलिस में हाजिर हो जाओ, मुकदमा चलेगा, सफाई दी जायेगी, ३-४ वर्ष की सजा हो जायेगी । उसे काट कर मजदूरों में काम करना । तुम्हारे पास तो अभी लम्बी जिन्दगी है ।"

इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि मनुष्य की महानता बहुत कुछ उसके हार्दिक भावों, सच्चे प्रेम और बिना माँगें सहयोग पर ही आधार रखती है । खेद का विषय है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आजकल राजनीतिक या सार्वजनिक क्षेत्र में ऐसे व्यक्तित्व का बहुत अभाव हो गया है । इस समय तो गुटबन्दी ही नहीं "दल-बदल" तक धूमधाम से चल रही है । स्वार्थपरता की लहर इतने वेग पर है कि किसी की आन्तरिक सचाई पर विश्वास करना कठिन हो गया है । इस परिस्थिति को देखते हुए घोर अभाव में पला हुआ, अपने त्याग, तपस्या और प्रेम के आधार पर महानता को प्राप्त करने वाला यह युवक-नेता सदैव हमारी श्रद्धा का पात्र बना रहेगा ।

अन्धविश्वास और पाखण्ड से दूर

अपनी इसी ज्ञान-ग्रहण करने की वृत्ति के कारण आजाद के विचार काफी प्रगतिशील और परिष्कृत बन गये थे, और वे अपने समाज में फैले हुए अन्धविश्वास तथा रूढ़िवादिता के दोषों से बहुत कुछ ऊपर उठ गये थे । एक बार ग्वालियर के विक्टोरिया कॉलेज में जब वे भगवानदास से मिलने गये तो वहाँ के कुछ विद्यार्थियों ने रात के समय उनको 'भूत का करिश्मा, दिखला कर भयभीत करना चाहा । पहले तो आजाद हँसते रहे और कहा कि यह गुण्डों की शरारत है । पर जब विद्यार्थी उनको सचमुच भूत होने का विश्वास दिलाने लगे तो वे तुरन्त उठ खड़े हुए कि "चल मैं देखूँ कि कैसे भूत हैं ?" लड़के उनको डराते और रोकते रहे पर उन्होंने पास जाकर उन 'भूतों' पर ऐसी ढेलेबाजी की वे सब भागते ही नजर आये । हार कर लड़कों ने अपनी चालाकी की बात स्वीकार कर ली और वे आजाद के भक्त और प्रशंसक बन गये ।

इसी प्रकार एक बार झाँसी में दल के अर्थ-संकट को दूर करने के लिये मास्टर रुद्रनारायण ने यह सुझाव दिया कि ओरछा में बेतवा नदी के किनारे एक लक्ष्मीजी का पुराना मन्दिर है । लोग कहते हैं कि वहाँ एक स्थान पर धन गड़ा है और उस पर एक साँप बैठा है । जो धन को छूने नहीं देता । आजाद ने हँसकर कहा—"अजी धन तो क्या होगा पर मैं यह देखना चाहता हूँ कि वह साँप धन को छूने कैसे नहीं देता ? यह भूत-प्रेत, भूमिया, साँप-वाप की बातें ढपोरसंखों की हैं ।" मास्टर ने कहा—"तो फिर चलकर देख क्यों नहीं लेते ?" बस एक दिन शाम के समय दो व्यक्तियों के साथ वे मौके पर पहुँचे और रात भर खूब खुदाई की । पर नतीजा कुछ न निकला । सवेरा होने पर तीनों व्यक्ति इस विषय पर वाद-विवाद करते झाँसी लौट आये ।

आजाद का अन्त

इलाहाबाद के अलफ्रेड पार्क में आजाद ने किस प्रकार सच्चे वीरों की तरह मृत्यु का आलिंगन किया इसकी झाँकी तो हमने पुस्तक के आरम्भ में ही करादी है । पर घटना में एक बहुत बड़ा रहस्य यह निहित है कि आजाद के दल के कुछ व्यक्तियों ने ही विश्वासघात करके पुलिस को सूचना दी और एक महान् देशभक्त की हत्या का कलंक अपने सिर पर लिया । यह वह अवसर था जब दिल्ली-षड़यन्त्र केस के मुखबिर कैलाशपति के बयान के आधार पर पुलिस चारों तरफ क्रान्तिकारियों के पीछे पड़ गई थी और आजाद के साथी एक-एक करके पकड़े या मारे जा रहे थे । यद्यपि आजाद अब भी अपनी चिन्ता न करके साथियों के बचाव के लिये प्रयत्नशील थे, पर उनके ऊपर 'होनहार' की काली छाया पड़ने लग गई थी । अपने ही साथियों के विश्वासघात और नीचतापूर्ण कृत्यों से वे दुःखी हो गये थे और उन्होंने दल को भंग कर दिया था । इन्हीं गद्दारों की सहायता से पुलिस आजाद को फँसाने का तानाबाना पूर रही थी । आजाद को पकड़ने का भार पुलिस इन्सपेक्टर शंभूनाथ को दिया गया था, जिसका वीरभद्र के साथ घनिष्ठ परिचय ही नहीं था वरन् घरेलू सम्बन्ध भी बतलाया जाता था । एक बात यह भी थी कि जिन सदस्यों के प्रति आजाद ने 'भ्रष्टाचार' या 'दुराचार' के लिये अनुशासन की कार्यवाही की थी वे उनके शत्रु बन गये थे और ऊपर से मिले रह कर भीतर ही भीतर उनके नाश की योजनाओं में भाग ले रहे थे ।

यह एक ऐसा गोपनीय और विरक्ति-कारक विषय है जिसका अधिक विस्तार करना हमें पसन्द नहीं । दूसरी बात यह कि हमारे पास उसका कोई विश्वस्त प्रमाण या विवरण भी नहीं हैं । क्रान्तिकारी दल के सब काम ऐसे गुप्त होते थे कि किसी अन्य व्यक्ति के लिये उनकी असलियत समझ सकना सम्भव न था । इसलिये हम अलफ्रेड पार्क की घटना के लिये क्रान्तिकारी दल के प्रमुख सदस्यों के वक्तव्यों के आधार पर ही कुछ अनुमान लगा सकते हैं ।

आजाद और पुलिस के संघर्ष के सबसे अधिक प्रत्यक्षदर्शी गवाह सुखदेव राज हैं, जो आक्रमण के समय तक उनके साथ बैठे बातें कर रहे थे और जिन्होंने दो-चार मिनट लड़ने में भाग भी लिया । उनका कहना है कि, जब हम पार्क में बातें कर रहे थे, तो आजाद ने एकाएक कहा कि "वह देखो सामने सड़क पर वीरभद्र जा रहा है, शायद उसने हमको देखा नहीं ।" वीरभद्र भी क्रान्तिकारी दल और उसकी केन्द्रीय समिति का भी सदस्य था, पर इन दिनों आजाद का विरोधी बन गया था । इस सम्बन्ध में सुखदेव राज ने लिखा है—"वीरभद्र को यशपाल द्वारा अपने प्राणदण्ड की सूचना मिल गई थी, इसलिये भैया (आजाद) और दल के विरुद्ध वह विद्रोही हो गया था । अंग्रेजों की पुलिस से उसके गठबन्धन की बात अब किसी से छिपी नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थी । सत्याग्रह के सिलसिले में ही श्री रामचन्द्र मुसद्दी भी वीरभद्र के साथ फैजाबाद जेल में थे । उनका कथन है कि मेरा यह दृढ़ मत है और मेरे पास प्रमाण हैं कि वीरभद्र ही आजाद की शहादत के लिये जिम्मेदार है ।"

आजाद के परम विश्वासपात्र श्री वैशम्पायन ने लिखा है कि "वीरभद्र तिवारी आजाद की शहादत के दिन इलाहाबाद में ही था । वीरभद्र उत्तर प्रदेश में, विशेषकर कानपुर में क्रान्तिकारी दल का कोई ऐसा 'एक्शन' नहीं होने देना चाहता था जिससे पुलिस सतर्क हो उससे उत्तर माँगती, क्योंकि वह पुलिस का मुखबिर भी था । इसलिये आजाद जब उसे कानपुर के एक 'एक्शन' में ले जाना चाहते थे तो वह सत्याग्रह करके जेल चला गया परन्तु कैलाशपति मुखबिर ने जब यह बताया कि वीरभद्र केन्द्रीय समिति का सदस्य था, तो सी. आई. डी. का सुपरिण्टेण्डेण्ट नाट बावर उससे मिला और उसे धमकाया कि वह आजाद का पता बताये नहीं तो उसे फाँसी पर चढ़ा दिया जायेगा ।"

भगतसिंह के साथी और पुराने क्रान्तिकारी श्री काशीराम ने जो इस समय पाण्डेचेरी के अरविन्द आश्रम में रहते हैं, ९ अप्रैल, १९६७ के साप्ताहिक 'हिन्दुस्तान' में लिखा था "आजाद की शहादत का जिम्मेदार कौन ? यह प्रश्न दर असल बहुत गम्भीर है । वीरभद्र तो इसकी एक क्षुद्र कड़ी मात्र है । असली आदमी तो वह जान पड़ता है जिसने इलाहाबाद में पार्टी का रुपया हजम किया और पुलिस को भी आजाद के सम्बन्ध में इत्तला दी ।"

क्रान्तिकारी इतिहास लेखक श्री मन्मथनाथ गुप्त लिखते हैं—"चन्द्रशेखर आजाद की शहादत के बाद यह तर्क-वितर्क चालू रहा है कि वीरभद्र ने मुखबिरी करके उनको मरवाया । सभी क्रान्तिकारियों ने उसे ही दोषी माना है । केवल यशपाल ने वीरभद्र को दोषमुक्त करने की चेष्टा की है । इस सम्बन्ध में यशपाल का वक्तव्य इस कारण विशेष अर्थ नहीं रखता कि यशपाल को मृत्युदण्ड से वीरभद्र ने बचाया था, इस कारण शायद वह वीरभद्र के एहसान का बदला दे रहे हों ।"

इन सब वक्तव्यों को जान लेने के पश्चात् यदि कोई निष्पक्ष व्यक्ति वीरभद्र को न्यूनाधिक दोषी ठहराये तो इसे अन्याय नहीं कहा जायेगा । यह स्पष्ट ही है कि काकोरी-केस में पकड़े जाने के बाद से ही उसने क्रान्तिकारियों तथा पुलिस दोनों से मिले रहने की नीति अपनाई और इस प्रकार हर तरह से लाभ उठाने की कोशिश करता रहा । इस दृष्टिकोण से विचार करने पर हम सुखदेव राज के अन्तिम निष्कर्ष को अधिकांश में सही मान सकते हैं—

"वीरभद्र जन्मजात विश्वासघाती था । वह न पार्टी के विश्वास पर खरा उतरा, न पुलिस के और न नारी (खोकी) के ही । हर जगह और हर हालत में वह अपना ही उल्लू सीधा करता रहा ।"

अब इतने समय बाद यह विवाद उठाना एक प्रकार से असामयिक ही है कि आजाद को मरवाने में किस-किस का हाथ था और उनमें कौन प्रमुख और कौन गौण था ? कुछ भी हो परिस्थितियों को देखते हुए वीरभद्र को उसी समय अन्य क्रान्तिकारियों ने दोषी माना था और दो बार उसे गोली मारने की चेष्टा भी की गई थी । हम तो इतना ही कहेंगे कि आजाद जैसे भारतमाता के सपूत के साथ विश्वासघात करने वाला कोई भी हो, इस प्रकार के आचरण द्वारा उसने अपने मस्तक पर कलंक का अमिट टीका ही लगा लिया । ऐसा व्यक्ति सदा घृणा का पात्र रहेगा और लोक या परलोक कहीं भी सुखी नहीं रह सकेगा ।

मृत्यु का अन्तिम दृश्य

इस प्रकार चन्द्रशेखर आजाद ने शत्रु के दल-बल के साथ खुले तौर पर युद्ध करते हुए वीरगति पाई । वह समय घोर राजनीतिक अशान्ति का था । गाँधी जी का नमक सत्याग्रह चल रहा था और गिरफ्तारियाँ अथवा गोली चलना उन दिनों मामूली बात थी । कांग्रेस के प्रमुख नेता अहिंसात्मक आचरण की प्रतिज्ञा करने के कारण आजाद और भगतसिंह जैसे हिंसात्मक आन्दोलन वालों से सहयोग करने को तैयार न थे यद्यपि चन्द्रशेखर आजाद ने स्वयं प. जवाहर लाल नेहरू से भेंट करके भविष्य के लिये हिंसा का त्याग करने का विचार प्रकट किया था, जिसका वर्णन नेहरू जी की आत्मकथा में मिलता है, फिर भी आजाद की मृत्यु के दिन तक कांग्रेस और क्रान्तिकारियों के रास्ते अलग-अलग ही थे । इसलिये जब इलाहाबाद के कुछ देशभक्तों के प्रयत्न से आजाद की चिता की राख और अस्थियों का जलूस निकाला गया तो कांग्रेस वालों में से केवल श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन और कमला नेहरू ने आगे बढ़कर उस कार्य में सहयोग देने का साहस किया । चन्द्रशेखर के अस्थि कलश का सम्मान करने की सभा पुरुषोत्तमदास पार्क में की गई, जिसमें सौभाग्यवश महान क्रान्तिकारी शचीन्द्रनाथ सान्याल की धर्मपत्नी श्रीमती प्रतिमा भी उपस्थित हो गईं । उन्होंने सभा में कहा—"खुदीराम बोस की भस्मी को लोगों ने ताबीजों में भरकर अपने बच्चों को पहिनाया था ताकि उनके बच्चे भी खुदीराम की ही तरह बहादुर देशभक्त बनें । मैं उसी भावना से भाई आजाद की राख की चुटकी लेने आई हूँ ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भगतसिंह के सच्चे सहयोगी श्री भगवतीचरण की धर्मपत्नी और स्वयं क्रान्तिकारी दल में रहकर शत्रुओं पर गोली चलाने वाली 'दुर्गा भाभी' ने आजाद के अन्तिम समय का वर्णन करते हुए 'नर्मदा' के विशेष अंक में लिखा था—

"भैया (आजाद) सरल स्वभाव के थे । दाव-पेंच और कपट की बातों से उनका दम घुटता था । उस समय पूरे देश में एक संगठन था और उसके केन्द्र आजाद थे । काम के लिये हम सभी सच्चे और ईमानदार थे किन्तु साधारण वातावरण दूषित होने लग गया था । क्रान्तिकारियों की संख्या बढ़ गई थी, पर हर तरह के व्यक्ति उसमें आने लगे थे और झगड़े-झंझट भी बढ़ रहे थे । भैया का जीवन इस प्रकार पैदा हुई समस्याओं से उलझने लगा, वे खिन्न और दुःखित रहने लगे । कोई ठोस काम हो न पा रहा था । समय ने भी इसमें योग दिया, मित्र ने उनके प्रतिघात किया और वह कलाकार संसार से रूठ कर चला गया ।"

श्री मन्मथनाथ ने ठीक ही लिखा है कि "शायद ही कोई अन्य क्रान्तिकारी सात साल तक खतरनाक से खतरनाक कार्य करते (कराते ही नहीं) हुए रंगमंच पर रहे हों । तथ्य यह है उनके पाँव में उनके युग के उत्तर भारत के सारे क्रान्तिकारियों के पैर आ जाते हैं ।"

"अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद" के लेखक के यह शब्द भी यथार्थ हैं कि "आजाद जिस सिद्धान्त को लेकर क्रान्तिकारी संघर्ष कर रहे थे, उसकी पूर्ति आज भी नहीं हुई है । वे समाजवादी शासन-व्यवस्था के पक्के समर्थक थे । उनके प्रति उचित श्रद्धांजलि तो यही होगी कि हम उनके स्वप्न को साकार करें ।"

निःसन्देह सच्चे क्रान्तिकारियों के मनोभाव और सिद्धान्त ही उनके सर्वस्व होते हैं । उन्हीं की खातिर वे हँसते-हँसते अपना बलिदान कर देते हैं । चन्द्रशेखर आजाद का वास्तविक सम्मान हम तभी कर सकते हैं जब देश और समाज के कल्याण के लिये अपने को खपा दें ।

मातृभूमि के सम्मान की रक्षा करने वाला क्रान्तिवीर भगतसिंह

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सन् १९२८ (उन्नीस सौ अट्ठाईस) का अक्टूबर का महीना था, जब लाहौर नगर के जन-जीवन में एक घोर हलचल व्याप्त हो रही थी । जिधर देखो लोगों की छोटी-बड़ी टोलियाँ अंग्रेजी शासन के विरुद्ध चर्चा करतीं और बदनाम साइमन कमीशन के वायकाट के सम्बन्ध में रोष का भाव प्रकट करती नजर आती थीं । यह साइमन-कमीशन क्या था, भारतवासियों के स्वतन्त्रता संग्राम को कुचलने के लिये ब्रिटिश गवर्नमेण्ट का एक बड़ा कुचक्र था । इस समय महात्मा गाँधी के असहयोग तथा सत्याग्रह आन्दोलन ने एक ऐसी देशव्यापी जागृति उत्पन्न कर दी थी कि भारत की असंख्य जनता अंग्रेजी सरकार की शोषण नीति और दमन द्वारा अंग्रेजी शासन के विरुद्ध कटिबद्ध हो गई थी । देश में स्थान-स्थान पर अशान्ति उत्पन्न होती रहती थी, जिसमें अनेक व्यक्ति हताहत होते और हजारों जेलों में बन्द किये जाते थे । इससे देश-विदेशों में सरकार की बदनामी फैल रही थी और जो भारतवासी सरकार के सहायक और समर्थक थे, वे भी एक-एक करके उसको दोषी बतलाकर विरोधी पक्ष से सहानुभूति रखने वाले बनते जाते थे । साइमन कमीशन इसी उद्देश्य से यहाँ भेजा गया था कि वह अंग्रेजों के अत्याचारी शासन और दमन नीति पर लीपापोती करके भारतवासियों को दोषी और स्वराज्य के अयोग्य सिद्ध करे ।

यह कमीशन फरवरी के महीने में ही देश में पदार्पण कर चुका था और बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली, मद्रास आदि जहाँ भी गया था लाखों की भीड़ ने काले झण्डों से उसका 'स्वागत' करके 'साइमन गो बैक' के नारे लगाये थे । इससे कमीशन के सदस्य बहुत भड़कते थे और भारतीय अधिकारी यह प्रयत्न करते थे कि जहाँ तक सम्भव हो कमीशन के आगमन से पूर्व ही प्रदर्शनकारियों की भीड़ को तितर-बितर कर दिया जाये, जिससे साइमन साहब को यह अप्रिय दृश्य न देखने पड़ें । लाहौर के पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट मि. स्काट इस सम्बन्ध में विशेष व्यग्र थे । पंजाब को "फौजी सूबा" माना जाता था और वहाँ की पुलिस जनता को दबाने में पशुबल का प्रयोग अधिक करती रहती थी । इस अवसर पर भी लाहौर स्टेशन के सामने जमा लोगों की भीड़ को हटाने के लिये वहाँ की पुलिस ने लोगों पर खूब डण्डे चलाये । इस पर भी जब मुख्य आन्दोलनकारियों का एक दल, जिसमें भगतसिंह और उसके सहकारी सम्मिलित थे और जिसका नेतृत्व लाला लाजपतराय कर रहे थे, अपने स्थान पर ही डटा रहा तो पुलिस का असिस्टेण्ट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुपरिण्टेण्डेण्ट साण्डर्स बड़े तैश में आकर उस पर अन्धाधुन्ध लाठी चलाने लगा । कई लाठियाँ लालाजी को भी लगीं, जिनसे काफी चोट आ गई इससे समस्त नगर में बड़ा रोष फैल गया । शाम को जो सार्वजनिक सभा हुई उसमें लाला लाजपतराय ने गर्जते हुए कहा—"मैं घोषणा करता हूँ कि मुझ पर जो चोटें पड़ीं हैं वे अंग्रेजी शासन के 'काफिन' (अर्थी) के लिये अन्तिम कीलें सिद्ध होंगी ।" इसके बीच पच्चीस दिन बाद ही (१७ नवम्बर, १६२८ को) लालाजी का देहान्त हो गया ।

इस घटना से देश भर में क्षोभ और रोष की एक लहर दौड़ गई । क्रान्तिकारी दल ने इसका बदला लेने का निश्चय किया । इस समय तक काकोरी के कैदियों को छुड़ाने, वायसराय की मोटर और साइमन कमीशन पर बम फेंकने की योजनायें असफल हो जाने से क्रान्तिकारियों के हौसले मन्द हो रहे थे । भगतसिंह ने इस अवसर पर दल की प्रतिष्ठा को ऊँचा उठाने और जनता का भी ध्यान उसकी तरफ आकर्षित करने के लिये बहुत उपयुक्त समझा । बस तैयारियाँ शुरू हो गईं । उद्देश्य तो था पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट स्काट को गोली का निशाना बनाना, पर वह ठीक अवसर पर अन्यत्र चला गया, जिससे उसकी जगह साण्डर्स मारा गया, इसी साण्डर्स ने स्काट की सलाह से लालाजी पर लाठी चलाई थी । कुछ भी हो इस कार्य से भगतसिंह और उनके दल का नाम जनता में चमक उठा और सभी स्वतन्त्रताप्रिय व्यक्ति इस बात पर गर्व अनुभव करने लगे कि नवयुवकों ने राष्ट्रीय अपमान का बदला ले लिया ।

क्रान्तिपथ का पथिक

भगतसिंह (जन्म २८ सितम्बर, १६०७) आरम्भ से ही देशभक्ति और क्रान्ति के वातावरण में पला था । उसके चाचा अजीत सिंह का नाम सन् १६०७ में, जब उनको लाला लाजपतराय के साथ माण्डले (बर्मा) में देश निकाला दिया गया, देश के कोने-कोने में छा गया था । उसके पिता सरदार किशनसिंह आजन्म गर्म दल के आन्दोलनकारी रहे और अनेक बार जेल भेजे गये । छोटे चाचा स्वर्णसिंह भी उसी मार्ग पर चले और जेल में दुर्व्यवहार सहकर सन् १६१० में ही दुनिया से चल दिये । ऐसे वातावरण में जन्म लेने वाला और शैशवावस्था से उन्हीं बातों की चर्चा सुनने वाला भगतसिंह अगर देश का प्रमुख क्रान्तिकारी बन गया तो क्या आश्चर्य है ?

भगतसिंह की शिक्षा भी इसी आदर्श के अनुकूल हुई थी । आरम्भ में ही उनको डी. ए. वी. स्कूल में दाखिल कराया गया, जिसमें राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न कराई जाती थी । वह नौवीं क्लास में ही पहुँचे थे कि देश में असहयोग आन्दोलन का शंख बज गया । हजारों लाखों विद्यार्थी सरकारी और सरकार से सहयोग प्राप्त (एडेड) स्कूलों को छोड़कर आन्दोलन में भाग लेने लगे । ऐसे समय में भगतसिंह कैसे पीछे रहते । वे स्कूल से निकलकर मैदान में आ गये और जुलूस निकालकर विदेशी वस्त्रों की होली जलाने लगे । जलियाँवाला बाग के हत्याकाण्ड का समाचार सुनकर वे दूसरे ही दिन वहाँ पहुँच गये और अंग्रेज सिपाहियों का भय न करके शहीदों के खून से सनी मिट्टी शीशी में भरकर ले आये ।

कुछ समय पश्चात् उनका नाम लाहौर के नेशनल कॉलेज में लिखाया गया । इसकी स्थापना लाला लाजपतराय और उनके साथी कुछ प्रमुख नेताओं ने की थी और वहाँ पर आचार्य जुगलकिशोर, भाई परमानन्द, श्री जयचन्द्र विद्यालंकार जैसे क्रान्तिकारी और देशभक्त शिक्षक कार्य कर रहे थे । इस प्रकार यह नेशनल कॉलेज क्रान्तिकारी युवकों को ढालने की एक मशीन ही थी । इन देशभक्तों के सम्पर्क में आकर कॉलेज की लाइब्रेरी से क्रान्ति और विद्रोह का साहित्य पढ़कर भगतसिंह एक भारतीय क्रान्तिवादी के आदर्शानुसार बहुत कुछ दृढ़ हो गया ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विवाह न करने के लिये गृह त्याग

अब जीवन में एक नया मोड़ आया । सन् १६२३ में भगतसिंह ने एफ. ए. पास कर लिया और बी. ए. के पढ़ाई की तैयारी करने लगे । उसी समय घर में उनके विवाह की चर्चा उठी पर जिसके मन में मातृभूमि के उद्धार के लिये प्राणों की बाजी लगाने की लौ लगी हो वह सोलह वर्ष की आयु में विवाह के खिलवाड़ को कैसे पसन्द कर सकता था । क्रान्तिकारी दल के संचालक शचीन्द्र नाथ सान्याल उन दिनों वहीं थे, उन्होंने भगतसिंह से कहा कि "यदि तुम शादी कर लोगे तो भविष्य में क्रान्तिकारी आन्दोलन में अधिक भाग नहीं ले सकोगे ।..... क्या तुम परिवार छोड़ने को तैयार हो ? मेरी इच्छा है कि घर छोड़कर मैं जहाँ कहूँ वहाँ रहने लग जाओ ।"

—(बन्दी जीवन, पृष्ठ २७७)

इस पर भगतसिंह चुपचाप घर छोड़कर चल दिये, लाहौर से वे सीधे कानपुर पहुँचे और प्रसिद्ध क्रान्तिकारी जोगेशचन्द्र चटर्जी के साथ काम करने लगे । कानपुर के मुख्य स्थानीय संचालक श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य तथा उनके साथ एक सिख युवक का रहना खुफिया पुलिस वालों की दृष्टि में सन्देहजनक हो सकता था, इसलिये श्री भट्टाचार्य ने, जो स्वयं पत्रकार का कार्य करते थे, क्रान्तिकारियों के सहायक श्री गणेश शंकर जी विद्यार्थी से कहकर "प्रताप" कार्यालय में काम करने की व्यवस्था करा दी । पर वहाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उनका नाम भगतसिंह की जगह "बलवन्तसिंह" प्रसिद्ध हुआ। इस तरह भगतसिंह कई महीने तक कानपुर में रहकर काम करते रहे, पर किसी को पता न लगा।

नौजवान भारत-सभा

घर पर भी भगतसिंह चुपचाप बैठने वाले न थे। इसलिये "नौजवान भारत-सभा" की स्थापना कर डाली। इसका मुख्य उद्देश्य तो भारतीय युवकों में देशभक्ति की भावना उत्पन्न करना था, पर भीतरी मंशा यह भी थी कि इसके सदस्यों में से जो योग्य और कर्मठ प्रतीत हों उनको प्रेरणा देकर क्रान्तिकारी दल का सदस्य बनाया जा सके। इसी बीच में अकाली आन्दोलन भी छिड़ गया और उनके सत्याग्रही जत्थे जैतों (नाभा) जाने लगे। सरकार ने गाँवों के प्रमुख लोगों को आदेश दिया कि रास्ते के गाँवों में जत्थों को खाने-पीने की सामग्री बिल्कुल न दी जाये। सरकारी पिट्ठू ऐसी ही कोशिश कर रहे थे पर जब एक जत्था भगतसिंह के गाँव 'बंगा' के पास होकर गुजरा तो उसने अपने प्रचार और संगठन के बल पर सत्याग्रहियों के पास इतनी भोजन-सामग्री भिजवाई कि वह तीन दिन तक वहाँ टिके रहे। इससे विरोधी जल-भुन गये और उन्होंने झूठे-सच्चे दोषारोपण करके गिरफ्तारी का वारण्ट निकलवा दिया। ऐसे घर के विभीषणों से उलझना व्यर्थ समझकर वे दिल्ली जाकर "दैनिक अर्जुन" में काम करने लगे। फिर सूचना मिलने पर कानपुर पहुँचे, जहाँ दल का खर्च चलाने के लिये उन्होंने एकाध राजनीतिक डकैती में भी भाग लिया पर यह कार्य उनको पसन्द न आया और फिर वे यथासम्भव इससे पृथक् ही रहे।

इसी बीच अगस्त १९२५ में "काकोरी" की घटना हो गई और दल के अधिकांश प्रमुख कार्यकर्त्ता पकड़े गये लेकिन इससे निराश न होकर भगतसिंह और चन्द्रशेखर आदि दल के बचे हुए सदस्य दल का पुनर्गठन करने में लग गये। इस समय पार्टी का मुख्य कार्यालय आगरा में रखा गया। वहीं पर आस-पास के क्रान्तिकारी समय-समय पर आया करते थे और उनको बम-पिस्तौल आदि का चलाना सिखाया जाता था। बीच-बीच में चन्द्रशेखर और भगतसिंह इधर-उधर जाकर दल का प्रचार किया करते थे। इसी सिलसिले में २५ जुलाई, १९२७ को भगतसिंह अमृतसर पहुँचे। एक पुलिस वाले ने सन्देह करके पीछा किया तो वे भागकर एक वकील के घर में जा छिपे और अपनी पिस्तौल उसके यहाँ रख दी लेकिन लाहौर पहुँचते ही उनको गिरफ्तार कर लिया गया। अभियोग यह लगाया गया कि लाहौर में दशहरे के जुलूस पर जो बम फेंका गया था, उसमें ये भी शामिल थे। यह एक झूठा बहाना था, वास्तव में पुलिस उनसे क्रान्तिकारी दल का भेद मालूम करना चाहती थी। उनको लाहौर के किले में १५ दिन बन्द रखकर हर तरह से डराया, धमकाया और शारीरिक यंत्रणायें भी दीं, पर वे कोई कच्चे खिलाड़ी नहीं थे। पुलिस के नामी अफसरों ने हर तरह से कोशिश की पर कोई नतीजा न निकला। उधर उनके पिता सरकार की इस अन्धेरगिर्दी के खिलाफ कानूनी कार्यवाही कर रहे थे अन्त में उनको मजिस्ट्रेट के सामने पेश करना ही पड़ा। अभियोग साफ झूठ होने से हाईकोर्ट ने उनको बरी कर दिया पर पुलिस ने उनके खिलाफ ऐसे-ऐसे संगीन अभियोग लगाये थे कि छोड़ने की आज्ञा देते हुए चालीस हजार की जमानत माँगली गई जो उस समय एक बहुत बड़ी रकम थी।

डेरी की आड़ में क्रान्ति की साधना

भगतसिंह की देशभक्ति से प्रभावित होकर दो प्रमुख नागरिकों ने जमानतें दे दीं तो वे भी उत्तरदायित्व के बन्धन में बँध गये। अब वे कोई क्रान्ति सम्बन्धी कार्य अपनी इच्छानुसार नहीं कर सकते थे। उनका समय ठीक तरह से निकलता रहे इसके लिये सरदार किशनसिंह ने एक डेरी खुलवा दी। भगतसिंह डेरी का बहुत-सा काम अपने हाथों से करते और सब ग्राहकों को सन्तुष्ट रखते लेकिन इसका अर्थ यह नहीं कि उन्होंने अपना मूल उद्देश्य क्रान्ति का प्रचार छोड़ दिया था। दिन में तो वहाँ दूध के व्यापार का काम धूमधाम से किया जाता और रात को अनेक क्रान्तिकारी इकट्ठे होकर आगामी कार्यक्रम की योजनायें बनाते। भगतसिंह साथियों को दूध भी पिलाते और हर तरह की चर्चा भी होती रहती।

इधर समाचार पत्रों और सार्वजनिक क्षेत्र में यह आवाज उठाई जा रही थी कि अगर भगतसिंह का कोई कसूर हो तो उस पर मुकदमा चलाओ अन्यथा जमानत का हुक्म रद्द करो। पंजाब की व्यवस्थापिका सभा में भी श्री बोधराज और डॉ. गोपीचन्द ने यह प्रश्न पूछा कि सरकार इस मामले में कोई उचित निर्णय क्यों नहीं करती? वह लोगों में यह गलतफहमी क्यों फैलने देती है कि उसकी पुलिस जानबूझ कर किसी निर्दोष व्यक्ति को तंग कर रही है। इसके फलस्वरूप भगतसिंह को सर्वथा मुक्त कर दिया गया और तब वह डेरी का धन्धा छोड़कर फिर क्रान्तिदल के संगठन में दत्तचित्त हो गये। संसार के सब लोग खाने-कमाने को ही जीवन का लक्ष्य समझते हैं, बड़े धार्मिक और आध्यात्मिक कहलाने वाले परमार्थ की बातें करने पर भी स्वार्थ को त्याग सकने में असमर्थ रहते हैं पर एक भगतसिंह था जिसने एक अच्छे लाभदायक धन्धे को तिनके की तरह त्याग दिया। उसकी मनोवृत्ति देखकर जानकार

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोगों को यही लगता था कि इसका जन्म क्रान्ति की साधना के लिये ही हुआ है । जैसे कोई योगी संसार की तरफ से आँखें बन्द करके पारलौकिक लक्ष्य पर ही निगाह रखता है, वैसे ही भगतसिंह के लिये क्रान्ति ही जीवन का एकमात्र लक्ष्य प्रतीत होती थी ।

डेरी का कार्य करते हुए भी भगतसिंह को जब अवसर मिलता था क्रान्ति आन्दोलन के प्रचार और प्रसार के लिये कुछ लिखते रहते थे । अनेक व्यक्तियों की तरह वे केवल बम फेंकने अथवा पिस्तौल चलाने वाले क्रान्तिकारी ही नहीं थे, वरन् उन्होंने विद्यार्थी अवस्था से इस प्रकार के साहित्य का गहरा अध्ययन किया था और अनेक विदेशी लेखकों की रचनाओं को पढ़कर क्रमशः अपने ज्ञान को इतना बढ़ा लिया था कि दल में वे अपने साथियों में क्रान्तिकारी सिद्धान्त के मुख्य ज्ञाता माने जाते थे । उन्होंने बहुत परिश्रम करके भारतीय क्रान्तिकारियों के चरित्र और चित्र संग्रह किये थे । इन्हीं के आधार पर इलाहाबाद के "चाँद" फाँसी अंक (नवम्बर १९२८) में "विप्लव यज्ञ की आहुतियाँ" शीर्षक स्तम्भ तैयार किया गया था ।

क्रान्तिकारी दल का पुनर्गठन

अब भगतसिंह की दृष्टि में वह समय आ गया था कि अपने दल का पुनर्गठन और नवीनीकरण किया जाये और पुराने ढंग की आतंकवादी कार्यवाहियों के बजाय किसी उद्देश्य को सामने रखकर ऐसे काम किये जाये जिनसे एक तरफ अंग्रेजी सरकार भयभीत हो और दूसरी तरफ जनता में जागृति उत्पन्न हो । इसके लिये भगतसिंह ने समस्त प्रान्तों के कार्यकर्त्ताओं को दिल्ली में बुलाया और सितम्बर १९२८ की ८ और ९ तारीख को फीरोजशाह के पुराने किले में उत्तर भारत के क्रान्तिकारियों की एक गुप्त बैठक की गई । इसमें पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार और राजस्थान के प्रतिनिधियों ने भाग लिया । चन्द्रशेखर आजाद परिस्थितिवश इसमें सम्मिलित न हो सके, पर उन्होंने कहला भेजा कि जो कुछ निर्णय किया जायेगा, वह मुझे मान्य होगा । इस कारण मुख्य रूप से भगतसिंह ही इसके संचालक रहे ।

इस गुप्त-सभा में दो-तीन बहुत महत्त्वपूर्ण निर्णय किये गये । सबसे बड़ी बात यह थी कि क्रान्तिकारी दल जो अब तक "हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोशियेसन" (हिन्दुस्तान प्रजातन्त्र संघ) कहलाता था, उसका नाम आगे के लिये "हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोशियेशन" (हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातन्त्र संघ) कर दिया गया । पहला नाम शचीन्द्रनाथ सान्याल का रखा हुआ था और इसलिये कितने ही सदस्यों ने प्राचीन नेता पर विशेष श्रद्धा रखने के कारण इस परिवर्तन का विरोध किया, पर भगतसिंह दल का आधार किसी ऐसे ठोस सिद्धान्त पर रखना चाहते थे जिससे उसकी नीति तथा सिद्धान्तों की युक्तियुक्तता सिद्ध हो और कार्यकर्त्ता तथा जनता यह समझ सकें कि वास्तव में दल किस आदर्श के लिये काम कर रहा है । यद्यपि साम्यवाद (कम्युनिज्म) के सिद्धान्त को शचीन्द्रनाथ सान्याल ने सन् १९२३ में ही ग्रहण कर लिया था और अपने दल के विधान में उसकी अधिक से अधिक बातों को शामिल भी किया था, तो भी वे भारत की प्राचीन धर्म और संस्कृति से विशेष प्रभावित थे । इसलिये इस दिशा में धीरे-धीरे ही कदम उठाना चाहते थे । भगतसिंह समय के अनुसार उनसे एक कदम आगे बढ़ा और उसने रूस के आदर्श से प्रेरणा लेकर "समाजवाद" पर चलने की स्पष्ट रूप से घोषणा कर दी ।

यद्यपि भगतसिंह ने लाहौर के नेशनल कॉलेज में पढ़ते हुए सन् १९२१-२२ में ही क्रान्ति और समाजवाद की बहुत-सी पुस्तकों को पढ़कर उस मत को स्वीकार कर लिया था, पर उस पन्द्रह-सोलह वर्ष की अवस्था में उसके गूढ़-तत्व को अच्छी तरह नहीं समझा जा सकता था । उन्हीं दिनों उत्तर-प्रदेश में क्रान्तिकारी दल के सर्वोच्च नेता शचीन्द्रनाथ सान्याल भी कम्युनिज्म की खोज कर रहे थे, क्योंकि रूसी क्रान्ति की सफलता से समस्त भारत के उग्रपंथी विचारधारा के व्यक्तियों का ध्यान उसकी तरफ था । उन्होंने इस सम्बन्ध में कुछ पुस्तकें पढ़ीं और समाचार पत्रों में प्रकाशित लेखों से भी ताजा जानकारी प्राप्त करते रहे, पर उससे उन्हें सन्तोष नहीं हुआ । उस समय अधिकांश लोग रूस के कम्युनिस्ट शासन को एक चौंकाने वाली घटना की तरह देख रहे थे, पर उसके स्वरूपों तथा सिद्धान्तों की स्पष्ट जानकारी उनको बिल्कुल न थी ।

शचीन्द्र बाबू को इस सम्बन्ध में पहली जानकारी सन् १९२२ में दिल्ली कांग्रेस के अधिवेशन के अवसर पर हुई । वहाँ उनकी भेंट कलकत्ते के श्री कुतुबुद्दीन अहमद से हुई जो रूस के साम्यवादी दल के सम्पर्क में आ चुके थे लेकिन धार्मिक और नैतिक विषयों पर इन दोनों में पूरा मतभेद बना रहा । इसके पश्चात् उन्होंने कानपुर में आकर इस विषय की खोज की ।

क्रान्तिकारियों की दो श्रेणियाँ

भगतसिंह ने दूसरा काम यह किया कि दल को मजबूती के साथ संगठित करने और उससे सम्बन्धित सभी व्यक्तियों को उनकी स्थिति और कर्त्तव्यों का ज्ञान कराने के लिये कार्यकर्त्ताओं का स्पष्ट रूप से श्रेणी विभाजन कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिया । इस सम्बन्ध में श्री जितेन्द्रनाथ सान्याल ने अपनी पुस्तक "अमर शहीद सरदार भगतसिंह" में लिखा है—

"उक्त बैठक (दिल्ली की सभा) में यह भी निश्चय किया गया कि संगठन को मोटे तौर पर दो भागों में विभक्त कर दिया जाये । एक भाग सक्रिय कार्यकर्त्ताओं का हो और दूसरा समर्थकों का । सक्रिय कार्यकर्त्ताओं का कार्य शस्त्रास्त्र संग्रह करना तथा छोटे-छोटे गुटों में कार्य करते हुए सामूहिक कार्यक्रमों कि लिये जनता को तैयार करना था । संगठन के इस अंग का नाम "हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन आर्मी" (हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातान्त्रिक सेना) रखा गया । चन्द्रशेखर आजाद इस सेना के सेनापति बनाये गये । समर्थकों का काम था सार्वजनिक दान तथा सार्वजनिक चन्दे आदि के रूप में आवश्यक धन संग्रह करना, सक्रिय कार्यकर्त्ताओं को आश्रय देना तथा प्रचार करना ।

यह एक बहुत बुद्धिमत्तापूर्ण कदम था । कोई भी गुप्त क्रान्तिकारी दल केवल एक प्रकार के सक्रिय कार्यकर्त्ताओं के द्वारा राष्ट्रोद्धार के कार्य में प्रगति नहीं कर सकता । उनका अन्तिम उद्देश्य तो जन-जागृति और जनवादी शासन व्यवस्था की स्थापना ही होता है । इसलिये उनके कुछ ऐसे सहायक होना आवश्यक होता है जो जन-सम्पर्क बनाने में उपयोगी सिद्ध हों । इसी दृष्टिकोण से शचीन्द्र बाबू ने भी "हिन्दुस्तान रिपब्लिकन दल" का जो 'कार्यक्रम' या विधान तैयार किया था उसमें 'प्रकाश्य कार्यक्रम' और 'गुप्त कार्यक्रम' ऐसे दो विभाग रखे गये थे । प्रकाश्य कार्यक्रम के अन्तर्गत पुस्तकालय, व्यायामशाला, सेवा समिति के रूप में विभिन्न संस्थाओं की स्थापना, किसान-मजदूरों का संगठन, साप्ताहिक पत्र प्रकाशित करना, कांग्रेस आदि सार्वजनिक संस्थाओं में प्रविष्ट होकर उनके क्रान्तिकारी दल को लाभ पहुँचाना आदि कितनी ही महत्त्वपूर्ण बातें सम्मिलित की गई थीं ।

यह स्पष्ट है कि प्रकाश्य कार्यक्रम को करने वाले लोगों को खुलकर काम करना पड़ेगा और सर्वसाधारण से सुपरिचित होने से वे दल के 'गुप्त कार्यक्रम' और "एक्शन" में भाग नहीं ले सकते पर शचीन्द्र बाबू आरम्भिक परिस्थितियों में इस बात को अधिक स्पष्ट नहीं कर पाये थे । भगतसिंह ने इस बात को समझा और दल की ओर से इसकी घोषणा करा दी । इसी विचारधारा के आधार पर कानपुर के जन-नायक श्री नारायण प्रसाद अरोड़ा ने, जो आजन्म क्रान्तिकारी दल के एक बड़े सहायक और समर्थक रहे, "कानपुर के विद्रोही" पुस्तक में मौलाना हसरत मोहानी, प्यारेलाल अग्रवाल, प्रो. मुन्शीराम शर्मा, मन्नीलाल पाण्डे, गंगासहाय चौबे, हमीद खाँ आदि कानपुर के प्रसिद्ध कांग्रेसी नेताओं और नागरिकों को क्रान्तिकारी दल का सहायक सदस्य लिखा है ।

दिल्ली की इस सभा में ही क्रान्ति-दल की व्यवस्था और कार्यक्रम की पूर्ति के लिये निम्न सात सदस्यों की एक "केन्द्रीय समिति" बनाई गई—भगतसिंह, चन्द्रशेखर 'आजाद', सुखदेव, शिव वर्मा, विजय कुमार, फणीन्द्रनाथ घोष और कुन्दनलाल । फणीन्द्रनाथ बिहार और कुन्दनलाल राजस्थान के प्रतिनिधि के रूप में थे । यद्यपि कुन्दनलाल फैजाबाद (उ. प्र.) निवासी थे, पर उन दिनों "काकोरी-केस" में फरार होकर अजमेर के "राजस्थान सेवा संघ" में ठहरे हुए थे ।

साण्डर्स वध और उसके बाद

इस प्रकार अपने दल को व्यवस्थित करके भगतसिंह और विजयकुमार उसको विस्तृत करने और सुदृढ़ बनाने के लिये दौरे पर निकले । उन्होंने अनेक नये सहायक बनाये और केन्द्र स्थापित किये । लाहौर, आगरा, सहारनपुर में बम बनाने की योजना तैयार की गई । इसके लिये श्री कमलनाथ तिवारी कलकत्ता गये और यतीन्द्रनाथ दास से सम्पर्क स्थापित करके बम के मसाले खरीदे गये । वहीं गन काटन तैयार कराई गई, जो बम का एक आवश्यक पदार्थ है और जिसको बहुत ठण्डे कमरे में ही बनाया जा सकता है ।

लेकिन इस समय देश में जन-आन्दोलन की हलचल मची हुई थी और इतनी फुर्सत नहीं थी कि धीरे-धीरे दल को सुदृढ़ बनाया जाये । सितम्बर की सभा को दो महीने भी नहीं बीते थे कि साइमन कमीशन लाहौर पहुँचा और वहाँ लाला लाजपतराय पर प्रहार किये जाने की वह घटना घटी, जिसका वर्णन आरम्भ में किया जा चुका है । जब भगतसिंह और उसके साथियों ने इसका बदला साण्डर्स को गोली मारकर लिया तो समस्त देश में एक उत्साह और आत्म-गौरव की लहर फैल गई । छोटे-बड़े सब लोगों के भाव बदल गये और क्रान्तिकारी दल को जहाँ थोड़े से बिगड़े दिमाग और उच्छ्रंखल लड़कों की जमात कहा जाता था, वहाँ उसे देशभक्त और राष्ट्रीय-सम्मान का रक्षक समझा जाने लगा और तो क्या पं. जवाहरलाल नेहरू ने भी, जो प्रायः क्रान्तिकारी कार्यकर्त्ताओं की विपरीत आलोचना ही किया करते थे, इस सम्बन्ध में कहा—

"जब लालाजी मरे तो उनकी मृत्यु अनिवार्य रूप से, उन पर जो हमला हुआ था उसके साथ संयुक्त हो गई और इस दुःख से कहीं बढ़कर देश के लोगों में क्रोध भड़क उठा । इस बात को समझने की आवश्यकता है, क्योंकि इसे समझ लेने पर ही हम बाद की घटनाओं को, विशेष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कर भगतसिंह और उत्तर भारत में उनकी आकस्मिक और अद्‌भुत ख्याति को समझ सकते हैं। किसी कार्य की नींव का कारण समझे बिना उसके करने वालों की प्रशंसा या निन्दा करना कुछ महत्त्व नहीं रखता। भगतसिंह को पहले बहुत लोग नहीं जानते थे, पर वे इसलिये प्रसिद्ध हुए कि लोगों को ऐसा जान पड़ा कि उन्होंने कम से कम उस समय तो लाला लाजपतराय की और इस प्रकार सारे देश के सम्मान की रक्षा की। इस प्रकार वह एक प्रतीक हो गये। लोग उस कार्य को तो भूल गये, पर यह प्रतीक कुछ महीनों के अन्दर फैल गया और पंजाब का हर गाँव और शहर तथा उत्तर भारत उसके नामों से गूँजने लगा।"

साण्डर्स को दिन दहाड़े ठीक पुलिस के दफ्तर के सामने मारकर भगतसिंह अपने साथियों सहित साफ बचकर निकल गया और जब तक उसने स्वयं ही अपने को न पकड़वाया, तब तक पुलिस उसे हाथ न लगा सकी, यह एक अपूर्व सफलता मानी गई। साण्डर्स-वध के पश्चात् लाहौर का तमाम शहर खोज करने वाले जासूसों और अन्य छोटे-बड़े पुलिस वालों से भर गया था, गली-गली तथा कौने-कौने में मारने वालों की खोज की जा रही थी। हत्या के दूसरे ही दिन क्रान्तिकारी दल ने शहर भर में एक छोटा-सा लाल स्याही में छपा पोस्टर लगवा दिया था, जिसमें लाला लाजपतराय की हत्या के बदले साण्डर्स का खून करने की बात खुले शब्दों में स्वीकार की गई थी। पोस्टर में यह भी कहा गया था कि "अंग्रेजी सरकार सावधान रहे। वह चाहे जितना दमन कर ले, पर हम साण्डर्स जैसे कमीने लोगों को, जिसने देश के एक पूज्य नेता पर इस तरह हाथ उठाया, इसी प्रकार सजा देते रहेंगे।" पोस्टर पर "बलराज सेनापति हि. स. प्र. स." के हस्ताक्षर थे। यह बलराज, चन्द्रशेखर आजाद के ही दल का नाम था।

इस प्रकार की चुनौती दिये जाने से अंग्रेज सरकार की शान उस दिन धूल में मिल गई और भारतीय जनता गर्व से फूल उठी थी। क्रान्तिकारी दल का नाम चारों तरफ फैल गया और जो नवयुवक दल तक रूखी रोटी के लिये भी परेशान थे आज सैकड़ों लोग उन्हें सहायता देने को तैयार हो गये। इस प्रकार जहाँ एक तरफ देशभक्त भारतीय प्राणों की बाजी लगाने वाले इन क्रान्तिकारियों के लिये पुष्प-वर्षा करने को तैयार थे, अंग्रेज अफसर दाँत पीस रहे थे कि अगर उनको पा जाये तो जिन्दा ही चबा जाये। लाहौर से बाहर निकल सकने का हर एक रास्ता पुलिस ने घेर रखा था पर तारीफ है क्रान्तिकारियों की सूझ-बूझ और साहस की कि भगतसिंह तथा चन्द्रशेखर आजाद दोनों एक ही रेलगाड़ी से लाहौर स्टेशन से रवाना हो गये और पुलिस के हजारों जासूस खड़े देखते ही रह गये।

पुलिस की आँखों में धूल झोंकने के लिये भगतसिंह ने उस दिन "साहब बहादुर" का वेश बनाया था। बहुत बढ़िया कोट, पैण्ट, हैट, साथ में ऊँची एड़ियों का जूता पहिने सुन्दर पत्नी और गोदी में ढाई साल का बढ़िया सूट पहिने बेटा लेकर वह सुबह के पाँच बजे कलकत्ता मेल के फर्स्ट क्लास के रिजर्व डिब्बे में जाकर बैठा। पीछे-पीछे नौकर का वेश बनाये दरी का बिस्तर बगल में दबाये राजगुरु चल रहा था। पत्नी का अभिनय करने वाली प्रसिद्ध क्रान्तिकारी भगवती चरण की बहू दुर्गा भाभी थी और वह बच्चा भी उसी का बेटा शची था। भगतसिंह और राजगुरु दोनों की जेबों में पिस्तौल थे और वे कोई भी खतरा सामने आते ही उसके लिये घोड़े पर उँगली रखे हुए थे। पर दुर्गा भाभी अपने पुत्र के प्राण इस संग्राम में झोंकने को उद्यत हो गई, इस कारण उसका नाम भी भारतीय-क्रान्ति-इतिहास में अमर हो गया। कलकत्ता स्टेशन पर उसके पति भगवती चरण ने, जो स्वयं सरकारी वारण्ट के कारण फरार अवस्था में थे, उनका स्वागत किया। अपनी पत्नी की इस वीरता और बुद्धिमत्ता को देखकर वह मुग्ध होकर बोल उठा—"वाह, मैंने आज तुम्हें पहचाना।" इससे पहले वह उसे गाँव की लड़की समझकर क्रान्तिकारी कार्यों के अयोग्य ही बतलाया करता था।

कलकत्ते में भी भगतसिंह निष्क्रिय नहीं रहे। दिन में तो वे प्रायः घर के भीतर ही रहते थे, पर शाम को बंगाली वेशभूषा धारण करके बाहर निकलते। उस समय वहाँ कांग्रेस का अधिवेशन हो रहा था, जिसके अध्यक्ष थे पं. मोतीलाल नेहरू। देश भर के नेता राजनीतिज्ञ और सरकारी गुप्तचर भी बड़ी संख्या में शहर में भरे पड़े थे पर भगतसिंह किसी बात की चिन्ता न करके अपना काम करते रहे। उन्होंने पूर्व परिचित यतीन्द्रनाथ के साथ सलाह करके, उत्तर प्रदेश और पंजाब के कुछ व्यक्तियों को बम बनाने का शिक्षण दिये जाने की योजना बनाई। उस समय तक यह कला बंगाल के कुछ व्यक्तियों को ही ज्ञात थी। भगतसिंह चाहते थे कि स्थानीय कार्यकर्त्ता बम बनाना सीख लें तो आगे चलकर वे आत्म-निर्भर हो सकेंगे।

असेम्बली बम काण्ड

इस समय क्रान्तिकारियों का उत्साह बहुत बढ़ा हुआ था। उनको अनेक स्थानों से सहायता भी मिल रही थी, जिससे दल के शस्त्रागार में बम और पिस्तौलें पर्याप्त मात्रा में संग्रह कर लिये गये दल की केन्द्रीय समिति में यह चर्चा होती रहती थी कि अब कौन सा ऐसा काम किया जाये जिससे क्रान्ति दल का नाम प्रसिद्ध हो, नवयुवकों को देश पर बलिदान होने की प्रेरणा मिले और जनता की सहानुभूति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राप्त हो । कुछ मित्र यह सम्मति भी दे रहे थे कि भगतसिंह देश से बाहर चले जायें और वहीं रहकर भारतीय क्रान्ति दल को शस्त्र तथा धन की सहायता दिलाने का प्रयत्न करें, पर भगतसिंह इस प्रकार अपने साथियों को छोड़कर स्वयं सुरक्षित रहने के लिये किसी प्रकार राजी नहीं हुए । इस सम्बन्ध में मन्मथनाथ ने अपनी "भगतसिंह और उनका युग" पुस्तक में बतलाया है—

"जो कुछ भी बात हो भगतसिंह ने देश के बाहर जाने से इन्कार कर दिया और जब उनके सामने यह विचार आया कि यहाँ रहने का अर्थ फाँसी पर चढ़ना है, तो उन्होंने इस ढंग से सोचना शुरू किया कि जब मरना ही है, तो क्यों न और भी खतरनाक काम किये जायें । कहते हैं कि जब वह नेशनल कॉलेज में पढ़ते थे तभी उनके मन में क्रान्ति का विचार पैदा हो गया था । सम्भवतः यह विचार उन्हें फ्रांस की असेम्बली में बम फेंकने वाले फ्रांसीसी अराजकतावादी "वेलां" के किस्से से मिला था ।

"मौका भी बहुत अच्छा था क्योंकि उन दिनों दिल्ली में दो अत्यधिक दमनकारी कानून पेश थे और सरकार उन्हें पास करने पर कटिबद्ध थी । सरकार का उद्देश्य था कि जनता में क्रान्ति का जो बीज पनप रहा है, उसे अंकुरित होने के पहले ही समाप्त कर दिया जाये और जैसे भी हो भारत पर अपना शासन कायम रखा जाये । चन्द्रशेखर आजाद भी भगतसिंह की इस विचारधारा से पूर्णरूप से सहमत थे, क्योंकि भगतसिंह पर जितने इल्जाम थे वे सभी उन पर भी लागू थे । यही नहीं, जो दूसरे साथी थे वे भी लालायित थे कि कुछ न कुछ होता रहे । सिर पर कफन बाँधे लोगों की टोली थी । एक से एक अल्हड़ नौजवान थे जिनमें से प्रत्येक चाहता था कि मैं ही फाँसी पर पहले चढ़ूँ ।"

जब केन्द्रीय समिति द्वारा असेम्बली में बम फेंकने पर पूरी तरह से विचार कर लिया गया तब यह सवाल उठा कि इस कार्य के लिये किसको भेजा जाये ? वैसे तो सभी सदस्य इसके लिये तैयार थे, पर विचारणीय समस्या यह थी कि वह ऐसा व्यक्ति हो जो अदालत में क्रान्तिकारी दल के सिद्धान्तों और आदर्शों पर अच्छी तरह प्रकाश डाल सके । अभी तक क्रान्तिकारियों के कार्यक्रम में एक बड़ी त्रुटि यही थी कि छिपकर काम करने के कारण जनता उनको कुछ जोशीले अथवा हिंसाप्रिय युवकों का छोटा-सा समूह समझती थी । उनके आतंकवादी कार्यों के पीछे कोई गम्भीर विचारधारा और उच्च आदर्श भी है, इसका बहुत कम लोगों को पता था । इसलिये भगतसिंह ने इस कार्य के लिये स्वयं ही जाने और गिरफ्तार होकर अदालत में उपर्युक्त उद्देश्य के अनुकूल बयान देने का निश्चय किया । इस सम्बन्ध में भगतसिंह के मनोभाव का परिचय देते हुए उनके एक सहकारी डॉ. भगवानदास माहौर ने लिखा है—

"संकट के काम में तो वे (भगतसिंह) आगे रहने की जिद ही कर जाया करते थे । किसी सिपाही को संकट का काम करने भेज दिया जाये और नेता सुरक्षित बैठा हुक्म देता रहे, यह उन्हें कभी पसन्द नहीं था । यही कारण था कि असेम्बली में बम फेंकने कि लिये स्वयं ही जाने की और फिर वहाँ खड़े रहने की उन्होंने जिद की, जब कि दल का और कोई सदस्य भगतसिंह के इस प्रकार जाने को ठीक नहीं समझता था । आजाद भी हर काम में आगे रहते थे । दूसरा कारण यह विचार भी था कि नेता के रूप में उन्हें अपने आपको सबसे अधिक खतरे में डालना चाहिये, नहीं तो गुप्त-दल में 'दादागीरी' अपने बुरे अर्थ में आने से न रुकेगी और सिपाहियों का नेताओं में विश्वास न रहेगा ।"

इस वर्णन से हम समझ सकते हैं कि क्रान्तिकारी दल में सैकड़ों अन्य शहीदों के होते हुए भी भगतसिंह और आजाद की युगल-जोड़ी को ही सबसे ज्यादा प्रसिद्धि क्यों मिली ? भाई परमानन्द और जयदेव विद्यालंकार भी पंजाब में क्रान्तिकारी दल को संगठित करने वाले बहुत बड़े नेता माने जाते थे, पर सामने न आने की त्रुटि के कारण ही वे पीछे ही रह गये । इतना ही नहीं भाई परमानन्द का फैसला करने वाले जज ने यहाँ तक लिख दिया कि "भाई परमानन्द कायर क्रान्तिकारी हैं, जो दूसरों को तो प्रेरणा देकर आगे भेजते रहे पर स्वयं अपनी जान बचाते रहे ।" भगतसिंह इस तथ्य को समझकर सदा आगे बढ़कर खतरे में कूदे और इसलिये जनता की दृष्टि में वे क्रान्तिदल के प्रतीक ही बन गये । यही बात चन्द्रशेखर आजाद के विषय में सोलह आने सच है । उन्होंने अंग्रेजों की टुकड़खोर पुलिस के हाथों कभी न पकड़े जाने की प्रतिज्ञा की थी, उसको उन्होंने जिस शान से निबाहा और पचासों सिपाहियों तथा अफसरों से युद्ध करते हुए वीरगति पाई, उससे वे भी एक "अमर-गाथा" के नायक बन गये थे ।

राजगुरु के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वह भगतसिंह से भी आगे बढ़कर खतरे में कूदने को तैयार रहता था । इस दृष्टि से भगतसिंह का "प्रतिद्वन्द्वी" बनने की कोशिश किया करता था । पर विद्या एवं बुद्धि की दृष्टि से बहुत कम होने के कारण उसने अधिक नामवरी हासिल नहीं की । फिर भी वह धुन का ऐसा पक्का था कि साण्डर्स काण्ड में उसी ने सबसे आगे दौड़कर एक ही गोली से उसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ढेर कर दिया और फाँसी के तख्ते पर चढ़ने में भी भगतसिंह से एक कदम आगे ही चलता रहा ।

लाहौर षड्यन्त्र केस और भूख हड़ताल

असेम्बली में सरकार के "बहरे कानों" में भारतीय जनता की माँग की आवाज को पहुँचाने के लिये भगतसिंह और उसके साथी बटुकेश्वर दत्त ने जिस प्रकार बम का धड़ाका किया और फिर कैसी निडरता के साथ अपने को गिरफ्तार कराया, इसका हाल क्रान्तिकारी इतिहास के सभी पाठक जानते हैं । इन घटनाओं में भगतसिंह का उद्देश्य केवल एक सनसनी पैदा कर देना नहीं था, वरन् वह अंग्रेजों की अदालत में बयान देने के बहाने क्रान्तिकारी दल के सिद्धान्तों का प्रचार करना और भारतीय जनता की भावनाओं को ऊँचा उठाना चाहता था । वैसे तो सरकार अपने विरुद्ध कही गई किसी भी बात को तुरन्त राजद्रोह बतलाकर लेखकों और सम्पादकों पर मुकदमा चला देती थी, पर उन्हीं बातों को अदालत में कहने और फिर रिपोर्ट के रूप में समाचार पत्रों में छप जाने पर सरकार का कुछ बस नहीं चलता था । भगतसिंह और उनके साथी अच्छी तरह जानते थे कि इस तरह पकड़े जाने पर उनको फाँसी के फन्दे पर लटकना पड़ेगा, पर अपने विचारों के देशव्यापी प्रचार हो सकने का यह उपाय उनको इतना पसन्द आया कि उन्होंने खुले तौर पर बम फेंककर गिरफ्तार होने में कुछ भी संकोच नहीं किया ।

भूख हड़ताल द्वारा प्रचार

जेल में बन्द कर दिये जाने पर भी भगतसिंह इसी उद्देश्य को पूरा करने में लगा रहा । उसने इस बात की पूरी कोशिश की कि मुकदमा किसी प्रकार लम्बा होता जाये और वह अदालत में क्रान्तिकारी दल के सिद्धान्तों की व्याख्या और स्पष्टीकरण करके जनता में जोश तथा सरकार के प्रति अप्रियता की भावना को बढ़ाता रहे । इसके लिये क्रान्तिकारियों ने 'भूख-हड़ताल' के अस्त्र को अपनाया । सरकार तो इन युवकों से जली-भुनी बैठी ही थी, बस उसके मजिस्ट्रेट और जज इनको हर तरह से तंग और अपमानित करने का प्रयत्न करने लगे । इधर इन वीर युवकों ने शत्रु के बन्धनों में रहते हुए भी यह संग्राम छेड़ दिया कि जब तक उनके साथ जेलों में मानवोचित व्यवहार न किया जायेगा और अदालत में उनके सम्मान की पूरी तरह रक्षा न की जायेगी तब तक वे न तो जेल का भोजन करेंगे और न अदालत की कार्यवाही में भाग लेंगे । इससे चिढ़कर सरकार ने और भी अधिक सख्ती करने और जबर्दस्ती भोजन कराने का निश्चय किया । इस संघर्ष ने बड़ा भयंकर रूप धारण किया था और भगतसिंह तथा उनके साथियों ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर सरकार को नीचा दिखाया था । उनका उद्देश्य केवल अपने लिये खान-पान की सुविधा या ऊँची क्लास का व्यवहार प्राप्त करना ही नहीं था । १४ जुलाई, १९२९ को भारत सरकार के पास इस सम्बन्ध में जो पत्र भेजा गया था, उसमें भगतसिंह ने लिखा था—

"हर एक जेल में राजनीतिक कैदियों का एक विशेष वार्ड होना चाहिये, जिसमें उन सभी आवश्यकताओं की पूर्ति की सुविधा होनी चाहिये जो यूरोपियनों के लिये होता है । उनके भोजन का स्तर भी यूरोपियन कैदियों के समान होना चाहिये ।"

यह भूख हड़ताल करते समय भगतसिंह की मानसिक स्थिति कैसी थी, यह इन वाक्यों से विदित होता है—

"बन्दी होने के पश्चात् हमारी संस्था के राजनीतिक कैदियों की दशा अत्यन्त दयनीय थी, हमने प्रयास आरम्भ कर दिया । मैं आपको पूरी गम्भीरता से बताता हूँ कि हमें यह विश्वास था कि हम बहुत कम समय के भीतर मर जायेंगे । हमें उपवास के दिनों में कृत्रिम रीति से भोजन दिये जाने (फोर्सफुल फीडिंग) का न तो कोई अनुभव ही था और न यह विचार ही कभी सूझा था हम तो मृत्यु के लिये तैयार थे ।"

यह "जबर्दस्ती भोजन" कराना कैसा भयंकर होता है, इसे भुक्तभोगी ही जानते हैं । चार-छः हट्टे-कट्टे सिपाही कैदी को दबा लेते हैं और तब डॉक्टर उसकी नाक में रबड़ की नली डालकर दूध को पेट में भरता है, पर ये क्रान्तिकारी युवक उस समय भी हिल-डुल कर या खाँसकर उस दूध को बाहर निकालने का प्रयत्न करते थे । ऐसा करते हुए वह दूध अमर शहीद यतीन्द्रनाथ दास के फेफड़ों में चला गया, जिससे उसे मरणान्तक कष्ट सहन करना पड़ा । भगतसिंह और उनके अन्य साथियों को भी इस संघर्ष ने इतना कमजोर कर दिया कि उनको "स्ट्रैचर" पर डालकर अदालत में लाना पड़ता था । सरकार ने उनका संकल्प तोड़ने के लिये उनकी कोठरियों में पानी की जगह दूध भरवा कर रखवा दिया, बढ़िया खाने भी रखे गये, पर उन लोगों ने सब चीजें बाहर फेंक दीं ।

अन्त में भगतसिंह और साथियों को कुछ सफलता मिली । सरकार ने एक "जेल कमेटी" नियुक्त कर दी और उसकी जाँच पूरी हो जाने पर राजनीतिक कैदियों के साथ ठीक व्यवहार किये जाने का वचन दिया तब कहीं जाकर अनशन भंग हुआ । इसका एक उद्देश्य जनता में अधिक से अधिक आन्दोलन होना और सरकार के प्रति रोष तथा घृणा उत्पन्न करना भी था । वह भी इस कष्ट के सहने से अधिकांश रूप में पूरा हुआ ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भगतसिंह की साम्यवादी विचारधारा

भगतसिंह के लिये यह एक बड़ी प्रशंसा की बात है कि उसने बम और पिस्तौलों को ही मुख्य आधार मानने वाले क्रान्ति आन्दोलन को थोड़े ही समय में साम्यवाद का अनुयायी बना दिया, यद्यपि भगतसिंह से पहले बंगाल में और पंजाब में बड़े-बड़े साहसी और प्राणों को तिनके की तरह अर्पण कर देने वाले क्रान्तिवीर उत्पन्न हो चुके थे, पर उनके सामने क्रान्ति की सफलता के पश्चात् नवीन समाज की रचना का कोई स्पष्ट चित्र न था। अधिकांश लोग तो राजनीतिक और क्रान्तिकारी आन्दोलन का यही उद्देश्य समझते थे कि देश के शोषणकर्त्ता अंग्रेजों को हटाकर भारतीयों का शासन स्थापित हो जाये, पर वह शासन कैसा हो और उसमें जनता के क्या अधिकार हों इस सम्बन्ध में अधिकांश लोग कुछ सोचते ही न थे और यही विचार कर सन्तोष कर लेते थे कि जब विदेशी लोग हट जायेंगे और उनकी जगह भारतीय नियुक्त हो जायेंगे तो सब त्रुटियाँ और शिकायतें अवश्य ही दूर हो जायेंगी। यह एक बहुत ही अस्पष्ट और भ्रमपूर्ण विचार था और भगतसिंह ने इसे एक बड़ी हद तक दूर करने की चेष्टा की थी।

यद्यपि भगतसिंह सन् १९२१-२२ में नेशनल कॉलेज में पढ़ते समय ही वहाँ की लायब्रेरी से क्रान्ति के साथ साम्यवाद की पुस्तकें भी पढ़कर इस तरफ आकर्षित हो गये थे। लेकिन उस पन्द्रह वर्ष की आयु में एकाएक साम्यवाद के रहस्य को हृदयंगम कर लेना सहज न था। इसी कारण जब एक वर्ष बाद वे कानपुर में आकर वहाँ के क्रान्तिकारी युवकों से मिले जो उन्हीं की उम्र के थे तो उनके विचार बहुत अपूर्ण थे। अजय घोष ने, जो बाद में भारतीय साम्यवादी दल (कम्युनिस्ट पार्टी) के सेक्रेटरी बने, लिखा है कि "उस समय भगतसिंह एक देहाती लड़के के नमूने थे। ये वे दिन थे। जब हम क्रान्ति के सपने देखा करते थे, लड़कों के से सपने, तो लगता था कि क्रान्ति अब कोई दूर नहीं हैं पर भगतसिंह क्रान्ति के आसन्न होने के बारे में उतने आश्वस्त न थे, इसी कारण मैं उनके निराशावादी दृष्टिकोण का मजाक उड़ाता था।"

जैसे-जैसे समय बीतता गया भगतसिंह के क्रान्ति सम्बन्धी विचार परिपक्व होते गये और ८ सितम्बर, सन् १९२८ को दिल्ली के फिरोजशाह किले में की गई "हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन" (क्रान्तिकारी दल) की बैठक में उन्होंने जोर देकर उसके नाम में "साम्यवादी" शब्द शामिल करा दिया। इस घटना का वर्णन करते हुए श्री जितेन्द्रनाथ सान्याल ने लिखा है—

"इस प्रकार हम देखते हैं कि भगतसिंह ने उक्त बैठक में समाजवादी कार्यकर्त्ता की भूमिका अदा की तथा उनके जोरदार तर्कों के फलस्वरूप समाजवादी सिद्धान्तों के आधार पर कार्यक्रम तैयार किया गया।"

(पृष्ठ ४३)

भगतसिंह की इस विचार धारा का सबसे महत्त्वपूर्ण प्रकाशन और स्पष्टीकरण उस समय हुआ जब उसने असेम्बली बम केस के अवसर पर दिल्ली की अदालत में अपने कार्य का औचित्य सिद्ध करते हुए कहा—

"समाज का वास्तविक पोषक श्रमजीवी है। जनता का प्रभुत्व मजदूरों का अन्तिम भाग्य है। इन आदर्शों और विश्वास के लिये हम उन तमाम कष्टों का स्वागत करेंगे, जिसकी हमें सजा दी जायेगी। हम अपनी तरुणाई को इसी क्रान्ति की वेदी पर होम करने लाये हैं, क्योंकि इतने गौरवशाली उद्देश्य कि लिये कोई भी बलिदान बहुत बड़ा नहीं है।.........

"समाज का सबसे आवश्यक अंग होते हुए भी उत्पादन करने वालों या मजदूरों से शोषक गण उनकी मेहनत का फल लूट लेते हैं। एक ओर तो, सभी के लिये अनाज पैदा करने वाले किसानों के परिवार भूखों मरते हैं, सारे संसार को सूत जुटाने वाला बुनकर अपना और अपने बच्चों का तन ढकने के लिये पर्याप्त कपड़ा नहीं पाता, शानदार महल खड़ा करने वाले राज, लुहार और बढ़ई, झोंपड़ियों में ही बसर करते और मर जाते हैं और दूसरी तरफ पूँजीपति, शोषक अपनी सनक पर करोड़ों रुपये बहा देते हैं।

"क्रान्ति से हमारा आशय यह है कि समाज में एक ऐसी व्यवस्था की स्थापना की जाये, जिसमें इस प्रकार के हड़कम्प का भय न हो और जिसमें मजदूर-वर्ग के प्रभुत्व को मान्यता दी जाये और उसके फलस्वरूप विश्व-संघ पूँजीवाद के बंधनों, दुःखों तथा युद्धों से मानवता का उद्धार कर सके।"

जैसे-जैसे भगतसिंह कम्युनिज्म तथा साम्यवाद के अन्य सिद्धान्तों का अध्ययन करके उसके मूल तथ्य को हृदयंगम करते गये उनका यह दृढ़ मत होता गया कि क्रान्ति का वास्तविक मार्ग मेहनत पेशा लोगों को जागृत तथा संगठित करना ही है। थोड़े से युवक आतंकवादी कार्य करके इस महान् उद्देश्य को पूरा नहीं कर सकते थे। अपनी फाँसी से कुछ ही पहले लाहौर सेन्ट्रल जेल के सुपरिण्टेण्डेण्ट के नाम लिखे गये एक पत्र में उन्होंने कहा था—

"यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि हमको बमों और पिस्तौलों से लाभ नहीं होगा, "हिन्दुस्तान साम्यवादी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रजातन्त्रीय समिति" के इतिहास से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है । बम चलाना निरर्थक ही नहीं, अक्सर हानिकारक भी होता है, हौंलाकि कुछ परिस्थितियों में उसकी अनुमति दी जा सकती है । हमारा मुख्य उद्देश्य मजदूरों और किसानों को संगठित करना ही होना चाहिये ।"

फाँसी की कसौटी पर

राजनीतिक क्षेत्र में भी ऐसे लोगों का अभाव नहीं होता जो आरम्भ में तो लम्बी-चौड़ी बातें करते हैं, बड़े साहसी और आत्म-बलिदानी बनने का दावा करते हैं, पर जब अवसर आता है तो हार मानकर आत्म-समर्पण करने में भी संकोच नहीं करते । साधारण आन्दोलनकारी लोगों की बात छोड़ दीजिये, क्रान्तिकारी दल में ही ऐसे लोग भरे पड़े थे । भारतीय क्रान्ति सम्बन्धी पुस्तकों को पढ़ने से अनुमान होता है कि लगभग आधे क्रान्तिकारी पकड़े जाने पर पुलिस के आज्ञाकारी मुखबिर बन गये थे और तो क्या वीरभद्र, कैलाशपति, फणीन्द्रनाथ, जयगोपाल, शिवचरनलाल, बनवारीलाल जैसे प्रमुख व्यक्ति थोड़े से भय या लालच के कारण गद्दार बन गये । यशपाल जैसे महत्त्वपूर्ण सदस्य का आचरण भी आक्षेप योग्य जान पड़ता है । ऐसी स्थिति में हम जब अन्य क्रान्तिकारियों के कारनामों पर विचार करते हैं तो हमको भगतसिंह, चन्द्रशेखर, राजगुरु, सुखदेव, यतीन्द्रनाथ दास, महावीरसिंह, विजयकुमार, आदि कुछ ही सदस्य ऐसे जान पड़ते हैं जो निर्भय होकर अन्त तक क्रान्ति-मार्ग पर दृढ़ रहे और जिन्होंने पुलिस के 'टार्चर' (कष्टों) और जेलखाने की कठिनाइयों की कुछ परवाह न करके एक ऊँचे लक्ष्य को सामने रखा । कम प्रसिद्ध सदस्यों में से भी अनेक हृदय से क्रान्ति के पक्के अनुयायी और हर तरह से दृढ़ थे । उदाहरण के लिये हमारे सामने शालिगराम का नाम है जिसने बीसियों सिपाहियों से घिर जाने पर भी बड़ी शान के साथ संग्राम किया और गोली लगकर गिर जाने पर भी बड़ी चतुराई से दो सिपाहियों को मार दिया पर इन सब में भगतसिंह को जो प्रमुख स्थान मिला उसका कारण यही है कि उन्होंने ढूँढ़-ढूँढ़ कर क्रान्ति के आन्दोलन को अग्रसर और लोकप्रिय बनाने के कार्य किये । यह भगतसिंह की सूझ-बूझ और चतुरता का ही परिणाम था कि लाहौर षड्यन्त्र केस लगभग डेढ़-दो वर्ष तक बढ़ता चला गया और इस बीच में क्रान्ति-दल को इतनी प्रसिद्धि मिल गई कि देश के सर्वोच्च नेता उसे कांग्रेस के मुकाबले का समझने लगे । इस कार्य की सिद्धि के लिये भगतसिंह अपने प्राण अर्पण करने का किस प्रकार अटल निश्चय कर चुके थे, यह उनके निकटतम सहकारी श्री विजयकुमार के एक लेख से प्रकट होता है, जो कुछ ही दिन पहले "पेट्रियट" में प्रकाशित हुआ है । उसमें लेखक ने बतलाया है कि जब भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव—तीनों को फाँसी का दण्ड सुनाया जा चुका तो दिसम्बर १९३० में एक दिन उस भगतसिंह की काल कोठरी में प्रिवी कौंसिल में अपील के सम्बन्ध में विचार करने को ले जाया गया । भाई से भी बढ़कर अपने प्रिय साथी के साथ इस अन्तिम भेंट के समय विजय कुमार के हृदय में एक तूफान उठ रहा था और भावावेश के कारण उसके मुँह से आवाज नहीं निकल रही थी । भगतसिंह भी उसकी दशा देखकर द्रवित होने लगा पर जेलर के चेतावनी देने पर उसने अपने को सँभालकर कहा—

"पं. मोतीलाल नेहरू ने अपनी बीमारी की हालत में शिमला से एक विशेष दूत हमारे पास भेजकर अत्यन्त आग्रह किया है कि हम फाँसी की सजा के विरुद्ध इंग्लैण्ड की प्रिवी कौंसिल में अवश्य अपील करें । इससे कुछ समय मिल जायेगा, जिसमें सरकार से समझौते की वार्ता कदाचित् सफल हो जाये और समस्त राजनैतिक कैदियों को क्षमा दान मिल सके । मोतीलालजी ने कहलाया है कि उनका यह आग्रह समस्त राष्ट्र की तरफ से समझा जाये ।" आगे चलकर विजयकुमार लिखते हैं—

"मुझे आज भी याद आते हैं भगतसिंह के वे शब्द जो उन्होंने अन्त में कहे—"भाई, ऐसा न हो कि फाँसी रुक जाये ।" यद्यपि भगतसिंह को सरकार द्वारा क्षमादान की जरा भी आशा नहीं थी, पर उसे यह ख्याल अवश्य था कि उनके मुकदमे में सरकारी पक्ष की गवाहियाँ कमजोर थीं और अदालत में एकतरफा कार्यवाही करके सजा दे दी गई थी, इसलिये अपील करने पर शायद फाँसी की सजा हटा दी जाये और इस प्रकार उसे अपने प्राण देकर क्रान्ति के उद्देश्य को आगे बढ़ाने का मौका न मिले । "उसने स्पष्ट कहा कि "इस अवसर पर अपनी मृत्यु द्वारा ही वह अपने दल के उद्देश्य की सबसे अधिक सेवा कर सकता है ।" जब कि दुनिया के सभी व्यक्ति सदैव दीर्घ जीवन के लिये ही हाथ-पैर मारते रहते हैं, तब भगतसिंह का दूसरों के लिये प्राणोत्सर्ग करने के लिये दृढ़ निश्चय बने रहना क्या हमारे लिये प्रेरणाप्रद नहीं है ? यदि हम समस्त समाज के हितार्थ अपना कुछ समय, श्रम, धन भी लगाने को तैयार न हों तो ऐसे मानव-जीवन का क्या महत्त्व समझा जा सकता है ?

"अपील की बातचीत पूरी हो गई यह देखकर जेलर ने मुझे वापस चलने का इशारा किया । एक क्षण के लिये मैं और भगतसिंह एक-दूसरे के आलिंगन में आबद्ध हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गये । भगतसिंह फिर मुस्कराने लगा पर इस समय उसका मनोभाव स्पष्ट था कि यह हमारी आखिरी भेंट है । अपनी कोठरी में पहुँचने पर मेरा दिमाग पारस्परिक संस्मरणों से भरा हुआ था । मुझे याद आया कि किस प्रकार उसने, राजगुरु के साथ दिन दहाड़े पुलिस के दफ्तर के ठीक सामने साण्डर्स को गोली मारकर खत्म कर दिया । "उस समय हम सब सैकड़ों कारतूस साथ लेकर गये थे, क्योंकि हमारा अनुमान था कि पुलिस वाले हमको पकड़ने दौड़ेंगे और हम वहाँ उनके साथ खुला युद्ध करके प्राण देंगे ।" उस समय पुलिस के "वीरों" ने सामने आने की जरा भी हिम्मत नहीं की, जिससे मरने-मारने का मौका टल गया । पर अन्त में भगतसिंह ने अपना आत्म-बलिदान कर ही डाला । उसका यह कार्य इतना प्रभावशाली सिद्ध हुआ कि देश में हड़तालों, जुलूसों, विरोध-सभाओं का ताँता लग गया और सर्वत्र भगतसिंह का नाम गूँजने लगा । कांग्रेस के एक बहुत बड़े नेता श्री पट्टाभि सीतारमैया ने अपने कांग्रेस के सुप्रसिद्ध इतिहास में लिखा है कि "यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि भगतसिंह का नाम उस समय उतना ही लोकप्रिय था जितना गाँधी जी का ।" स्वयं गाँधी जी ने भी भगतसिंह के मृत्युदण्ड का समाचार पाकर अपने एक वक्तव्य में कहा था—

"हमारे देश में दबने और डरने का भाव कायरता की सीमा तक पहुँच गया है । इस कारण हम अपने यहाँ बहुत अधिक वीरता और आत्म-बलिदान की आशा नहीं रख सकते । ऐसी दशा में हमारे मस्तक भगतसिंह की बहादुरी और बलिदान के समक्ष झुक जाते हैं ।"

पं. जवाहरलाल नेहरू ने कहा था—"हम भगतसिंह को न बचा सके, हमारी इस असमर्थता पर देश दुःखी होगा पर जब इंग्लैण्ड हमसे समझौते की बात करेगा तो हमारे और उसके बीच भगतसिंह की लाश भी पड़ी होगी ।"

भगतसिंह को अन्तिम क्षण तक मृत्यु की भयंकरता का तनिक भी भय नहीं हुआ, जो मानव-मात्र को आतंकित कर देती है । मरने के दिन उसने अपने भाई को पत्र में ये अमर वाक्य लिखे थे—"एक दीपक की लौ की तरह मैं सुबह होने के पहले ही खत्म हो जाऊँगा । यह मुट्ठी भर खाक अगर नष्ट हो जाये तो इससे क्या हानि होगी ?" उसी समय उसने पंजाब के गवर्नर ओडायर के नाम एक पत्र लिखा जिसमें जोर देकर कहा था—

"हमारा युद्ध हमेशा नये जोश, अधिक सावधानी और अटल निश्चय के साथ उस समय तक चलता रहेगा, जब तक भारत में 'साम्यवादी प्रजातन्त्र' की स्थापना न हो जायेगी ।······ अब पूँजीवाद और साम्राज्यवाद के दिन इने-गिने रह गये हैं । यह संग्राम न तो हमने आरम्भ किया था और न वह हमारे प्राण-त्याग से समाप्त हो जायेगा । हमारा यह तुच्छ बलिदान तो उस शृंखला में केवल एक कड़ी की तरह है ।"

ऐसे निर्भीक और कर्त्तव्यपरायण युवकों पर भारतमाता जितना गर्व करे कम है । इतना ही नहीं वे समस्त मानवता के लिये श्रद्धा के पात्र हैं । उन्होंने जीवन के अंतिम समय तक अन्याय के विरुद्ध संघर्ष किया । हमारी हार्दिक अभिलाषा है कि आजकल के भारतीय युवक, जो अधिकांश में कुमार्ग अथवा अविवेकपूर्ण कार्यों की तरफ कदम बढ़ाते जाते हैं, जो अपनी शक्ति को गुण्डापन, अनैतिकता में लगाना अपनी तारीफ समझते हैं, वे भगतसिंह के आदर्श चरित्र से कुछ शिक्षा ग्रहण करें, जिसने अपनी भरी जवानी मातृभूमि की वेदी पर हवन कर दी । फाँसी का फन्दा हँसते हुए अपने गले में डालते समय उसकी उम्र पूरे चौबीस वर्ष की भी नहीं हुई थी । इन्हीं थोड़े से वर्षों में वह बिना किन्हीं विशेष साधनों के केवल अपने साहस और बलिदान के बल पर वह काम कर गया, जिसके लिये स्वतन्त्रता तथा न्याय परायणता के सभी प्रेमी उसके सम्मुख नतमस्तक होते रहेंगे । नित्यप्रति हजारों मनुष्य तरह-तरह से अकाल मृत्यु के मुँह में चले जाते हैं, पर जो भगतसिंह की तरह दूसरों के लिये जीवन अर्पण कर देता है वही इस नश्वर जगत् में अमर हो जाता है ।

भगतसिंह के आत्म बलिदान का प्रभाव

हमारे मतानुसार त्याग और बलिदान ही सच्चे धर्म और आस्तिकता की पहचान है । मन्दिर में पूजा करना, कण्ठी-माला-तिलक धारण करना, आसन पर बैठकर घण्टों जप करना आदि बाह्य क्रियायें अधिक महत्त्व नहीं रखतीं । इतना ही नहीं वर्तमान समय में तो यह दिखाई दे रहा है कि अधिकांश व्यक्ति इन कार्यों को केवल अभ्यासवश या एक अंधविश्वास के रूप में करते हैं । इस कारण विचारशील लोगों का विश्वास इन पर से हट रहा है । ऐसे लोगों की भी कमी नहीं जो इस प्रकार का पूजा-पाठ एक ढोंग के रूप में, दूसरों को ठगने कि लिये, अपने कुकृत्यों को छिपाने के लिये करते हैं, हमने ऐसे लोग भी देखे हैं जो प्रसिद्ध गुण्डे थे, जुआ खिलाने का रोजगार किया करते थे, पर नित्यप्रति गंगा-स्नान करके जल के भीतर आधा घण्टा खड़े रहकर भजन और जप भी करते थे । ऐसे ही लोगों ने "धर्म" को बदनाम कर दिया है, और उसी आधार पर बहुत से व्यक्ति उसकी निन्दा और विरोध करने में प्रवृत्त हो जाते हैं ।

हम कहना चाहते हैं कि धर्म और आध्यात्मिकता का स्वरूप वह नहीं है जो अशिक्षित अथवा अन्ध-विश्वासी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जन-समूह में फैला है और जिसको लाखों पण्डा, पुजारियों और भिखारियों ने जीवन-निर्वाह का साधन बना रखा है। इसके विपरीत वास्तविक धर्म वह है, जिसे भगतसिंह अथवा लेनिन जैसे क्रान्तिकारियों ने अपने त्याग और बलिदान द्वारा सर्वसाधारण के सामने उपस्थित किया है। चाहे ये दोनों क्रान्तिकारी "नास्तिक" के नाम से प्रसिद्ध हो गये, पर यह निश्चित है कि वे सच्चे धर्म के खिलाफ न थे, वरन् उपर्युक्त श्रेणी के ढोंगी "धर्म-कर्म" वालों ने ही उनको वैसा बना दिया था। इस धर्म विरोधी विचारधारा के मुख्य प्रचारक कार्लमार्क्स और माइकेल बकुनिन जैसे महान् साम्यवादी थे, पर हम कह सकते है कि उनका यह वक्तव्य कि "धार्मिक लोगों के लिये अफीम है" वास्तविक मानव-धर्म से कोई ताल्लुक नहीं रखता। उनका आशय यही था कि पादरी, मुल्ला, पण्डा, पुजारी आदि धर्म के नाम पर सामान्य जनता को बहकाया करते हैं और "ईश्वरीय न्याय" तथा "भाग्य" आदि का भरोसा दिला कर अन्याय अत्याचार सहते रहने की प्रेरणा दिया करते हैं। धर्म के इसी विकृत रूप का वे विरोध करते थे।

भगतसिंह को हम मानव-धर्म का एक श्रेष्ठ अनुयायी मानते हैं। जिस व्यक्ति ने कभी अपने आराम की तरफ ध्यान नहीं दिया और तन-मन-धन को परोपकार के कार्य में ही लगाया। जिसने अपनी स्वेच्छा से बुलाई मृत्यु को भी अधिकाधिक देश के हित के लिये उपयोग किया। उसकी महानता से कोई कैसे इन्कार कर सकता है। कोई उसे कैसे "अधार्मिक" कह सकता है ? सेवा धर्म सबसे बड़ा धर्म है ? जिसने उसके लिये अपने प्राणों को तिल-तिल करके जलाया, वह तो सबसे बड़ा 'धार्मिक' ही कहा जायेगा।

जैसा हम ऊपर बतला चुके हैं कि इंग्लैण्ड की प्रिवी-कौंसिल में अपील करने की भगतसिंह की तनिक भी इच्छा न थी। वह अपनी मृत्यु द्वारा नवयुवकों को प्रेरणा देकर राष्ट्रोद्धार के कार्य में तेजी लाने का निश्चय कर चुका था लेकिन जब यह सुझाया गया कि इस उपाय से क्रान्तिकारी आन्दोलन की कई प्रकार से वृद्धि होगी तो वह उसके लिये तैयार हो गया। इस कार्य में जो लाभ सोचे गये थे, उनके सम्बन्ध में "अमर शहीद सरदार भगतसिंह" के लेखक का मत है—

"प्रिवी-कौंसिल में अपील के द्वारा भगतसिंह सभ्य संसार को यह बता देना चाहता था कि भारत में राजनीतिक बन्दियों के साथ किस प्रकार का अमानुषिक व्यवहार किया जाता है। दूसरा उद्देश्य, इंग्लैण्ड के शत्रु राष्ट्रों को इस अपील के माध्यम से यह सूचित करना था कि भारत में समाजवादी क्रान्तिकारी पार्टी भी अस्तित्व में है। तीसरी बात, यह थी कि फाँसियों को तब तक के लिये स्थगित कराया जाये जब तक इनका जनता पर सर्वाधिक प्रभाव पड़े।"

मन्मथनाथ गुप्त ने भगतसिंह की इस मनोवृत्ति पर प्रकाश डालते हुए लिखा है कि, "साण्डर्स-काण्ड के पश्चात् कुछ मित्रों ने जब यह सुझाव दिया कि भगतसिंह देश से बाहर जाकर काम करें, तो उन्होंने इससे इन्कार कर दिया। जब उनके सामने यह विचार आया कि यहाँ रहने के माने फाँसी पर चढ़ना है, तो उन्होंने इस ढंग से सोचना शुरू किया कि जब मरना ही है, तो क्यों न और भी खतरनाक काम किये जायें।"

स्वयं भगतसिंह ने जेल के भीतर अपने साथियों और वकील से प्रिवी कौंसिल में अपील करने के सम्बन्ध में यही विचार व्यक्त किये थे कि "फाँसी तब हो जब देश की जनता का जोश अपने पूरे उफान पर हो और उसका पूरा ध्यान इस ओर केन्द्रित हो।"

अपने प्राणों के साथ इस तरह निस्पृह भाव से खिलवाड़ कर सकना और राजनीति की शतरंज में उसका इस प्रकार उपयोग करना जैसे वह कोई निर्जीव काठ का मोहरा हो, असाधारण, आत्मबल और त्याग-भावना का प्रमाण है। जब हम देखते हैं कि एक जर्जर काया वाला भिक्षुक भी मरने के नाम से काँपता है और यह इच्छा करता है कि किसी प्रकार अधिकाधिक दिनों तक सांस लेता रह सके, तब चौबीस वर्ष की मदमाती आयु में, दर्शनीय शरीर-सम्पत्ति रखते हुए, अपनी ही मृत्यु को इस तरह लापरवाही से ठुकराना किसी सच्चे आत्म-ज्ञानी के लिये ही सम्भव हो सकता है। बस यही सबसे बड़ी शिक्षा है जिसे हमारे भाई भगतसिंह के चरित्र से ग्रहण कर सकते हैं। कहने को मुँह से एक साधारण बाजार में बैठने वाला भी जीवन को "असार" और "दो दिन का मेला" कहा करता है, पर व्यवहार में शरीर या सम्पत्ति पर तनिक भी आँच आते ही ऐसी हाय-तौबा मचाई जाती है कि मानों वे युगों तक जीवित रहेंगे और सम्पत्ति को भी साथ में बाँधकर ले जायेंगे। एक तरफ "नास्तिक" कहे जाने वालों का ऐसा अद्भुत आत्म-त्याग और दूसरी तरफ दिन रात "ईश्वर की दुहाई" देने वालों की ऐसी स्वार्थपरता और भौतिकवादिता देखकर हमें यह कहने को विवश होना पड़ता है कि हमारा समस्त धर्म-कर्म और पूजा-पाठ दिखावटी है और हम झूठ-मूठ ही अध्यात्म की डींग हाँका करते हैं। अगर हम सचमुच ईश्वर और आत्मा की सत्ता में विश्वास रखने वाले होते तो अपना जीवन अथवा सम्पत्ति, सेवा और परोपकार के कामों में लगाने में एक हर्ष का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुभव करते । हमारी यही अभिलाषा है कि चाहे हम सब भगतसिंह के समान निर्भीक और यमराज को चुनौती देने वाले न बन सकें, पर "सांसारिक माया मोह" में ऐसे लिप्त भी न हों कि समाज-सेवा और मातृभूमि के ऋण को चुकाने के उच्च आदर्श का यथाशक्ति पालन न कर सकें ।

हमारा कर्त्तव्य

यद्यपि आज विदेशी शासन हट जाने से भगतसिंह के युग के समान अपने ही खून से होली खेलने की परिस्थिति बदल गई है, पर त्याग और तपस्या का जीवन व्यतीत करने की आवश्यकता आज भी बनी हुई है । हम देख रहे हैं कि विदेशी शासन के विरुद्ध संघर्ष में लोगों ने स्वार्थ त्याग और कष्ट सहन का जो परिचय दिया था आज उसकी प्रतिक्रिया हो रही है । उस समय देश सेवा और राजनीति में भाग लेने का अर्थ होता था कुछ देना, अर्थात् देशहित के कार्यों में अपने शरीर, श्रम और सम्पत्ति का एक छोटा या बड़ा अंश उत्सर्ग करना । पर आज बिल्कुल उल्टी बात देखने में आ रही है कि "सार्वजनिक सेवा" अथवा राजनीति के कार्यों में भाग लेने का उद्देश्य है अपने स्वार्थ की पूर्ति करना या अधिकाधिक लाभ उठाना । यह स्थिति निश्चय ही बड़ी शोचनीय तथा घातक है । भगतसिंह के चरित्र से प्रेरणा ग्रहण करने या उसके पग चिन्हों का अनुसरण करने का नतीजा तो यही होना चाहिये कि "पुराने और नये क्रान्तिकारी" इस हीन मनोवृत्ति का डटकर मुकाबला करें और उसकी जड़ उखाड़कर ही दम लें ।

वर्तमान समय में भ्रष्टाचार का बाजार जैसा गर्म हो रहा है और बड़े-बड़े "देश सेवक" भी जिस प्रकार दोनों हाथों से सम्पत्ति बटोरने में व्यस्त हैं, उसको चुपचाप देखते रहना या सहन करना सच्चे क्रान्तिकारी सिद्धान्त वालों के लिये लज्जा और कलंक की बात है । यद्यपि आज बम और पिस्तौल के उपयोग का जमाना नहीं रहा, पर भ्रष्टाचारियों को राजी या गैर-राजी से निरस्त करना क्रान्तिकारियों का कर्त्तव्य है । यदि भगतसिंह जैसे आत्म बलिदानियों के उदाहरण से यह प्रेरणा ली जा सके तो हम उपर्युक्त लक्ष्य को निश्चय ही प्राप्त कर सकेंगे ।

स्वदेश और समाज के उद्धारकर्त्ता : डॉ. सनयातसेन

सन् १८९६ के अक्टूबर मास में एक दिन लन्दन निवासी अंग्रेजों ने बड़े आश्चर्य के साथ सुना कि इंग्लैण्ड में शरणागत के रूप में आये एक चीन निवासी व्यक्ति का जबर्दस्ती अपहरण कर लिया गया है । उसे चीनी दूतावास में कैद कर रखा है, और मौका लगने पर चीन भेज देने की योजना है । इस रहस्य के प्रकट होने से स्वाधीनता प्रिय अंग्रेजों में बड़ी खलबली मची और दो-तीन दिन तक उसी व्यक्ति की चर्चा सर्वत्र सुनाई पड़ती रही । अनेक लोग उसे बन्धन मुक्त कराने के लिये बल प्रयोग अथवा किसी प्रकार की चालाकी से काम निकालने की योजना भी बनाने लगे । जनता की उत्तेजना को देखकर इंग्लैण्ड के प्रधानमन्त्री लार्ड सेलिसबरी ने चीन के राजदूत को संदेश भेजा कि "उस व्यक्ति को इस प्रकार अवैध रीति से बन्द करके बहुत गलत काम किया गया है ।" ब्रिटिश सरकार के दबाव से चीनी राजदूत को लाचार होकर उसे छोड़ देना पड़ा ।

इस व्यक्ति का नाम सनयातसेन था । वह चीन का एक प्रसिद्ध क्रान्तिकारी था और अनेक वर्षों से जापान, हनोई, अमेरिका और यूरोप के विभिन्न देशों में घूम फिरकर चीन की निरंकुश सरकार के विरुद्ध विद्रोह का प्रचार कर रहा था । वह एक गरीब घर में उत्पन्न और सामान्य शिक्षा प्राप्त व्यक्ति था पर उसने आबादी की दृष्टि से संसार में सर्वप्रधान देश के "महामहिम" सम्राट के विरुद्ध बगावत का झण्डा उठाने का साहस किया था । इससे रुष्ट होकर सम्राट ने घोषणा की कि "जो व्यक्ति उसे जीवित या मृत पकड़कर लायेगा उसे दस हजार रुपया पुरस्कार दिया जायेगा ।" इसलिये धन के कितने ही गुलाम उसके प्राणों के भूखे हो रहे थे और इस कारण वह प्रायः एक मुल्क से दूसरे में छिपकर भ्रमण करता रहता था । जब वह अमेरिका से लन्दन के लिये रवाना हुआ तो उस देश में स्थित चीन के राजदूत ने इसकी सूचना तार द्वारा भेज दी थी । लन्दन में सनयातसेन अपने मित्र डॉ. कैण्टली के यहाँ ठहरे और उस नगर में रहने वाले चीनी लोगों से मिल-जुलकर चीन में विद्रोह किये जाने का प्रचार करने लगे । उनको यह पता नहीं था कि उनके पीछे इस दूर देश में भी "शत्रु" के दूत फिर रहे हैं और किसी युक्ति से जाल में फँसाने की योजना बना रहे हैं । इन दूतों ने भी चीन निवासी "देशभक्त" होने का बहाना करके सनयातसेन से जान-पहचान कर ली और एक दिन किसी बहाने से उनको एकान्त स्थान में पकड़कर चीनी दूतावास में लाकर बन्द कर दिया । वहाँ पर एक अंग्रेज नौकर उनको खाना देने आता था । सनयातसेन ने उसको अपनी तरफ मिलाया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

और उसके द्वारा एक पत्र भेजकर इस घटना की सूचना डॉ. कैण्टली को दे दी । वे तुरन्त ही अपने मित्र के उद्धार के लिये दौड़-धूप करने लगे और इसकी पूरी रिपोर्ट समाचार-पत्रों में प्रकाशित करा दी । अभी तक इस रहस्य का पता चीनी राजदूत और उसके दो-चार सहायकों के सिवा किसी को न था । पर समाचार-पत्रों द्वारा ब्रिटिश जनता को सूचना मिल गई कि उनके जनतन्त्रवादी देश में किसी निरंकुश सम्राट के अनुचर गुप्तरूप से इस प्रकार कानून और नीति-नियमों की हत्या करके किसी व्यक्ति की स्वाधीनता का अपहरण कर रहे हैं । यह बात उनको बड़ी विचित्र जान पड़ी । उन दिनों इंग्लैण्ड स्वाधीनता की भूमि के रूप में विख्यात था और जैमिनी, गैरीबाल्डी, कार्लमार्क्स और लेनिन जैसे जगत प्रसिद्ध क्रान्तिकारियों को सब देशों से निकाले जाने पर वहीं शरण मिली थी । अंग्रेजों को इस प्रकार "स्वाधीनता के अग्रदूत" होने का गर्व था और इसलिये जब उनको मालूम हुआ कि उनकी राजधानी में ही किसी राजनीतिक आन्दोलनकारी को जबर्दस्ती पकड़कर उसके "शत्रुओं" के हाथों सौंपने का षड्यन्त्र रचा जा रहा है; जो उसको भयंकर से भयंकर यन्त्रणा देकर मार देंगे, तो उनके रोष का पारावार न रहा । इंग्लैण्ड में उस समय भी जनता की आवाज का पूरा आदर किया जाता था । इसलिये जहाँ कुछ लोगों ने समाचार-पत्रों में इस अन्याय का निराकरण करने की माँग की और उच्च अधिकारियों को इस प्रकार बेखबर रहने के लिये फटकारा तो सबके कान खड़े हो गये । चीनी राजदूत और उसका अंग्रेज सलाहकार तो भौचक्के रह गये कि उनका यह गुप्त भेद किस प्रकार खुल गया । पर उनको जनता के सम्मुख पदावनत होना ही पड़ा और सनयातसेन को छोड़कर उन्होंने अपनी गलती के लिये क्षमा याचना की ।

उस समय तो यह मामला दो-तीन दिन में समाप्त हो गया और इसके बाद लोग सनयातसेन को बिल्कुल भूल गये । पर २५ वर्ष बाद २९ दिसम्बर, सन् १९११ को ब्रिटिश समाचार एजेन्सी "रायटर" के चीन स्थित सम्वाददाता ने समाचार भेजा कि "वही शरणागत व्यक्ति जो अपने देश से भागकर हमारे देश में पहुँचा था और वहाँ भी जिसका पीछा दुश्मनों से न छूटा था, आज चीन के प्रजातन्त्र शासन का सर्वप्रथम प्रधान बनाया गया है और इस समय वही उस महादेश का कर्त्ता-धर्त्ता और सूत्रधार है ।" यह समाचार पढ़कर फिर लोग चकित हो गये और प्रश्न करने लगे कि इस बीच में ऐसी क्या बात हो गई कि वह भागा-भागा फिरने वाला और साधनहीन मनुष्य, इतने बड़े पद पर पहुँच गया ?

जन्म और बाल्यकाल

सनयातसेन का जन्म चीन के "क्वानटंग" प्रान्त में सन् १८६६ में हुआ था । उनके पिता "सन टोव्याचान" एक गरीब किसान थे इसलिये इनका बालपन मामूली ग्रामीण बच्चों की तरह ही व्यतीत हुआ । गाँव की पाठशाला में ही उन्होंने मामूली पढ़ना-लिखना सीख लिया, पर उसी समय वे बाहरी संसार के विषय में दिलचस्पी लेने लगे थे । उनके एक बड़े भाई भी थे जिनका नाम था "सन मी" । वे उस समय अनेक चीनी गरीब लोगों की तरह मजदूरी करने "हवाई द्वीप" में चले गये और वहाँ गन्ने के खेतों में काम करने लगे । यह द्वीप अमेरिका वालों के अधिकार में था और वे वहाँ के आर्थिक विकास के लिये बहुत प्रयत्न कर रहे थे । कुछ वर्ष वहाँ मजदूरी करके तथा कुछ धन कमाकर जब "सन मी" घर वापस आया तो "हवाई द्वीप" की समृद्धि तथा सम्पत्ति के उन्होंने अनेक किस्से सुनाये । उन्होंने "सनयातसेन" को भी उस देश की यात्रा करने के लिये प्रोत्साहित किया । यद्यपि उस समय वे १३ वर्ष के ही थे, तो भी बाहरी संसार का निरीक्षण करने की लालसा से जाने को राजी हो गये और किसी प्रकार सन् १८७९ में चीनी मजदूरों के एक दल के साथ हवाई द्वीप की राजधानी "होनोलूलू" पहुँच गये ।

हवाई द्वीप पहुँच कर सनयातसेन को अनुभव हुआ कि वहाँ रहने के लिये उनको अंग्रेजी भाषा का सीखना आवश्यक है । इसलिये वे ईसाइयों के एक चर्च-स्कूल में भर्ती हो गये । इसके सब शिक्षक अंग्रेज थे और विद्यार्थियों को पूरी तरह नियन्त्रण में रखकर जीवनोपयोगी शिक्षा देते थे । वहाँ धार्मिक शिक्षा पर बड़ा ध्यान दिया जाता था और सुबह-शाम होने वाली 'प्रार्थना' में उपस्थित होना अनिवार्य था । सनयातसेन ने गाने का भी कुछ अभ्यास कर लिया था, इसलिये वे उस स्कूल में अच्छे विद्यार्थी समझे जाते थे ।

तीन वर्ष बाद जब वे अपने घर लौटकर आये तो उनके विचारों में बहुत परिवर्तन हो गया था । अब वे अपने समाज में प्रचलित रूढ़ियों और दासतापूर्ण मनोवृत्ति के विरुद्ध बहुत बातें करने लगे थे और विदेशों की तरह वहाँ नई सभ्यता का प्रचार होना पसन्द करते थे । पर गाँव के मुखिया लोग ऐसी चर्चा को कब पसन्द कर सकते थे, इसलिये उन्होंने सनयातसेन के विरुद्ध "अधार्मिक" का फतवा देकर गाँव से चले जाने का आदेश दे दिया । वे स्वयं भी अब दकियानूसी विचारों के लोगों में रहना पसन्द नहीं करते थे, इसलिये वे अपने पिता से पूछकर हाँगकाँग चले गये और एक स्कूल में विद्याध्ययन करने लगे । वहाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर इनका परिचय डॉ. हेजर से हुआ जो ईसाई चर्च की तरफ से कार्य करने को चीन भेजे गये थे । उनकी संगति के प्रभाव से सनयातसेन की इच्छा डॉक्टरी पढ़ने की हुई और कॉलेज की तीन श्रेणियाँ उत्तीर्ण करके कैण्टन के एक मिशन अस्पताल में चले गये । वहाँ काम सीखने के लिये प्रतिवर्ष बीस डालर फीस देनी पड़ती थी । सनयातसेन के पास इतना पैसा न था । इसलिये वे अस्पताल का कुछ काम करके अपनी फीस का एक हिस्सा चुका देते थे । छः वर्ष तक मेडिकल कॉलेज में अध्ययन करने के पश्चात् उनको डॉक्टरी की सनद मिल गई ।

मेडिकल कॉलेज में पढ़ते हुए सनयातसेन के क्रान्तिकारी विचारों में और भी वृद्धि हो गई । वहाँ इनको "लूहा चंग" और "चेंग शोह" नामक दो मित्र मिल गये जो ऐसे ही विचारों के थे । ये चीन के निरंकुश सम्राट का तख्ता उलटना चाहते थे और आपस में इसके लिये तरह-तरह की योजना बनाया करते थे । इस उद्देश्य से सनयातसेन और लूहा चंग ने उत्तरी चीन की यात्रा की और फिर पीकिंग में घूम फिर कर राजवंश की स्थिति और शक्ति का पता लगाया । उन्हें मालूम हुआ कि राजा और उसके अधिकारियों के भ्रष्टाचार और अन्यायों के कारण प्रजा में असन्तोष तो बहुत है पर मानसिक दासता के बन्धनों में बँधे रहने के कारण वह किंकर्तव्य विमूढ़ हो रही है । उसकी ठीक वही दशा थी जैसी भारतवर्ष में देशी राजाओं की प्रजा की । यहाँ के अधिकांश राजा अयोग्य थे और अपने भोग-विलास से लिये प्रजा का शोषण करने में उनको जरा भी संकोच नहीं होता था । उनके शासन में किसी की सम्पत्ति और इज्जत सुरक्षित नहीं थी, चाहे जब किसी को लूटमार सकते थे । फिर भी प्रजा उनको "सर्वशक्तिमान भगवान" का अंश समझकर पूजती ही रहती थी और अपने भाग्य को दोष देकर सब प्रकार के अन्याय, अपमान, कष्टों को चुपचाप सहन करती रहती थी । यही हाल चीन की जनता का था उसे परम्परा और पूर्वजों की भक्ति के नाम पर ऐसा अन्धविश्वासी बना दिया गया था कि राजा और उसके प्रधान अधिकारियों के विरुद्ध वह न तो कुछ सोच सकती थी और न कर सकती थी ।

सनयातसेन और उसके मित्रों ने इस स्थिति को अच्छी तरह सोच समझकर निश्चय किया कि जब तक चीन में किसी प्रकार की क्रान्ति करके लोगों का मार्गदर्शन न किया जायेगा तब तक उनमें जागृति न होगी और न वे अन्यायी शासकों के विरुद्ध खड़े हो सकेंगे पर इस कार्य के लिये अस्त्र-शस्त्र की आवश्यकता थी जो बिना रुपयों के प्राप्त नहीं हो सकते थे । इसलिये इनकी निगाह फिर हवाई द्वीप की तरफ गई और वहाँ जाकर इन्होंने "उन्नतिशील चीनी समाज" नामक समिति की स्थापना की । इसका उद्देश्य उन चीन निवासियों को संगठित करना था जो अपने देश की उन्नति की आकांक्षा रखते थे ।

उसी समय चीन और जापान में युद्ध छिड़ गया और चीन की हार पर हार होने लगी । सनयातसेन का विचार था चीन सरकार के हारने पर ही वहाँ पर क्रान्ति हो सकना सम्भव होगा । चीन की सेना के निकम्मेपन को देखकर उनको विश्वास हो गया कि यदि सुदृढ़ विचारों के थोड़े लोग भी क्रान्ति का झण्डा उठा दें और जनता को संगठित करके शासकों के खिलाफ खड़े हो जायें तो वह सेना उनका कुछ न कर सकेगी । यह सोचकर वे बड़े परिश्रम से जगह-जगह समिति की शाखायें खोलने लगे । उसी समय शंघाई से उनके चीन निवासी मित्रों का पत्र आया कि "क्रान्ति के लिये आपका आना आवश्यक है, चीन हार रहा है ।"

वे हवाई द्वीप से कुछ मित्रों को लेकर चीन आ गये । उस समय युद्ध समाप्त हो गया था । चीन ने जापान से हार मानकर फारमोसा को छोड़ दिया था और कोरिया की स्वतन्त्रता स्वीकार कर ली थी । सनयातसेन ने इस सन्धि को बहुत अपमानपूर्ण समझा और अपने साथियों की राय से निश्चित किया कि शीघ्र ही तैयारी करके विभिन्न प्रान्तों में विशेषकर "कैण्टन" में सरकार पर हमला कर दिया जाये । इस उद्देश्य के लिये पर्याप्त धन एकत्रित करके हथियार मँगाने का प्रयत्न किया गया और बहुत-सी रायफलें और पिस्तौलें खरीदी गईं पर जब उनको कैण्टन के बन्दरगाह पर लाकर उतारा जाने लगा तो भेद खुल गया और पुलिस ने ६०० पिस्तौलें बरामद कर लीं । उसी समय क्रान्तिकारियों के मुख्य कार्यालय पर भी धावा किया गया, जहाँ १७ आदमी पकड़े गये । इनमें से तीन को फाँसी दे दी गई । यह घटना सन् १८९५ की है ।

पर सनयातसेन उनके हाथ नहीं आये । वे वेश बदल कर बच निकले और हाँगकाँग में अपने मित्र डॉ. कैण्टली के पास जा पहुँचे । परन्तु वहाँ भी वे सुरक्षित नहीं रह सकते थे । अंग्रेजों के अधिकार में होने पर भी वह चीन का ही एक भाग है और वहाँ के अधिकांश निवासी चीनी ही हैं । उसी समय चीन सरकार की तरफ से उनकी गिरफ्तारी के लिये पुरस्कार की घोषणा कर दी गई थी । इसलिये वे कुछ मित्रों की सहायता से "काबी" नामक छोटे स्थान को चले गये । वहाँ उन्होंने अपने लिये जापानी पोशाक तैयार कराई और अपने बालों को भी उसी ढंग पर कटवाया । अब वे अपटूडेट जापानी दिखाई पड़ने लगे, जिनको पहचान सकना कठिन था ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"काबी" से वे हवाई टापू को रवाना हो गये और वहाँ छः महीने तक रहे । वहाँ से अमेरिका गये और तीन-चार महीने अमेरिका प्रवासी चीनियों में घूम-फिरकर उनमें क्रान्ति की भावना भरते रहे । वहाँ से इंग्लैण्ड गये जहाँ अक्टूबर १८९६ में उनको धोखे से गिरफ्तार किये जाने की घटना हुई, जिसकी चर्चा आरम्भ में की जा चुकी है ।

सन् १८९६ से १८९८ तक वे यूरोप के विभिन्न देशों में भ्रमण करते रहे । यह समय उनके लिये बहुत कष्टकारक था । उनके मित्र उनको जो थोड़ी-बहुत सहायता करते थे, उसी से किसी प्रकार वे अपना निर्वाह करते थे, चाहे कभी पेट भर खाना मिल जाये अथवा आधे पेट ही रह जाना पड़े परन्तु इस बीच में उन्होंने राजनीतिक साहित्य का खूब अध्ययन किया । कार्लमार्क्स के ग्रन्थों को पढ़कर वे कट्टर साम्यवादी बन गये और जीवन के अन्त तक उसी मत का प्रचार करते रहे । इससे उनको संसार की राजनीतिक अवस्था और क्रान्तिकारी कार्यक्रम के लिये आवश्यक बातों का ज्ञान हो गया । लेकिन उस समय चीन की दशा इतनी गिरी हुई थी और वहाँ ऐसी अन्धेरगर्दी चल रही थी कि शीघ्र ही किसी सुधार की आशा, दुराशामात्र थी । सबसे पहली कठिनाई तो उस देश का महान विस्तार ही थी । उस समय चीन का राज्य समस्त यूरोप से भी बड़ा था । यों भी कह सकते हैं कि संसार में रहने लायक जितनी जमीन है उसका चौथाई भाग चीन के अधिकार में था । दूसरी बात यह है कि चीन निवासी घोर दकियानूसी थे । इस सम्बन्ध में कुछ लोग कहा करते थे कि "पाश्चात्य देशों के लोग दस वर्ष में जितना आगे बढ़ते हैं, चीन वाले उससे भी कम सौ वर्ष में आगे खिसकते हैं ।"

वे लोग हजारों वर्षों से संसार से पृथक् रहकर अपने ही कार्यक्रमों और रहन-सहन में संलग्न रहे । पश्चिमी देश कितनी तरक्की कर रहे हैं अथवा अपना विस्तार करते जाते हैं इसका उनको कोई पता न था । एक मुर्दा भाषा के ग्रन्थों को वे रट लेते थे और समझते थे कि हम ही संसार भर में सबसे अधिक ज्ञानी हैं । उनका देश अनेक प्रकार की नैसर्गिक सम्पदाओं और साधनों से भरा पड़ा था, पर उन्होंने कभी उससे उद्योग-धन्धों के स्थापित करने की बात नहीं सोची । एक जर्मन विद्वान ने बताया था कि चीन के एक प्रान्त में इतना कोयला है कि वह संसार भर के लिये एक हजार वर्ष तक काम दे सकता है पर उस कोयले को निकालने वाला कोई नहीं है । चीन में जो सबसे पहली रेलवे लाइन बनाई गई उसे सरकार ने शीघ्र ही खरीद लिया और पटरियों को उखाड़ डाला तथा इंजन को नदी में डुबा दिया । कारण यही था कि वहाँ के अधिकारी अपने देश में कोई ऐसी बात प्रचलित होने देना नहीं चाहते थे जिससे लोगों में नये विचार और जागृति के भाव उत्पन्न हों ।

सनयातसेन ने स्वयं चीन की दशा का चित्रण करते हुए एक स्थान पर कहा है—"राजनीति की पुस्तकों को छापने और रखने की चीन में आज्ञा नहीं है । दैनिक पत्रों की मनाही है । संसार तथा उसमें रहने वाले लोगों और राजनीति की गन्ध भी वहाँ नहीं पहुँची है । सातवें दर्जे के "मन्दारिन" (सरकारी अधिकारी) के नीचे किसी को चीन का भूगोल पढ़ने की आज्ञा नहीं है, विदेशों का भूगोल पढ़ना तो बहुत दूर की बात है । वर्तमान राजवंश के कानून सब लोग नहीं पढ़ सकते । वे केवल उच्च पदाधिकारियों को ही ज्ञात हैं । सामयिक पुस्तकों को पढ़ने की केवल मनाही नहीं है वरन् उसकी सजा प्राणदण्ड है । किसी को कोई नया आविष्कार करने की आज्ञा नहीं है । इस आज्ञा का उल्लंघन करने वालों को फाँसी तक दी जा सकती है । इस तरह लोग अन्धकार में रखे जाते हैं और जिन बातों को सरकार अपने लाभ की समझती है केवल उन्हीं को प्रकट होने देती है ।"

आध्यात्मिकता का झूठा अहंकार

चीन की प्रजा के इस प्रकार अन्धकार में रहने और सब तरह के अन्यायों को सहते रहने का एक और भी कारण था, शायद पाठकों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि वह हमारे देश की स्थिति से बिल्कुल मिलता-जुलता था । वह कारण था आध्यात्मिकता और प्राचीन सभ्यता का गलत अहंकार । यद्यपि उस समय चीन की दशा अत्यन्त शोचनीय हो रही थी, वहाँ के सभी श्रेणियों के लोगों में तरह-तरह के दोष भरे हुए थे और वे संसार में "अफीमची" के नाम से विख्यात थे, पर अपने मन में और अपने घर के भीतर वे अपने को संसार की सर्वश्रेष्ठ जाति, सर्वोत्कृष्ट मनुष्य समझते थे । इसका वर्णन करते हुए 'महापुरुष सनयातसेन' नामक निबन्ध में कहा गया है कि—

"इसका कारण यह था कि बहुत समय से चीन को आध्यात्मिक अहंकार का लकवा मार गया था और उसी अहंकार की बेड़ियाँ उसे अब तक जकड़े हुए थीं । जिस समय यूरोप के लोग बिल्कुल जंगली थे, उस समय चीन के लोग बड़े-बड़े मकान बनाना जानते थे । वहाँ बड़े-बड़े ज्योतिषी मौजूद थे, वे लोग बन्दूक चलाना जानते थे, बारूद बना लेते थे, मिट्टी के बर्तन, सरेस आदि अनेक पदार्थ बनाना जान गये थे । उन्होंने छापने की कला का आविष्कार किया था और यूरोप वालों ने उसके पाँच सौ वर्ष बाद उसका हाल सुनकर अपने यहाँ मुद्रणकला का प्रचलन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किया । चीन वालों ने १२०० मील लम्बी किलेबन्दी की अभेद्य दीवार, ६०० मील लम्बी एक नहर और रोमन लोगों की सी पहाड़ी सड़कें भी बहुत पहले बना डाली थीं।"

"इसलिये कोई आश्चर्य की बात नहीं कि उन्हें अपनी इस प्रकार की उन्नति पर और विशेष कर ऐसे समय में जबकि सभ्यता और प्रगति में उनका मुकाबला करने वाला उसके पड़ोसी भारत के अतिरिक्त और कोई न था, यह ख्याल पैदा हो गया कि संसार की सारी जातियाँ जंगली हैं और केवल हमारी जाति ही श्रेष्ठ कहलाने योग्य है । यदि हमारी जाति नष्ट हो जाये तो संसार का समस्त ज्ञान भण्डार भी लुप्त हो जायेगा ।"

इस झूठे अहंकार का नतीजा यह हुआ कि चीन दिन पर दिन प्रगति के मैदान में पिछड़ने लगा और उन्नीसवीं शताब्दी में अधिकांश यूरोपियन देश उससे आगे निकल गये किन्तु उसका घमण्ड और अपनी श्रेष्ठता का गुमान ज्यों का त्यों बना रहा । इसका एक हास्यास्पद नमूना उस समय देखने को मिला जिस समय ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की आज्ञा से लॉर्ड नेपियर इसलिये केण्टन आये कि इंग्लैण्ड और चीन के बीच व्यापार की वृद्धि की जाये और उसकी शर्तें तय कर ली जायें । इस पर वहाँ के चीनी गवर्नर ने लॉर्ड नेपियर के पत्र के उत्तर में कहा—"मैं ऐसे जंगली जाति वालों से पत्र-व्यवहार भी नहीं करना चाहता, ऐसा करना हमारी शान के खिलाफ होगा । जंगली कौम के लोग आयें-जायें और सिवाय व्यापार के उन्हें किसी दूसरी बात से सरोकार न रहे । चीन के अधिकारी व्यापार जैसी तुच्छ बात की तरफ ध्यान भी नहीं देते, ऐसी छोटी-छोटी बातों का विचार करना भी हमारे लिये अनुचित है ।"

पाठक इन बातों को पढ़ें और अपने देश की हालत पर विचार करें कि हम लोगों के दिमाग भी क्या इसी प्रकार की विचित्र बातों से नहीं भरे पड़े हैं ? हम वैदिककालीन सच्चे अध्यात्म की चर्चा नहीं करते, जब भारतीयों ने जल-थल के कठिन से कठिन मार्गों से चलकर संसार के दूर देशों की यात्रा की, वहाँ के निवासियों को सभ्यता और ज्ञान का पाठ पढ़ाया तथा अपने देश को भी अधिक से अधिक साधन सम्पन्न बनाया लेकिन मध्ययुग में हमारे यहाँ जो विचारधारा फैली वह यही थी कि हम बड़े धर्मात्मा, ज्ञानी, विद्वान् और सभ्य हैं तथा अन्य देशों में प्रायः म्लेच्छ, यवन, दैत्य, व्रात्य, बर्बर आदि निम्नकोटि के मनुष्य भरे पड़े हैं । तभी से हमारे ऊपर विदेशियों के आक्रमण होने लगे और यूनानी, हूण, शक, सीथियन, तातार, पठान आदि अनेक जातियों ने भारतवर्ष के अनेक भागों को ध्वस्त किया, लूटा और आधीन भी बनाया, किन्तु हम सदा यही कहते रहे कि "ये सब असभ्य, राक्षस, तामसी, पापी हैं और ज्ञानी, ध्यानी, तपस्वी, सतोगुणी, त्यागी, पुण्यात्मा तो केवल हम ही है ।" जब पुर्तगाल और इंग्लैण्ड वालों ने व्यापारी के रूप में आकर अपने कदम इस देश में जमाये तब हमने भी यही कहा कि "इस प्रकार बेचने-खोचने के लिये हजारों कोस तक मारे-मारे फिरना तो छोटे लोगों का काम है, हमको इस तरफ ध्यान देने की कोई आवश्यकता नहीं ।" यह कोई काल्पनिक विचार नहीं है, सुप्रसिद्ध पर्यटक अलबरुनी ने भारतवर्ष की तत्कालीन स्थिति का अध्ययन और विवेचन करके यही निष्कर्ष निकाला था । उसने लिखा है—

"हिन्दू लोग समझते हैं कि उनके जैसा दूसरा देश नहीं है, उनके राजाओं जैसा दूसरा राजा नहीं है, उनके धर्म जैसा दूसरा धर्म नहीं है, उनके शास्त्रों जैसा दूसरा शास्त्र नहीं है । यदि तुम खुरासान और ईरान के शास्त्रों तथा विद्वानों के सम्बन्ध में उनसे बात करोगे तो वे तुमको मूर्ख ही नहीं, मिथ्यावादी भी समझेंगे । वे यदि प्रवास करें, दूसरों से मिलें-जुलें तो उनकी यह प्रवृत्ति नहीं रहेगी—कारण, उनके पूर्वज ऐसे संकुचित नहीं थे ।"

इतना ही नहीं जब मुसलमानों और उसके बाद अंग्रेजों ने इस देश पर अधिकार जमा लिया और हमको अपने आधीन बनाकर हर तरह से प्रताड़ित, अपमानित और लांछित किया तब भी हमारी वह मोह-निद्रा भंग नहीं हुई । तब भी हम अपने को धर्मात्मा और उनको म्लेच्छ कहते रहे । पुराने युग की बात छोड़ दीजिये वर्तमान युग में हमने अपनी आँखों से देखा है कि राजाओं और पण्डितों से लेकर सामान्य जन तक अंग्रेजों को 'हजूर'-'हजूर' कहते हुए अपना गला सुखाते रहते थे और उनकी थोड़ी-सी कृपा पाकर ही अपने को धन्य समझते थे, पर अपने घर में अथवा सभा-समाजों में बैठकर यही कहते थे कि हम "ऋषियों और चक्रवर्ती नरेशों" के वंशज हैं और ये तो टापुओं के रहने वाले "धर्महीन और पाप कर्म करने वाले" हैं । जिस समय हम दर्शन और शास्त्रों का मनन करके जीव और ब्रह्म की एकता का प्रतिपादन करते थे, रत्नजड़ित भवनों में निवास करते थे उस समय ये लोग रंग-बिरंगी मिट्टी से अपने शरीरों को पोतकर जंगलों में घूमते थे । लेकिन अन्त में उन्हीं के कदमों में बैठकर आधुनिक शिक्षा प्राप्त करने वालों ने देश का उद्धार किया और वेद तथा शास्त्रों के अभिमानी "पण्डित" उस समय भी कापुरुष की तरह दूर रहकर व्यर्थ में ही गाल बजाते रहे ।

भ्रष्टाचार का बोलबाला

इस प्रकार देश का विस्तार और लोगों में प्रचलित भ्रमपूर्ण घटनाओं के अतिरिक्त सनयातसेन के मार्ग में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तीसरी बड़ी बाधा उस देश में फैला हुआ महा भ्रष्टाचार और सरकारी अधिकारियों का अन्धेर-खाता था । चीन का सम्राट "मंचू" वंश का था जिसे चीन के मुख्य निवासी विदेशी मानते थे । सम्राट ने शासन सम्बन्धी सब कार्य 'मंचू' वंश वालों को ही दे रखा था और वे सब परस्पर मिले-जुले होने के कारण प्रजा के साथ मनमाना व्यवहार करते थे । चीन की हुकूमत में छोटे से चौकीदार या चपरासी से लेकर गवर्नर तक यही चाहते थे कि वर्तमान अन्धेर-खाता जैसा है वैसा ही चलता रहे और जनता में किसी प्रकार के नये विचारों या कार्यों का प्रचार न हो सके । वहाँ के अधिकारियों को वेतन बहुत कम मिलता था और तमाम खर्च "ऊपरी आमदनी" से ही चलता था । इस सम्बन्ध में सनयातसेन ने इंग्लैण्ड में रहते हुए लिखा था कि "शायद अंग्रेज लोगों को इस बात का पता नहीं कि चीन में बड़े-बड़े पदाधिकारियों का निश्चित वेतन कितना कम होता है । उन्हें विश्वास नहीं होगा कि कैण्टन प्रान्त के वायसराय का वार्षिक वेतन ६० पौण्ड है, अर्थात् वह प्रतिमास ५ पौण्ड (अथवा ७५ रुपया) पाता है । जिस वायसराय की प्रजा संख्या की दृष्टि से समस्त इंग्लैण्ड की जनसंख्या से अधिक हो, उसकी तनख्वाह इतनी कम होना क्या आश्चर्य की बात नहीं है ? इससे आप समझ सकते हैं कि अपने पद की योग्यतानुसार ठाट-बाट से रहने और दौलत जमा करने के लिये वह कौन-सा अन्याय न करता होगा ? उसे मजबूरन लोगों पर अत्याचार करना पड़ता है और न्याय को बेचना पड़ता है ।"

"सरकारी दृष्टि में ऊँचा बनने के लिये शिक्षा की परीक्षाओं में अच्छी तरह उत्तीर्ण होना एक साधन है । मान लीजिये एक विद्यार्थी विशेष योग्यता के साथ पास होता है, वह सरकारी नौकरी की खोज करता है और "पीकिंग" (चीन की राजधानी) के अधिकारियों को घूंस देकर एक जगह प्राप्त करता है परन्तु उसकी तनख्वाह से उसका गुजारा नहीं होता । क्योंकि तनख्वाह के बराबर रुपया तो उसे प्रतिवर्ष अपने अधिकारियों को दे देना पड़ता है, ताकि वह अपने स्थान पर बना रहे । परिणाम यह होता है कि वह लूट-खसोट प्रारम्भ करता है, जब गवर्नमेण्ट उसकी पीठ पर हाथ रखे है, यदि तब भी वह काफी रुपया न कमाये, तो उससे बढ़कर बेवकूफ कौन होगा ? वह खूब रुपया कमाता है और अच्छी तरह घूंस देकर ऊँचे पद प्राप्त करता चला जाता है । ज्यों-ज्यों वह ऊँचे पद प्राप्त करता जाता है, त्यों-त्यों उसे धन कमाने में सुविधा होती जाती है । इस प्रकार जो मनुष्य खूब अच्छी तरह से लूट सकता है वही सबसे ऊँचा पद पाता है ।"

जासूसों का जाल

बहुत से लोग यह भी प्रश्न करते हैं कि "जब चीन में ऐसा अन्धेर-खाता फैल रहा था तो क्या वहाँ के समझदार और न्याय-प्रेमी व्यक्तियों के पास ऐसा कोई साधन न था जिससे वे संगठित होकर इस अन्याय को मिटाने का प्रयत्न करते ? यह कैसे सम्भव हुआ कि एक वंश के लोग इतने विशाल देश को अपनी शक्ति से काबू में रख सके ?" इसके उत्तर में इतना ही जान लेना पर्याप्त है कि 'मंचू' शासक चीन निवासियों को डराकर और उनका भेद लेकर ही अपना काम चलाते थे । सरकारी जासूस बड़े शहरों से लेकर छोटे गाँवों तक फैले थे । कारखानों में, होटलों में, रेलगाड़ियों में, निजी घरों तक में जासूस फैले हुए थे और प्रत्येक घटना की जानकारी अधिकारियों को देते रहते थे । वे प्रत्येक बात का तुरन्त पता लगा लेते थे पर ऐसी गुप्त रीति से कि किसी को जरा भी सन्देह न हो । इन जासूसों के लिये कोई काम असम्भव न था । वे अपने घनिष्ठ मित्रों का भी भेद सरकार को बतला देते थे । किसी काम पर पश्चाताप करना तो उनके लिये सम्भव ही न था । चीन के किसी भी गाँव में कोई भी नया आदमी आया कि उसकी खबर तुरन्त अधिकारियों के पास पहुँचा दी जाती थी । किसी भी व्यक्ति के मुँह से सरकार के विरोध में या क्रान्ति के पक्ष में एक भी शब्द निकल जाये तो उसकी आफत आ जाती थी । ये जासूस सम्राट के महलों तक में मौजूद रहते थे और वहाँ भी अगर कोई "सुधारों" की बात करता था तो उसको भी काल-कोठरी में या निर्वासन अवस्था में ही जीवन व्यतीत करना पड़ता था ।

बाक्सर-विद्रोह

पर ऐसा अन्यायी और भ्रष्टाचारी शासन सदैव एक गति से नहीं चल सकता । जब अन्याय का पलड़ा बहुत भारी हो जाता है तो दूसरी तरफ से कोई न कोई प्रतिक्रिया होती ही है । यदि उस देश की प्रजा भय से गूँगी और अपंग हो जाती है तो प्रकृति और किसी उपाय से उसका बदला चुकाने की योजना बनाती है । चीन सरकार तो अपने देश के आर्थिक विकास के लिये कुछ कर नहीं रही थी, पर अन्य देशों को उस देश के असीम साधनों तथा इतनी बड़ी जन-शक्ति को देखकर लालच लग रहा था । उन्होंने चीन सरकार को तरह-तरह से समझा-बुझाकर उससे अपने लिये कितनी ही रियायतें प्राप्त कर लीं । रूस ने साइबेरियन रेलवे के लिये मंजूरी ले ली, फ्रांस, हांकाऊ तक ट्रंक लाइन बनाने की तैयारी कर रहा था, जर्मनी को शनटुंग रेलवे का अधिकार मिल गया था और खानों की व्यवस्था भी उसके हाथ में थी । देश में विदेशियों की इस

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकार की घुसपैठ कितने ही परम्परावादी राजनेताओं को भी खटकती थी। कुछ लोग विदेशियों से इसलिये अप्रसन्न थे कि इन लोगों ने अपने धर्म का प्रचार भी आरम्भ कर दिया था। इनके पादरी सामान्य जनता को अनेक प्रकार के प्रलोभन देकर धर्म-परिवर्तन करने के लिये प्रेरित करते थे। साथ ही जो लोग ईसाई हो जाते थे उनकी सभी उचित-अनुचित बातों में वे सहायता करने लगते थे। ये बातें सभी श्रेणियों के देशभक्तों और देशाभिमानी व्यक्तियों को अनुचित जान पड़ती थीं। इस कारण सन् १९०० में कितने ही दलों ने मिलकर विदेशियों के विरुद्ध एक अभियान खड़ा कर दिया जिसका इतिहास में 'बाक्सर-विद्रोह' के नाम से उल्लेख किया गया है। उन लोगों ने कितने ही पादरियों को मार डाला और विदेशी दूतावासों को घेरकर मारने की धमकी देने लगे। वह तो चीन की साम्राज्ञी थे, जिनका शासन में बड़ा प्रभाव था, उन्होंने विद्रोहियों को ऐसा करने से रोका और सब प्रकार से कोशिश की, तब जाकर राजदूतों की जान बची।

इसके कुछ ही समय बाद आठ देशों की सम्मिलित सेनायें अपने देशों के नागरिकों तथा राजदूतों की रक्षार्थ आ पहुँचीं और उन्होंने 'बाक्सर-विद्रोह' को पूरी शक्ति से कुचल दिया। बाक्सरों में अधिकांश पुराने ढंग के योद्धा थे जो तलवारों से लड़ते थे। यूरोपियन सेनाओं की रायफलों के आगे शीघ्र ही उनको भागना पड़ा। इस युद्ध में अंग्रेजों की तरफ से भारतीय सेना भी चीन में लड़ने गई थी। चीन के शासकों को हर तरह से हार मानकर और खुशामद करके अपनी रक्षा करनी पड़ी। फिर भी आक्रमणकारी देशों ने उस पर ३ अरब डालर का जुर्माना ठोक दिया और जब तक वह अदा न हो तब तक कुछ बन्दरगाह आदि पर पूरा या आंशिक अधिकार कर लिया। चीन कभी उस जुर्माने की रकम को न चुका सका क्योंकि अव्यवस्था और भ्रष्टाचार के कारण राष्ट्र का खजाना सदा खाली ही रहता था। इस कारण वहाँ विदेशियों का प्रभाव बराबर बढ़ता ही चला गया। चाहे पारस्परिक प्रतिस्पर्धा के कारण उनमें से कोई चीन पर अपना शासन तो कायम न कर सका पर व्यापार और उद्योग-धन्धों के विकास के नाम पर उन्होंने देश को काफी लूटा-खसोटा। विदेशियों की इसी स्वार्थ-साधन की नीति को देखकर चीन के नवयुवकों में राजनीतिक जागृति उत्पन्न हुई और वे सनयातसेन के नेतृत्व में निरन्तर अपने देश के उद्धार के लिये प्रयत्न करने लगे।

इस सम्बन्ध में एक मजेदार बात यह थी कि यद्यपि चीन सरकार की इस घटना में बहुत अधिक छीछालेदर हुई और उसको पश्चिमी देशों के सम्मुख घुटने टेककर आत्म-रक्षा की भीख माँगनी पड़ी, परन्तु बाद में जब चीन में इस युद्ध का वर्णन रिपोर्ट और पुस्तकों के रूप में लिखा गया तो उसमें यही बतलाया गया कि "विदेशी लोग व्यापार और निर्वाह के लिये चीन आये और परम दयालु सम्राट तथा राजमाता ने कृपा करके उनको उपयुक्त धन तथा भूमि प्रदान करके उनका पालन-पोषण किया।" इस घटना से हमको हाल ही में सन् १९६५ वाले पाकिस्तान-भारत युद्ध की याद आती है, जब भारतीय सेनाओं से हर प्रकार हारने और लाहौर तक अधिकार जमा लेने पर भी वह अपने देश में यही प्रचार करता रहा कि हमने भारतीय सेनाओं को खूब मारा है और उसे जगह-जगह से भगाकर वहाँ के अनेक नगरों पर कब्जा कर लिया है। युद्ध समाप्त हो जाने पर भी वहाँ की सरकार और समाचार-पत्र ऐसी ही डींगें मारते रहे। इस प्रत्यक्ष आत्म-प्रवंचना की कोई हद है।

चीन की गुप्त सभायें

बाक्सर विद्रोह के प्रसंग में चीन की गुप्त सभाओं का वर्णन भी आवश्यक जान पड़ता है, क्योंकि बाक्सर-आन्दोलन और बाद में चीन की हार के फलस्वरूप सनयातसेन के स्वतन्त्रता-आन्दोलन की प्रगति का बहुत कुछ श्रेय इन गुप्त सभाओं को भी था। बाक्सरों की सेना में बहुत से व्यक्ति इन्हीं गुप्त सभाओं के थे। इतना अन्तर अवश्य था कि गुप्त सभाओं के रूप में ये लोग व्यक्तिगत अथवा छोटी-मोटी स्थानीय समस्याओं के लिये कार्य करते थे और बाक्सर-आन्दोलन राष्ट्रीय दृष्टिकोण से आरम्भ किया गया था।

इस प्रकार की गुप्त सभायें चीन में बहुत वर्षों से कायम थीं और प्रत्येक बड़े गाँव या कस्बे में एकाध सभा अवश्य पाई जाती थी। बड़े-बड़े नगरों में तो छः-सात सभायें भी थीं। इन सभाओं का मुख्य उद्देश्य सभासदों में संगठन, मित्रता और पारस्परिक सहायता पहुँचाने का था। लेकिन विशेष परिस्थिति में वे राजनीति के मामलों में भी भाग लेने लगती थीं। जिस प्रकार प्रत्येक आन्दोलन या संगठन में अच्छे-बुरे दोनों प्रकार के व्यक्ति पाये जाते हैं, वही स्थिति इन गुप्त-सभाओं में थी। इनके कितने ही नासमझ सदस्य कभी ऐसे काम कर बैठते थे जिससे सभा की बदनामी हो जाती थी और उसकी प्रगति रुक जाती थी, परन्तु जिन सभाओं के नेता देशभक्ति और समाजोन्नति की दृष्टि से कार्य करते थे वे बहुत समय तक स्थिर रहकर उपयोगी सेवा करती रहीं।

इन सभाओं के मुखिया को चीनी भाषा में "थाकू" कहते थे जो कोई सभा में सम्मिलित होना चाहता पहले अपना प्रार्थना-पत्र "थाकू" के पास ही भेजता था। वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सब सदस्यों को इसकी सूचना देकर किसी मन्दिर में सभा करता। रात के समय जब सब इकट्ठे हो जाते तो वह एक संक्षिप्त भाषण करके नये व्यक्ति का परिचय कराता। तब वह व्यक्ति सभा के सामने खड़ा होकर मुट्ठी बन्द करके तीन बार प्रणाम करता। इसको चीनी भाषा में "थाटिओ" कहते हैं। इसके उत्तर में सब सदस्य खड़े होकर "थाटिओ" कहते। इसके पश्चात् वे एक-दूसरे से "चीनचा"-"चीनचा" कहते। इसका आशय था कि आप बैठ जायें। चीन में दूसरों के बैठने के पहले अपनी जगह बैठ जाने को सभ्यता के विपरीत माना जाता है। इस तरह "चीनचा"-"चीनचा" कहते-कहते दस-पाँच मिनट गुजर जाते। इस शब्द को कहकर प्रत्येक व्यक्ति थोड़ा झुकता जाता और दूसरों को देखता जाता कि वे भी झुक रहे हैं या नहीं। अन्त में जब सब बैठ जाते तो "थाकू" नये सभासद को चीनी हुक्का देता। उसके एक हाथ में हुक्का रहता और दूसरे में कागज की बत्ती, जिससे हुक्का को पिया जाता है। हुक्का पी लेने पर "थाकू" एक पुस्तक में से सभा के नियम, उपनियम पढ़ने लगता, जिन्हें नये सदस्य को पूरी तरह स्वीकार करना होता था। इस नियमों का स्वरूप बहुत कुछ इस प्रकार का होता था—

(१) आज से मैं इस भ्रातृ-भाव की सभा का सभासद होता हूँ।

(२) मैं गम्भीरता के साथ सच्चे हृदय से प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं सभा का कोई रहस्य प्रकाशित नहीं करूँगा। यदि मैं ऐसा करूँ तो "थाकू" को जो इच्छा हो वही दण्ड मुझे दे।

(३) आज से मैं सभा के प्रत्येक सभासद को उसकी उम्र, विद्या और दर्जे के अनुसार अपना बड़ा या छोटा भाई समझूँगा।

(४) आज से मैं "थाकू" को अपना सबसे बड़ा भाई समझूँगा और उसे अपना आध्यात्मिक पथ-प्रदर्शन भी मानूँगा। मैं प्रण करता हूँ कि उसकी आज्ञा का पूर्णतः पालन करूँगा और उसके आदेशानुसार कार्य करूँगा।

(५) जिस समय सभा के किसी सभासद को आर्थिक या शारीरिक सहायता की आवश्यकता होगी उस समय मैं उसकी सहायता करने का प्रयत्न करूँगा। इस प्रकार की सहायता देने में यदि अपने प्राण भी देने पड़ेंगे तो भी मैं कुछ संकोच न करूँगा।

(६) यदि किसी सभासद पर अदालत में कोई सच्चा या झूठा मुकदमा चलेगा तो मैं अपनी सामर्थ्य भर उसे छुड़ाने का प्रयत्न करूँगा। या तो मैं स्वयं उसका गवाह बन जाऊँगा या दूसरों को उसका गवाह बनने के लिये प्रेरित करूँगा।

(७) मैं गम्भीरता के साथ प्रण करता हूँ कि मैं देश के शत्रुओं का जड़-मूल से सफाया करने का प्रयत्न करूँगा। चाहे यह कार्य मुझे अकेले करना पड़े या अन्य सदस्यों के साथ मिलकर।

(८) यदि अपना कर्त्तव्यपालन करने में किसी सभासद की मृत्यु हो जाये तो मैं तन-मन-धन से उसके परिवार की सहायता करूँगा।

(९) यदि मेरे सामने किसी सभासद पर कोई अन्य व्यक्ति आक्रमण करेगा तो मैं तुरन्त उस शत्रु के मुकाबले में अपने भाई का साथ दूँगा। अगर आवश्यक होगा तो उसका सिर काट लूँगा।

(१०) यदि कोई मुझ पर या सभा के किसी सभासद पर चोट करेगा तो जब तक उसका पूरी तरह बदला न ले लूँगा तब तक मैं चैन से न बैठूँगा।

(११) यदि सभा के नियमों के अनुसार मैं अपना कर्त्तव्यपालन न करूँ तो "थाकू" और अन्य सभासद मुझे मुनासिब सजा दें।

फिर ये सब बातें एक कागज पर लिखकर उसे जला दिया जाता और उसकी राख एक शराब जैसे पेय पदार्थ के प्याले में डाल दी जाती। नया सभासद अपने वचनों के प्रमाणस्वरूप उसे पी जाता। अपनी सचाई के प्रमाणस्वरूप वह दूसरा कार्य यह करता कि अपनी उँगली को एक सुई से छेदता और उसमें से दस-बीस बूँद खून निकालकर चाय में मिला देता। उस चाय को वह तथा अन्य सब सदस्य मिलकर पीते।

इसके पश्चात् अन्तिम परीक्षा की वारी आती। तीन-चार बहुत भारी तलवारें जो भुजाली की आकृति की होती थीं बहुत महीन डोरों से लटका दी जातीं, और नये सदस्य को उनके नीचे इस प्रकार खड़ा कर दिया जाता जिससे उनकी नौकें उसकी गर्दन से छूती रहतीं। "थाकू" एक मुट्ठी चावल लेकर कुछ मन्त्र पढ़ता फिर उनको बड़े जोर से तलवारों की ओर फेंकता। इससे वे तेजी से इधर-उधर हिलने लगतीं। यदि वह सभासद डर जाता या घबड़ा जाता तो सब लोग यह समझ लेते कि यह कच्चा आदमी है और जो प्रतिज्ञायें इसने अभी की हैं उनका पालन न कर सकेगा। इस कारण उसे भरती करने से इन्कार कर दिया जाता।

कभी-कभी ऐसा भी होता कि एकाध डोरा टूट जाता और तलवार आदमी की पीठ पर गिर पड़ती। इससे उसको बहुत चोट लग जाती और कभी वह मर भी जाता।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसे अवसर पर अन्य सभासद उससे सहानुभूति दिखाने के बजाय उल्टा क्रोधित होते और कहने लगते कि इसका हृदय शुद्ध नहीं है । उनका विश्वास था कि सच्चे आदमी पर ऐसी विपत्ति नहीं आती । इसलिये वे तुरन्त उसे बाहर निकाल देते और यदि वह इस तलवारों की परीक्षा में अच्छी तरह उत्तीर्ण हो जाता, तो एक भोज होता । तब "थाकू" उसका एक नया नाम रखता और सभा के कुछ गुप्त संकेत उसे बताता, जिससे आवश्यकता पड़ने पर वह सभा के कार्यों में भाग ले सके । उपर्युक्त नियम और सभासद बनाने की प्रणाली सर्वत्र एक-सी नहीं थी । विभिन्न प्रान्तों में ऐसी सभाओं के नियमों में अन्तर होना सम्भव था ।

चीन में नवीन क्रान्ति का आरम्भ

बाक्सर विद्रोह में चीनी शासकों की गहरी हार और बदनामी हो जाने से सनयातसेन को अपने क्रान्तिकारी कार्यक्रम को आगे बढ़ाने का मौका मिला । चीनी सरकार और हाँगकाँग के अंग्रेज अधिकारी तो उनको आने नहीं देते थे, इसलिये वे जापान में बैठकर ही चीन में विद्रोह खड़ा करने की तैयारी करने लगे । उन्होंने सहायता भेजकर क्रांगटन और फूकीन के समुद्री नगरों पर हमला करने की योजना बनाई । इसके अनुसार देशभक्तों के एक बड़े दल ने उक्त नगरों पर धावा किया पर कुछ असावधानी हो जाने के कारण सफलता प्राप्त न हो सकी ।

यद्यपि विद्रोहियों की प्रथम योजना असफल हो गई, परन्तु देश में चैतन्यता की एक नवीन लहर उत्पन्न हो गई । सरकार को भी कुछ होश आया और शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन किया गया । पीकिंग में एक विश्वविद्यालय की स्थापना की गई और चीनी विद्यार्थियों के लिये विदेशों में जाकर पढ़ने की व्यवस्था भी की गई । इस समय विद्यार्थियों में काफी उत्साह फैल गया था और कई कॉलेज देशप्रेमी नवयुवकों के केन्द्र बन गये । सन् १९०२ में नानकिंग कॉलेज के विद्यार्थियों ने हड़ताल की, जिसमें प्रोफेसर भी सम्मिलित थे । इनमें से जो सरकारी अधिकारियों के आदेश से निकाले गये उन्होंने अपना एक पृथक् कॉलेज स्थापित किया, जिसका नाम "देश प्रेम करो कॉलेज" था ।

डॉ. सनयातसेन इस बीच जापान में रहकर अपना प्रभाव बढ़ा रहे थे, ताकि दूसरी बार क्रान्ति का उद्योग अधिक कारगर तरीके से किया जा सके । सन् १९०३ में बहुत कुछ तैयारी करके वे विश्व-भ्रमण के लिये निकले, ताकि संसार के कुछ राष्ट्रों की सहानुभूति अपने कार्य के लिये प्राप्त कर ली जाये । सबसे पहले वे फ्राँसीसी दूतावास के निमन्त्रण पर अनाम पहुँचे । वहाँ कई बड़े अफसरों से उनका परिचय हुआ और धनी चीनी व्यापारियों से मित्रता करके उनको अपने संगठन का सदस्य बनाया । वहाँ से वे हवाई द्वीप गये, और छः मास तक चीनी जनता में क्रान्ति के अग्रदूत की हैसियत से उनका उत्साहपूर्वक स्वागत किया जाता था । जब वे हवाई द्वीप से अमेरिका के लिये रवाना होने वाले थे उसी समय रूस-जापान संग्राम छिड़ गया । जिससे यात्रा करने में रुकावट पड़ गई । परन्तु ये अपने को जापानी बताकर चालाकी से अमेरिका पहुँच ही गये । इनके अमेरिका आने की सूचना पहले ही समाचार-पत्रों में प्रकाशित हो चुकी थी, पर ये कई सप्ताह तक जनता की नजर से छिपे रहे । कारण यह था कि उसी समय चीन के राजकुमार किसी उत्सव के उपलक्ष्य में अमेरिका आये थे और चीनी व्यापारी बड़ी शान-शौकत से उनका स्वागत कर रहे थे । राजकुमार नहीं चाहते थे कि इस अवसर पर सनयातसेन उनके विरुद्ध कुछ कहने लगे । इसलिये जब राजकुमार अमेरिका से रवाना होने को जहाज पर बैठ गये तभी अमेरिकन अधिकारियों ने सनयातसेन को बाहर आने दिया ।

उस समय और भी एकाध चीनी नेता विदेशों में चीन के शासन-सुधारों के सम्बन्ध में आन्दोलन कर रहे थे, पर सनयातसेन का क्रान्तिवाद उनसे कहीं अधिक प्रभावशाली था । वे जहाँ कहीं जाते वहीं चीन के मंचू सम्राट के विरुद्ध जोर-शोर से प्रचार करते । अमेरिका स्थित चीनी राजदूत इनके आन्दोलन से घबड़ा गया और उसने सूचना प्रकाशित की कि जो कोई चीन निवासी सनयातसेन के संगठन में भाग लेगा उसके घर वालों को चीन में कैद कर लिया जायेगा । परन्तु लोग इससे भी न डरे और सनयातसेन का कार्य बराबर बढ़ता रहा ।

"रिवोल्यूशनरी ब्रदरहुड" की स्थापना

इस प्रकार अमेरिका और यूरोप के विभिन्न देशों में अपने विचारों तथा संस्था का प्रचार करते हुए और वहाँ पर निवास करने वाले चीनियों को अपना सहायक बनाते हुए सनयातसेन १९०५ में सिंगापुर के रास्ते जापान लौटे । उस समय जापान, रूस को हरा चुका था । चीन सरकार से देश निकाले की सजा पाकर चीन के हजारों नवयुवक जापान चले आ रहे थे । जापान की विजय से इन चीनी देश-भक्तों को भी बड़ा प्रोत्साहन मिला । सनयातसेन ने इन लोगों को संगठित करके "रिवोल्यूशनरी ब्रदरहुड" नाम की संस्था बनाई जो पूर्णरूप से क्रान्तिकारी थी । इसने अपने चार उद्देश्य निश्चित किये थे—(१) चीन से मंचू वंश के शासन को हटाना, (२) चीन को चीनियों के लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुरक्षित रखना, (३) प्रजातन्त्र स्थापित करना, (४) भूमि के वितरण में समानता का भाव रखना ।

इस संगठन ने कुछ समय पश्चात् चीन में क्रान्तियों की धूम मचा दी । सन् १९०६ में हूनन प्रान्त की सीमा पर विद्रोह हुआ । यद्यपि प्रधान कार्यालय ने इसके लिये आदेश नहीं दिया था, लेकिन लोगों ने जोश में आकर बगावत खड़ी कर दी । जब इसके लिये धन की आवश्यकता हुई तो सनयातसेन कैण्टन में चन्दा जमा करने लगे । सरकार को इसका पता लग गया और सनयातसेन को नदी के रास्ते से भागना पड़ा । वे अपने दो मित्रों के साथ अनाम चले गये । यहाँ फ्रांस सरकार इनकी सहायता करने लगी । फ्रांसीसी अफसर चीनी क्रान्तिकारियों को युद्ध की शिक्षा देने लगे । समिति की जापान स्थिति शाखा को हथियार भेजने का आदेश दिया गया । परन्तु वहाँ के कार्यकर्त्ताओं में आपस में फूट हो गई थी, इससे कोई उत्तर ही नहीं मिला । फिर भी सन् १९०७ और १९०८ में चीन में जगह-जगह विद्रोही युवक आक्रमण करने का प्रयत्न करते रहे । सनयातसेन के सहयोगी हुएनसींग ने युवकों में एक नारा चलाया, जिसका आशय था—"मरने के लिये साहस करो ।" कुछ समय बाद फिर क्रान्ति का उद्योग किया पर तब भी जापान से समय पर हथियार नहीं मिले और सरकारी सेना से मुकाबला होने पर विद्रोही पहाड़ों में जा छिपे ।

लेकिन अब क्रान्ति की आग अच्छी तरह भड़क उठी थी । सनयातसेन के बीस वर्ष के अनवरत उद्योग और कष्ट सहन ने चीन की करोड़ों जनता को उसका प्रशंसक और अनुयायी बना दिया था । प्रवासी चीनियों ने सदैव धन द्वारा उनकी भरपूर मदद की । सनयातसेन के प्रचार के फलस्वरूप अधिकांश चीनी जनता के हृदय में मंचू सम्राटों के विरुद्ध घोर घृणा पैदा हो गई थी और वह हर तरह की कुर्बानी करके भी उनके सिंहासन को उलट देने का निश्चय कर चुकी थी ।

सन् १९११ में हुएनसींग ने फिर एक क्रान्तिकारी सेना तैयार की जिसके सदस्यों ने देशोद्धार के लिये प्राण देने की शपथ ग्रहण की । इन्होंने कैण्टन पर हमला किया और सरकारी फौज के साथ पाँच घण्टे तक बड़ी वीरता से लड़ते रहे । उनके पास केवल पिस्तौलें और छोटे बम थे, इसलिये सरकारी सैनिकों की रायफलों से उनका काफी नुकसान हुआ । युद्ध समाप्त होने पर ४३ नवयुवक मरे पाये गये । हुएनसींग शेष साथियों को लेकर अन्यत्र चला गया । क्रान्तिकारियों ने अनेक सरकारी इमारतें नष्ट कर दीं । यह क्रान्ति २९ मार्च को हुई थी, इसलिये जब चीन में राष्ट्रीय प्रजातन्त्र शासन की स्थापना हुई तो इस दिन को प्रतिवर्ष राष्ट्रीय छुट्टी की तरह मनाया जाने लगा । इसका आशय यह था कि चीनी-क्रान्ति का श्रीगणेश सनयातसेन के सहयोगी हुएनसींग ने किया, यद्यपि उसके सफल होने में कुछ समय लगा और आगे चलकर उसमें तरह-तरह के परिवर्तन भी होते रहे ।

इस दृष्टि से चीन वालों के लिये यह २९ मार्च का दिन वैसा ही है जैसा हमारे यहाँ २६ जनवरी का बन गया है, जबकि सन् १९३० में कांग्रेस की तरफ से देश की स्वाधीनता की घोषणा की गई और उसके लिये सैकड़ों छोटे-बड़े नेताओं ने जेल यात्रा की । यद्यपि स्वराज्य प्राप्त करने के लिये देश को सन् १९४२ में "अंग्रेजो भारत छोड़ो" आन्दोलन करना पड़ा जिसमें लाखों व्यक्तियों को अभूतपूर्व कुर्बानियाँ करनी पड़ीं, तो भी २६ जनवरी का महत्त्व बना ही रहा और उसे आज तक सम्पूर्ण राष्ट्र में "स्वाधीनता दिवस" के रूप में बड़े उत्साह से मनाया जाता है । महत्त्वपूर्ण अवसरों पर बाधाओं के होते हुए कर्तव्यपालन का ऐसा ही प्रभाव होता है, चाहे उस समय वह प्रकट में सामान्य ही क्यों न जान पड़े ।

सरकार का आत्म-समर्पण

चीन सरकार पर भी सनयातसेन के आन्दोलन का प्रभाव कम नहीं पड़ा था । यद्यपि वह उनकी गिरफ्तारी की आज्ञा देती रही, पर दूसरी ओर विवश होकर वह जनता को सन्तुष्ट करने के लिये सुधारों की घोषणा भी करने लगी थी । सन् १९०९ में विभिन्न प्रान्तों में व्यवस्थापिका सभायें बनाई गईं और १९१० में राष्ट्रीय व्यवस्थापिका सभा की पहली बैठक हुई । इसमें निश्चय किया गया कि सन् १९१३ तक एक पूर्ण अधिकार प्राप्त पार्लियामेण्ट का संगठन कर दिया जाये । पर सनयातसेन की पार्टी इन दिखावटी बातों से सतुष्ट नहीं हुई । उसका आन्दोलन जारी रहा । शीघ्र ही हैंकाऊ के सरकारी गुप्त-शस्त्रागार में बम विस्फोट हुआ, जिसके लिये उसी समय प्रान्तीय शस्त्रागार से हथियार चुराते हुए आठ सैनिक पकड़े गये जिनको तुरन्त प्राणदण्ड दे दिया गया । बस यही देशव्यापी क्रान्ति का सिग्नल था । सरकारी सेना ने क्रान्तिकारियों के साथ मिलकर खुल्लम-खुल्ला विद्रोह कर दिया । वायसराय का महल बम से उड़ा दिया गया और उसे राजधानी छोड़कर भागना पड़ा । दूसरे दिन शस्त्र तैयार करने वाले कारखाने पर कब्जा कर लिया गया । क्रान्तिकारी कमेटी ने घोषणा-पत्र निकाला कि इसी प्रकार समस्त प्रान्तों में विद्रोह करके वहाँ राष्ट्रीय शासन कायम कर देना चाहिये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अब पीकिंग की सरकार घबड़ाई और उसने सुधारवादी नेता "युआन शिकाई" को वायसराय बनाकर देश को पूर्ण वैधानिक अधिकार देने तथा अपराधियों को क्षमा प्रदान करने की घोषणा की पर अब ऐसे वायदों का समय बीत चुका था और जनता में शासकों के प्रति रोष की भावना उमड़ रही थी । इसलिये क्रान्ति की लहर एक नगर से दूसरे नगर में बड़ी तेजी के साथ फैलने लगी । नानकिंग में दोनों दलों में बहुत बड़ा युद्ध हुआ और शीघ्र ही वह विद्रोहियों के अधिकार में आ गया । कुछ ही दिनों में १३ प्रान्त स्वतन्त्र होकर विद्रोहियों से मिल गये । इस पर नाबालिग सम्राट के पिता ने जो इस समय रीजेंट का कार्य कर रहा था अपना अधिकार त्याग कर युआन शिकाई को शासन का पूर्ण अधिकार दे दिया ।

इधर सनयातसेन के अनुयायी देशव्यापी क्रान्ति करके सरकार को स्थान-स्थान पर हरा रहे थे, उधर वे स्वयं अमेरिका में दौड़-धूप करके क्रान्तिकारी सरकार का संचालन करने के लिये धन इकट्ठा कर रहे थे । वहीं पर उनको तार मिला कि "हैंकाऊ में क्रान्ति हो गई शीघ्र ही रुपया भेजिये । बूचंग में बागी लोग तैयार हैं ।" जब तक उन्होंने आर्थिक सहायता भेजी तब तक संसार के समाचार-पत्रों में यह सम्वाद प्रकाशित हो गया—"चीन में सनयातसेन की आज्ञा से क्रान्ति हो गई । विद्रोही प्रजातन्त्र स्थापित कर रहे हैं जिसके प्रथम प्रेसीडेण्ट सनयातसेन होंगे ।"

यह समाचार पढ़कर सनयातसेन चुपचाप अमेरिका से इंग्लैण्ड के लिये रवाना हो गये, क्योंकि वे चीन के प्रजातन्त्र शासन को इंग्लैण्ड के नमूने पर ही बनाना चाहते थे । इंग्लैण्ड पहुँचते ही उनको अपने देशवासियों का संदेश प्राप्त हुआ—"चीन लौट आओ, तुमको चीनी प्रजातन्त्र का प्रेसीडेण्ट निर्वाचित किया गया है ।" वे ११ नवम्बर, १९११ को लन्दन से रवाना होकर २४ दिसम्बर को शंघाई पहुँच गये । दूसरे ही दिन संसार में यह खबर फैल गई कि सनयातसेन ने नियमानुसार प्रेसीडेण्ट पद की शपथ ग्रहण कर ली ।

पर इस समय चीन के दो भाग हो गये थे । दक्षिण के प्रान्तों ने तो स्वाधीनता की घोषणा करके सनयातसेन को राष्ट्रपति बनाया था, जिनकी राजधानी नानकिंग में थी । उधर उत्तरी चीन में अभी तक बालक सम्राट गद्दी पर बैठा था और वहाँ के बहुसंख्यक व्यक्ति तथा राजवंशीय नेतागण क्रान्तिकारी पद्धति तथा साम्यवादी आन्दोलन के विरुद्ध थे । इस समय शासन का भार युआनशिकाई को मिल चुका था, जो क्रान्तिकारियों से लड़ने के बजाय समझौता करके काम चलाना चाहता था । उसने तथा उसके साथियों ने यह प्रचार करना आरम्भ किया कि "सनयातसेन शासन कार्य से अनभिज्ञ हैं, इसलिये प्रेसीडेण्ट होने के योग्य नहीं माने जा सकते । वह तो एक गरीब डॉक्टर है जिसने पेट पालने के लिये किसी तरह चिकित्सा विज्ञान तथा औषधियों का सामान्य ज्ञान प्राप्त कर लिया है । वह शासन-संचालन, राजाओं, सम्राज्यों के विषय में क्या जान सकता है ?"

पर ऐसे लोग यह भूल जाते थे कि सनयातसेन वह व्यक्ति था जिसने तीस वर्ष तक देशोद्धार के लिये घोर परिश्रम तथा आत्म-त्याग करके क्रान्ति का मार्ग तैयार किया । उसने इस कार्य में कभी किसी प्रकार का स्वार्थ भाव नहीं रखा, न कभी प्राणों का मोह किया । उसने चीन में क्रान्ति की भावना फैलाने के लिये जितना कष्ट सहन किया है उसका दूसरा उदाहरण मिल सकना कठिन है । ऐसे महान् पुरुष जब राज्य के किसी उच्च पद के संचालक बनाये जाते हैं तो उनके लिये यह आवश्यक नहीं होता कि वे उस पद की ट्रेनिंग पहले प्राप्त करें । हमारे देश का उदाहरण भी इस सम्बन्ध में आँखें खोलने वाला है । यद्यपि पं. जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, बाबू राजेन्द्र प्रसाद ने कभी शासन कार्य नहीं किया था, पर जब उनको भारतवर्ष जैसे बड़े देश की बागडोर सँभालनी पड़ी तो उन्होंने आरम्भ से ही वे कार्य कर दिखलाये जिससे संसार के बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ और कूटनीतिज्ञ दंग रह गये ।

सनयातसेन का महान त्याग

लेकिन सनयातसेन के मार्ग में और भी कई बाधायें ऐसी थीं जिनसे चीन का शासन-संचालन कठिन था । एक तो अपने देश का दो हिस्सों में बँटा रहना ही उनको बड़ा हानिकारक और अशोभनीय जान पड़ता था, दूसरे राज्य-कार्य के लिये कोई नियत कोष (खजाना) न था । ऐसे अवसरों पर लोग प्रायः अन्य राष्ट्रों से कर्ज लेकर काम चलाया करते हैं, पर चीन की अस्थिर और डाँवाडोल दशा को देखकर कोई विदेशी कर्ज देने को तैयार न हुआ । इतने पर भी जब सनयातसेन ने देखा कि उन्हीं के कुछ देशवासी स्वार्थवश या अज्ञानता के कारण उनका विरोध कर रहे हैं तो उसका मन शासन-संचालन से हट गया । उन्होंने आज तक जो कुछ कार्य किया था देशसेवा के लिये परोपकार बुद्धि से किया था । स्वार्थपरायणता का उनमें लेशमात्र भी अंश न था अन्यथा वे सदा जो लाखों रुपया चन्दा आन्दोलन के लिये इकट्ठा करते रहते थे उसमें से यदि अपने लिये जमीन-जायदाद बनाकर आराम से जीवन गुजारने लग जाते तो उनसे कोई कुछ कहने वाला न था पर उनको तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आरम्भ से ही एक ही धुन थी कि किसी प्रकार चीन को जागृत और स्वावलम्बी बनाकर संसार के अन्य प्रगतिशील देशों के समकक्ष खड़ा किया जाये । इसके लिये उन्होंने अपने समस्त सुख-सुविधाओं का ख्याल छोड़ दिया था और वर्षों तक एक देश से दूसरे देश में मारे-मारे फिरते रहे । उन्होंने अपने उद्देश्य के लिये जितना कष्ट सहन किया उतना बहुत कम राजनीतिक नेताओं ने किया होगा ।

पर जब युआनशिकाई ने यह कहा कि सनयातसेन शासन-कार्य चला सकने में असमर्थ हैं और उन्हें अपने पद से स्तीफा दे देना चाहिये, तो इस कथन का प्रतिकार करने के बजाय उन्होंने युआन को तार भेजा कि "आपके लिये मैं अपना पद छोड़ने को तैयार हूँ, पर इसमें शर्त यह है कि आप राजतन्त्र से सम्बन्ध त्याग कर प्रजातन्त्र की शपथ लें और सम्राट पर दबाव डालें कि वह राजगद्दी छोड़ दे ।"

युआन इसके उत्तर में कुछ दिन तक तो चुप्पी साधे रहा । पर जब उसने देखा कि चारों तरफ उपद्रव बढ़ता ही जाता है तो उसने एक तार सनयातसेन के पास भेजा कि "इन दिनों सम्राट की आज्ञानुसार मुझे शासन के पूर्ण अधिकार प्राप्त हैं, पर मैं उनको तुच्छ समझता हूँ, मेरी दृष्टि में भी प्रजातन्त्र ही शासन का सर्वश्रेष्ठ रूप है, जैसा कि सारा संसार मानता है । मैं राजतन्त्र के अधिनायक पद से त्याग-पत्र देता हूँ ।"

इस पत्र को पाकर सनयातसेन को हार्दिक प्रसन्नता हुई क्योंकि उनका लक्ष्य एक-मात्र देशोन्नति ही था । उन्होंने नानकिंग की शासन-सभा को अपना त्याग-पत्र भेजते हुए लिखा—"आज मैं अपना त्याग-पत्र इसलिये भेज रहा हूँ कि आप लोग एक अनुभवी व्यक्ति को प्रेसीडेण्ट चुनें । चीन-सम्राट के त्याग-पत्र तथा उत्तरी और दक्षिणी चीन की एकता का श्रेय श्री युआनशिकाई को है । उन्होंने प्रजातन्त्र में अपना विश्वास प्रकट किया है, इस कारण मैं चाहता हूँ कि वे ही राष्ट्रपति निर्वाचित किये जायें ।"

सनयातसेन की आज्ञा को शिरोधार्य कर दूसरे दिन लोगों ने युआन को प्रेसीडेण्ट चुन लिया । पर उनका विश्वास अब भी सनयातसेन पर था । वे जानते थे कि देश को गृह-युद्ध की विभीषिका से बचाने कि लिये उन्होंने यह महान त्याग किया है । इससे जनता की श्रद्धा उनके प्रति और भी बढ़ गई और उन्होंने अपने मन में समझ लिया कि चीन में अगर कोई सच्चा देश-भक्त नेता है तो वह सनायत सेन ही है ।

युआन की धोखेबाजी

परन्तु युआन पुराने तरीके का दकियानूसी व्यक्ति था । वह राजनीति में किसी प्रकार की धूर्तता, असत्य, बेईमानी को बुरा नहीं समझता था । आरम्भ में तो उसने सनयातसेन को पीकिंग बुलाकर उनका शाही ठाट-बाट के साथ स्वागत किया और राजमाता द्वारा उनका प्रीतिभोज दिलवाया । इस प्रीतिभोज के अगुवा वे ही राजकुमार पुलन थे, जिन्होंने अमेरिका यात्रा के समय सनयातसेन को तीन सप्ताह तक सेनफ्रॉसिस्को में ही रुकवा दिया था जिस समय सनयातसेन ने युआन शिकाई से बातें कीं तो उनके दिमाग में सबसे बड़ी समस्या रेलवे मार्ग के विकास की थी । युआन ने भी इसे पसन्द किया और सनयातसेन को रेलवे-विभाग का प्रधान बना दिया ।

पर युआन तो स्वभाव से ही स्वेच्छाचारी शासक थे, और अब प्रजातन्त्र में उस स्वच्छन्दता पर रोक लग गई थी । प्रधान सचिव टाँग-वी से जो साम्यवादी था, बात-बात में उनका मतभेद हुआ करता था । इससे अप्रसन्न होकर प्रधान सचिव ने इस्तीफा दे दिया और युआन ने एक ऐसे व्यक्ति को सचिव बना दिया जो काम की दृष्टि से बिल्कुल निकम्मा था ।

रेल-विस्तार की योजना ठीक करके सनयातसेन जापान गये जहाँ ३००० चीनी विद्यार्थियों ने उनका स्वागत किया । कुछ समय बाद उनको समाचार मिला कि युआन शिकाई की स्वच्छन्दता के कारण चीन में गड़बड़ी फैल रही है और ऐसेम्बली उसके कार्यों का विरोध कर रही है । यांगटिसी प्रान्त से असन्तोष फैलने के समाचार मिले और फिर बूचंग नामक नगर में दंगा हो गया । युआन ने विपक्षी दल के तीन गवर्नरों को बर्खास्त कर दिया । यह सब देखकर सनयातसेन ने युआन को तार भेजा कि "आप अपने पद को त्याग दीजिये । आपने राष्ट्र का उत्तरदायित्त्व पूरा करने के लिये पद ग्रहण किया था, लेकिन आपके कारण देश में असन्तोष बढ़ता जाता है ।"

युआन पर ऐसी सच्ची बातों का क्या प्रभाव पड़ सकता था ? वह तो ऐसा राजनीतिक खिलाड़ी था जो फौरन रंग बदल लेते हैं । त्याग-पत्र देना तो दूर उसने सनयातसेन को रेलों का डायरेक्टर जनरल के पद से हटा दिया और स्वयं एकतन्त्र शासक बन बैठने की योजना बनाने लगा । युआन उनका विरोधी बन गया और इसलिये सनयातसेन को फिर देश से बाहर रहना पड़ा ।

कौमिंगटांग का संगठन

कौमिंगटांग चीन की एक पुरानी संस्था थी जो राजनीतिक कार्यों में भाग नहीं लेती थी लेकिन युआन के राष्ट्रपति होने पर इसके सदस्य राजनीतिक कार्यों की तरफ ध्यान देने लगे । वे मुख्यत: युआन के शासन के विरोधी थे । सन् १९१३ में उसने इस संस्था को गैर-कानूनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

घोषित कर दिया और उसके ३०० सदस्यों को पार्लियामेण्ट से निकाल दिया। यह देखकर सनयातसेन ने जापान में कौमिंगटांग का नया संगठन किया और उसे पूरी तरह क्रान्तिकारी संस्था बना दिया। आगे चलकर यही कौमिंगटांग चीन की शासनकर्त्ता बनी और आज भी चांगकाई शेक की अध्यक्षता में फारमोसा पर उसी का शासन है।

सन् १९१४ वाले यूरोपियन युद्ध में यूरोपियन राष्ट्र चीन को भी उसमें भाग लेने की प्रेरणा दे रहे थे पर सनयातसेन का विचार था कि चीन को इस समय अपने घर की भीतरी हालत का सुधार करना चाहिये, युद्ध में फँसने से उसका नाश हो जायेगा। इसलिये उन्होंने इंग्लैण्ड के प्रधानमन्त्री लायड जार्ज को एक पत्र लिखा कि "इंग्लैण्ड ने मेरे जीवन की रक्षा की थी, जिसके लिये मैं कृतज्ञ हूँ। मैं अपने देश का भक्त तथा इंग्लैण्ड का मित्र होने की हैसियत से यह कहना चाहता हूँ कि आपकी तरफ से चीन को युद्ध में शामिल कराने की जो कोशिश हो रही है, वह चीन और इंग्लैण्ड दोनों के लिये हानिकारक सिद्ध होगी।"

सन् १९२१ में पीकिंग की सरकार ने इनको निमन्त्रण भेजा पर चीन की गन्दी राजनीति से असन्तुष्ट होने के कारण ये वहाँ नहीं गये। इस पर इनके ही अनेक सदस्य इनसे असन्तुष्ट हो गये। उसी समय मौका देखकर एक विरोधी जनरल ने इनकी शासन सभा पर हमला कर दिया। ये शहर से भागकर एक जहाज पर ५६ दिन तक छिपे रहे। उस समय एक मात्र चांगकाई शेक ही, जो उस समय एक नवयुवक सैनिक अफसर था, वह उनका सहायक बना रहा।

जब रूस में क्रान्ति होकर लेनिन की अध्यक्षता में श्रमजीवी शासन की स्थापना हो गई तो उनका ध्यान कम्युनिज्म की तरफ गया और उन्होंने चीन को उसी मार्ग पर चलाने का निश्चय किया, पर राजनीतिक संघर्षों से वे ऊब गये थे और चीन में दलबन्दी से भी काम करने में बड़ी कठिनाइयाँ जान पड़ती थीं। इसलिये वे मुख्य रूप से लिखकर अपना प्रचार-कार्य करने लगे। चीन में प्रजातन्त्र की असफलता पर उन्होंने लिखा—"प्रथम क्रान्तिकारी लहर ने जब चीन को व्याप्त कर दिया था तब मेरे मन में कैसी हलचल मची थी, कितनी खुशी हुई थी? पर जब क्रान्ति हो जाने पर मैंने देश को वैधानिक विकास की तरफ ले जाना चाहा तो मेरे मित्रों ने कहा—"कार्य करना कठिन होता है और कहना सरल।" "लोगों की ऐसी मनोवृत्ति के कारण अभी तक चीन के पुनर्संगठन का कार्य कुछ भी आगे नहीं बढ़ सका है। इससे मेरे मनोभाव कुचल गये हैं, मेरी दृढ़ इच्छा शक्ति का हनन हो गया है।"

सन् १९२३ में रूस का एक विशेष राजनीतिज्ञ "राडोल्फ जौफे" चीन आया। सनयातसेन के साथ उसकी बहुत बातचीत हुई और अन्त में दोनों इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि "चीन में अभी बोल्शेविक ढंग का संगठन सफल नहीं हो सकता, क्योंकि वह अभी साम्यवाद के लिये तैयार नहीं हो सका है। उसकी पहली समस्या एकता तथा पूर्ण स्वतन्त्रता की है।" जौफे ने सनयातसेन को विश्वास दिलाया कि रूस की चीन के प्रति हार्दिक सहानुभूति है और वह रूस की सहायता पर विश्वास कर सकता है।

उन्हीं दिनों हाँगकाँग विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के सम्मुख भाषण करते हुए उन्होंने कहा—"ब्रिटिश और अमेरिकन जाति बड़ी चालाक होती है। परन्तु इन देशों में भी सामाजिक क्रान्ति की लहर फैली हुई है। सामाजिक क्रान्ति के लिये राजनैतिक क्रान्ति से अधिक त्याग की आवश्यकता है। समाजवाद, लोकतन्त्र तथा राष्ट्रीयता के अनुसार कार्य करने का समय आ गया है। इन्हीं सिद्धान्तों को कार्यरूप में परिणित करने से जनता की उन्नति होगी परन्तु इसके लिये जब बहुत अधिक त्याग किया जायेगा तभी सफलता मिल सकेगी।"

सनयातसेन अब साठ वर्ष के लगभग हो चुके थे। यह आयु बहुत अधिक न थी, पर जीवन भर कठिन संघर्ष तथा अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने के कारण अब उनके शरीर में थकावट आ गई थी और उत्साह भी क्षीण पड़ता जाता था पर उस हालत में भी उन्होंने अपनी सेना का संगठन रूस के आदर्श पर किया और चांगकाई शेक को सैनिक शिक्षा प्राप्त करने के लिये रूस भेजा। जब वे वहाँ से वापस आये तो उनके साथ कुछ रूसी अफसर भी थे। ली-यॉंग के नेतृत्व में मजदूर और किसान संघों का संगठन भी होने लगा।

सन् १९२४ में राष्ट्रवादियों ने पीकिंग सरकार की नीति से असन्तुष्ट होकर बालक सम्राट को उसके पद से हटा दिया और सम्पूर्ण चीन को एक संगठन में लाने की बातचीत होने लगीं। सनयातसेन को भी इसमें बुलाया गया। वहाँ पर उनको नई सरकार के पुनर्संगठन की समस्याओं पर विचार करने में इतना परिश्रम करना पड़ा कि वे बीमार पड़ गये। तुरन्त ही उनको चीन के सर्वश्रेष्ठ अस्पताल "यूनियन मेडिकल कॉलेज" में भेज दिया गया। उनका ऑपरेशन करने पर मालूम हुआ कि जिगर में जहरीला फोड़ा हो गया है। डॉक्टर ने उनके मित्रों को सूचित कर दिया कि यह अच्छा नहीं हो सकता और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सनयातसेन अधिक दिन जीवित न रह सकेंगे । अस्पताल में उनकी स्त्री, पुत्र तथा पुत्री ने यथाशक्ति सेवा की । मरते समय उन्होंने सबसे विदा लेकर यह आशा व्यक्त की कि "भविष्य में सोवियत संघ और चीनी प्रजातन्त्र मिलकर संसार के दलित वर्ग का उद्धार करेंगे ।"

सनयातसेन की मृत्यु के पश्चात् उनके उत्तराधिकारी चांगकाई शेक का प्रभाव निरन्तर चीन के राजनीतिक क्षेत्र में बढ़ता गया और कुछ ही समय बाद वह समस्त चीन का एकमात्र शासक बन गया । यद्यपि समय की गति को देखकर उसने अपने सम्बन्ध रूस की अपेक्षा अमेरिका से अधिक सुदृढ़ बनाये और उसकी सहायता से अपनी सैनिक शक्ति की निरन्तर वृद्धि करता रहा । वह युग रूस और अमेरिका की प्रतियोगिता का था और दोनों ही अपने प्रभाव क्षेत्र को बढ़ाने की चेष्टा कर रहे थे । चांगकाई शेक की पत्नी भी अमेरिका में शिक्षा प्राप्त कर चुकी थी और राजनीतिक क्षेत्र में उसका दबदबा था । इस कारण चीन का शासन नाम मात्र के लिये सनयातसेन द्वारा स्थापित "कौमिंगटांग" संस्था के अन्तर्गत रहते हुए भी अपने संस्थापनकर्त्ता के आदर्शों से बहुत दूर चला गया था ।

दूसरे महायुद्ध के आरम्भ होते ही जापान ने चीन पर आक्रमण किया । यद्यपि चांगकाई शेक ने उसका मुकाबला बड़े साहस से किया और अमेरिका ने भी उसकी अच्छी तरह मदद की, पर जापान की तूफानी चाल के आगे उसे बिल्कुल पीछे हट जाना पड़ा और सन् १९४१-४२ में चीन पर जापानी शासन हो गया लेकिन जब जर्मनी के हार जाने से अमेरिका और इंग्लैण्ड का पलड़ा भारी हो गया तो जापान को लाचार होकर चीन खाली कर देना पड़ा । दो-चार वर्ष तक उसकी स्थिति डाँवाडोल रही, पर फिर मंगोलिया के साम्यवादी दल ने, जिनका नेता माओत्सेतुंग था, चांगकाई शेक को हटाकर चीन पर अपना अधिपत्य जमा लिया ।

सनयातसेन न तो धनी थे और न अधिक विद्वान । इस दृष्टि से उनकी तुलना गाँधी जी से की जा सकती है पर उनमें निःस्वार्थता और देशभक्ति का गुण चरम सीमा पर पहुँच गया था । उन्होंने अनेक आन्दोलनों को सफल बनाया, पर स्वयं पद लेने की इच्छा कभी नहीं की । जब लोगों ने ही कोई दूसरा सुयोग्य व्यक्ति न देखकर कार्यभार उनके कंधों पर डाल दिया तभी उन्होंने कोई पद स्वीकार किया । यदि हम अपने मौजूदा पदलोलुप नेताओं से उनकी तुलना करें तो जमीन-आसमान का अन्तर जान पड़ता है । वास्तव में सच्चे देश और समाज सेवक में अलोलुपता का गुण होना परमावश्यक है, अन्यथा स्वार्थपरता का भाव सब करे-धरे पर पानी फेर देता है ।

भारतवर्ष में इस समय राजनीतिक स्वराज मिल जाने पर भी सामाजिक सुधारों की समस्या बड़ी कठिन सिद्ध हो रही है । यह कार्य मौजूदा पदलोलुप और कमाई करने वाले राजनीतिक नेताओं से नहीं हो सकता । इस उद्देश्य की पूर्ति वे ही कर सकते हैं जिन्होंने धर्मनीति और अध्यात्म को अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया है । यदि हमारे यहाँ के नेता और कार्यकर्त्ता डॉ. सनयातसेन के जीवन से शिक्षा ग्रहण करके निःस्वार्थ भाव से देश सेवा करने लगें तो जनता का बड़ा कल्याण हो सकता है ।

जन-क्रान्ति के अध्वर्यु : महापुरुष लेनिन

रूस की राज्यक्रान्ति हो चुकी थी । वहाँ का सम्राट अपने परिवार सहित जेल के सींखचों में बन्द था । कई महीनों से वहाँ 'सोशल डैमोक्रेट दल' वालों का शासन कायम था जिसके हटाने की चेष्टा 'सोशल रिवोल्यूशनरी' (कम्युनिस्ट) पार्टी वाले कर रहे थे । अन्त में उनको सफलता मिली और ७ नवम्बर, १९१७ को उन्होंने कुछ सेनाओं को अपने पक्ष में करके रूस की राजधानी पैट्रोग्राड पर अधिकार कर लिया । पर यह बात कहने में जितनी सरल थी करने में वैसी न थी । देश में चारों तरफ अभी क्रान्ति विरोधी लोग भरे पड़े थे जो जरा-सा भी मौका पाने पर सिर उठाने और नई सरकार का तख्ता उलट देने को तैयार थे । ऐसी अवस्था में अपनी स्थिति को जल्दी से जल्दी मजबूत बनाना क्रान्तिकारी नेताओं का कर्त्तव्य था । इसलिये जिस दिन कम्यूनिस्ट पार्टी ने शासन-सत्ता अपने हाथ में ली उसी दिन शाम को उनके नेता लेनिन ने 'क्रान्सटेड' किले में रहने वाली सेना के अधिकारी से टेलीफोन द्वारा बातें कीं । इस बात-चीत को शार्टहैण्ड द्वारा उस समय ज्यों का त्यों लिख लिया गया था और वह क्रान्तियुग की कठिन परिस्थितियों को समझने का बड़ा अच्छा साधन है । जब लेनिन के सेक्रेटरी ने टेलीफोन को 'क्रान्सटेड' से मिलाया तो एक व्यक्ति की आवाज सुनाई दी जिसने अपने को 'सोशल रिवोल्यूशनरी' दल का मन्त्री बतलाया । सेक्रेटरी ने उससे कहा—"लेनिन नवीन क्रान्तिकारी सरकार की तरफ से आपसे बातें करना चाहते हैं ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"बहुत अच्छा, वह क्या कहना चाहते हैं ?"

इस पर लेनिन ने रिसीवर अपने हाथ में लेकर कहा—"क्या आपको स्थल और जल सेना की डिस्ट्रिक्ट कमेटी की तरफ से बातचीत करने का अधिकार है ?"

क्रान्सटेड से बोलने वाले ने उत्तर दिया—"अवश्य ।"

"क्या आप शीघ्र ही समुद्र में सुरंग बिछाने वाले जहाजों और रणपोतों को पैट्रोग्राड भेज सकते हैं ?"

"इसका पता जल सेना के अधिकारी से लगेगा । मैं उनको आपसे बातें करने को बुलाता हूँ ।"

"हम चाहते हैं कि अधिक से अधिक जितने सैनिक आप भेज सकते हैं, पैट्रोग्राड भेज दें । पर वे ऐसे हों जो हमारे दृढ़ पक्षपाती हों । ऐसे कितने आदमी आपके पास हैं ?"

"पाँच हजार, हम उनको इसी समय पैट्रोग्राड भेज सकते हैं ।"

"आपके पास जो कुछ आने-जाने के साधन मौजूद हैं, उनके द्वारा आप जल्दी-जल्दी किस समय तक सेना को यहाँ पहुँचा देने का वायदा करते हैं ?"

"चौबीस घण्टे में ।"

"क्या आपके पास लड़ाई का पूरा सरंजाम और भोजन सामग्री मौजूद है ?"

"हाँ हमारे पास खाने-पीने का बहुत-सा सामान है । यहाँ ३५६ मशीन गनें और कुछ बड़ी तोपें भी हैं जिनको हम आपके काम के लिये भेज सकते हैं ।"

लेनिन ने खुश होकर कहा—"तब मैं आपसे सोवियत सरकार के नाम पर कहता हूँ कि आप सेना को फौरन रवाना कर दें । आप जानते हैं कि यहाँ नई सरकार की स्थापना हो गई है । इस सम्बन्ध में 'क्रान्सटेड' की स्थानीय सोवियत का भाव कैसा है ?"

"वह इस खबर को सुनकर बड़ी खुश है ।"

"तब आप पैदल सेना को पूरे सरंजाम के साथ बिना देर लगाये रवाना करने का इन्तजाम करें ।"

दूसरे दिन ठीक समय पर 'क्रान्सटेड' की सेना पैट्रोग्राड आ पहुँची और उस समय से बराबर लेनिन की नई सरकार की सबसे बड़ी सहायक बनी रही ।

बड़े भाई को प्राणदण्ड

जिस लेनिन (जन्म १८७०) को रूसी राज्यक्रान्ति की रक्षा की इतनी अधिक चिन्ता थी और जिसको सफल बनाने में उसने अपना जीवन दे दिया, वह सच्चे अर्थों में रूस की श्रमजीवी क्रान्ति का निर्माता था । उसने जब से होश सँभाला निरन्तर जनता के अधिकारों और गरीबों के उद्धार की लगन उसको लगी रही । इसका एक कारण यह भी हुआ कि उसका बड़ा भाई अलेक्जैण्डर भी क्रान्तिकारी था और विद्यार्थी अवस्था में ही उसने कार्लमार्क्स की एक पुस्तक का रूसी भाषा में अनुवाद किया था । सन् १८८७ में उसने जार की हत्या के षड़यन्त्र में प्रमुख भाग लिया । पकड़े जाने पर उसने अदालत के सामने कहा—"रूस के वर्तमान निरंकुशतापूर्ण शासन में गुप्त हत्याओं के सिवाय और किसी उपाय से राजनीतिक सुधार नहीं हो सकता । मुझे मृत्यु का डर नहीं है । मेरे बाद अवश्य ही अन्य लोग आगे बढ़ेंगे और एक दिन जारशाही को जड़मूल से उखाड़कर फेंक देंगे ।" उस समय अलेक्जैण्डर को इस बात की कल्पना भी न होगी कि उसका छोटा भाई ही उसकी इस मनोकामना को पूरा करेगा ।

पर लेनिन उस सत्तरह वर्ष की अवस्था में भी जनक्रान्ति के महत्त्व और शक्ति को समझता था । अपने भाई का इस प्रकार असामयिक अन्त होने से उसके हृदय को बड़ा तीव्र धक्का लगा और वह सदा के लिये जारशाही का दुश्मन बन गया । पर साथ ही उसने यह भी अनुभव किया कि यह षड़यन्त्र और गुप्त हत्याओं का मार्ग सही नहीं है । उस अवसर पर उसके मुँह से निकला—"नहीं, यह रास्ता ठीक नहीं है, हम इस पर चलकर सफलता नहीं पा सकते ।" उसी समय से वह उस नवीन पथ का पथिक बन गया जो उसकी समझ में रूस को जार की निरंकुश सत्ता से मुक्त कराने के लिये कारगर था ।

इसमें सन्देह नहीं कि किसी भी देश के स्वाधीनता आन्दोलन में उचित मार्ग चुनने का भी बड़ा महत्त्व है । यदि ऐसा न किया जाये तो प्रकट में बड़ा परिश्रम, त्याग, कष्ट सहन करते हुए भी हम अपनी शक्ति को बर्बाद करते रहते हैं और प्रगति मार्ग पर बहुत ही कम अग्रसर हो पाते हैं । हमारे देश की हालत इस समय बहुत कुछ ऐसी ही दिखाई पड़ती है। सभी राजनीतिक कार्यकर्त्ता अपने-अपने रास्ते को सही और प्रभावशाली बतलाते हैं और उसके लिये एक नई पार्टी अथवा संस्था बनाकर अपनी ढाई चावल की खिचड़ी अलग पकाना ही महत्त्वपूर्ण मानते हैं। पर वास्तव में लेनिन के समान व्यक्ति समस्त राष्ट्र में दो-चार ही होते हैं जो समय की गति को बिल्कुल ठीक समझ सकते हैं और अनुकूल विधान बना सकते हैं। हमारे देश में महात्मा गाँधी इसी श्रेणी में थे और इसलिये उन्होंने असम्भव को सम्भव करके दिखा दिया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जैसे ही लेनिन अपने नगर की पढ़ाई समाप्त करके काजन यूनीवर्सिटी में शिक्षा प्राप्त करने पहुँचा वह क्रान्तिकारी विद्यार्थियों की सभा का सदस्य बन गया । यूनीवर्सिटी के अधिकारी उससे पहले ही नाखुश थे, क्योंकि वह जार की हत्या की चेष्टा करने वाले का भाई था और यह उनकी दृष्टि में ऐसा अक्षम्य अपराध था जिसका कोई प्रायश्चित हो ही नहीं सकता । परिणाम यह हुआ कि उसे यूनीवर्सिटी में दाखिल हुए पूरा एक महीना भी नहीं हुआ था कि उसे समारा प्रान्त में निर्वासित कर दिया गया । इस प्रकार सत्रह वर्ष की आयु में वह पहली बार सरकार द्वारा दण्डित किया गया । समारा में उसे दो वर्ष तक रहना पड़ा और इस बीच में उसने अत्याचार पीड़ित किसानों की दशा और मनोभावों का अध्ययन किया, ग्रामों की समस्या पर मनन किया, कानून का कोर्स पढ़ा और कार्लमार्क्स के 'कैपिटल' तथा अन्य साम्यवादी ग्रन्थों का भी ध्यानपूर्वक अवलोकन किया ।

दो वर्ष व्यतीत हो जाने पर लेनिन समारा से वापस आकर पीटर्सवर्ग पहुँचा और वहाँ उसने प्राइवेट तौर पर कानून की परीक्षा पास की । उसने सरकारी नियम के अनुसार वकालत भी की—पर केवल दस-बीस दिन । इस समय उसके सामने एक तरफ वकालत से खूब धन कमाने और बड़े लोगों की तरह आराम से रहने का प्रलोभन था और दूसरी ओर क्रान्तिकारी आन्दोलन में पड़कर जन्म भर दरिद्रता, कष्ट और खतरे का जीवन व्यतीत करना था । ऐसा अवसर राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं के सामने प्रायः आया ही करता है । बहुसंख्यक व्यक्ति ऐसे अवसर पर निर्बलता का परिचय देकर उच्च आदर्शों से पतित हो जाते हैं । पर लेनिन अपने जीवन का लक्ष्य बहुत पहले निश्चित कर चुका था, इसलिये उसको अपना कार्यक्रम बनाने में कुछ भी कठिनाई न पड़ी । उसने बिना किसी प्रकार की हिचकिचाहट के सुख-वैभव के मार्ग को लात मार दी और पूरी तरह से जन-आन्दोलन में कूद पड़ा ।

श्रमजीवी आन्दोलन

लेनिन का सम्बन्ध यद्यपि आरम्भ से ही क्रान्तिकारी दल से था और उसके बड़े भाई के बलिदान के कारण भी उस दल के प्रमुख व्यक्ति उसको अपना साथी मानते थे । पर जैसे ही उसने मजदूरों के संगठन की बात मुँह से निकाली उस पर चारों तरफ से आक्षेप होने लगे । वह जिस किसी क्रान्तिकारी से मार्क्स के सिद्धान्तों के अनुसार काम करने को कहता वही उसे मूर्ख और स्वप्न देखने वाला बनाता । ऐसे लोगों का कहना था कि रूस कृषि प्रधान देश है और यहाँ मजदूरों की तादाद बहुत थोड़ी है । इसलिये इस देश में मार्क्स के सिद्धान्तों के अनुसार काम किया जा सकना सम्भव नहीं ।

पर लेनिन इस प्रकार से न तो घबड़ाया और न अपने मार्ग से विचलित हुआ । उसने पीटर्सवर्ग के कुछ समझदार मजदूरों को तलाश करके उनको अपना साथी बनाया और 'श्रमजीवियों के उद्धारक संघ' की स्थापना की । इन्हीं दिनों उसने कारखानों में मजदूरों पर होने वाले जुर्माने के सम्बन्ध में एक पुस्तिका प्रकाशित कराई । इसमें बतलाया गया था कि किस प्रकार छोटे-छोटे इल्जामों पर मजदूरों की पूरे महीने की तनख्वाह जब्त कर ली जाती है । किस प्रकार दिन के समय फाटक से बाहर जाने, मालिक से रुपया माँगने, दस-बीस मिनट देर से आने पर भारी-भारी जुर्माने किये जाते हैं । लेनिन की यह पुस्तिका भी सदा की भाँति अत्यन्त सीधी भाषा में सरल ढंग से लिखी गई थी और अशिक्षित मजदूर भी उसे भली प्रकार समझ सकते थे । इसलिये सभी श्रमजीवियों ने उसे बहुत पसन्द किया और वे उसके प्रशंसक बन गये । लेनिन मजदूरों के अन्य कष्टों, जैसे ओवरसियरों द्वारा मजदूरों के पीटे जाने, पीने के लिये पानी की कमी, अधिक समय तक काम कराये जाने आदि के सम्बन्ध में भी आन्दोलन करता था । उसने ऐसी शिकायतों के पर्चे मिट्टी से बने लेथो प्रेस में छपवाकर गुप्त रीति से कारखानों में बाँटे । यद्यपि जमाने के बदल जाने से आज हमको ये बातें बहुत साधारण जान पड़ती हैं, पर उस समय इन्हीं उपायों से लेनिन ने एक बिल्कुल नये और विशाल आन्दोलन की जड़ जमा दी ।

कारखानों में दोपहर की छुट्टी के समय लेनिन नियमपूर्वक मजदूरों के क्लबों में जाकर व्याख्यानों द्वारा उनमें अपने सिद्धान्तों का प्रचार करता था । शाम के समय छुट्टी होने के बाद भी वह उनसे मिलता था और उनके कारखानों के हालचाल निजी जीवन और साथियों के सम्बन्ध में पूछताछ करता था । इस प्रकार वह सदा श्रमजीवियों की वास्तविक दशा का पता लगाने में सचेष्ट रहता था । मजदूरों के जीवन की नित्य-प्रति की घटनायें ही उसके लिये तर्कों और दलीलों का काम देती थीं और इनके द्वारा उसके व्याख्यानों का जो प्रभाव पड़ता था वह बड़े-बड़े ग्रन्थों के सैकड़ों प्रमाणों से भी बढ़कर होता था । वह अपने श्रोताओं से सदा उन्हीं की बोली में बातें करता था और अन्य व्याख्यानदाताओं की तरह लच्छेदार साहित्यिक भाषा से काम नहीं लेता था । इस कारण उसके श्रोताओं की संख्या दिन पर दिन बढ़ने लगी और वे उसे अपना सच्चा हितैषी मानने लगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ समय पश्चात् लेनिन ने जर्मनी की यात्रा का निश्चय किया जिससे वहाँ के श्रमजीवी आन्दोलन और मज़दूर-संगठनों के विषय में पूरी जानकारी प्राप्त कर सके और उसके आधार पर रूस में भी श्रमजीवी आन्दोलन को सुदृढ़ बना सके। जर्मनी में वह वहाँ के नेताओं से मिला, श्रमजीवियों की सभाओं में सम्मिलित हुआ, व्याख्यान सुने, संगठन-प्रणाली को अच्छी तरह समझा और अन्त में उसे विश्वास हो गया कि वह भी किसी दिन इसी प्रकार स्वतन्त्र रूप में रूस के श्रमजीवी दल का संचालन कर सकेगा।

जर्मनी से जेनेवा जाकर वह रूस के निर्वासित श्रमजीवी नेता प्लेखनोव से मिला। वह रूस का सबसे पहला श्रमजीवी क्रान्तिकारी नेता था। उसने सबसे पहला क्रान्तिकारी भाषण जो ६ दिसम्बर १८७६ को पीटर्सवर्ग की एक सड़क पर दिया था। उसके हाथ में लाल झण्डा था जो उस समय वहाँ एक नई चीज थी। यह झण्डा क्रान्ति का सन्देशवाहक था। पुलिस नये रंग को देखकर चौकन्नी हो गई और उसने डण्डा चलाकर भीड़ को हटा दिया प्लेखनोव भी रूस के पुराने क्रान्तिकारी दल 'नैरोडार्नकी' का सदस्य था, पर उसके विचार गुप्त-हत्याओं के विरुद्ध थे। उसकी सम्मति में इस तरीके से थोड़े से फल के लिये बहुत बड़ा बलिदान करना पड़ता था। उपर्युक्त घटना के कुछ ही समय बाद वह विदेश चला गया और वहीं से एक पैम्फलेट प्रकाशित करके रूस में श्रमजीवी क्रान्ति का प्रतिपादन किया।

प्लेखनोव से मिलकर लेनिन को बड़ा सन्तोष हुआ, क्योंकि इस समय रूस में उसके श्रमजीवी कार्यक्रम का समर्थन करने वाला कोई बड़ा नेता न था। इधर प्लेखनोव और उसके सहकारियों पर भी लेनिन के व्यक्तित्व का बड़ा प्रभाव पड़ा। उन्होंने उसमें वह सच्चाई और व्यावहारिकता देखी जो दूसरे लोगों में नहीं पाई जाती थी। प्लेखनोव के पास रूस के इस तरह के क्रान्तिकारी हमेशा आते रहते थे, पर वे सब या तो किताबों में लिखी बातों को तोते की तरह रट लेने वाले होते थे या मनमाने काल्पनिक सिद्धान्तों के मानने वाले। उस समय लेनिन को देख प्लेखनोव के मित्र मारटोव के मन में जो धारणा हुई, वह उसने किसी लेख में इस प्रकार प्रकट की थी—

प्लेखनोव और मैं बहुत दिनों से मार्क्स के सिद्धान्तों का प्रचार कर रहे थे, पर अभी तक हमको कुछ भी सफलता प्राप्त नहीं हुई थी। थोड़े से साम्यवादी हमसे भेंट करने को रूस से आया करते थे, वे ही हमारे समर्थक थे। पर उनका राजनीतिक ज्ञान इतना अल्प था कि उनसे किसी प्रकार की आशा रखना व्यर्थ था। इसलिये जब तक लेनिन से हमारा साक्षात्कार न हुआ तब तक हमको सदा चिन्ता ही बनी रही। इतने दिनों बाद उसे देखकर हमने आपस में कहा कि "अब रूस का श्रमजीवी आन्दोलन मजबूत हाथों में पहुँच गया। अब उसे एक ऐसा व्यवहार कुशल नेता प्राप्त हो गया जो उसके योग्य है।" यह स्मरण रखना चाहिये कि उस समय लेनिन की अवस्था केवल २५ वर्ष की थी अर्थात् जिस आयु में हमारे नवयुवक प्रायः कॉलेज की साधारण पढ़ाई और फैशन, मनोरंजन, सैर-सपाटा अथवा अन्य हानिकारक व्यसनों में संग्लन रहते हैं, लेनिन ने देशव्यापी महत्त्व प्राप्त कर लिया था और भविष्य में उसकी महान् सफलताओं की सम्भावना बड़े-बड़े अनुभवी नेता भी प्रकट करने लगे थे। यद्यपि लेनिन को आगे चल कर बड़ी-बड़ी कठिनाइयों में जीवन व्यतीत करना पड़ा, पर अपनी सत्यनिष्ठा के बल से अन्त में उसने अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लिया।

गुप्त प्रेस और अखबार

विदेश से लौटने पर अपने दल के प्रचार कार्य तथा संगठन को मजबूत बनाने के लिये लेनिन को एक अखबार की आवश्यकता जान पड़ी। रूस की सीमा के भीतर ऐसा अखबार प्रकट रूस से निकाल सकना सर्वथा असम्भव था। इसलिये पीटर्सवर्ग के बाहर मजदूरों की बस्ती में एक गुप्त छापाखाना खोला गया। जिस मकान में यह छापाखाना था उसका बाहरी दुनिया से कोई भी सम्बन्ध न था। हम अपने देश के तपस्वियों की बातें सुनते रहते हैं जो गर्मी में कुछ घण्टे धूनी तप लेते हैं या व्रत आदि करके काया कष्ट सहन करते हैं। पर इस मकान में जो लोग रहते थे वे बिना किसी प्रकार के लाभ की आशा के दिन रात परिश्रम तो करते ही थे, उनको सदा उसी एकान्त स्थान में बन्द रहकर ही महीनों और वर्षों का समय गुजारना पड़ता था। वे न कभी सूर्य के प्रकाश के दर्शन कर पाते थे न प्रकृति के सुन्दर दृश्यों को देख सकते थे। उनको सदा सीसे के कणों से भरी गन्दी हवा में सांस लेना पड़ता था जिसका कुप्रभाव स्पष्टतः स्वास्थ्य पर पड़ता था। उनको इस बात का भी ध्यान रखना पड़ता था कि पड़ोसियों को उन पर किसी प्रकार का शक पैदा न हो जाये। इसलिये वे अपनी ऊपरी रहन-सहन भले आदमियों की तरह रखते थे। कागज के बंडल चुपके से मकान के भीतर खींच लिये जाते थे और छपे हुए अखबार भी उसी तरह बिना जरा भी शब्द किये सड़क पर पहुँचा दिये जाते थे। लेनिन अखबार की एक-एक लाइन को ध्यानपूर्वक देखता था। उसे इस कार्य में पड़ने वाली प्रत्येक कठिनाई का पूरी तरह ज्ञान था और वह उसको हल करने का उपाय करता रहता था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सरकार से मुठभेड़

जिस समय लेनिन ने रूस के श्रमजीवियों के संगठन का कार्य आरम्भ किया उस समय इस आन्दोलन की क्या दशा थी और उसने किस प्रकार धीरे-धीरे उसकी शक्ति बढ़ाई इसका वर्णन लेनिन की पत्नी क्रुप्सकाया ने जो स्वयं भी पहले से क्रान्तिकारी आन्दोलन की सदस्या थी, "लेनिन की स्मृतियाँ" नामक पुस्तक में बड़े रोचक ढंग से किया है—

"लेनिन सन् १८९३ में पीटर्सबर्ग आया। उस समय मेरा उससे परिचय न था। मैंने सुना था कि "वोलगा" प्रान्त से मार्क्स का एक शिष्य आया है कुछ महीनों बाद एक उत्सव में मेरी उससे भेंट हुई पर उस समय भी कोई विशेष बात नहीं हो पाई। सन् १८९४ के अन्तिम महीनों में वह पीटर्सबर्ग की श्रमजीवी बस्ती में जाकर प्रचार कार्य किया करता था। मैं भी वहीं पर एक स्कूल में अध्यापिका थी, इसलिये मुझे श्रमजीवियों के जीवन का काफी पता था। प्रत्येक रविवार को लेनिन अपने गुप्त-दल के सदस्यों के सामने भाषण देकर लौटते समय मेरे पास आता और हम लोगों में श्रमजीवी आन्दोलन के सम्बन्ध में बहुत सी बातें होती रहती थीं।"

"हम लोगों को श्रमजीवियों के साथ अधिक मिलते-जुलते देखकर पुलिस को सन्देह हो गया और हम पर निगरानी रखने लगी। इससे बचने के लिये हमको भी चालाकी से काम लेना पड़ता था। लेनिन इस काम में बड़ा दक्ष था। उसे उन तमाम मकानों का पता था। जिनमें दो तरफ होकर निकलने के रास्ते थे। वह पुलिस के जासूसों की आँखों में धूल झोंकने की बीसियों तरकीबें जानता था। उसने हमको किताबों के भीतर अदृश्य स्याही से अथवा अक्षरों के नीचे बिन्दु लगाकर चिट्ठियाँ लिखना सिखलाया। उसी ने हम लोगों के नकली नाम रखे। जब पुलिस वाले हमारा पीछा बहुत अधिक करने लगे तो लेनिन ने कहा कि हममें से एक व्यक्ति को उसकी गिरफ्तारी के बाद काम करने को चुन लेना चाहिये, जिसे सब बातों का भेद मालूम हो। उस समय राजनीतिक दृष्टि से मैं सबसे अधिक विश्वस्त समझी गई और इसलिये लेनिन की सहकारी नियत की गई।"

"सन् १८९५ के आरम्भ में जब लेनिन विदेश से लौटकर आया तो पुलिस के जासूस दिन-रात उसका पीछा करने लगे। मुझे इसका पता अपनी चचेरी बहिन से लगा और मैंने लेनिन को इसकी खबर दी। अब वह और भी सावधानी से काम करने लगा। विभिन्न स्थानों के आन्दोलन के लिये पृथक् दल बनाये गये। इसी समय मजदूरों में प्रचार के गुप्त पर्चे निकालने का निश्चय किया गया। आरम्भ में ये पर्चे हाथ से लिखकर निकाले जाते थे, जिनको मजदूरों ने बहुत पसन्द किया।"

लेनिन की गिरफ्तारी

९ दिसम्बर, १८९५ को लेनिन गिरफ्तार कर लिया गया। पुलिस उसे बहुत दिनों से पहचानती थी, पर उसे उसका खानदानी नाम 'ब्लैडीमिर उलियानोव" ही मालूम था। नये नाम लेनिन का उसे पता न था। अन्त में कारखानों में यह अनुमान किया गया कि वहाँ जो असंख्यों पर्चे बाँटे जा रहे हैं उनका लेखक लेनिन और यह 'उलियानोव' एक ही व्यक्ति है। इसी आधार पर उसे गिरफ्तार कर लिया गया। पर उसने जेल में पहुँचकर भी अपना काम बन्द नहीं किया। हवालाती कैदियों को बाहर से इच्छानुसार पुस्तकें मँगाकर पढ़ने की सुविधा थी। वह जेल में पुस्तकें मँगाकर और उनके अक्षरों के नीचे बिन्दु लगा कर अपना सन्देश बाहर वाले कार्यकर्त्ताओं को भेजता रहता था। वह दूध से लिखी हुई चिट्ठियाँ भी भेजा करता था। जेल वालों को तो उनमें कुछ दिखाई न देता था पर उसके साथी उनको गरम पानी में डुबाकर मतलब की बात मालूम कर लेते थे। चिट्ठी लिखते समय पकड़ में न आ सके इसके लिये वह रोटी में दूध भरकर लिखा करता था। जैसे ही कोई वार्डर दरवाजा खोलता वह रोटी को मुँह में रख लेता था। उसने एक बार लिखा था कि आज मैंने छः रोटी निगलीं। कुछ दिनों बाद उसे छोड़ दिया गया। क्योंकि पुलिस उसके खिलाफ कोई अभियोग सिद्ध न कर सकी।

साइबेरिया में निर्वासन

इसके कुछ समय बाद पीटर्सबर्ग के कपड़ा बनाने वाली मिलों के पैंतीस हजार मजदूरों ने अकस्मात् हड़ताल कर दी। उनकी माँग थी कि काम करने के घण्टे १३ से घटाकर १०.५ कर दिये जाये। एक बार तो पुलिस के दमन तथा अधिकारियों के झूठा वायदा कर देने से मजदूर काम पर लौट गये, पर जब वायदा पूरा न किया गया तो हड़ताल पुनः आरम्भ की गई। काम करने के घण्टे १३ से घटाकर १०.५ कर दिये गये।

लेनिन और उसकी गुप्त सभा ने इस अवसर पर काफी प्रचार-कार्य किया और जोशीले पर्चों द्वारा मजदूरों के उत्साह को काफी समय तक कायम रखा। इसके परिणामस्वरूप एक हजार मजदूरों के साथ लेनिन को भी गिरफ्तार किया गया और कोई खास अपराध सिद्ध न होने पर भी तीन वर्ष के लिये उसे साइबेरिया में निर्वासन का दण्ड दिया। उच्च न्यायालय के जजों ने अपने फैसले में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहा कि ऐसे असाधारण विचार वाले व्यक्तियों का जनता के बीच रहना अवांछनीय है, उनके लिये उपयुक्त निवास स्थान साइबेरिया का बर्फिस्तान ही है । इस आदेश के अनुसार उसे शुसेनिस्क नामक गाँव में जाकर नजरबन्दी का जीवन बिताना पड़ा । यह स्थान पीटर्सवर्ग से कई हजार मील के फासले पर रूस और चीन की सीमा पर और सभ्य जगत् से बिल्कुल बाहर घोर जंगली और सुनसान इलाके में अवस्थित था ।

साइबेरिया उस जमाने में रूस का 'काला पानी' समझा जाता था । जारशाही का विरोध करने वाले राजनैतिक कैदियों को प्रायः वहीं सजा भोगने के लिये भेजा जाता था । निर्वाह सम्बन्धी कठिनाइयों और एकान्त में रहने के कारण सैकड़ों व्यक्ति पागल हो जाते थे । अनेक लोग जेलों में दिये जाने वाले कष्टों के कारण आत्महत्या की चेष्टा में अपने को घायल कर लेते थे, कितने ही जीवित जल जाते थे, कितने ही भूखों रहकर मर जाते थे और कितने ही जेल के अधिकारियों पर हमला करके उनके हाथों प्राण दे देते थे । इस प्रकार के असंख्यों बलिदानों और आन्दोलनों के पश्चात् इनकी दशा में कुछ सुधार हुआ और एक सीमित क्षेत्र के भीतर आने-जाने की अनुमति उनको दी जाने लगी ।

शुसेनिस्क के एक छोटे से घर में लेनिन नजरबन्दी का जीवन व्यतीत करने को पहुँचा । वहाँ ठण्ड इतनी अधिक पड़ती थी कि रात के समय शरीर का खून जम-सा जाता था । कुत्तों के भौंकने से अच्छी तरह नींद आ सकना असम्भव था । रास्ते सुनसान पड़े रहते थे और उनमें आदमियों के बजाय सूअर, बतखें और अन्य जानवर ही अधिक दिखलाई पड़ते थे । वहाँ के असली निवासी बिल्कुल जंगली थे और उनका जीवन अपरिवर्तनशील था । ऐसे एकान्त स्थान में जहाँ बात करने को एक भी प्राणी न हो और न जहाँ कोई सुख-दुःख का हाल पूछने वाला हो, एक शिक्षित और सभ्यता की गोद में पले व्यक्ति का जीवन असहनीय हो जाना स्वाभाविक ही था । पर लेनिन के दिमाग में इतने अधिक विचार भरे हुए थे और उसे अध्ययन की इतनी प्रबल आकांक्षा थी कि वह अपना तमाम वक्त इसी में खर्च कर देता था । इसलिये जिस प्रकार अन्य राजनीतिक कैदी वहाँ मर-खप जाते थे वैसी कोई घटना लेनिन के साथ नहीं हुई, वरन् उसने वहाँ रहते हुए दो उपयोगी पुस्तकें लिखीं जो आगे चलकर श्रमजीवी आन्दोलन के कार्यकर्त्ताओं के लिये बड़ी प्रेरणादायक सिद्ध हुईं । इस प्रकार उसने अपने उदाहरण से सिद्ध कर दिया कि मनस्वी और कर्मठ व्यक्ति किसी भी दशा में क्यों न रहे वह समाज-सेवा का कोई-न-कोई उपयोगी कार्य कर ही सकता है ।

निर्वासन में पत्नी का सहयोग

शुसेनिस्क में लेनिन के पहुँचने के कुछ समय बाद उसकी पत्नी क्रुप्सकाया भी अपनी माँ के साथ वहीं पर आ गई । हड़ताल के सम्बन्ध में उसको 'उफा' प्रान्त में तीन साल के निर्वासन का दण्ड दिया गया था, पर जब उसने कहा कि लेनिन के साथ मेरा विवाह सम्बन्ध निश्चित हो चुका है तो उसे शुसेनिस्क में रहने की आज्ञा मिल गई । रूस के अधिकांश क्रान्तिकारियों की भाँति इन दोनों की शादी भी हुई थी । क्रान्तिकारी दल में जिन दो युवक युवतियों के विचार परस्पर में मिलते हुए होते वे अपनी एक 'मण्डली' बना लेते थे । धीरे-धीरे उनमें घनिष्ठता होती जाती थी और एक दिन अकस्मात् उनको पता लगता था कि वे पति-पत्नी बन गये । अनेक क्रान्तिकारी युवक-युवतियाँ धोखा देने के लिये या घर वालों से छुटकारा पाने के लिये अपने को पति-पत्नी बतला देते थे, यद्यपि उनमें आजन्म इस प्रकार का कोई सम्बन्ध स्थापित नहीं होता था ।

क्रुप्सकाया के पहुँचने पर लेनिन का जीवन-क्रम अधिक व्यवस्थित हो गया क्योंकि ये दोनों माँ बेटी घर की व्यवस्था कर लेती थीं और लेनिन को अध्ययन और लिखने-पढ़ने का काम करने का पूरा अवसर मिल जाता था । वह यहाँ रहकर भी रूस के श्रमजीवी आन्दोलन और राजनीतिक परिवर्तनों का पता रखता था । वह गुप्त रूप से अपनी कमेटी वालों को हिदायतें देकर आन्दोलन को जीवित रखे हुए था, यद्यपि समय-समय पर कार्यकर्त्ताओं की गिरफ्तारी के कारण वह अव्यवस्थित ढंग से ही चल पाता था तो भी इसका यह परिणाम हुआ कि जब तीन वर्ष बाद वह निर्वासन से लौटकर आया तो उसे काम आरम्भ करने में अधिक समय बर्बाद न करना पड़ा । वहीं पर उसने रूस के श्रमजीवी आन्दोलन को ठीक से चलाने के लिये एक नियमित अखबार निकालने की योजना भी बनाई ।

लेनिन ने जो कानून का अध्ययन किया था वह 'शुसेनिस्क' में कार-आमद हुआ । वह फुरसत के समय में वहाँ के किसानों, मजूदरों आदि से मिलता रहता था और उन्हें मुकदमों तथा अन्य शिकायतों के सम्बन्ध में सलाह-मशविरा दिया करता था । इससे वह लोगों में 'वकील' के नाम से मशहूर हो गया और दूर-दूर के किसान उससे सलाह लेने के लिये आने लगे । इससे अनेक लोगों का बड़ा उपकार हो जाता था और वे सरकारी कर्मचारियों के अन्याय से बच जाते थे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विदेश से क्रान्तिकारी पत्र का प्रकाशन

सन् १९०० में जब लेनिन निर्वासन से लौटकर आया तो फिर श्रमजीवी आन्दोलन में लग गया। पर उसे उचित मार्गदर्शन के अभाव से चारों ओर मतभेद और दलबन्दी के दर्शन हुए। सब लोग बड़े जोरदार भाषण देते थे और तरह-तरह की योजनायें तैयार करते थे, पर इस बात का पता किसी को न था कि काम कैसे शुरू किया जाये ? पर लेनिन ऊपरी जोश से अलग रहकर परिस्थिति का ध्यानपूर्वक निरीक्षण कर रहा था। वह रात-रात भर षड्यन्त्रकारियों की मीटिंग में सम्मिलित होकर वाद-विवाद में भाग लेता था, पर सुबह जब वह वहाँ से बाहर निकलता तो पुलिस के किसी जासूस को उस पर जरा भी शक नहीं होता था क्योंकि उसमें उन चिह्नों में से एक भी दिखलाई नहीं देता था, जो प्रायः क्रान्तिकारियों में पाये जाते थे। उसके सर पर न तो बालों का गुच्छा-सा था, न उसके हाथ में कागजों से भरा हैण्डबैग लटकता रहता था, न वह लम्बा-सा चुगा पहिनता था और न उसमें कोई अन्य सनकीपन की बात देखने में आती थी। वह ठीक वैसा ही दिखलाई पड़ता था जैसा कि रूस का एक साधारण भला आदमी।

थोड़े ही दिनों में लेनिन को मालूम हो गया कि वह पीटर्सवर्ग में रहकर कोई काम नहीं कर सकता। आपस का मतभेद और विभिन्न विचार वालों के नेतृत्व के झगड़े इतने बढ़ गये थे कि किसी उपयोगी आन्दोलन का चल सकना असम्भव था। इसलिये उसने उस क्रान्तिकारी अखबार को प्रकाशित करने की योजना में ही लग जाना ठीक समझा जिसकी योजना निर्वासन काल में उसके दिमाग में आ चुकी थी। इस प्रकार का अखबार रूस की सीमाओं के भीतर निकाला ही नहीं जा सकता था, क्योंकि यहाँ पग-पग पर सरकार और उसकी पुलिस की बाधा मौजूद थी जिससे कोई व्यक्ति निश्चित भाव से पत्र का कार्य कदापि नहीं कर सकता था।

इसके पहले भी अनेक लोगों ने विदेश से ऐसे पत्र निकाले थे पर वे शीघ्र ही बेकार और बन्द हो गये। कारण यह था कि वे लोग रूस से अपना सम्बन्ध कायम रख सकने में असमर्थ हो गये। इसलिये लेनिन ने निश्चित किया कि पत्र को आरम्भ करने से पहले रूस में एक ऐसा संगठन बनाया जाये, जिसके द्वारा नियमित रूप से वहाँ की खबरें मिलती रहें और अखबार के बाँटे जाने का पक्का प्रबन्ध हो सके यद्यपि उसका विचार उसे विदेश में छपाने का था, पर उसके लिये ऐसी व्यवस्था बनाना चाहता था कि जिससे मालूम हो कि वह पीटर्सवर्ग से प्रकाशित होता है।

इस उद्देश्य से 'स्कोव' नामक कस्बे में लेनिन के दल के लोगों की एक कॉन्फ्रेन्स की गई जिसमें पत्र को प्रकाशित करने का निश्चय किया गया। उसका नाम 'इस्क्रा' (चिनगारी) रखा गया। निश्चय हुआ कि उसकी नीति बिल्कुल स्पष्ट रहेगी और प्रत्येक अंक पर यह मोटो (आदर्श-वाक्य) छापा जायेगा—"फ्राम दी स्पार्क शैल स्प्रिंग दी फ्लेम" (चिनगारी से अग्नि की ज्वाला उत्पन्न होगी।)

स्कोव से लौटकर लेनिन जैसे ही पीटर्सवर्ग के स्टेशन पर उतरा पुलिस ने उसे गिरफ्तार कर लिया। उसके कोट के भीतरी गुप्त जेब से दो हजार रूबल के नोट और तमाम कागज पत्र बरामद हुए। पर यह कागज अदृश्य स्याही से लिखे हुए थे और उसके ऊपर उस चतुर क्रान्तिकारी ने पहले से ही एक धोबी खाना खोलने का हिसाब और बहुत-सी इधर-उधर की बातें पुलिस को धोखे में डालने को लिख रखी थीं। इसलिये उसके विरुद्ध कोई अभियोग न चल सका और उसे एक सप्ताह तक हवालात में रखकर छोड़ दिया गया। वह एक सप्ताह राजधानी और ठहरा और फिर नकली पासपोर्ट की सहायता से प्रेग (हंगरी) होता हुआ म्यूनिच (जर्मनी) जा पहुँचा। इस तरह रूस की निरंकुश सरकार की सख्तियों के कारण एक देश निकाला समाप्त होने पर लेनिन को स्वेच्छा से दूसरा देश निकाला लेना पड़ा।

'इस्क्रा' का प्रथम अंक सन् १९०० के अन्तिम महीनों में बड़ी धूमधाम से निकला। उसके सम्पादक-मण्डल में प्लेखनोव आदि पाँच रूसी नेता और थे जो उसके लिये महत्त्वपूर्ण सामग्री तैयार करने में सहयोग देते थे। उसको रूस की सीमा के पास तक पहुँचाने में जर्मनी के क्लारा जेटकिन आदि कई श्रमजीवी नेताओं ने सहायता दी। वहाँ पर उनको दुहरे पेंन्दे वाले बक्सों में छुपाकर रखा गया और निर्दिष्ट स्थान तक पहुँचा दिया गया।

जैसे ही 'इस्क्रा' रूस पहुँचा उसका प्रचार आग की तरह बढ़ने लगा और चारों तरफ उसमें प्रकाशित विषयों की चर्चा होने लगी। कुछ लोगों ने रूस के भीतर भी गुप्त छापेखानों से 'इस्क्रा' नाम से पर्चे प्रकाशित करने शुरू कर दिये जिसमें लेनिन के 'इस्क्रा' के लेखों के सिवा स्थानीय ताजा समाचार भी रहते थे। इस संगठन के समस्त सूत्र लेनिन की पत्नी क्रुपसकाया के हाथ में थे। वह गुप्त पत्र-व्यवहार करती थी, सूचनायें भेजती थी, खबरों की फायल बनाकर के रखती थी और समस्त 'क्रान्तिकारी यूनियनों' का सम्बन्ध केन्द्रीय- संगठन से ही कायम रखती थी। इस प्रकार घोर परिश्रम करके उसने लेनिन की इस महत्त्वपूर्ण और पेचीदा योजना को कार्यरूप में परिणत कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिखाया । रूस में महिला क्रान्तिकारियों की संख्या अन्य देशों की अपेक्षा बहुत अधिक रही है, पर क्रुप्सकाया ने लगभग अज्ञात रहकर जितना महान् कार्य किया उसके उदाहरण थोड़े ही मिलेंगे ।

गरीबी का जीवन

जिस समय लेनिन ने विदेश यात्रा की, क्रुप्सकाया उसके साथ न जा सकी क्योंकि उसका निर्वासनकाल अभी पूरा नहीं हुआ था, इसलिये उसे 'उफा' में ही रहना पड़ा । जब उसने छुटकारा पाया तो अपनी माँ के साथ पीटर्सवर्ग के लिये रवाना हुई । रास्ते में मास्को ठहर कर उसने लेनिन की माँ से भेंट की जिसे वह हृदय से प्यार करती थी । पीटर्सवर्ग कुछ समय ठहर कर और वहाँ के काम की व्यवस्था जमाकर वह अकेली 'प्रेग' के लिये रवाना हुई । उसके पास लेनिन के जितने पत्र पहुँचे थे वे प्रेग के 'मोड्रक' नामक व्यक्ति द्वारा भेजे गये थे । इसलिये उसका ख्याल था कि वह उसी जगह छुपकर रहता होगा । प्रेग में उसे मालूम हुआ कि मोड्रक किसी अन्य व्यक्ति का नाम है और लेनिन रिटमियर के नाम से म्यूनिच में रहता है । वह म्यूनिच पहुँची और रिटमियर का पता लगाती हुई एक शराब के होटल में पहुँची और कहा कि अपने पति 'रिटमियर' से मिलना चाहती हूँ । होटल वाला बड़ा चकराया क्योंकि रिटमियर उसी का नाम था । इतने में होटल वाले की पत्नी आ गई और उसने सब बातें सुनकर कहा कि ये सम्भवतः मि. मेयर की पत्नी हैं जो पीछे की तरफ रहते हैं । वह उसे भीतर लिवाकर ले गई जहाँ एक छोटे से कमरे में बैठा लेनिन कुछ लिख रहा था । उसे देखकर क्रुप्सकाया की परेशानी दूर हुई और कुछ गुस्से में कहा—"भले आदमी ! तुमने कभी यह भी नहीं लिखा कि किस कोने में छिपे हुए हो ।

लेनिन ने कहा—"तुम क्या कहती हो ? मैं तुमको तलाश करने दिन में तीन बार स्टेशन जाता हूँ । तुम आई किस तरफ से हो ?" बाद में मालूम हुआ लेनिन ने म्यूनिच के पते से क्रुप्सकाया को कई पत्र लिखे थे, पर जिस व्यक्ति को पहुँचाने का भार दिया गया था उसने लापरवाही से उनको यों ही पड़ा रहने दिया ।

लेनिन और उसके दोनों साथियों—'मारटोव' तथा 'पैट्रोसोवन' ने म्यूनिच में नाम बदल कर गुप्त रूप से रहने का निश्चय किया था । इस उपाय से वे अन्य रूसियों से अलग रहकर अपना काम अधिक सुरक्षित रूप से कर सकते थे । लेनिन हर रिटमियर के होटल में 'मेयर' के नाम से रहता था । यह रिटमियर पक्का साम्यवादी था और लेनिन के भेद को हर तरह से गुप्त रखता था ।

अनेक लोगों की आदत होती है कि वे हर एक राजनीतिज्ञ पर जनता के धन पर मौज उड़ाने का आरोप लगाते रहते हैं और वास्तव में कुछ लोग सार्वजनिक धन का इस प्रकार दुरुपयोग करने वाले भी होते हैं । पर लेनिन ने आजीवन जन-आन्दोलन में घोर परिश्रम किया, फिर भी सदा गरीबी का जीवन बिताया । जब वह रूस जैसे महान देश का कर्त्ताधर्त्ता बन गया तब भी वह बहुत मामूली भोजन पर ही निर्वाह करता था । क्रान्ति के आरम्भिक दिनों में तो जब पैट्रोग्राड में खाद्य पदार्थों का अभाव होने से राशन-प्रथा जारी थी, लेनिन दूसरों के बराबर ही रोटी लिया करता था जिससे उसे महीनों तक भूखा रहकर ही जीवन निर्वाह के लिये सोलह और अठारह घण्टा प्रतिदिन काम करना पड़ता था ।

म्यूनिच में भी लेनिन को गरीबी का ही जीवन बिताना पड़ता था । होटल में उसे एक छोटा-सा कमरा मिला था जिसके पीछे एक लम्बा-चौड़ा और गन्दा आँगन था । उसमें सदा छोटे-छोटे लड़के चीखते-चिल्लाते रहते थे और गृहकार्य में व्यस्त मजदूर स्त्रियाँ इधर से उधर जाती रहती थीं । लेनिन दोपहर के समय एक जर्मन महिला के यहाँ भोजन कर लेता था, जो उसे प्रायः दलिया या इसी तरह की कोई दूसरी चीज खाने को दिया करती थी । सुबह और शाम के वक्त वह खुद अपने लिये चाय बना लेता था । शाम को सिर्फ चाय और डबल रोटी खाकर रह जाता ।

क्रुप्सकाया के आने के बाद लेनिन ने होटल छोड़ दिया और एक जर्मन श्रमजीवी के साथ साझे में किराये का मकान लेकर रहने लगा । क्रुप्सकाया 'इस्क्रा' का प्रबन्ध करने के सिवाय खाने-पकाने का काम भी स्वयं ही करती थी । लेनिन का अधिकांश समय "कहाँ से कार्यारम्भ किया जाये ?" (व्हिअर टू बिगिन) नामक पुस्तक के लिखने और 'इस्क्रा' का सम्पादन करने में खर्च होता था ।

लेनिन की कार्य प्रणाली

लेनिन की कार्य प्रणाली रूस के अब तक के अन्य क्रान्तिकारियों से भिन्न प्रकार की थी । वे लोग अधिकांश में छुपकर बम फेंकने अथवा जारशाही को बुरा-भला कहने में ही अपनी शक्ति गँवाया करते थे । पर लेनिन एक कुशल सेनापति की तरह शत्रु से खुले मैदान में युद्ध करने के लिये एक सर्वांगपूर्ण कार्यक्रम बना रहा था और साथ ही अपने सैनिकों की संख्या भी बढ़ाता जा रहा है । इसी उद्देश्य से उसने "कहाँ से कार्यारम्भ किया जाये ?" को लिखा था । यह इतनी महत्त्वपूर्ण पुस्तक थी कि लोग उसे रूस की राज्यक्रान्ति की प्राइमर कहने लगे थे । इस्क्रा के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पहले ही अंक में लेनिन ने अपनी कार्य प्रणाली का निर्देश इन शब्दों में किया था—

"हमको ऐसे कार्यकर्त्ता तैयार करने चाहिये जो आन्दोलन सम्बन्धी कार्य में सिर्फ छुट्टी के समय ही भाग न लें वरन् अपना समस्त जीवन उसी में लगा दें। हमको एक ऐसे विशाल संगठन का निर्माण करना है जिसमें सब प्रकार के कार्य अलग-अलग व्यवस्थापूर्वक विभाजित कर दिये गये हों। इस समय तक जितनी राजनीतिक वृद्धि हो चुकी है, उससे हम भली प्रकार समझ सकते हैं कि बिना दस योग्य नेताओं के—योग्य नेता सैकड़ों की संख्या में उत्पन्न नहीं हुआ करते—जिनकी सच्चाई प्रमाणित हो चुकी हो, अपने कार्य का पूर्ण अनुभव रखते हों और जो वर्षों तक काम करने का अभ्यास कर चुके हों, कोई जोरदार आन्दोलन नहीं चलाया जा सकता।"

उपर्युक्त कथन पर कुछ लोग यह आक्षेप कर सकते हैं कि इस प्रकार के थोड़े से नेताओं को पकड़ कर आन्दोलन को खत्म कर देना तो सरकार के लिये सहज होगा, अतः सिद्धान्त-जन आन्दोलन के विरुद्ध है। इसका समाधान करते हुए लेनिन ने लिखा था—

"सम्भव है कि साधारण बुद्धि के व्यक्ति इस एतराज को सच ही मान लेंगे। पर मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि दस योग्य मनुष्यों को पकड़ सकना जितना कठिन है उतना कठिन सौ मूर्खों को पकड़ना नहीं है। मैं सदा इस सिद्धान्त पर अटल रहूँगा चाहे दूसरे लोग इसको 'प्रजातन्त्र विरोधी' कहकर जनता को मेरे विरुद्ध कितना भी क्यों न भड़कावें। योग्य व्यक्तियों से मेरा आशय उन्हीं लोगों से है जो एक मात्र आन्दोलन सम्बन्धी कार्यों में ही संलग्न रहते हैं, फिर वे जन्म से चाहे विद्यार्थी हों या श्रमजीवी।"

हमारा देश भी आजकल ऐसी ही परिस्थितियों में होकर गुजर रहा है। सार्वजनिक और राजनीतिक कार्यों में लोग योग्यता और अभ्यास की ओर बहुत कम ध्यान देते हैं। जो कोई जाति, सम्प्रदाय या किसी प्रकार के स्वार्थ के आधार पर कुछ लोगों को अपना साथी बना लेता है, वही नेता, शासन-संचालक बन बैठता है। इसी के फलस्वरूप हमारे जन-आन्दोलन में इतनी त्रुटियाँ, भ्रष्टाचार दिखाई पड़ता है। यदि सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं को पहले इस कार्य की नियमित शिक्षा दी जाये और वे लोग इस कार्य को जीवन का उद्देश्य समझ कर स्थायी रूप से करें तो स्थिति में बहुत कुछ सुधार हो सकता है।

अन्य नेताओं से मतभेद

कुछ समय बाद 'इस्क्रा' को छापने वाले प्रेस ने उसका काम करने से साफ इन्कार कर दिया। क्योंकि षडयन्त्रकारी कामों में भाग लेने में उसे खतरा जान पड़ने लगा था। अधिकांश कार्यकर्त्ताओं की सलाह से उसे लन्दन से निकालने का निश्चय किया गया और लेनिन, प्लेखनोव आदि नेता वहीं जाकर रहने लगे इस समय 'इस्क्रा' का प्रभाव रूस में बहुत फैल गया था और सरकार ही उससे न घबड़ा रही थी वरन् अन्य राजनीतिक दलों के नेता भी उसका विरोध करने लगे थे। नर्म दल वाले राजनीतिज्ञों से तो उसका आरम्भ से ही विरोध था, पर अब गर्म विचारों के अन्य क्रान्तिकारी नेता भी उसके इसलिये विरोधी बन गये थे, क्योंकि जनता पर उसका प्रभाव बढ़ता ही जाता था। लेनिन के अन्य सहकारियों को भी ऐसा अनुभव होने लगा कि सर्वसाधारण की सहानुभूति उसकी ओर अधिक है। इन कारणों से क्रान्तिकारियों के दल में वैमनस्य का बीज पड़ गया जो आगे चलकर बहुत बढ़ गया और जिसके कारण लेनिन के कार्यों में बराबर अड़चन पड़ती रही।

इस अनुभव के आधार पर लेनिन ने यही निश्चय किया कि अपने ही कार्यकर्त्ताओं का स्वतन्त्र संगठन हो और पुराने नेताओं से अधिक सम्बन्ध नहीं रखा जाये क्योंकि जब पुराने नेता किसी नये व्यक्ति को आगे बढ़ते देखते हैं तो उनको अपने प्रभाव के कम पड़ जाने की आशंका हो जाती है और वे उसको हटाने की प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष कोशिश करने लगते हैं। भारतवर्ष के राजनीतिक क्षेत्र में इस समय जो घोर विशृंखलता फैली हुई है और यहाँ की राष्ट्रीय कांग्रेस में जो भंयकर दलबन्दी उत्पन्न हो गई है, वह इस बात का बड़ा सुदृढ़ प्रमाण है कि राजनीतिक क्षेत्र की अनुचित महत्त्वाकांक्षा व्यक्ति और समाज दोनों के पतन का कारण होती है। सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं को इस दृष्टि से बहुत सावधान होकर आगे कदम बढ़ाना चाहिये।

वास्तव में अनेक नेताओं की तरह लेनिन का उद्देश्य अपनी योग्यता को पुस्तक में लिख देना ही न था। न वह केवल गर्मागर्म भाषण करके लोगों की वाहवाही से सन्तुष्ट होने वाला नेता था। उसने लिखने की मेज पर बैठे हुए जो स्वप्न देखा था, वह उसे निरन्तर आगे बढ़ने को प्रेरित करता रहता था। वह एक ऐसे दल के संगठन की अभिलाषा करने लगा जो उसकी योजना को कार्यरूप में परिणत कर सके। उस समय अत्यन्त साधारण और गरीबी की दशा में रहने पर भी लेनिन एक ऐसी शक्तिशाली संस्था के निर्माण के लिये प्रयत्नशील था जो रूस में उथल-पुथल मचा दे और जारशाही का तख्ता लौट दे। जिस प्रकार संसार के अन्य प्रसिद्ध विजयी योद्धा—सिकन्दर, शिवाजी, नेपोलियन आदि छोटी अवस्था से ही एक विशेष भाव से अभिभूत होकर अपने भावी साम्राज्यों की कल्पना किया करते थे, उसी प्रकार लेनिन भी, जिसने एक बड़ी भारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सल्तनत को लौटने का प्रण किया था, लन्दन के हाईगेट कब्रिस्तान में कार्ल मार्क्स की कब्र के पास घण्टों तक बैठकर असीम शक्तिशाली भावी बोलशेविक दल का स्वप्न देखा करता था। अन्तर इतना ही था कि प्राचीनकाल के योद्धाओं ने देवताओं अथवा ईश्वर का नाम लेकर के तलवार उठाई थी और लेनिन के कार्यक्रम का आधार इतिहास और समाज-शास्त्र को लेकर बनाया था।

सरकारी दमन नीति और उसका प्रत्युत्तर

रूस के सभी प्रधान अधिकारी अत्याचारी और कुटिल नीति के अनुयायी थे और अपने लाभ के लिये खराब काम करने में भी नहीं हिचकिचाते थे। जब लेनिन के प्रचार कार्य के फलस्वरूप मजदूरों में मालिकों की शोषण नीति और तरह-तरह के अन्यायों के प्रति असन्तोष भड़क उठा तो देश में जगह-जगह आन्दोलन, सभायें, प्रदर्शन, हड़तालें आदि होनी आरम्भ हो गईं। जब सरकार इनको सीधी तरह से नहीं रोक सकी तो जार के सलाहकारों ने उसे सलाह दी कि श्रमजीवियों और गरीबों को धर्म के नाम पर भड़का कर यहूदी लोगों से लड़वा देना चाहिये। इसमें उनका ध्यान शासन और सरकारी नियमों की बुराइयों की तरफ से हट जायेगा और उधर यहूदियों का भी सफाया हो जायेगा जिनमें क्रान्तिकारियों और आन्दोलनकारियों की संख्या सबसे अधिक है। जार के ये सलाहकार कितने निरंकुश और अत्याचारी थे इसका नमूना जार के प्रधान मित्र कप्तान जनरल ट्रैयोन के भाषण के एक अंश से जाना जा सकता है—

"वे आन्दोलन करते हैं, उनको गोली से उड़ा दो। वे बड़ी-बड़ी बातें करते हैं उनको संगीनों से छेद डालो। मजदूर लोग राज्यक्रान्ति करना चाहते हैं, उनमें थोड़े से पुलिस के भेड़ियों को नकली क्रान्तिकारी बनाकर शामिल कर दो और वे तुरन्त ही—तुम्हारे जाल में फँस जायेंगे।"

इस योजना के अनुसार रूस में 'पोगरोम' की सृष्टि की गई। इसके कार्यकर्त्ताओं को "ब्लैकहण्डरैड" (कृष्ण घातक) के नाम से पुकारा जाता था। यह लोग ईसाइयों के धर्म चिह्न उठाकर, घण्टा बजाते हुए जलूस बनाकर के निकलते थे और गरीब यहूदियों के घरों में घुसकर उनके तमाम कुटुम्ब की हत्या कर डालते थे और जो कुछ मिलता था उसे लूट लेते थे। दूध पीते बच्चे और स्त्रियाँ भी उनके हाथों से नहीं बच सकती थीं। यद्यपि ये सरकारी नौकर नहीं थे तो भी जार उनकी प्रशंसा करता था और उनको राजभक्त बतलाता था, इससे उनके अत्याचार दुगने-चौगुने बढ़ते जाते थे। इससे भी सन्तुष्ट न होकर जार के अन्य मन्त्री ने किसी विदेशी शक्ति के साथ युद्ध छेड़ने की सलाह दी, ताकि जनता का ध्यान उधर आकर्षित हो जाये और इस बीच में क्रान्तिकारी आन्दोलन को खूब कुचल दिया जाये। इसके लिये राज्य अधिकारियों की एक गुप्त कमेटी बनाई गई जिसमें रात भर के वाद-विवाद के पश्चात् जापान के साथ युद्ध ठानने का निश्चय किया गया।

इस प्रकार एक तरफ रूस के साम्राज्यवादी जारशाही की निरंकुश सत्ता की रक्षा के लिये हर तरह के कूटनीतिक उपायों का अवलम्बन कर रहे थे और दूसरी ओर साम्यवादियों का एक छोटा-सा दल जन साधारण के उद्धार और स्वाधीनता के लिये प्राणपण से कटिबद्ध हो रहा था। क्रान्तिकारियों की छावनी में बैठा हुआ लेनिन सोच रहा था कि किस उपाय से वह एक दिन नाश हो। पुलिस के थानों और खुफिया पुलिस के दफ्तरों को जलाओ। हमारा उद्देश्य जार की गवर्नमेण्ट को नष्टभ्रष्ट करके अपनी गवर्नमेण्ट स्थापित करना है।

यद्यपि लेनिन इस समय रूस से सैकड़ों कोस की दूरी पर था, तो भी उसने क्रान्ति के पक्षपाती सभी दलों के व्यक्तियों को मिला कर विद्रोह की अग्नि को भड़काने की पूरी कोशिश की। उसकी निगाह किसानों पर भी थी, क्योंकि रूस उस समय तक मुख्य रूप से खेती किसानी का ही देश था। यह बात दूसरे साम्यवादी नेताओं को कम्यूनिज्म के विरुद्ध जान पड़ी, पर लेनिन ने कहा कि जब तक हम शक्ति प्राप्त नहीं कर लेते तब तक कम्यूनिज्म के सब सिद्धान्तों पर पूरी तरह अमल कर सकना सम्भव नहीं है। इस सम्बन्ध में एक बार उसने अपने एक मित्र से कहा था कि उसका विश्वास नेपोलियन की इस उक्ति में है 'पहले कुछ काम करके दिखलाओ, फिर उसके बाद इधर-उधर की बातें करो।"

जब रूस के शहरों में हड़ताल फैल गई तो रेल तथा तार की व्यवस्था में भी ऐसी गड़बड़ी मच गई कि कहीं आना-जाना अथवा कहीं के समाचार पा सकना बड़ा कठिन हो गया। उस समय की भीषण अव्यवस्था को देख कर यही जान पड़ता था कि अब क्रान्ति होकर सरकार खण्ड-खण्ड होने में ज्यादा देर नहीं है। यह देखकर लेनिन ने लन्दन में बैठे रहना अनुचित समझा और किसी प्रकार के खतरे की परवाह न करके वह जाली पासपोर्ट की सहायता से पीटर्सवर्ग जा पहुँचा। वह श्रमजीवियों के घरों में छुपकर रहता था और वहीं से अपने साथियों द्वारा आन्दोलन का संचालन करता था। शीघ्र ही उसने पीटर्सवर्ग की 'वर्कर्स सोवीट' (श्रमजीवी पंचायत) पर कब्जा कर लिया। यह 'सोवीट' वास्तव में सरकार के पक्षपातियों ने मजदूरों को नियन्त्रण में रखने के लिये कायम की थी, पर क्रान्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के प्रभाव से उसकी कायापलट हो गई और अब वह सरकार की शत्रु बन कर हड़ताल का संचालन कर रही थी ।

लेनिन इस सोवीट की कार्यवाही पर बराबर निगाह रखता था । दो बार वेश बदलकर उनके अधिवेशनों में दर्शक के रूप में शामिल भी हुआ कि वह इस निरंकुश सत्ता को धूल में मिलायेगा । अपनी उस समय की स्थिति का वर्णन उसने इन शब्दों में किया है, जो प्रत्येक प्रगतिशील कार्यक्रम के अनुयायियों के लिये मनन करने योग्य है—

"हमारे छोटे से दल के पुरुष और स्त्रियाँ मजबूती के साथ एक दूसरे का हाथ पकड़ कर पथरीले और कठिन रास्ते पर आगे बढ़ रहे हैं । हम चारों तरफ शत्रुओं से घिरे हैं और प्रायः उनकी बरसती हुई गोलियों के बीच में होकर चलना पड़ता है । हमने स्वेच्छापूर्वक यह प्रतिज्ञा की है कि सदा सम्मुख डटे रहकर शत्रु से युद्ध करेंगे और अपने मार्ग से इधर-उधर हटकर पथभ्रष्ट न होंगे ।"

सन् १९०५ की क्रान्ति

लेनिन का यह उद्योग सन् १९०५ में रंग लाया । उस समय श्रमजीवी आन्दोलन काफी फैला हुआ था और अनेकों नर्म विचारों के राजनीतिज्ञ भी उसमें भाग लेने लगे थे । इन लोगों ने निश्चय किया कि उग्र आन्दोलन को छोड़कर जार से प्रतिज्ञा की जाये की प्रजा के संरक्षक के रूप में गरीब मजदूरों के कष्टों को दूर कराने का आदेश दें ।

२२ जनवरी, १९०५ के पीटर्सवर्ग से एक बहुत बड़ा जलूस, जिसमें ५० हजार के लगभग व्यक्ति शामिल थे— जार को एक प्रार्थना पत्र देने उसके महल की तरफ चला । इसके पास धार्मिक झण्डे थे और जार तथा ईसाई सन्तों के चित्र थे पर जार के अधिकारियों को इस धार्मिक और शान्त जलूस में भी राज्यद्रोह की गन्ध आई उन्होंने गोली चलाकर दो सौ व्यक्तियों को मार दिया और एक हजार से अधिक घायल हो गये । इस पर पीटर्सवर्ग में दंगा हो गया और लाखों मजदूरों ने हड़ताल कर दी । उसी दिन लेनिन के अनुयायियों ने एक पर्चा बाँटा जिसमें सरकार के कार्य की घोर निन्दा करते हुए मजदूरों तथा जनता को हथियार उठाने के लिये प्रेरित किया । उसमें कहा गया था "इस सरकार का अपनी पार्टी वालों के इनकार कर देने से वह इसके खुले अधिवेशन में तो कुछ बोल नहीं सकता था पर कार्यकारिणी कमेटी में वह बराबर वादविवाद में भाग लेता था । इस प्रकार छुपे रहकर काम करने से किसी बाहरी आदमी को लेनिन के काम का कुछ भी पता नहीं लगता था । ऐसे अवसरों पर ज्यादातर सार्वजनिक कार्यकर्त्ता ख्याति के लोभ को नहीं रोक पाते और किसी न किसी प्रकार अपने को जाहिर कर ही बैठते हैं, जिससे आन्दोलन की और उनकी भी हानि होती है । पर लेनिन ऐसी यश की लालसा से बहुत ऊँचा उठा हुआ था और वह बराबर एक अँधेरी कोठरी में बैठा हुआ गुप्त रूप से अपना काम करता रहा ।

साल भर के बाद जब सरकारी सेनाओं ने क्रान्ति को बहुत कुछ दबा दिया और भूखों मरने के कारण अधिकांश मजदूर भी काम पर लौट गये तो लेनिन पीटर्सवर्ग से हटकर फिनलैण्ड चला गया और दो वर्ष तक वहीं से दूर-दूर के नये स्थानों में विद्रोह कराता रहा । इसी बीच में रूस सरकार की जापान द्वारा भी युद्ध में पराजय हो गई । परिणाम यह हुआ कि सरकार को जनता को सन्तुष्ट करने या कम से सम ऊपर से बहकाने के लिये एक प्रजासत्तात्मक शासन संस्थापक—'डूमा' की स्थापना करनी पड़ी । यद्यपि आरम्भ में तो यह 'डूमा' नाममात्र की ही शासन-सभा थी क्योंकि इसका कोई भी प्रस्ताव बिना जार की स्वीकृति के अमल में नहीं आ सकता था, पर दस वर्ष बाद इसी ने जार के शासन का अन्त कर देने का एक प्रस्ताव पास किया था ।

इस दृष्टि से यह हमारे देश की राष्ट्रीय कांग्रेस से मिलती-जुलती ही थी जिसकी स्थापना कुछ अंग्रेजों ने प्रजा के असन्तोष को नियन्त्रण में रखने के लिये की थी, पर अन्त में उसी ने "अंग्रेजों ! भारत को खाली करो" का नारा लगाया और उनके शासन का अन्त करके ही छोड़ा । लेनिन इस प्रकार की व्यावहारिक राजनीति का पूर्ण ज्ञाता था और जब उसके कुछ साथियों ने 'डूमा' का विरोध किया और उसे निरर्थक बतलाया तो उसने अपने अधिक जोशीले साथियों को समझाते हुए कहा—

"मनुष्य को केवल उन शब्दों के पीछे नहीं पड़ा रहना चाहिये । जो किसी समय क्रान्ति के भड़काने के लिये उच्चारण किये गये हों । ऐसे अवसर पर जब कि क्रान्ति दम लेने के लिये ठहर गई हो हमारा कर्त्तव्य यही है कि हम अगली चढ़ाई के लिये तैयारी करें । इसके लिये हम उन क्रान्तिकारी नारों का लगाना बन्द कर दें, जो केवल संग्रामकाल में ही शोभा देते हैं ।"

सन् १९१७ की क्रान्ति

जब रूस सरकार ने सैनिक बल से क्रान्ति को कुचल दिया और पच्चीस हजार व्यक्तियों को पकड़ कर साइबेरिया भेज दिया गया और दो हजार को गोली से उड़ा दिया गया तो लेनिन को लाचार होकर फिर विदेश में रहकर आन्दोलन करने की आवश्यकता पड़ी । यद्यपि अपने अनेक सच्चे साथियों के मर खप जाने से वह बड़ा दुःखी था और हर तरह की आर्थिक कठिनाइयाँ भी उसके सामने थीं पर अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर्त्तव्य पालन से वह पीछे नहीं हट सकता था । इसलिये जब उसके दल ने फिर 'प्रोलीटेरियट' (श्रमजीवी) नामक पत्र को निकालने का निर्णय किया और उसकी व्यवस्था का भार लेनिन को सौंपा गया तो वह फिर जेनेवा आकर उस कार्य का आरम्भ करने में जुट गया ।

दूसरी कठिनाई यह थी कि क्रान्ति के असफल हो जाने से आन्दोलनकारियों में भी मतभेद और फूट फैल गई थी और विपक्षी लोग लेनिन पर आक्षेपों की वर्षा कर रहे थे । पर उसने जिस प्रकार वीरतापूर्वक सरकारी दमन को सहन किया था उसी प्रकार राजनैतिक विरोधियों के वाक्य वाणों को भी सहन कर रहा था । उसका विश्वास था कि यदि वह सच्चाई के साथ कर्त्तव्य मार्ग पर डटा रहेगा तो अन्तिम विजय उसी की होगी । वह अपने साथियों को भी इस प्रकार के उद्‌गारों से उत्साहित किया करता था—"निराश मत हो । यह अन्धकार अवश्य दूर होगा और कुछ ही वर्षों में फिर श्रमजीवी क्रान्ति का बाल-रवि चमकने लगेगा ।"

निःसन्देह ये चार-पाँच वर्ष लेनिन के जीवन में सबसे अधिक दुःखदायी और शोचनीय थे । वह पिंजरे में पड़े शेर की तरह इधर-उधर करवट बदलता था और उसकी अटूट शक्ति निकम्मी पड़ी थी । रह-रहकर उसके भीतर काम करने का भाव जोर मारता था, पर उसके लिये कोई साधन मौजूद न था । तो भी उस कठिन समय में उसने क्रान्ति के झण्डे को बराबर ऊँचा उठाये रखा किसी स्वार्थी या नीच प्रकृति के व्यक्ति के हाथों उसे कलंकित न होने दिया । ऐसे ही अवसरों पर असली और नकली नेताओं की परीक्षा हुआ करती है ।

इस परीक्षा काल में लेनिन की पत्नी क्रुप्सकाया सदा लेनिन के साथ रही, जहाँ वह गया उसके साथ गई और प्रत्येक कार्य में उसका हाथ बँटाती रही । यद्यपि वह एक सुशिक्षित और सुन्दर रमणी थी, पर इन दिनों सब प्रकार के अभाव सहन करती हुई अत्यन्त सादगी का जीवन बिताती थी । वह सस्ते दाम के मामूली कपड़े पहनती थी और देखने में किसी रूसी मजदूर की स्त्री के समान जान पड़ती थी । उसे भोग विलास और सुख की आकांक्षा न थी और उसने जीवन भर लेनिन के साथ सब प्रकार के कष्ट तथा खतरा उठा करके श्रमजीवी आन्दोलन की अमूल्य सेवा की । जब उसका पति रूस जैसे महा-साम्राज्य का डिक्टेटर बन गया तब भी वह उसी प्रकार सादगी से रहती थी, वैसे ही सादे वस्त्र पहनती थी । श्रमजीवी आन्दोलन के सिवा वह राष्ट्रीय शिक्षा के प्रचार में भी बड़ा अनुराग रखती थी और इस सम्बन्ध में उसने बहुत काम किया है ।

यूरोपीय महायुद्ध और लेनिन

सन् १९१४ में जब यूरोपियन महायुद्ध आरम्भ हुआ यो लेनिन ने यह अवसर पुनः श्रमजीवी—संगठन को पुख्ता बनाने के लिये उपर्युक्त समझा और वह रूस के भीतर अपने अनुयायियों द्वारा प्रचार कार्य कराने लगा । सन् १९१५ में स्विट्जरलैण्ड में सब देशों के साम्यवादी नेताओं की एक कॉन्फ्रेन्स हुई जिसमें लेनिन ने महायुद्ध को पूँजीवादियों का एक अस्त्र बतलाकर जगह-जगह गृहयुद्ध कराने का प्रस्ताव किया । इस पर फ्रांस के नेता लैण्डेकर ने आक्षेप करते हुए कहा था कि "यहाँ विदेश में बैठकर गृह-युद्ध की बातें करना सहज है, पर जब रूस में रहकर ऐसी बातें करते तब तारीफ की बात होती ।" लेनिन ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया—"जब कालमार्क्स ने कम्यूनिस्ट मैनीफैस्टो लिखा तो वह विदेशों में ही रहता था, पर इसके लिये ओंधी तबियत के व्यक्ति ही उसकी निन्दा कर सकते हैं । मैं आज विदेश में इसलिये निवास कर रहा हूँ, क्योंकि रूसी श्रमजीवियों ने मुझे यहाँ पर भेजा है, पर जब समय आयेगा तो दुनियाँ देखेगी कि मैं और मेरे साथी कर्त्तव्य पालन से पीछे हटने वाले तो नहीं हैं ।

रूस में राज्यक्रान्ति

फरवरी १९१७ में जब जार के कुशासन के कारण रूस में विद्रोह का जोर बढ़ा और जार को राज्य सिंहासन से हटा दिया गया, तो अपने कथनानुसार लेनिन जल्दी-जल्दी रूस पहुँचा । आरम्भ में श्रमजीवी नेता के रूप में उसका बड़ा स्वागत किया गया, पर जब उसने युद्ध बन्द करके श्रमजीवी शासन कायम करने का प्रचार करना आरम्भ किया तो शासक दल उसका विरोधी बन गया । १६ जुलाई की क्रान्सटेड की समुद्री सेना ने विद्रोह कर दिया और टोरिडा पैलेस को घेर लिया जिसमें सरकार की कार्यकारिणी कमेटी का अधिवेशन हो रहा था । चूँकि इस विद्रोह में लेनिन का भी हाथ था इसलिये उसके विरुद्ध वारण्ट निकाला गया और उसकी गिरफ्तारी के लिये दो लाख रूबल का इनाम घोषित कर दिया गया । इसलिये लेनिन पैट्रोग्राड के पास एक गाँव में जाकर रहने लगा और किसान का वेश बनाकर फसल काटने और ढोने का काम करने लगा । जब पुलिस की सरगर्मी बहुत बढ़ गई और वहाँ भी खतरा जान पड़ने लगा तो वह फिर से नकली बाल लगाकर और वेश बदल कर फिनलैण्ड चला गया ।

पर इस बीच में उसने काम कभी बन्द नहीं किया । फिनलैण्ड में वह एक पुलिस अफसर के घर में ठहरा जो उसके दल का सदस्य था । वह अफसर प्रतिदिन स्टेशन जाकर पैट्रोग्राड से निकलने वाले सब अखबार खरीद कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ले आया करता था और लेनिन उनको पढ़कर रात में अपने दल के अखबार के लिये एक लेख तैयार कर देता था जिसमें लोगों को आगे के कार्यक्रम का सुझाव दिया करता था। जब रूस की दशा और भी गम्भीर हो गई और युद्ध में हार पर हार होने से वहाँ की सरकार की स्थिति डाँवाडोल होने लगी तो लेनिन फिनलैण्ड की राजधानी के एक छोटे कस्बे में आ गया, जो रूस की सीमा के बिल्कुल निकट था।

अब लेनिन की सम्मति में वह समय आ गया था जब कि श्रमजीवी दल को अपनी संगठित शक्ति का प्रयोग करके रूस की अस्थायी सरकार का तख्ता पलट देना चाहिये। इस अस्थायी सरकार में नर्म विचारों के राजनीतिज्ञ और पूँजीवादियों से समझौता करने वाले समाजवादी लोग शामिल थे और उनका शासन बहुत कमजोर था इसलिये अब रूस के पूँजीवादी सेना को अपनी तरफ मिलाकर उस सरकार को हटाकर अपना सैनिक शासन कायम कर लेना चाहते थे जिससे क्रान्तिकारी श्रमजीवियों को दबाया जा सके। लेनिन ने योजना बनाई कि पूँजीवादियों की इस चाल के सफल होने से पहले श्रमजीवियों को शासन पर अधिकार कर लेना चाहिये। उसके दूसरे साथी ही स्थिति को अच्छी तरह न समझ सकने के कारण हिचकिचाने लगे और इस योजना को आगे के लिये टालने का विचार करने लगे।

यह देखकर लेनिन सब तरह के खतरे का डर छोड़कर अपने छुपने की जगह से बाहर निकल आया और सीधा पैट्रोग्राड पहुँचा। उस समय सरकार उसकी गिरफ्तारी के लिये वारण्ट पर वारण्ट निकाल रही थी। पर इसकी कुछ भी चिन्ता न करके वह अपनी पूरी ताकत से विद्रोह खड़ा करने की कोशिश करने लगा। जो लोग आगा-पीछा कर रहे थे उनके साथ वादविवाद करके, जो डरते थे उनको साहस दिलाकर और साधारण जनता को गरमा-गरम लेखों द्वारा उत्साहित करके वह जोर-शोर से सुधारवादियों की सरकार को लौटने का आन्दोलन करने लगा। उसने अपने दल वालों को अच्छी तरह समझा दिया कि यदि तुम शासन पर अधिकार जमाने में एक सप्ताह की भी देर कर दोगे तो फिर तुम्हारे करे-धरे कुछ न होगा और पूँजीवादियों के हाथों कुत्ते की मौत मारे जाओगे। इसके बजाय अगर तुम इस समय थोड़ी भी कोशिश करोगे तो शासन सत्ता तुम्हारे हाथ आ जायेगी। बाद की घटनाओं ने सिद्ध कर दिया कि लेनिन का निर्णय बिल्कुल ठीक था और रूस में बोलशेविक शासन स्थापित हो सकने का वास्तविक श्रेय उसी को है।

रूसी क्रान्ति को लेनिन ने किस प्रकार अपना सर्वस्व होम कर खड़ा किया और कार्यरूप में परिणित हो जाने पर किस प्रकार प्राणों की बाजी लगाकर उसकी रक्षा की—यह रूसी इतिहास की अमर गाथा है। शासन-सत्ता ग्रहण करने के कुछ ही दिनों बाद जर्मन सेना के आक्रमण से रूस की रक्षा करने की समस्या उपस्थित हो गई। उस समय अन्य नेता तो भावुकतापूर्ण भाषण करके जर्मनी से सन्धि करके अपनी पराजय स्वीकार करने को बहुत बुरा बतलाते थे, पर लेनिन ने कहा कि हमारी क्रान्ति जीवित रहेगी तो हम वर्तमान हानि का बदला आगे चलकर चुका लेंगे। पर यदि हम इस बिना तैयारी की हालत में शत्रु से भिड़ गये तो फिर रक्षा का कोई उपाय नहीं है। इसलिये लेनिन ने अपने सिर पर जिम्मेदारी लेकर जर्मनी की सन्धि पर हस्ताक्षर कर दिये। रूसी साम्राज्य का कुछ प्रदेश जो जर्मनी की सीमा से लगा था उसको दे भी दिया। फिर वह जर्मनी के खतरे से बचने के लिये अपनी राजधानी को पैट्रोग्राड से मास्को ले गया। इन सब कारणों से उसके बहुत से साथी भी उसके विरोधी बन गये और एक दिन कुछ मजदूर बन्दूक-पिस्तौल लेकर उससे जबाव तलब करने कार्यालय में भी पहुँच गये। पर अन्त में लेनिन की सचाई और उचित निर्णय के लिये सबको उसके सामने नतमस्तक होना पड़ा।

श्रमजीवी क्रान्ति की रक्षा करने के कार्य में लेनिन की जान सदा खतरे में रहती थी। क्रान्ति के डेढ़ महीने बाद ही दिसम्बर १९१७ में उसकी मोटर पर कई गोलियाँ चलाई गईं जिनसे एक साम्यवादी नेता घायल हो गया। इसके बाद भी कई बार उसे मारने की कोशिश की गई। अन्त में अगस्त १९१८ में एक लड़की प्रार्थना-पत्र देने के बहाने उसके पास पहुँची और अकस्मात् पिस्तौल से तीन गोलियाँ चला दीं, जिनसे घायल होकर वह फर्श पर गिर गया। यद्यपि डॉक्टरों के प्रयास से उसकी जान बच गई पर उसका स्वास्थ्य भंग हो गया। इसके बाद भी वह बोलशेविक शासन की रक्षा के लिये देशी-विदेशी शत्रुओं से जझूता रहा जिससे क्रान्ति की रक्षा तो हो गई पर उसका स्वास्थ्य दिन पर दिन कमजोर पड़ता गया और २१ जनवरी, १९२१ को उसका देहान्त हो गया।

जैसे कहा जाता है कि मनुष्य के वास्तविक महत्त्व का पता उसकी मृत्यु के बाद ही लगता है, जब कि वह संसार के रंगमंच पर से उठ जाता है और केवल उसके नाम तथा कारनामे पक्ष और विपक्ष के सामने निर्णय करने के लिये रह जाते हैं। यही बात लेनिन के सम्बन्ध में देखने में आई। जो लोग दलबन्दी और मतभेद के कारण उसे 'लुटेरा' और 'जर्मन जासूस' के सिवाय और किसी नाम से पुकारने को राजी न थे, वे उसे शोषित जनता का मसीहा बतलाने लगे। कार्लकौटस्की और ओटो बौर जैसे सुप्रसिद्ध साम्यवादी नेताओं ने जो सदैव बोलशेविज्म का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विरोध करते रहे थे, लेनिन की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की। उन्होंने स्वीकार किया कि "लेनिन श्रमजीवी दल का सच्चा नेता और शिक्षक था।" कई पूँजीवादी नेताओं ने उसके असाधारण गुणों की चर्चा करते हुए कहा—"यद्यपि लेनिन का मार्ग हमसे भिन्न था तो भी इसमें सन्देह नहीं कि उसकी राजनीतिज्ञता, दृढ़ निश्चय और अगाध ज्ञान की तुलना मिल सकना कठिन है।"

प्रसिद्ध मानवतावादी विद्वान रोमारोलाँ ने लिखा है—"लेनिन वर्तमान शताब्दी का सबसे बड़ा कर्मठ और साथ ही स्वार्थत्यागी व्यक्ति था। उसने आजीवन घोर परिश्रम किया पर अपने लिये कभी किसी प्रकार के लाभ की इच्छा नहीं की।" विश्व शान्ति के महान् प्रचारक—बरट्रैण्ड रसल ने कहा—"लेनिन की मृत्यु से एक सच्चा महापुरुष संसार से उठ गया। संसार के पूँजीवादियों की दृष्टि में तो वह केवल एक विध्वंसकारी ही था पर उसे महापुरुष की पदवी विध्वंस के लिये नहीं दी गई है। वह एक महान् निर्माणकर्त्ता, दार्शनिक और विधायक भी था। मुझे तो वह एक अत्यन्त ईमानदार और अहंकार से शून्य व्यक्ति जान पड़ा।

सच है निःस्वार्थ भाव से जनकल्याण के लिये किये गये कार्यों का परिणाम अन्त में अपने और दूसरों के लिये मंगलजनक ही सिद्ध होता है।

धार्मिक और सामाजिक क्रान्ति के अध्वर्यु कमाल पाशा

टर्की की मुख्य शासन-कमेटी की बैठक हो रही थी। उसके सामने प्रश्न था कि अभी तक वहाँ के सुलतान को, जो राजनीतिक तथा धार्मिक दोनों क्षेत्रों का मुखिया माना जाता है, उसका अन्त कर दिया जाये। अब शासन में उसका कोई सम्बन्ध न रहे, चाहे धार्मिक दृष्टि से वह संसार के मुसलमानों का "खलीफा" बना रहे। इस प्रस्ताव को उपस्थित करने वाला मुस्तफा कमाल पाशा था, जिसने उन्हीं दिनों यूरोप अमेरिका के बड़े-बड़े राष्ट्रों का सशस्त्र मुकाबला करके टर्की की आंशिक स्वाधीनता की रक्षा की थी। पर वहाँ के मुल्ला-मौलवी समझते थे कि वह सामाजिक और धार्मिक मामलों में पूरा स्वतन्त्र क्रान्तिकारी विचारों का आदमी है और इस्लाम की परम्परागत अनेक बातों को नहीं मानता। इसलिये जब "खलीफा" को शासन सत्ता से हटाने का प्रस्ताव उपस्थित हुआ तो लम्बी दाढ़ी वाले मौलवी लोग एक के बाद एक मंच पर आने लगे और कुरान की आयतों के आधार पर खलीफा की सार्वभौम सत्ता को प्रमाणित करने लगे। मुस्तफा कमाल पाशा पहले तो एक तरफ बैठा उनकी बातें सुनता रहा, पर कुछ देर बाद वह क्रोध में आकर एक मेज पर खड़ा हो गया और कहा—"हमने शक्ति के द्वारा हुकूमत को अपने हाथ में लिया। धार्मिक सत्ता (खलीफा) को राजनैतिक अधिकार छोड़ने ही पड़ेंगे। चाहे आप इससे सहमत न हों, पर बात यही होगी। केवल कुछ और लोगों के मस्तक हमको उड़ाने पड़ेंगे।

कमाल की गर्जना ने सारा दृश्य एक क्षण में बदल दिया। सभापति, जो स्वयं एक लम्बी दाढ़ी वाला मौलवी था, खड़ा होकर कहने लगा—"सदस्यो! गाजी मुस्तफा कमाल ने इस सवाल को एक ऐसे पहलू से पेश किया है, जिस पर अभी तक हमने गौर नहीं किया था।" बस कमेटी के सब सदस्यों ने प्रस्ताव के पक्ष में राय दे दी कि सुल्तान बहेउद्दीन को तख्त से हटाकर धार्मिक और राजनैतिक क्षेत्रों को अवश्य अलग-अलग कर दिया जाये।

टर्की वाले तो मान गये पर भारत के अन्धविश्वासी मुसलमानों ने "खिलाफत" की रक्षा के लिये हाय-तौबा मचाई और इस्लाम की दुहाई दी। इस पर कमाल ने उनको फटकार कर कह दिया कि "वे पहले अपना घर तो सम्भालें, टर्की अपने नव-निर्माण में उनसे किसी तरह की सलाह लेना नहीं चाहता।"

आगे चलकर जब वह टर्की की पुरानी सामाजिक और धार्मिक प्रथाओं का सुधार करने को तत्पर हुआ तो फिर उसे ऐसी ही दृढ़ता से काम लेना पड़ा टर्की के लोग एक खास तरह की टोपी जिसे "फैज" कहते थे पहना करते थे। कमाल उसे बदल कर यूरोपियों के टोप का प्रचार करना चाहता था, पर वह यह भी जानता था कि समस्त जनता उस टोपी को एक धार्मिक चिह्न की तरह मानती है, इसलिये मुल्ला-मौलवी और उनके इशारे पर चलने वाली मूढ़ जनता इसका बहुत अधिक विरोध करेगी। इसलिये आरम्भ में उसने अपने अंगरक्षकों को टोप पहनने को दिये और उसके बाद समस्त सेना में उन्हीं का प्रचार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर दिया। वह स्वयं भी सब जगह टोप लगाकर ही जाता था। एक स्थान पर भाषण करते हुए उसने यह कह भी दिया कि "अगर हम लोग सभ्य होना चाहते हैं तो हमको वैसे ही वस्त्र पहिनने चाहिये जैसे सभ्य देशों के निवासी पहिनते हैं।" पर जब लोगों ने अपने प्राचीनता प्रेम के कारण इस पर ध्यान न दिया तो उसने शासन-सभा में एक प्रस्ताव पास कराके तुर्की टोपी पहिनना गैर कानूनी घोषित कर दिया। दो दिन बाद पुलिस को हुक्म दे दिया कि जो कोई तुर्की टोपी पहिने दिखाई दे उससे वह छीन ली जाये। जिन लोगों ने इसका विरोध किया वे गिरफ्तार कर लिये गये। इस पर मुल्लाओं ने लोगों को भड़काया और कई शहरों में उन्होंने सरकारी कर्मचारियों पर पत्थर फेंके पर कमाल ने इस परिवर्तन का दृढ़ निश्चय कर लिया और कहा—"क्रान्ति का आधार खून होना चाहिये जो क्रान्ति खून के आधार पर नहीं होती वह ज्यादा दिन नहीं टिक सकती। बस विरोध उपद्रव करने वाले धड़ाधड़ गिरफ्तार किये जाने लगे और उनको कड़ी सजायें दी जाने लगीं। सारा विद्रोह शान्त हो गया और प्रत्येक तुर्क टोप लगाने लग गया।

इस प्रकार टर्की जैसे रुढ़िवादी देश की काया पलट करने वाले मुस्तफा कमाल का जन्म (सन् १८८१ से १९३८) एक मामूली लकड़ी के व्यापारी के घर में हुआ था। बचपन से ही वह स्वच्छन्द प्रकृति का और अनुशासनहीन था तथा स्वभाव का अक्खड़ होने के कारण उसकी किसी से बनती भी नहीं थी। इन्हीं कारणों से वह किसी स्कूल में ज्यादा टिक भी नहीं सका और शिक्षा की दृष्टि से पिछड़ा हुआ ही रह गया। अन्त में उसे सैनिक स्कूल में दाखिल कर दिया गया। यह कार्य उसकी प्रकृति के अनुकूल सिद्ध हुआ और बीस वर्ष की आयु में सैनिक कॉलेज की परीक्षा पास करके वह फौज में नौकरी करने लग गया।

जिस समय की यह बात है टर्की का शासन बहुत दूषित और भ्रष्ट हो गया था पुराने साम्राज्यों की तरह वहाँ के शासक स्वार्थी और ऐश पसन्द बन गये थे। वे देश की उन्नति और प्रजा की सुख-सुविधा के बजाय अन्यायपूर्वक धन प्राप्त करने और उसे भोग-विलास में खर्च करने के इच्छुक थे ऐसी अवस्था में प्रजा में तथा छोटे कर्मचारियों में असन्तोष फैलना स्वाभाविक ही था। तुर्की की सेना में भी यह असन्तोष जा पहुँचा था और वहाँ छोटे अफसरों ने "वतन" नाम की एक क्रान्तिकारी संस्था स्थापित कर ली थी। कमाल भी इस संस्था का एक उत्साही सदस्य था और सब तरह का खतरा उठा कर उसके संचालन में भाग लिया करता था। ये लोग राजकीय कुशासन के साथ ही "धर्म के नेता" माने जाने वाले मुल्ला-मौलवी लोगों के भी बहुत विरुद्ध थे, क्योंकि वे ही पुरानी रूढ़िवादी सामाजिक प्रणाली के समर्थक थे। ये "धर्म जीवी" अपने स्वार्थ के लिये भ्रष्ट शासन-कर्त्ताओं के भी सहायक थे। भ्रष्टाचार शासकीय और धार्मिक दोनों क्षेत्रों से व्याप्त था, इसलिये मुल्ला-मौलवी और शासकगण समान स्वार्थ होने से मिल कर काम करते थे और हर उपाय से जनता को दबी हुई तथा मूढ़ अवस्था में रखने का प्रयत्न करते रहते थे।

कुछ समय पश्चात् क्रान्तिकारी गुप्त संस्था "वतन" का रहस्य खुल गया और अन्य अनेक साथियों के साथ कमाल को जेलखाने में बन्द कर दिया गया। यद्यपि टर्की में राजद्रोह के अपराधियों पर बड़ी सख्ती की जाती थी और उनको जेल में ही मार डाला जाता, था पर अपने कठोर प्रकृति और देशभक्ति की भावना के कारण कमाल को इन बातों की अधिक चिन्ता न थी।

कुछ महीने बाद इस स्थिति में एकाएक परिवर्तन हुआ। सीरिया में उस समय विद्रोह फैल रहा था और उसे दबाने के लिये सुदृढ़ सैनिक अफसरों की आवश्यकता थी। कमाल इस कार्य में योग्य था इसलिये उसे वहाँ सैन्य-संचालन के लिये भेज दिया गया और चेतावनी दे दी गई कि यदि वह पुनः किसी राज्य-विरोधी कार्यवाही में भाग लेगा तो उसका बहुत बुरा परिणाम होगा। कमाल दमिश्क पहुँचकर सैन्य संचालन करने लगा पर क्रान्तिकारी कार्यों को उसने कभी नहीं छोड़ा, क्योंकि वह देश के सुधार और जनता के उद्धार के लिये इसकी आवश्यकता समझता था।

सन् १९०८ में तुर्की में अनवर पाशा की अध्यक्षता में क्रान्ति की आग जल उठी। सरकार ने उसे दबाने को सेनायें भेजीं पर वे सब उसी में मिल गईं। सिपाहियों को बहुत समय से वेतन नहीं मिल रहा था। इससे वे असन्तुष्ट थे। शीघ्र ही कमाल भी उससे शामिल हो गया। पर अपने असहिष्णु स्वभाव के कारण उसकी दूसरे लोगों से बहुत कम बनती थी, इससे वह नये शासन में भी अधिक सफलता प्राप्त न कर सका। इस बीच में उसने त्रिपोली और बाल्कान के युद्धों में काम किया पर टर्की के शासन की कमजोरी और अयोग्यता के कारण इन सब अभियानों में वहाँ की सेना को हारना ही पड़ा। टर्की का विस्तृत साम्राज्य जो सैकड़ों वर्षों में लड़-झगड़ कर इकट्ठा किया गया था अब आन्तरिक निर्बलता और समय की गति के अनुसार न चल सकने के कारण नष्ट-भ्रष्ट होता जाता था। कमाल को यह स्थिति बुरी लगती थी। पर शासन के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मुख्याध्यक्ष अनवर पाशा से उसका मतैक्य न होने से वह अधिक कुछ न कर सका।

सन् १९१४ में प्रथम यूरोपीय महायुद्ध शुरू हुआ और जर्मनी का साथ देने के कारण अंग्रेजों और फ्रांसीसियों ने टर्की पर आक्रमण किया। आरम्भ में तुर्की सेना ने कुछ वीरता दिखाई पर अन्त में उसे हारना पड़ा और उसका पूरा राज्य विदेशियों के अधिकार में चला गया। युद्ध समाप्त हो जाने पर जीतने वाले राष्ट्रों—इंग्लैण्ड, फ्रांस, अमेरिका आदि की जो शान्ति कॉन्फ्रेन्स पेरिस में हुई उसने टर्की का शासन-क्षेत्र दो छोटे प्रान्तों—स्मर्ना और अनातौलिया में सीमित कर दिया, और साथ ही यह भी निश्चय कर दिया कि अब टर्की की सेना, टैक्स, अर्थव्यवस्था, पुलिस आदि विभागों पर विदेशी अफसरों की पूरी देखभाल रहेगी। यह सन्धि-पत्र स्पष्टतः गुलामी के शर्तनामे की तरह था। तुर्की के सुल्तान और बड़े अधिकारियों ने तो अपने धन, मान को बचाने के लिये उसे स्वीकार कर लिया, पर जनता ने इसे राष्ट्र का बहुत बड़ा अपमान माना। अब उसने कमाल पाशा के महत्त्व को समझा। लोगों ने देखा कि और सब लोग इस बीच में मौका देखकर तरह-तरह के रंग बदलते रहे, पर कमाल पाशा सदा देश की स्वतन्त्रता तथा अखण्डता का पक्षपाती रहा और बड़े लोगों के सहमत न होने पर भी उसके लिये संघर्ष करता रहा। इस तथ्य को समझ कर अब लोगों ने उसी को अपना नेता बनाया। उसने सरकारी 'फर्मानों' की परवाह न करके विदेशियों से मोर्चा लिया और प्राणों की बाजी लगा कर उनको पीछे हटाकर स्वतन्त्रता पुनः प्राप्त करली।

सेना की सहायता द्वारा देश की बागडोर हाथ में आने पर उसने टर्की का पुनर्निर्माण का कार्य आरम्भ किया। उसने देख लिया कि यूरोप के प्रगतिशील और सुसंगठित राष्ट्रों के पड़ोस में रहकर पुराने ढर्रे पर चलते रहने से टर्की का अस्तित्व अधिक समय तक स्थिर नहीं रह सकता। वह अन्य राष्ट्रों द्वारा सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जा सकता है। उसने सबसे पहला काम तो यह किया कि खलीफा "धर्मगुरु" का अन्त करके उसे देश से बाहर भेज दिया। उसने स्पष्ट शब्दों में घोषणा की कि "हमको अपने प्रजातन्त्र की सब तरह से रक्षा करनी है। तुर्की सरकार (ओटोमन ऐम्पायर) पुराना ढाँचा बहुत अनुपयुक्त है। क्योंकि वह साम्प्रदायिकता पर टिका हुआ है। इसलिये खलीफा को हटाना आवश्यक है। पुराने ढंग की आदालतों के स्थान पर नये कानून जारी करने चाहिये। जिससे सब को न्याय मिल सके। मौलवियों के मदरसों की जगह सरकारी स्कूल बनने चाहिये। राजनीति और धर्म को एक दूसरे से अलग करना बहुत जरूरी है।"

शासन के मूल स्वरूप को बदलने के पश्चात् उसने टर्की की विचारधारा को ही बदलने का निश्चय कर लिया जिससे वहाँ के निवासी अपने पड़ोसी ईसाई लोगों के मुकाबले में खड़े हो सकें। उसने निश्चय किया कि प्राचीन विचार, स्वभाव, वस्त्र, आचार-विचार, व्यवहार, रहन-सहन सभी को बदलना आवश्यक है, क्योंकि मनुष्य का जीवन एक समग्र इकाई है। उसका एक पहलू गिरा रहना और दूसरे का ऊँचा उठ जाना अस्वाभाविक है। उसने यूरोप के विशेषज्ञों को बुला कर अपने यहाँ के लिये नये नियम निश्चित किये। तुर्की भाषा में से अरबी-फारसी के शब्दों को निकलवा दिया और कुरान का तुर्की भाषा में अनुवाद करके उसी को पढ़ने का आदेश दिया। मसजिदों में नमाज भी अरबी के बजाय तुर्की भाषा में पढ़ी जाने लगी। अभी तक तुर्की भाषा अरबी अक्षरों में लिखी जाती थी, उनके स्थान पर उसने लैटिन लिपि जारी कर दी। उसने तुर्की स्त्रियों को पर्दा त्याग कर सार्वजनिक जीवन में भाग लेने की व्यवस्था की क्योंकि वह जानता था कि जब तक स्त्रियाँ पर्दे में बन्द रहेंगी तब तक देश की ठीक तरह प्रगति नहीं हो सकती।

इस तरह उसने थोड़े ही समय में टर्की की पूरी तरह काया पलट कर दी। आरम्भ में तो कट्टर मुसलमानों ने उसकी बातों को इस्लाम का विरोधी बतला कर बहुत बुरा माना और भीतर ही भीतर कुछ विरोध भी किया। पर जब जनता ने देखा कि कमाल के सुधारों के फलस्वरूप टर्की प्रगति के पथ पर बढ़ता जाता है और वहाँ की भूखी, नंगी जनता की हालत दिन पर दिन सुधरती जाती है, तो उन्होंने कार्यों के महत्त्व को स्वीकार कर लिया और वे उसे "अतातुर्क" (तुर्की का पिता) के नाम से पुकारने लगे।

कमाल पाशा के जीवन की प्रमुख घटनायें इस प्रकार हैं—आधुनिक टर्की के निर्माणकर्त्ता मुस्तफा कमाल पाशा ने जब अपनी युद्धनीति के जोर से तुर्की के शत्रुओं को परास्त करके वहाँ पर प्रजातन्त्र शासन स्थापित कर दिया, तो सबसे पहले उन्हें यह आवश्यकता जान पड़ी कि तुर्की जनता को राष्ट्र के नव-निर्माण के लिये प्रेरणा दी जाये। उस समय अधिकांश लोग युद्ध में भाग लेने के कारण थक चुके थे और आराम चाहते थे। सामाजिक और आर्थिक सुधारों के लिये उनमें विशेष उत्साह न था।

दूसरी बात यह भी थी कि तुर्की जनता इस्लाम की शिक्षाओं के कारण धार्मिक और सामाजिक प्रथाओं की दृष्टि से बड़ी रूढ़िवादी थी। वह इस सम्बन्ध में सबसे बड़ा निर्णायक मुल्ला और मौलवियों को ही समझती थी। ये धर्मजीवी लोग सदैव और सर्वत्र प्रगति-विरोधी होते ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । इसलिये वे लोगों को निरन्तर लकीर के फकीर बने रहने का उपदेश देते रहते हैं । प्राचीन प्रथाओं और रिवाजों में किसी तरह का परिवर्तन करना वे 'गुनाह' बतलाते हैं । इसलिये तुर्की में किसी प्रकार के सामाजिक या धार्मिक सुधारों की बात करना कठिन था । ऐसा करने वाले को निःसन्देह जनता के क्रोध का शिकार बनना पड़ता ।

कमाल पाशा अपने देश वालों की इस धार्मिक कट्टरता को जानते थे तो भी उन्होंने अनुभव किया कि वर्तमान समय में तुर्की तब तक कभी उन्नति नहीं कर सकता और न आधुनिक विज्ञान तथा कला-कौशल में अग्रसर यूरोपियन राष्ट्रों के मुकाबले में अपनी रक्षा कर सकता है, जब तक वह पिछड़े हुए विचारों, रहन-सहन और रीति-रिवाजों को त्यागकर समय के साथ चलने को तत्पर न हो । वे वहाँ के रहन-सहन, वस्त्र, ढंग, व्यवहार, शिष्टाचार आदि सब बातों को आधुनिक ढंग का बनाना चाहते थे, यह कार्य राजनैतिक परिवर्तन की अपेक्षा भी कठिन था । कमाल जानते थे कि मुल्ला-मौलवी तथा उनके संकेत पर चलने वाली मूढ़ जनता उनका घोर विरोध करेगी ।

इसलिये उसने इस कार्य को बड़ी सावधानी से आरम्भ किया और सबसे पहले अपने अंग-रक्षकों को तुर्की टोपी के स्थान पर एक विशेष प्रकार का टोप लगाने को दिये । इसके कुछ समय बाद उसने समस्त सैनिकों को वैसे ही टोप बनवा दिये । जब तक यह परिवर्तन सेना तक ही सीमित रहा तब तक उस तरफ जनता ने ज्यादा ध्यान नहीं दिया और न कोई विरोध किया । फिर जब वह काले सागर की तरफ भ्रमण के लिये गये तो उन्होंने एक स्थान पर भाषण दिया कि "अगर लोग सभ्य होना चाहते हैं तो हमको वैसे ही वस्त्र पहिनने चाहिये जैसे सभ्य देशों के निवासी पहिनते हैं ।" वे स्वयं भी जहाँ कहीं गये टोप लगाकर ही गये । पर जनता ने इस बात को पसन्द नहीं किया और न इस परिवर्तन के लिये किसी प्रकार का उत्साह व्यक्त किया ।

तब कमाल ने इस विषय में शक्ति से काम लेने का निश्चय किया और शासन-सभा में एक कानून पास करके तुर्की टोपी पहनना नियम के विरुद्ध ठहरा दिया । दो दिन बाद पुलिस को हुक्म दे दिया गया कि जो कोई तुर्की टोपी पहिने दिखाई दे वह उससे छीन ली जाये । जिस किसी ने इसका विरोध किया वह गिरफ्तार कर लिया गया । जो किसान गाँव से आते थे नगर में पुलिस के सिपाही उनकी टोपियाँ उतार लेते थे और उनको नंगे सिर वापस जाना पड़ता था ।

इस पर जनता में विरोध की लहर फैल गई । मुल्ला लोगों ने उनको खूब भड़काया । कई शहरों में लोगों ने सरकारी कर्मचारियों पर आक्रमण किया और पत्थर फेंके । शासन-सभा में नूरी पाशा ने इस कानून का विरोध किया । मुस्तफा कमाल ने भी सुधार करने का निश्चय कर लिया था और उसने क्रोधपूर्वक कहा—"क्रान्ति का आधार खून होना चाहिये । जो क्रान्ति खून के आधार पर नहीं होती वह बहुत दिनों तक नहीं ठहर सकती ।" उसने नूरद्दीन पाशा को शासन-सभा से निकाल दिया और विरोध करने वालों को कड़ी सजायें दीं । विद्रोह शान्त हो गया और प्रत्येक तुर्क टोप लगाने लग गया ।

यह एक ऐसे व्यक्तित्व की कार्य-प्रणाली का नमूना है । जिसकी गिनती यद्यपि शिक्षा, विद्या तथा चरित्र की निगाह से सामान्य श्रेणी में ही की जा सकती है, पर जिसने कर्मठता, साहस और निःस्वार्थता के बल पर एक राष्ट्र का नव-निर्माण करके अपना नाम इतिहास में अमर कर दिया । वह एक सामान्य लकड़ी के व्यापारी का पुत्र था । बचपन में गरीबी और पिता के मर जाने के कारण उसकी शिक्षा-दीक्षा भी नहीं हुई । बड़ा होने पर जब उसे पढ़ने को बैठाया गया तो अपने अक्खड़ और लड़ाकू स्वभाव के कारण स्कूल में टिक न सका । फिर जब फौज में भर्ती हुआ तो कुछ ही समय में अन्य सिपाहियों और अफसरों की तरह शराब और स्त्रियों के फेर में पड़ गया । सैनिक योग्यता अथवा राजनीतिक ज्ञान की निगाह से भी वह बड़ी ऊँची श्रेणी का न था तो भी देश-प्रेम, जातीय-उत्थान की लगन होने के कारण और लगातार अध्यवसाय के फलस्वरूप वह सर्वोच्च राष्ट्रीय सम्मान का अधिकारी बन गया और उसने तुर्की के उद्धार का वह काम सम्पन्न करके दिखा दिया जिसे लोगों ने असम्भव समझ रखा था ।

भेड़ चराने वाले से सेनाध्यक्ष

कमाल का पिता चाहता था कि उसे अपनी ही तरह लकड़ी का सौदागर बना दे । उसकी माँ जुबैदा उसे एक मौलवी बनाना चाहती थी । सबसे पहले उसे एक मस्जिद के मदरसे में भेजा गया था जहाँ उसे कुरान पढ़ाई गई । फिर वह एक छोटे स्कूल में पढ़ने को बैठा दिया गया जहाँ उसने पढ़ाई में साधारण उन्नति की ।

इसी समय बाप की मृत्यु हो जाने से उसे अपने मामा के यहाँ रहना पड़ा । यहाँ वह अस्तबल की सफाई करता, भेड़ें चराता और खेतों की देखभाल करता । इससे उसमें स्वतन्त्रता का भाव बढ़ गया और स्वास्थ्य भी मजबूत हो गया । कुछ समय बाद वह अपनी मौसी की सहायता से स्कूल में दाखिल कर दिया गया । पर अपने स्वच्छन्द स्वभाव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

के कारण वहाँ शिक्षकों के अनुशासन में रहना नहीं चाहता था और चाहे जब झगड़ने लग जाता था। इस पर एक दिन शिक्षक ने उसको बहुत पीटा और वह स्कूल को सदा के लिये छोड़कर चला आया।

इसके बाद वह अपने मामा की सलाह से सैनिक स्कूल में दाखिल होने को चला गया, क्योंकि यह काम उसकी रुचि के अनुकूल था और उस स्कूल में किसी तरह का खर्च भी नहीं लगता था। वहाँ जाकर मुस्तफा कमाल काफी तरक्की करने लगा। वहाँ भी वह दूसरे लड़कों से प्रायः अलग रहता था। जब अन्य लड़के उससे साथ रहने को कहते तो वह फौरन यही जबाव देता—"मैं तुम लोगों की तरह रहना नहीं चाहता। मैं कुछ और होना चाहता हूँ।" उस बारह-तेरह साल की आयु में ही न मालूम उसके भीतर कैसी महत्त्वाकांक्षा जागृत हो गई थी कि वह गरीब घर का होने और अभी तक भेड़ें चराने का काम करने पर भी अपने को औरों से श्रेष्ठ समझता था और सब जगह सर्वोच्च पदवी पर ही रहना चाहता था। ऐसी महत्त्वाकांक्षा मनुष्य को आगे तो बढ़ाती है, पर यदि वह नैतिक और चारित्रिक दृष्टि से उच्चकोटि का न हुआ तो उसमें अहंकार, द्वेष, ईर्ष्या आदि दुर्गुण भी पैदा कर देती है।

सैनिक-स्कूल की पढ़ाई कमाल ने प्रशंसनीय ढंग से पूरी कर ली और सत्रह वर्ष की आयु में वह सैनिक- कॉलेज में भेज दिया गया। यहाँ पढ़ाई के अलावा उसे संसार और अपने देश की स्थिति का भी ज्ञान होने लगा। उसने देखा कि तुर्की का साम्राज्य अब अपनी आन्तरिक दुर्बलता के कारण लड़खड़ा रहा है। आसपास के ईसाई राज्यों ने उसको चारों तरफ से घेर कर दबा रखा है और उसके एक-एक भू-भाग को हड़प जाने की योजना बना रहे हैं। तुर्की सम्राट अब्दुल हमीद शक्तिहीन और ऐश-आराम में निमग्न व्यक्ति था। वह जितना विदेशियों से भयभीत हो रहा था, उतना ही प्रजा से भी डरता रहता था। वह जानता था कि जनता उसके कुशासन से ऊब उठी है और नवयुवकों में यूरोप के स्वाधीनता आन्दोलन के फलस्वरूप क्रान्ति की भावना घर करती जाती है। इसलिये उसने प्रत्येक नये विचार और सुधार के लिये रोक लगा दी और सब स्थानों में जासूस नियुक्त कर दिये थे। वह नागरिक अधिकारों की माँग को दबा देता था। जो लोग इन आदेशों का उल्लंघन करते थे उनको बिना विचार के जेलों में ठूँस दिया जाता था। अगर वे ईसाई होते थे तो उनको कत्ल कर दिया जाता था।

ऐसे अन्यायपूर्ण शासन का परिणाम निश्चित रूप से क्रान्ति होती है। हम आज प्रजातन्त्र शासन में भी अनेक दोष देख रहे हैं, उसमें आर्थिक भ्रष्टाचार की सम्भावना बहुत अधिक रहती है। पर प्रत्येक व्यक्ति अपने मन की बात को स्वतन्त्रतापूर्वक कह सकता है और मन में उत्पन्न हुए रोष के भाव को तीव्र से तीव्र शब्दों में प्रकट कर सकता है, इससे वहाँ सशस्त्र क्रान्ति की सम्भावना बहुत कम हो जाती है। इंग्लैण्ड और अमेरिका इसके उदाहरण हैं। पर जहाँ निरंकुश बादशाहों का शासन होता है या 'डिक्टेटरशिप' (अधिनायकवाद) चलता है, वहाँ जन-भावनाओं को प्रकट करने का कोई अवसर नहीं मिलता और क्रान्ति का ज्वालामुखी प्रायः फूटा करता है।

यही दशा उस समय तुर्की में हो रही थी। तुर्की का साम्राज्य जो दो-तीन-वर्ष पहले यूरोप में दूर-दूर तक फैला था और जिसने आसपास की अनेक जातियों को अपने अधीन कर लिया था अब अपनी आन्तरिक निर्बलता के कारण प्रतिपक्षियों का शिकार हो रहा था और वे उसके लिये एक-एक अंग को छीनते-झपटते जाते थे।

जिस समय कमाल पाशा सैनिक कॉलेज में अध्ययन कर रहा था उस समय तुर्की के शासन की हालत ऐसी ही खराब हो रही थी और कॉलेज के विद्यार्थियों में भी क्रान्तिकारी विचार फैल रहे थे। जवानी के जोश में कमाल भी उस तरफ झुक पड़ा महत्त्वाकांक्षी और कल्पनाशील तो वह था ही, बस क्रान्ति करके विद्रोह का नेता बनने और सुल्तान के स्वेच्छाचारी शासन का अन्त करने का स्वप्न देखने लगा। इस प्रकार की कल्पनाओं में वे वह अपने को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान देता था और तुर्की के भाग्य-विधाता के रूप में अनुभव करने लगता था। उसने फ्रांसीसी भाषा सीखी और फेथी नामक एक साथी के साथ रूसो और हाब्स की क्रान्तिकारी भावों में युक्त पुस्तकों को बड़े ध्यान से पढ़ने लगा। इंग्लैण्ड के जान स्टुआर्ट मिल के आर्थिक विचारों को भी उसने समझने की चेष्टा की। कॉलेज में ऐसे साहित्य को पढ़ने का निषेध था और जिसके पास ऐसी पुस्तकें मिलें उसको जेल की सजा दिये जाने का नियम था, तो भी वह इससे भयभीत नहीं हुआ और क्रान्ति के सम्बन्ध में उसके विचार दिन पर दिन दृढ़ ही होते गये।

सैनिक अफसर के रूप में

बीस वर्ष की आयु में कमाल ने कॉलेज की पढ़ाई पूरी कर ली और वह सेना में एक छोटा लेफ्टीनेण्ट बन कर तुर्की की राजधानी कुस्तुनतुनिया में भेज दिया गया। अभी तक तो उसका जीवन सालोनिका और मोनास्टिर जैसे साधारण कस्बों में बीता था, पर जब वह कुस्तुनतुनिया के विशाल और चमक-दमकपूर्ण नगर में पहुँचा तो उसकी आँखें चकाचौंध हो गईं। अभी तक उसे जीवन का कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुभव न था । उसने किसी श्रेष्ठ पारिवारिक वातावरण में रहकर सभ्यता, नीति, धर्म की कुछ भी शिक्षा नहीं पाई थी । उसकी माता जुबैदा अवश्य एक धार्मिक विचारों की स्त्री थी, पर कमाल उससे हमेशा लड़ता-झगड़ता रहता था और जब से सैनिक स्कूल में पढ़ने लगा तब से उन दोनों का सम्पर्क भी बहुत कम हो गया था । इस बीच उसकी माँ ने मुसलमानी धर्म के नियमानुसार एक धनी सौदागर से पुनर्विवाह कर लिया था । यह कार्य कमाल को पसन्द नहीं आया और उसने अपनी माँ से मिलना-जुलना भी छोड़ दिया । कॉलेज में भी वह अक्खड़पन का व्यवहार करता रहा जिससे किन्हीं उच्च विचार के व्यक्तियों से उसका सम्बन्ध स्थापित न हो पाया ।

ऐसी अवस्था में जब वह कुस्तुनतुनिया के सर्वथा नये और आकर्षक वातावरण में पहुँचा तो उसकी जीवनधारा एकदम परिवर्तित हो गई । वह शराबी, जुआरी और वेश्यागामी सैनिकों की संगति में पड़ गया और इन दुर्गुणों को सीखने लगा । सैनिक-जीवन में प्रायः इन बातों को अधिक दूषित भी नहीं माना जाता, क्योंकि वे लोग प्रायः अविवाहित और परिवार से पृथक रहने वाले होते हैं, नीति और धर्म की चर्चा वहाँ कदाचित ही होती है । पैसा भी दूसरे लोगों से ज्यादा मिलता है, शरीर में पूरी ताकत होती है, वासनाओं के नियन्त्रण का कोई प्रश्न नहीं होता, बस, वे शीघ्र ही शराब और व्यभिचार जैसे दुर्गुणों में फँस जाते हैं ।

पर कमाल का यह हाल दो-चार वर्ष ही रहा । उसके भीतर जो सर्वोच्च पद पाने और तुर्की का सुधार करने की महत्त्वाकांक्षा थी उसने फिर जोर पकड़ा और दुर्व्यसनों की तरफ से ध्यान हटाकर सेना में उच्च स्थान प्राप्त करने का प्रयत्न आरम्भ किया । उस देश की तत्कालीन परिस्थिति में छोटे-बड़े वंश या धनी-निर्धन के भेद से कोई खास अन्तर नहीं पड़ता था । वहाँ वे स्वेच्छाचारी शासन में जो व्यक्ति शक्तिशाली होता और साहस करके आगे बढ़ने के लिये जोर लगाता वही ऊँचा चढ़ सकता था । कमाल का जन्म यद्यपि एक साधारण ग्रामीण परिवार में हुआ था, पर इससे उसकी प्रगति में कोई बाधा नहीं पड़ी और आगामी परीक्षाओं में सफलतापूर्वक उत्तीर्ण होकर वह सन् १९०५ में सेना में कप्तान के पद पर जा पहुँचा ।

'वतन' की सदस्यता और गिरफ्तारी

कमाल एक सिपाही था, तो भी उसका विशेष आकर्षण राजनीति की तरफ था । उसने यूरोप के स्वतन्त्रतावादी और क्रान्तिवादी लेखकों के जिन विचारों को पढ़ा था, उसके फलस्वरूप वह भी क्रान्ति का पक्षपाती बन गया था । इस प्रकार के विचार दूसरे अनेक सैनिक अफसरों में भी फैल रहे थे, क्योंकि सभी को यह अनुभव हो रहा था कि तुर्की का वर्तमान शासन अयोग्य और भ्रष्ट तरीके से चलाया जा रहा है, जिससे वह आसपास के अन्य राष्ट्रों के मुकाबले में पिछड़ रहा है और वह दिन दूर नहीं की यूरोपियन देश उसको आपस में बाँटकर हड़प जायेंगे ।

इस स्थिति को समझ कर सेना के अनेक छोटे दर्जे के अफसरों ने एक क्रान्तिकारी संगठन बनाया जिसका नाम 'वतन' था । वास्तव में यह संस्था उसी समय से स्थापित की गई जबकि मुस्तफा कमाल सैनिक कॉलेज में शिक्षा प्राप्त कर रहे थे । उसके सदस्य तुर्की की तत्कालीन राजनैतिक तथा सामाजिक अवस्था की आलोचना करते थे और सुल्तान के शासन तथा उसके अत्याचारों के बहुत विरुद्ध थे । यह संस्था मौलवियों को भी बहुत निकम्मा और हानिकारक मानती थी, क्योंकि ये ही लोग उन पुरानी रूढ़ियों और परम्पराओं को कायम रखने वाले थे, जिनके कारण देश और जाति की उन्नति में बाधा पड़ती थी । उस समय तुर्की के तमाम कानून कुरान पर आधारित थे और उनका निर्णय मस्जिदों में जमा होने वाले मौलवी और मुल्ला करते थे । पर ये कॉलेज के नौजवान सैनिक विद्यार्थी, जिनको यूरोपियन विचारों की हवा लग चुकी थी इसको बहुत बुरा समझते थे । उन्होंने प्रण किया था कि वर्तमान स्वेच्छाचारी शासन का अन्त करके जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों का पार्लियामेण्टरी शासन स्थापित करने का प्रयत्न करेंगे । वे लोग स्त्रियों की पराधीनता और पर्दा-प्रथा के विरुद्ध थे ।

मुस्तफा कमाल ने अब सेना में कप्तान बनकर फिर से 'वतन' की कार्यवाहियों को जारी किया । अब सरकारी आज्ञा से कॉलेज में उसे बन्द कर दिया था, पर वहाँ से पढ़कर सेना में काम करने वाले अफसरों ने उसके नये गुप्त केन्द्र स्थापित कर लिये । कमाल ने एक कमरा किराये पर लेकर उसमें 'वतन' का कार्यालय बनाया । वहाँ पर 'वतन' के सदस्यों की गुप्त बैठकें होती थीं जिनमें राष्ट्र की स्थिति पर विचार किया जाता था, साथ ही क्रान्ति द्वारा मौजूदा शासन को किस तरह पलटा जा सकता है, इस सम्बन्ध में भी तरह-तरह की युक्तियों पर परामर्श होता था । यह कार्य खतरनाक था और तुर्की जैसे स्वेच्छाचारी एकतन्त्र शासन वाले देश में राजविद्रोह की सजा बिना किसी प्रकार के मुकदमे के जेल में सड़ाकर मार डालना ही थी । मुस्तफा कमाल इस बात को खूब समझता था इसलिये इस संस्था का सब काम बड़ी सावधानी से किया जाता था । नये सदस्यों की सच्चाई की विशेष उपायों से जाँच की जाती थी, बातचीत के लिये संकेत नियत किये गये थे और अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रक्षा के लिये कितने ही गुप्त स्थान बना लिये गये थे। कमाल इन सब कार्यों में काफी निपुण हो गये थे।

परन्तु सरकारी पुलिस को इस संगठन का पता था और वह समय-समय पर बड़े अधिकारियों को इसकी कार्यवाही की सूचना देती रहती थी। उच्च अधिकारियों ने आज्ञा दी कि उनके विरुद्ध पक्के प्रमाण इकट्ठे कर लिये जायें और उनको ऐसे समय गिरफ्तार किया जाये जब वे साजिश करने के लिये इकट्ठे हुए हों। 'वतन' के सदस्यों में जोश अधिक पर होश कम था। इसलिये खुफिया पुलिस का एक व्यक्ति उनके संगठन में धोखे से सम्मिलित हो गया और उसने उनको गुप्त-मीटिंग करते हुए गिरफ्तार करा दिया।

इन गिरफ्तार होने वालों में कमाल भी था। उसके विरुद्ध पुलिस ने बहुत से सबूत इकट्ठे कर लिये थे। उसका अभियोग अधिक खतरनाक माना गया और इसलिये उसको अन्य सब लोगों से पृथक करके कालकोठरी में बन्द कर दिया गया। उसकी माता जुबैदा उससे मिलने को आई, पर उसे भेंट करने की स्वीकृति नहीं दी गई।

कमाल को समय-समय पर जाँच पड़ताल के अवसर पर बाहर निकाला जाता था और फिर उसी अँधेरी गन्दी कोठरी में बन्द कर दिया जाता था। जेल का जीवन अवश्य ही कठिन था, पर कमाल को इस बात का सन्तोष था कि वह अपने देश और जाति के लिये कष्ट सहन कर रहा है। निरंकुश शासकों को हटाने के लिये कुछ लोगों को बलिदान के लिये तैयार होना ही पड़ता है। स्वतन्त्रता देवी कष्ट-सहन और रक्त-दान के बिना प्रसन्न नहीं होती।

पर अकस्मात् स्थिति में परिवर्तन हुआ। एक दिन वह इस्माईल हकी पाशा के दफ्तर में बुलाया गया। उसने कहा—"तुमने अब तक सैनिक शिक्षा और कार्यों में बहुत योग्यता दिखाई है और तुम सच्चाई के साथ उस काम को करते रहो तो सरकारी सैन्य-विभाग में बहुत उन्नति कर सकते हो परन्तु तुमने ऐसा काम किया है जिससे तुम और तुम्हारी वर्दी कलंकित होती है। खराब साथियों में रहकर तुमने जुआ खेला है और शराब पी है। इससे भी अधिक दोष यह है कि तुम राजद्रोही बने। तुमने राजनीति में भाग लेकर अपने सुल्तान के विरुद्ध आन्दोलन किया और अपने साथियों को भी वैसा करने की प्रेरणा दी। फिर भी सुल्तान ने तुम्हारे ऊपर दया दिखाने का निश्चय किया है। तुम नौजवान और मूर्ख हो, शायद तुम खराब होने की अपेक्षा अधिक अक्खड़ और जंगली हो।

"तुम दमिश्क में घुड़सवारों की रेजीमेण्ट में नियुक्त किये जाते हो। तुम्हारा भविष्य वहाँ से प्राप्त हुई रिपोर्टों पर निर्भर होगा। तुमको अब यह मूर्खता बन्द कर देनी चाहिये और अपने सैनिक कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिये। ध्यान रहे तुमको दूसरा मौका नहीं दिया जायेगा।"

उसी समय उसको बिना किसी से मिले सीरिया भेज दिया गया, जहाँ से उसके सैनिक दल को तुरन्त ही एक पहाड़ी जाति के विद्रोह को दबाने के लिये कूच करना पड़ा। उस काम को पूरा करके वह दमिश्क आया तो फिर 'वतन' की शाखा उस नगर में खोलने का प्रयत्न करने लगा। वह हृदय से सच्चा क्रान्तिकारी था जिसे किसी तरह की सजा और धमकी न दबा सकती थी। उसने देखा कि यहाँ के सभी नवयुवक अफसर सुल्तान के शासन से नाराज हैं और देश में क्रान्ति लाने के पक्ष में हैं। वह उनके संगठन में लग गया और थोड़े समय में सेना का बड़ा भाग उसके पक्ष में हो गया। उसको कुछ अनुभवी लोगों ने सलाह दी कि क्रान्ति का सबसे अधिक जोर 'बाल्कन-प्रदेश' में है, इसलिये उसको सालोनिका जाकर काम करना चाहिये। वह छुट्टी लेकर और वेश बदलकर सालोनिका जा पहुँचा और अपनी माँ के मकान में छुपकर क्रान्तिकारियों का संगठन करने लगा।

किन्तु खुफिया पुलिस ने यहाँ भी उसका पता लगा लिया और कुस्तुनतुनिया से उसके नाम वारण्ट आ गया। परन्तु सालोनिका का पुलिस अधिकारी जेमिल स्वयं 'वतन' का सदस्य रह चुका था। उसने कमाल को सूचना दे दी कि वह दो दिन के भीतर यहाँ से भाग जाये। वह तुरन्त वहाँ से चलकर यूनान आया और वहाँ से जाफा पहुँचा गया। वहाँ भी उसकी गिरफ्तारी का हुक्म आ चुका था पर यहाँ भी जो अफसर उसकी गिरफ्तारी का हुक्म लाया वह विरोधी विचारों का था। उसने कमाल को गाजा भेज दिया और सुल्तान के पास रिपोर्ट भेज दी कि इस 'हुक्म में कोई गलती हो गई है। कमाल तो निरन्तर गाजा (सीरिया) में ही था। वहाँ अन्य सैनिक अफसरों ने भी इस बात का समर्थन कर दिया। इस प्रकार क्रान्तिकारियों के संगठन के प्रभाव से इस बार वह बाल-बाल बच गया।

एक साल तक वह चुपचाप रहा, क्योंकि बड़े अधिकारियों को जो सन्देह हो गया था वह दूर हो जाना आवश्यक था। उसने अपना सैनिक-कर्त्तव्य इतने परिश्रम और सावधानी से पूरा किया कि वहाँ का सेनापति उससे प्रसन्न हुआ और उसने उसकी प्रशंसा की रिपोर्ट प्रधान सैनिक कार्यालय में भेज दी। फिर वह अपने तबादले की कोशिश करने लगा और अपनी चतुराई से सालोनिका ही जा पहुँचा।

उस समय सालोनिका में एक बहुत बड़ा क्रान्तिकारी दल काम कर रहा था जिसका काम 'यूनियन और प्रोग्रेस'

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

था। सालोनिका में ऐसे बहुत से यहूदी रहते थे जो इटली की प्रजा थे, तुर्की की पुलिस न तो उनकी तलाशी ले सकती थी और न उनको गिरफ्तार कर सकती थी। इसलिये उक्त संस्था के सदस्य अपनी बैठकें यहूदियों के घरों में किया करते थे। कमाल भी उस संस्था में शामिल हो गया। यद्यपि वह संस्था अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर भी विचार किया करती थी, पर कमाल को उसमें रुचि न थी। वह एक तुर्क की हैसियत से अपने देश को विदेशियों तथा सुल्तान के पंजे से छुड़ाकर स्वतन्त्र और उन्नतिशील बनाना चाहता था। जब उसकी माँ को उसके गुप्त संस्था का सदस्य होने का हाल मालूम हुआ तो उसने कमाल को बुरा-भला कहा पर वह उससे भी लड़ने लगा। किसी का हस्तक्षेप सह सकना उसकी प्रकृति के अनुकूल न था। इसलिये उसने अपने रहने को पृथक् मकान ले लिया।

'यूनियन' में भी उसने जाना कम कर दिया क्योंकि वहाँ पर वह अन्य सदस्यों की अपेक्षा नया समझा जाता था और इसलिये उसके हाथ में किसी प्रकार के अधिकार न थे और न वह अपनी पसन्द का कोई कार्यक्रम उसके द्वारा पूरा करा सकता था। वह कोई अवसर ढूँढ़ रहा था जबकि क्रान्ति असली रूप में शुरू की जा सके उसके द्वारा देश का कायाकल्प किया जा सके।

'यंग तुर्क दल' की क्रान्ति

सन् १९०८ में तुर्की में एकाएक क्रान्ति की आग जल उठी। उसका प्रमुख नेता अनवर पाशा था। वह भी एक फौजी अफसर था और उसके विद्रोही-दल में अधिक संख्या सैनिक लोगों की ही थी। सुल्तान ने उसको दबाने के लिये कई सेनायें भेजीं, पर वे सब अनवर के साथ मिल गईं। सिपाहियों को बहुत दिनों से वेतन नहीं मिल रहा था, इससे वे असन्तुष्ट थे। कमाल कुछ समय तक तो क्रान्ति से अलग रहा, क्योंकि उसके संचालकों पर उसे भरोसा न था और उसके अनुयायियों की संख्या बहुत कम थी, परन्तु जब सरकारी कुप्रबन्ध और भ्रष्टाचार के कारण जनता और सेना स्वयमेव क्रान्तिदल वालों का साथ देने लगी तो कमाल भी उसमें सम्मिलित हो गया। जब सालोनिका के बड़े चौराहे पर खड़े होकर अनवर ने तुर्की के लिये नये शासन विधान की घोषणा की तो कमाल भी सैनिक अफसरों के साथ वहाँ था। यद्यपि इस समय क्रान्ति की बागडोर अन्य लोगों के हाथ में थी और जब देश की कायापलट का समय आ गया तो वह अलग नहीं रह सकता था। देशोद्धार के यज्ञ में प्रत्येक देशभक्त का आहुति डालना परम कर्त्तव्य था।

अब तुर्की के वे राजनीतिक नेता भी विदेशों से वापस आने लगे जिनको सुल्तान अब्दुल हमीद ने देश से निर्वासित कर दिया था, वे लोग सेना को लेकर राजधानी में पहुँचे और शासन सत्ता को अपने हाथ में ले लिया। तुर्की की इस अव्यवस्था को देखकर पड़ोसी देशों ने भी लूटमार आरम्भ कर दी। आस्ट्रिया ने बोसेनिया और हर्जीगोविना के प्रदेशों पर अधिकार कर लिया। क्रीट के टापू को यूनान ने छीन लिया। बल्गेरिया, रूस की सहायता से स्वतन्त्र हो गया। अल्बानिया और अरब में विद्रोह होने लगे।

इस प्रकार जिस साम्राज्य को तुर्की-सुल्तानों ने सैकड़ों वर्षों तक लड़-झगड़कर इकट्ठा किया था और जिसके निवासियों को अभी तक वे शक्ति द्वारा दबाकर रखे हुए थे, वह उस शक्ति के क्षीण होने से तीन-तेरह होने लग गया। इनमें से अधिकांश देशों के निवासी ईसाई थे, जिनके साथ तुर्की शासकों का व्यवहार सदा पक्षपात और निर्दयतापूर्ण रहा था। अब अवसर पाकर वे विधर्मी मुसलमानों के बन्धन से छुटाकारा पाने की कोशिश करने लगे और थोड़े ही समय में तुर्की साम्राज्य का बहुत-सा भाग दूसरे राज्यों के साथ मिल गया। कमाल इस स्थिति को ध्यानपूर्वक देख रहा था और गुण-दोषों को परख रहा था। यद्यपि वह कट्टर तुर्क था और अपने देश को विदेशियों के प्रभाव से मुक्त करने का दृढ़ पक्षपाती था, पर अन्य धर्म वालों को पराधीन बनाना भी उसे उचित नहीं जान पड़ता था। इससे वह इन आपसी झगड़ों में ज्यादा नहीं पड़ा। दूसरी बात यह भी थी कि अभी तक क्रान्तिकारी सरकार में उसका कोई भी न था। शासन-संचालन पुराने बड़े नेता ही कर रहे थे, तीस वर्षीय कमाल को अभी 'बड़ी कमेटी' में स्थान नहीं मिला था।

इसके अतिरिक्त वह स्वभाव से ही अक्खड़ और किसी के भी दबाव को सहन न कर सकने वाला व्यक्ति था। कमेटी वालों की भी उसके सम्बन्ध में यही राय थी कि 'कार्य की दृष्टि से पर्याप्त योग्य है, पर अपने असहिष्णु स्वभाव के कारण दूसरों के साथ मिल-जुलकर काम नहीं कर सकता। उसमें प्रत्येक व्यक्ति की आलोचना करने का बड़ा दुर्गुण है।' इसलिये उन्होंने उसको केन्द्रीय शासन में न रखकर इधर-उधर के कामों में लगा दिया। सन् १९१० में वह जनरल अली रजा के साथ सैनिक समझौता करने फ्रांस भेजा गया। वापस आने पर जनरल ने उसकी योग्यता और कर्त्तव्य-परायणता की बहुत प्रशंसा की। नई सरकार ने उसको सालोनिका के किसी सैनिक-स्कूल का अध्यक्ष बनाकर भेज दिया जिसमें उसने शिक्षा प्राप्त की थी।

देशरक्षा के लिये संघर्ष

पर क्रान्ति हो जाने पर भी तुर्की की दशा में विशेष सुधार नहीं हुआ था। सुल्तान का स्वेच्छाचारी शासन हट गया था और पुराने दकियानूसी कानून भी बदल दिये गये थे, पर क्रान्ति के संचालकों में कोई ऐसा महान उद्देश्य वाला

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिभाशाली नेता न था जो स्वार्थ छोड़कर केवल देशोद्धार के लक्ष्य में ही अपने को खपा दे। वहाँ पर अनवर, तालत, जमाल आदि जितने सैनिक नेता शासन कर रहे थे, वे सब एक-दूसरे को दबाकर स्वयं सर्वोच्च सत्ता हथियाने की फिकर में रहते थे। इसके फलस्वरूप विदेशी लोगों का दाँव लग रहा था और वे वहाँ के शासन में हस्तक्षेप कर रहे थे। खासकर जर्मनी ने अपने बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ कुस्तुनतुनिया में काम करने को भेज दिये थे। वे वहाँ की सेना में भी अपना प्रभाव जमा रहे थे। वेतन, संगठन और सामान्य शासन की व्यवस्था में कोई सुधार नहीं हो सका था और देश में सर्वत्र असन्तोष व्याप्त था।

मुस्तफा कमाल भी अब सेना में एक बड़ा अधिकारी था और अन्य अनेक अफसर उसकी बातों को सुनते और मानते थे। अब वह स्वयं अपना एक दल बनाने लगा और अपने अनुयायियों को संगठित करने लगा। शीघ्र ही इसकी खबर युद्ध-सचिव महमूद शौकत पाशा तक पहुँची। उसने कमाल को सालोनिका की सेना का सेनापति बनाकर भेज दिया पर वहाँ भी वह अपने कार्यक्रम में संलग्न रहा। वह बन्द कमरों में गुप्त सभायें करने लगा। उसका कथन था कि "तुर्की तुर्कों के लिये है।" वह चाहता था कि देश में से विदेशियों के प्रभाव को समाप्त करके एक सुदृढ़ सरकार स्थापित की जाये। जासूसों ने उच्च सरकारी अधिकारियों को इन सब बातों की खबर दे दी। इस पर उसे सैन्य संचालन के कार्य से हटाकर सेना के दफ्तर में भेज दिया गया। वहाँ पर वह छोटे राजनीतिज्ञों से मिलकर अपने विचारों का प्रचार करने की कोशिश करने लगा, पर किसी ने उसकी तरफ ध्यान नहीं दिया। इससे वह बहुत असन्तुष्ट हुआ और राजनाति के पृथक होकर फिर पुराना खाने-पीने का जीवन बिताने लगा। फिर भी वह अवसर की खोज करता रहता था।

सन् १९११ में इटली ने तुर्की के अधीनस्थ 'त्रिपोली' देश पर आक्रमण कर दिया जो उत्तरी अफ्रीका में है। तुर्की सरकार ने उसे त्रिपोली पहुँचकर काम करने का आदेश दिया पर जब वह मिस्र की सीमा पर पहुँचा तो मालूम हुआ कि अंग्रेजों ने इस युद्ध में मिस्र को तटस्थ करार देकर आगे जाने का रास्ता बन्द कर दिया है। यह बात कमाल को बहुत बुरी लगी, क्योंकि मिस्र तुर्की के आधीन माना जाता था, पर अंग्रेज वहाँ जबर्दस्ती हस्तक्षेप कर रहे थे। फिर भी उसने हिम्मत न हारी और वह अपने सब साथियों को छोड़कर एक अरब निवासी का-सा वेश बनाकर मिस्र में घुस गया लेकिन न तो वह अरबी भाषा ठीक तरह जानता था और न उसकी आँखें और बाल अरबों की तरह थे। इससे वह शीघ्र ही पहिचान लिया गया। वह हर तरह का खतरा उठाते हुए आगे बढ़ता गया और अन्त में तुर्क सेना के कैम्प में पहुँच गया। वहाँ सैन्य-संचालन करते हुए वह एक वर्ष तक इटली वालों से युद्ध करता रहा पर उनकी बहुत बड़ी सेना के कारण उसे अधिक सफलता न मिल सकी।

कुछ समय बाद बाल्कान के कई देशों ने मिलकर तुर्की पर चढ़ाई कर दी। अब तुर्की को अपनी जान बचाना कठिन हो गया और इस कारण उसने अपनी दूर देशों में फैली हुई सेना को वापस बुलाकर घर की रक्षा करने का प्रयत्न किया। मुस्तफा कमाल भी कई देशों का चक्कर खाकर कठिनाई से कुस्तुनतुनिया पहुँचा। वहाँ पर उसने देखा कि देश की हालत बहुत खराब है और तुर्की सेना चारों तरफ हारती जा रही है। राजधानी घायलों से भरी हुई थी और अस्पतालों में जगह न होने से मस्जिदों तथा गिरजों में अस्थायी अस्पताल बनाकर घायलों को रखा गया था। खाने के पदार्थों का अकाल पड़ गया था और हजारों व्यक्ति भूखे मर रहे थे। हैजा भी फैल गया था और वह भी हजारों व्यक्तियों की भेंट ले रहा था। इससे तुर्की सरकार की हालत डाँवाडोल हो रही थी।

ऐसे अवसर पर मुस्तफा कमाल तुर्की के राजनीतिज्ञों के भीतरी झगड़ों में न पड़कर देश-रक्षा के लिये युद्ध-क्षेत्र में पहुँचा और एक सेना की अध्यक्षता ग्रहण कर बल्गेरिया वालों का सामना करने लगा पर तुर्की की दशा दिन पर दिन कमजोर होती जाती थी इसलिये उसे विशेष सफलता न मिल सकी। उधर कई राजनीतिज्ञ देश का बहुत-सा भाग शत्रुओं को देकर सन्धि चाहते थे। अनवर पाशा सबको दबाकर अपनी नीति के अनुसार काम करना चाहता था। उसने सेना के नवयुवक अफसरों को मिलाकर कितने ही पुराने अधिकारियों को गोली से उड़वा दिया और स्वयं लड़ने लगा पर शत्रुओं की अधिकता के कारण तुर्की वालों को बीच में सामान्य जीत हो जाने पर भी अन्त में हारना ही पड़ा और देश का बहुत-सा भाग उनके अधिकार से निकल गया।

वह जमाना ऐसी ही उथल-पुथल का था, न किसी व्यक्ति के हाथ में सत्ता के रहने अथवा चले जाने का भरोसा था और न विदेशों के आक्रमण और मित्रता का। चारों तरफ राजनीतिक चालें चली जा रही थीं, उनमें जहाँ किसी से चूक हुई कि फिर उसका ठिकाना नहीं लगता था। आज जिसको लोग झुक-झुककर सलाम करते थे, हर बात में 'जी हाँ'-जी हाँ' की धुन लगा देते थे, कल उसके दरवाजे पर आने पर भीतर घुसने भी नहीं देते थे। सब अपने-अपने स्वार्थ में मतवाले हो रहे थे और किसी तरह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपनी ताकत बढ़ाना चाहते थे पर उस समय हालत इतनी तेजी से बदल रही थी और संसार के राजनीतिक क्षेत्र में ऐसे दाँव-पेच चले जा रहे थे कि किसी के स्थायित्व का कोई ठिकाना न था । क्षण भर में राजा और क्षण भर में भिखारी की कहावत स्पष्ट रूप से चरितार्थ हो रही थी । तुर्की की जनता में सैकड़ों वर्षों से निरंकुश शासन के नीचे रहने का कारण राजनीतिक चेतना का अभाव था । वह जिसको सत्तारूढ़ और शक्तिशाली देखती उसी का अनुसरण करने लग जाती थी ।

उस समय अनवर पाशा का सितारा बुलन्दी पर था और वह धीरे-धीरे ऊपर उठते हुए अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर चुका था । जर्मनी की सरकार उससे मित्रता का भाव रखती थी और उसे आगे बढ़ाने में हर तरह की सहायता देने को प्रस्तुत थी । इसके विपरीत मुस्तफा कमाल तुर्की में विदेशियों का प्रवेश हानिकारक मानता था और जर्मनों को घृणा की दृष्टि से देखता था । अनवर पाशा के साथ मतभेद और कहा-सुनी होने का मुख्यतः यही कारण था । बाल्कन के झगड़े में तुर्की की कमजोरी देखकर अनवर ने सेना का पुनः संगठन करना आवश्यक समझा और इस कार्य के लिये सलाह-मशविरा देने और सेना की नवीन व्यवस्था को जमा देने के लिये जनरल वान सैण्डर्स को बुलाया । मुस्तफा कमाल को यह बात बहुत बुरी लगी कि अपनी सेना की बागडोर किसी विदेशी के हाथ में दे दी जाये । यद्यपि अनवर इस समय युद्ध-सचिव के पद पर काम कर रहा था और देश के शासन की बागडोर उसी के हाथ में थी, तो भी कमाल ने उसके काम की खुलकर आलोचना की और उस पर दोषारोपण किया । पहले तो उसने अनवर से मिलकर इन बातों को सामने ही कहने का प्रयत्न किया, पर जब उसने मिलने से इन्कार कर दिया तब उसने इन्हीं सब बातों को लेकर एक बहुत कड़ा पत्र लिखकर उसके पास भेज दिया । अनवर इस पर नाराज हुआ और उसने उसको सोफिया (बल्गेरिया) के दूतावास में सहायक अधिकारी बनाकर तुर्की से दूर भेज दिया ।

यद्यपि सोफिया में उसको बहुत काम करना पड़ता था, तो भी उसका मन नहीं लगता था । वह समझता था कि उसकी स्पष्टवादिता के कारण अनवर पाशा ने उसे तुर्की से निर्वासित कर दिया है । उसने बल्गेरिया के सेनापति से मित्रता कर ली और कुछ नया काम करता रहा । वह परिश्रमी और कर्मठ व्यक्ति था और इस तरह निष्क्रिय रहना उसे बहुत नापसन्द था । पर तुर्की के वर्तमान शासकों की नीति से मतभेद रखने के कारण विवश होकर उसे यह स्थिति स्वीकार करनी पड़ी ।

प्रथम यूरोपीय महासमर

इसी समय १९१४ के अगस्त में यूरोपीय महायुद्ध शुरू हो गया । कमाल की सम्मति थी कि इस अवसर पर तुर्की को तटस्थ रहना चाहिये । पर वहाँ के शासक बहुत पहले ही जर्मनी के साथ गुप्त-सन्धि कर चुके थे और लियान वान सैण्डर्स इसके लिये दो वर्ष से निरन्तर वहाँ की सेना को नये रूप में संगठित कर रहा था । इसलिये युद्ध को अनिवार्य देखकर कमाल उसमें भाग लेने के लिये उतावला होने लगा और उसने अनवर पाशा को इसके लिये तार भेजा, पर उसका यही उत्तर मिला कि 'अभी अपने स्थान पर ही बने रहो ।' उसने अपने मित्रों के लिये भी कई पत्र लिखे पर कोई इस विषय में उसकी सहायता न कर सका ।

आरम्भ में कितने ही लोगों का यह ख्याल था कि युद्ध एक-दो महीने में खत्म हो जायेगा, पर जब छः महीने बीत गये और युद्ध घटने के बजाय बढ़ता ही चला गया तो कमाल बेचैन होने लगा और उसने बल्गेरिया से चलने की तैयारी कर ली । इसी समय उसके पास कुस्तुनतुनिया से बुलावे का आज्ञा-पत्र आ गया । इस समय अनवर पाशा रूस की सेना से लड़ने के लिये काकेशश की तरफ चला गया था और उसके स्थान पर हकी पाशा काम कर रहा था । वह कमाल की योग्यता से भलीभाँति परिचित था । इसलिये जब अंग्रेजों के गैलीपोली पर सम्भावित आक्रमण को रोकने के लिये नये सेनादल का संगठन किया जाने लगा तो उसने कमाल को बुलाकर जर्मन सेनाध्यक्ष लियान वान सैण्डर्स का सहकारी बना दिया ।

अब संयोग ऐसा बना कि दो ऐसे व्यक्तियों को जो एक-दूसरे के विरुद्ध विचारधारा वाले थे एक साथ मिलकर काम करना अनिवार्य हो गया । वान सैण्डर्स तुर्की अफसरों को बहुत अयोग्य और घटिया मानता था और इधर कमाल को विदेशियों से घृणा थी । पर वान सैण्डर्स ने शीघ्र ही अनुभव कर लिया कि मुस्तफा कमाल तुर्की के अन्य अफसरों से बहुत भिन्न है और वह पक्का सिपाही और कर्त्तव्य में दक्ष है । उसके स्वभाव में अक्खड़पन का भी उसे अनुभव हो गया । क्योंकि एक दिन कमाल ने उसके सामने ही कह दिया कि युद्ध में जर्मनों की अन्तिम विजय होना कठिन है । लेकिन वान सैण्डर्स उसकी विशेषताओं को समझ चुका था और उस पर विश्वास रखता था । कमाल भी सैण्डर्स की वीरता और चतुराई को मानता था । एक बार उसने कहा—"वान सैण्डर्स में एक उच्च सेनाध्यक्ष के समस्त गुण हैं । यद्यपि उसके साथ अनेक बार मेरा मतभेद हो जाता है, पर जब वह मुझे किसी काम की एक बार आज्ञा दे देता है, तो फिर उसका भार पूरी तरह मेरे ऊपर छोड़ देता है ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिस समय वान सैण्डर्स गैलीपोली की रक्षा की तैयारी कर रहा था, उसी समय खबर आई कि अंग्रेज आक्रमण के लिये मिस्र से अस्सी हजार सेना जहाजों में ला रहे हैं पर उस प्रदेश के बावन मील लम्बे किनारे पर वे कहाँ पर उतर पड़ेंगे इसका कोई निश्चय न था। इसलिये वान सैण्डर्स ने अपनी सेना को तीन भागों में बाँटकर तीन विभिन्न स्थानों पर नियुक्त कर दिया। मुस्तफा कमाल ने इस अवसर पर बड़ी बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता का परिचय दिया और वह अंग्रेजी सेना से ऐसी वीरतापूर्वक लड़ा कि उसने अंग्रेजों के मुख्य आक्रमण को थोड़े से सिपाहियों को साथ लेकर अकेले रोक दिया। उसे महीनों तक खाइयों में रहना पड़ा जहाँ लगातार अंग्रेजी तोपों के गोले पड़ते रहते थे, पर कभी भयभीत नहीं हुआ और बराबर आगे बढ़कर अपने सैनिकों का उत्साह बढ़ाता रहा। यद्यपि अब भी अनवर के साथ उसका झगड़ा होता रहता था, जिससे क्रुद्ध होकर उसने अपने पद से त्याग-पत्र भी दे दिया। पर जर्मन सेनापति उसके महत्व को खूब समझ गया था। उसने अपने ऊपर जिम्मेवारी लेकर अनवर के हुक्म को अमान्य कर दिया और कमाल अपने स्थान पर बना रहा।

मुस्तफा कमाल को युद्ध में एक के बाद दूसरी सफलता मिलती गई और अन्त में अंग्रेजी सेनायें गैलीपोली से हट गईं। इस पर जनता में कमाल का यश फैल गया और वह "डार्डेनैलीज और राजधानी के रक्षक' के नाम से पुकारा जाने लगा, पर अनवर से उसका झगड़ा बना ही रहा और उसे उत्तर की तरफ रूस वालों का मुकाबला करने भेजा गया। उस कार्य में भी उसे सफलता प्राप्त हुई यद्यपि अब उसे 'पाशा की पदवी प्राप्त हो गई थी तो भी वह अनवर के व्यवहार से अप्रसन्न था, जो कमाल के मतानुसार 'सस्ती राजनीति' के आधार पर टर्की का सर्वेसर्वा बना बैठा था और उसके मार्ग में हर तरह रोड़े अटका रहा था। अन्त में मामला यहाँ तक बढ़ गया कि कमाल ने त्यागपत्र दे दिया और वह सेना का काम त्यागकर अपनी माता बहिन के पास कुस्तुनतुनिया में आकर रहने लगा। वह अब भी निरन्तर अनवर और जर्मनों को बुरा-भला कहता रहता था और अनवर के विरोधी अफसरों से मिलकर सलाह मशविरा किया करता था। इससे डर कर अनवर ने उसे राजकुमार वहेउद्दीन के साथ एक 'मिशन' में शामिल करके जर्मनी की यात्रा के लिये भेज दिया।

जर्मनी की यात्रा से और वहाँ के मुख्य सेनाध्यक्षों से मिलकर कमाल पाशा ने यही निर्णय किया कि इस युद्ध में उनकी अन्तिम विजय नहीं हो सकती। जर्मनी से वापस आने पर वह कई महीने तक बीमार पड़ा रहा। फिर भी जब अंग्रेजी सेना का आक्रमण तुर्की के कई प्रदेशों पर जोर से होने लगा और वहाँ की सेनायें हारने लगीं तो वह फिर युद्ध क्षेत्र में पहुँच गया और देश के जितने भाग की रक्षा हो सके उसकी चेष्टा करने लगा। पर अब जर्मनी की शक्ति समाप्त हो चुकी थी और अंग्रेज समस्त युद्ध में अपनी शक्ति बढ़ाते जाते थे, इससे तुर्की की सरकार ने पराजय स्वीकार करके अंग्रेजों से सन्धि करने का निश्चय कर लिया।

अब कमाल भी कुस्तुनतुनिया पहुँचा। इस समय पुरानी सरकार के मुख्य संचालक अनवर तालन तथा जमाल पाशा राजधानी से भाग चुके थे और राजकुमार वहेउद्दीन सुल्तान बनकर शासन कर रहा था पर अब टर्की का समस्त साम्राज्य छिन-भिन्न हो चुका था और वह किसी तरह अंग्रेजों से अपनी राजधानी और थोड़े से प्रदेश की रक्षा के प्रार्थी थे। कमाल पाशा अब भी सेना का अधिकार अपने हाथ में लेकर अंग्रेजी प्रभाव को बढ़ने से रोकने को तैयार था पर सुल्तान में इतना साहस न था, इसलिये कमाल को फिर उपेक्षित दशा में ही रहना पड़ा। कुछ समय पश्चात् राजधानी पर भी अंग्रेजी तथा फ्रांसीसी सेनाओं ने अधिकार कर लिया, कमाल चूँकि अंग्रेजों का विरोधी था, इसलिये इसका नाम खतरनाक लोगों की सूची में लिख लिया गया और उस पर निगरानी रखी जाने लगी।

क्रान्ति का श्रीगणेश

कुछ समय पश्चात् अनातोलिया में विद्रोह हो गया और कमाल पाशा को इस कार्य के लिये सर्वथा उपयुक्त समझकर वहाँ की सेना का अधिकारी बनाकर भेजा गया। अंग्रेज अधिकारियों को उस पर विश्वास न था इसलिये वहाँ भी उन्होंने उसकी निगरानी की व्यवस्था रखी पर कमाल को इसकी कोई चिन्ता न थी। उसने अनातोलिया में अंग्रेजों के खिलाफ प्रचार और तुर्की की स्वाधीनता का आन्दोलन आरम्भ कर दिया। कुछ समय बाद उसने अपने विचार वालों को इकट्ठा करके उसकी एक गुप्त कॉन्फ्रेन्स की। कमाल ने लोगों को समझाया कि "शत्रु तुर्की का नाश करने पर तुला है। सुल्तान अंग्रेजों के हाथ में निस्सहाय है, परन्तु तुर्की को स्वयम् अपनी रक्षा करनी चाहिये। उनको नई राष्ट्रीय सेना में भर्ती होना चाहिये। केवल इसी उपाय से वे अपनी तथा अपने स्त्री-बच्चों की रक्षा कर सकेंगे।" इस समय लोगों की हिम्मतें कई साल तक युद्ध सहने के कारण टूटी हुई थीं तो भी कमाल के लगातार प्रयत्न से उनमें जोश पैदा हो गया और वे शत्रुओं से बदला लेने को तैयार होने लगे।

यद्यपि अंग्रेजों ने और उसका साथ देने वाले तुर्कों ने कमाल के प्रभाव को रोकने की बहुत चेष्टा की, पर अब जनता ने उसकी देशभक्ति और राष्ट्र-रक्षा की भावना को भली-भाँति समझ लिया था, इससे उसे लगातार सफलता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिलती गई और एक दिन वह आया जब कि वह प्रजातन्त्रवादी दल का प्रमुख नेता बन गया । सुल्तान ने उसको राजद्रोही घोषित कर दिया और यह आज्ञापत्र निकाल दिया गया कि "जो लोग कमाल और उसके साथियों को मारेंगे उनको इस लोक में तथा परलोक में पुरस्कार मिलेगा ।"

उस समय यद्यपि कमाल, नाम के लिये एक नई सरकार का अध्यक्ष था पर उसके पास न तो कोष था न सेना थी फिर भी उसने हिम्मत न हारी और अपने नाम से टर्की के स्वतन्त्र होने का आज्ञा-पत्र निकलवा दिया । उसने खुले शब्दों में कहा कि कुस्तुनतुनिया की सरकार और उसका अध्यक्ष सुल्तान देश को अंग्रेजों के हाथ में बेच रहे हैं, इसलिये वे राष्ट्र घातक हैं । यद्यपि तुर्की जनता के धर्मान्ध व्यक्ति 'खिलाफत' के नाम पर अब भी सरकार के पक्ष में थे और इसलिये कमाल की जान के लिये हमेशा खतरा था, पर प्रजातन्त्रवादी दल के प्रचार से अब लोगों की आँखें खुलने लगी थीं और वे राष्ट्रीयता की भावना को ग्रहण करते जाते थे । थोड़े ही समय में कुस्तुनतुनिया की पार्लियामेण्ट के अनेक सदस्य भी, अंग्रेजों के विरोधी बनकर नई सरकार की राजधानी 'अंगारो' में चले आये और उन्होंने एक मत से वहाँ पर देश के शासन के लिये 'ग्राण्ड नेशनल असेम्बली' का निर्माण किया जिसका सभापति कमाल पाशा चुना गया ।

पेरिस कॉन्फ्रेन्स का फैसला

इसी समय पेरिस में 'शान्ति परिषद्' के नाम से प्रेसीडेण्ट विल्सन, लायड-जार्ज, क्लीमेंशो आदि अपने आज्ञा-पत्र निकाल रहे थे । उन्होंने जब तुर्की की इस नई सरकार और उसकी स्वतन्त्रता की घोषणा को सुना तो वे बड़े नाराज हुए और कहने लगे—"यह सब क्या बकवास है ? युद्ध में तुर्की परास्त हो चुका है, अब उसका कोई अस्तित्व नहीं रहा ।" उन्होंने अपने मन से तुर्की के लिये सन्धि का एक मसौदा तैयार कर दिया । जिसमें अनातोलिया और स्मरना पर तुर्की का अधिकार माना गया, पर उन पर विदेशी अफसरों की पूरी देखभाल रहेगी । उसकी अर्थव्यवस्था, सेना, टैक्स, पुलिस आदि पर पूरा नियन्त्रण रखा जायेगा । यह सन्धि-पत्र तुर्की के लिये स्पष्ट रूप से गुलामी व शर्तनामा था । इसकी शर्तों को सुनकर सभी तुर्क क्रोध से भर गये, क्योंकि वे पाँच सौ वर्ष से स्वतन्त्र रहते आये थे और अब अपनी स्वाधीनता को ऐसे सहज में नहीं छोड़ सकते थे ।

इस नई परिस्थिति में तुर्क लोगों की निगाह सबसे अधिक कमाल की तरफ ही जाने लगी । अन्य नेता तो अब तक तरह-तरह के रंग बदल चुके थे और जहाँ स्वार्थ पूरा होता देखते उसी तरफ लुढ़क जाते थे, पर कमाल निरन्तर तुर्की राष्ट्र की स्वतन्त्रता और अखण्डता का समर्थन ही करता आया था अब सर्वसाधारण ने उसकी इस विशेषता को पहचाना और इसलिये उसकी शक्ति और सत्ता दिन पर दिन बढ़ती गई । राष्ट्र संघ के इशारे पर यूनानियों ने तुर्की पर आक्रमण किया, गृह-युद्ध भी छिड़ गया, सुल्तान भी उसके विरुद्ध 'फरमान' निकालता रहा, पर वह अपने निश्चय पर दृढ़ रहा और परिस्थिति के अनुसार अपने लक्ष्य की तरफ कभी धीरे-धीरे और कभी तेजी से अग्रसर होता रहा । अन्त में वह अपने बाहरी और भीतरी समस्त विरोधियों को हराकर तुर्की का निर्विरोध शासक बन गया ।

धर्मान्ध मौलवी मुल्लाओं ने फिर उसका विरोध करने की कोशिश की, क्योंकि धार्मिक और सामाजिक मामलों में भी वह पूरा स्वतन्त्र विचारों का और क्रान्तिकारी था । इसलिये जब उसने कमेटी में प्रस्ताव किया कि खिलाफत का सम्बन्ध केवल धार्मिक मामलों से रखा जाये और शासन सम्बन्धी अधिकारों से वह पृथक् हो जाये तो मौलवी लोगों ने बड़ा शोरगुल मचाया । लम्बी दाढ़ी वाले मौलवी लोग एक के बाद एक मंच पर आने लगे और कुरान की आयतों के आधार पर खलीफा की सार्वभौम सत्ता को प्रमाणित करने लगे । मुस्तफा कमाल पहले तो एक कोने में बैठा सुनता रहा, पर कुछ देर बाद वह क्रोध में आकर एक मेज पर खड़ा हो गया और रोषपूर्वक बोला—"हमने शक्ति के द्वारा हुकूमत को अपने हाथ में लिया है । धार्मिक सत्ता (खलीफा) को राजनैतिक अधिकार छोड़ने ही पड़ेंगे, चाहे आप लोग इससे सहमत न हों, पर बात यही होगी । केवल कुछ लोगों के सर हमको उड़ाने होंगे ।"

कमाल की गर्जना ने सारा दृश्य एक क्षण में बदल दिया । सभापति ने जो स्वयं एक लम्बी दाढ़ी वाला मौलवी था उठकर कहा—"सदस्यों ! गाजी मुस्तफा कमाल ने इस सवाल को एक ऐसे पहलू से पेश किया है, जिस पर हमने गौर नहीं किया था ।" बस कमेटी के सब सदस्यों ने प्रस्ताव के पक्ष में राय दे दी और निश्चय कर दिया गया कि सुल्तान वहेउद्दीन को तख्त से हटाकर धार्मिक और राजनैतिक क्षेत्रों को अवश्य अलग-अलग कर दिया जाये ।

अब इस प्रस्ताव को 'असेम्बली' (शासन-सभा) के पूरे अधिवेशन में कानून का रूप देने के लिये पेश किया गया । मुस्तफा कमाल ने देखा कि अधिकांश सदस्यों के मत उसके विरुद्ध थे पर उसने निश्चय कर लिया कि जब तक धार्मिक-तन्त्र और शासन-तन्त्र को अलग न किया जायेगा, तब तक तुर्की के बन्धन कट नहीं सकेंगे और यहाँ की जनता कूप मण्डूक ही बनी रहेगी । इसलिये असेम्बली के अधिवेशन में उसने अपने साथियों को अपने चारों ओर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इकट्ठा कर लिया । वे सब हथियार बन्द थे । जब वोट देने का समय आया तो उन्होंने रिवाल्वर हाथों में ले लिये । कमाल ने धमकी देने के स्वर में कहा—"मुझे विश्वास है असेम्बली मेरे प्रस्ताव से सहमत होगी । केवल हाथ उठकर वोट देना काफी होगा ।"

सभापति ने प्रस्ताव को असेम्बली के सामने मतदान के लिये रखा, कुछ हाथ उसके पक्ष में उठे । सभापति ने घोषित कर दिया—"प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हो गया ।" कुछ सदस्य विरोध करने को उठे पर उनको बैठा दिया गया । मुस्तफा कमाल का संकेत पाकर सभापति ने अपना निर्णय सुनाया—"तुर्की की 'ग्राण्ड नेशनल असेम्बली' के सदस्यों की सर्वसम्मति से खिलाफत का अन्त कर दिया गया ।" यह कहकर असेम्बली का अधिवेशन समाप्त कर दिया गया और कमाल अपने साथियों से घिरा हुआ वहाँ से चल दिया ।

चार-पाँच दिन के भीतर ही राष्ट्रीय सेना के एक मजबूत दल ने कुस्तुनतुनिया पहुँचकर सुल्तान को गद्दी पर से हटा दिया उसने अंग्रेजों से सहायता माँगी । अब कमाल का शासन अच्छी तरह जम चुका था इससे अंग्रेज और तो कुछ न कर सके एक अंग्रेजी जहाज पर बैठकर के सुल्तान चुपचाप देश से बाहर चला गया । इसके बाद उसके भतीजे अब्दुलमजीद को खलीफा बना दिया गया, परन्तु उसको शासन सम्बन्धी कोई अधिकार नहीं दिया गया । इस प्रकार कमाल ने एक सप्ताह के भीतर एक ऐसी धार्मिक क्रान्ति करके दिखा दी जिसने समस्त तुर्की समाज की कायापलट कर दी ।

"कमाल पाशा द्वारा की गई तुर्की की सामाजिक और धार्मिक क्रान्ति का यह पहला चमत्कार था । इसने सिद्ध कर दिया कि शताब्दियों से धार्मिक अन्धविश्वास और अज्ञानान्धकार में पड़ी हुई जनता को समयानुकूल नये मार्ग पर चलाने के लिये कभी जोर जबर्दस्ती करना भी आवश्यक हो जाता है । आज हमारे देश की रूढ़िग्रस्त जनता के सुधार के लिये भी किसी ऐसे ही उपाय की आवश्यकता प्रतीत होती है ।"

पर इस प्रकार सुल्तान को हटा देने पर भी कमाल के मार्ग में बड़ी कठिनाइयाँ थीं । देश के राजनीतिक नेता उसे 'डिक्टेटर' के रूप में देखना नहीं चाहते थे और न उसकी अधीनता में रहने को तैयार थे, क्योंकि वे अपने को उसकी अपेक्षा पुराना और अधिक अनुभवी तथा योग्य मानते थे । यह देखकर कमाल ने एक 'जनता पार्टी' की स्थापना की और गाँवों में उसकी शाखायें स्थापित कीं, जिनको कई प्रकार के स्थानीय शासन सम्बन्धी अधिकार दिये गये । इन कमेटियों के सदस्य मुख्यतया कमाल के सैनिक और किसान अनुयायी थे । इन कमेटियों की सहायता से उसकी स्थिति देश भर में बहुत मजबूत हो गई और वह अन्य राजनीतिज्ञों का मुकाबला करने को तैयार हो गया ।

जब असेम्बली ने उसके कार्यों का विरोध किया तो उसने मन्त्रिमण्डल से इस्तीफा दिलाकर शासन-कार्य को ठप्प करा दिया । असेम्बली ने पारस्परिक दलबन्दियों के कारण शासन की व्यवस्था कर सकने में अपने को असमर्थ पाया तो फिर कमाल से ही नया मन्त्रिमण्डल बनाने की प्रार्थना की । कमाल दो बार प्रार्थना करने पर इस शर्त के साथ असेम्बली भवन में आया कि उसका निर्णय पूरी तरह से स्वीकार कर लिया जायेगा । उसने कहा कि "हमारी सरकार का विधान ठीक नहीं है । असेम्बली कानून भी बनाती है और उनको जारी भी करती है । इस प्रकार की स्थिति में मन्त्री लोग शासन कार्य का संचालन नहीं कर सकते । इसलिये आवश्यकता है कि तुर्की में अन्य यूरोपियन देशों के समान प्रजातन्त्र राष्ट्र की स्थापना की जाये जिसका एक प्रेसीडेण्ट चुना जाये ।"

तुर्की के राजवंश का अन्त

कमाल प्रजातन्त्र का प्रेसीडेण्ट बन गया, पर उसके विरोधी नेता भी भीतर ही भीतर अपनी चालें चलते रहे । सारे देश में यह मशहूर हो गया कि कमाल को धर्म में कुछ भी विश्वास नहीं है और इस्लाम धर्म के एक बहुत बड़े आधार 'खिलाफत' को नष्ट कर डालना चाहता है । कमाल की स्त्री पर्दा नहीं करती थी और पुरुषों के से कपड़े पहन कर चाहे जहाँ घूमती थी, इससे पुराने विचारों के मुसलमान उसे इस्लाम विरोधी मानते थे । इसलिये शासन से हटाये गये नेता नये खलीफा अब्दुल मजीद से मिले और उसको फिर से शासन की बागडोर अपने हाथ में लेने को प्रेरित किया । मौलवी और मुल्ला उसके पहले से ही खिलाफ़ थे क्योंकि वह उनकी शक्ति को छीनकर यूरोपियन ढंग का सामाजिक जीवन प्रचलित करने के पक्ष में था । कमाल अपने विरुद्ध राजनीतिज्ञों और धर्मजीवियों के इस सम्मिलित संगठन को देखकर चिन्तित हुआ और इनको दबाने का कोई उपाय सोचने लगा ।

इसी समय संयोगवश हिन्दुस्तानी मुसलमानों की तरफ से आगा खाँ और अमीर अली ने तुर्की सरकार के पास एक पत्र भेजा जिसमें खलीफा की प्रतिष्ठा को कायम रखने का आग्रह किया गया था । कुस्तुनतुनिया के कुछ समाचार पत्रों ने इसे सरकार के पास पहुँचने के पूर्व ही प्रकाशित कर दिया बस कमाल को एक बहाना मिल गया और उसने आगा खाँ का पुराना इतिहास खोजकर यह प्रचार करना आरम्भ किया कि "आगा खाँ अंग्रेजों का खास एजेण्ट है । अब अंग्रेज प्रत्यक्ष रूप से तुर्की को नहीं दबा सकते तो वे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हिन्दुस्तानी मुसलमानों और आगा खाँ की सहायता से हमारे राष्ट्र में फूट उत्पन्न करना चाहते हैं और इसके लिये खलीफा को भड़का रहे हैं ।"

मुस्तफा कमाल की यह चाल कारगर हो गई और अंग्रेजों की नीयत पर सन्देह करके तुर्की के सब राष्ट्रवादी और देशभक्त एक हो गये । मुस्तफा कमाल ने अपने विरोधी अखबारों पर जिन्होंने आगा खाँ का पत्र छापा था मुकदमा चलवा दिया । साथ ही अपने पक्ष में पत्रों द्वारा उसने बड़े जोरों से यह प्रोपेगेण्डा कराया कि सुल्तान अब्दुलमजीद अंग्रेजों से मिल गया है और इसलिये वह देशद्रोही है । इससे प्रभावित होकर लोगों को यह विश्वास हो गया कि उनके देश की स्वाधीनता खतरे में है और कमाल ही विदेशियों के षड्यन्त्रों से उनकी रक्षा कर सकता है ।

इस तरह अपनी स्थिति को मजबूत करके उसने अपने विरोधियों को दबाना आरम्भ किया । उसी रात को उसने एक विरोधी को कत्ल करवा दिया और दूसरे को बुलाकर धमकी दी कि अगर वह उसके विरुद्ध भाषण करेगा तो इसी प्रकार कत्ल करा दिया जायेगा । एक सैनिक अधिकारी जो खलीफा के पक्ष में था उसको भी बुलाकर मारने का भय दिखाया और उससे वचन ले लिया कि वह प्रजातन्त्र और प्रेसीडेण्ट का विरोध नहीं करेगा । इस प्रकार विरोधी-दल में आतंक पैदा करके उसने ३ मार्च, १९२४ को असेम्बली में 'खलीफा' की पदवी को पूर्णतया हटाने के लिये एक बिल पेश किया । उसने भाषण करते हुए कहा—"हमको अपने प्रजातन्त्र की सब तरह से रक्षा करनी चाहिये, क्योंकि वह खतरे में है । तुर्की सरकार (औटोमन साम्राज्य) का पुराना ढाँचा बहुत खराब था, क्योंकि वह धार्मिक नीति पर टिका हुआ था । अब खलीफा को हटाना आवश्यक है । पुराने ढंग की अदालतों के स्थान पर नये कानून जारी करने चाहिये जिससे सबको न्याय मिल सके । मौलवियों के मदरसों की जगह सरकारी स्कूल बनने चाहिये । राष्ट्र और धर्म को एक-दूसरे से अलग करना बहुत जरूरी है ।"

यह बिल बिना बहस के पास हो गया । एक ही बार में कमाल ने पुराने ढर्रे के राजनीतिक और सामाजिक संगठन की जड़ काट डाली । उसी रात को उसने स्तम्बूल के गवर्नर को आदेश भेजा कि खलीफा अब्दुल मजीद को देश से बाहर निकाल दिया जाये । गवर्नर ने आधी रात को ही खलीफा को जहाज में बैठाकर स्विट्जरलैण्ड भेज दिया । दो दिन बाद सब शहजादे और शहजादियों को भी उसके पास रवाना कर दिया गया । समस्त तुर्की में किसी ने इस असम्भव समझे जाने वाले परिर्वतन का विरोध नहीं किया । कमाल ने बिना किसी तरह के रक्तपात के एक प्राचीन राजवंश की सत्ता समाप्त कर दी । जब भारत के अन्धविश्वासी मुसलमानों ने इस घटना पर हाय-तोबा मचाई और इस्लाम की दुहाई दी तो मुस्तफा कमाल ने उनको फटकार कर कह दिया कि वे पहले अपने घर सँभालें, तुर्की अपने नवनिर्माण में उनसे किसी तरह की सलाह लेना नहीं चाहता ।

सामाजिक प्रथाओं में परिवर्तन

इस प्रकार शक्ति के आधार पर कमाल तुर्की का 'डिक्टेटर' बन गया और उसने सम्पूर्ण सत्ता अपने हाथ में ले ली परन्तु वर्षों के युद्ध और आन्तरिक कलह के कारण देश की आर्थिक दशा बहुत खराब हो गई थी और सर्वसाधारण का जीवन बड़ा कष्टपूर्ण हो गया था । इस बहाने को लेकर कमाल के विरोधी जनता को भड़काने लगे कि सरकार तुम्हारे वास्ते तो कुछ करती नहीं, तमाम खर्च सेना के लिये ही कर रही है । इस आक्षेप में कुछ सच्चाई भी थी, क्योंकि कमाल के सब साथी फौजी आदमी ही थे और आर्थिक तथा उद्योग-धन्धों के विषय में बहुत कम समझते थे । इस परिस्थिति में कमाल ने टैक्सों में कमी करके लोगों को कुछ सुविधा देने का प्रयत्न किया । साथ ही उसने तुर्की के नवीनीकरण का भी निश्चय किया, क्योंकि पुराने ढर्रे पर चलते हुए देश की हालत का ज्यादा सुधर सकना सम्भव न था । इसके लिये उसने जनता को शिक्षित करना चाहा, पर लोगों में इसके लिये भी उत्साह दिखाई नहीं दिया । कमाल ने समझ लिया कि जब तक जनता में जागृति उत्पन्न नहीं की जायेगी तब तक राष्ट्र को प्रगति-मार्ग पर अग्रसर करने का उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता ।

बस कमाल ने तुर्की की विचारधारा को ही बदलने का निश्चय कर लिया । प्राचीन विचार, स्वभाव, वस्त्र, आचार-विचार, व्यवहार, रहन-सहन सभी को बदलना आवश्यक था । मनुष्य का जीवन समग्र इकाई है । उसका एक पहलू गिरा रहना और दूसरे पहलू का ऊँचा उठ जाना अस्वाभाविक और असम्भव है । कमाल समझता था कि यह कार्य बहुत कठिन है और अधिकांश जनता इसका विरोध करेगी । इसलिये उसने यह परिवर्तन बहुत युक्ति से आरम्भ करने का निश्चय किया । सबसे पहले उसने तुर्की टोपी पहिनने का रिवाज बन्द किया । फिर उसने घोषणा कर दी कि "मजहब की मदद से शासन करना राष्ट्र की कमजोरी का चिह्न है । मजहब एक जातीय मामला है । प्रजातन्त्र का हर एक आदमी अपना मजहब अपनी पसन्द के माफिक चुन सकता है ।" उसने मस्जिदों, दरगाहों तथा अन्य धार्मिक संस्थाओं को राज्य से सहायता देना बन्द कर दिया और उसकी जायदादें जब्त कर लीं ।

अब वह नवीन ज्ञान के आधार पर तुर्की राष्ट्र का निर्माण करने लगा । उसने यूरोप के कितने ही विशेषज्ञों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को बुलाया—तुर्की के पुराने कानूनों को बिल्कुल हटाकर जर्मनी के व्यापारिक, इटली के फौजदारी और स्विट्ज़रलैण्ड के दीवानी कानूनों का प्रचार किया गया । तुर्की भाषा में से अरबी और फारसी के शब्दों को निकलवा दिया । कुरान का तुर्की में अनुवाद कराके उसी को पढ़ने की आज्ञा दी । मस्जिदों में नमाज भी तुर्की भाषा में पढ़ी जाने लगी । स्कूल, कॉलेज, दफ्तर, औद्योगिक संस्थान में सर्वत्र तुर्की भाषा का प्रयोग अनिवार्य कर दिया गया ।

टर्की का शासन जब कमाल पाशा ने सँभाला तो उसने अपने मन्त्रियों से पूछा—टर्की को राजभाषा बनने में कितना समय लगेगा ? बहुत सोच-विचार कर उन्होंने उत्तर दिया कम से कम दस वर्ष । कमाल पाशा ने मन्त्रियों की ओर नजर तरेरी और फैसला घोषित करते हुए कहा—'समझ लीजिये दस वर्ष पूरे हो गये और कल सवेरे से 'तुर्की राजभाषा हो गई ।' उन्होंने अपना फैसला तत्काल लागू करने की व्यवस्था उसी समय बना दी ।

फिर उसने तुर्की भाषा के लिपि का सुधार करने का निश्चय किया । अभी तक वह अरबी अक्षरों में लिखी जाती थी पर अरबी वर्णमाला बहुत कठिन थी और इस कारण तुर्की में शिक्षित व्यक्तियों की संख्या बहुत कम थी । मुस्तफा कमाल ने स्वयं तुर्की भाषा को लैटिन लिपि में लिखने की योजना बनाई और एक बहुत बड़ी सभा करके लोगों को उसके लाभ समझाये । उसने कुछ लोगों को स्वयं तुर्की भाषा को नई लिपि में लिखने की विधि समझाई । इस कार्य में उसे पर्याप्त सफलता मिली । लोगों ने इस परिवर्तन को पसन्द किया और उसका प्रचार बढ़ने लगा । मुस्तफा कमाल स्वयं लोगों को नई लिपि की शिक्षा देता था और जो लोग परीक्षा में पास होते थे उनको इनाम भी दिया जाता था । कैदियों के लिये हुक्म दिया गया कि जब तक वे नई लिपि को सीख न लेंगे तब तक उनको रिहा न किया जायेगा । इस कार्य के लिये उसने समस्त देश में भ्रमण किया और लोगों ने सर्वत्र उसकी समाज सेवाओं के लिये उसकी सराहना की ।

अनेक प्रकार के सुधार कार्य

अब कमाल ने निश्चय कर लिया कि उसका जीवन तुर्की को एक सबल और सुदृढ़ राष्ट्र बनाने के लिये ही है और इस काम में चाहे जितनी कठिनाइयाँ और खतरे आवें वह अपने देश को जो इस समय पिछड़ी हुई दशा में पड़ा है, यूरोप के अन्य प्रगतिशील देशों के मुकाबले खड़ा हो सकने योग्य बनाकर रहेगा । इसके लिये निरन्तर वह हर तरह के सामाजिक सुधार करने का प्रयत्न करता रहा । भाषा के सुधार के पश्चात् उसने स्त्रियों की स्वाधीनता की समस्या को हाथ में लिया । वह अच्छी तरह समझता था कि मुस्लिम देशों में पर्दा और हरम प्रथाओं के कारण ही वहाँ के समाज अप्रगतिशील बने हुए हैं । इसलिये उसने तुर्की की स्त्रियों को पर्दा त्यागकर सार्वजनिक कार्यों में भाग लेने को प्रोत्साहित किया । उसने उनको जनता पार्टी की कमेटियों का सदस्य बनाया । स्त्रियाँ डॉक्टर और वकील का धन्धा करने लगीं । दो स्त्रियों को जज का पद दिया गया । स्त्रियाँ म्युनिसपैलिटी के चुनावों में भी भाग लेने लगीं । कमाल पाशा द्वारा किये गये सुधारों का ही नतीजा है कि अब तुर्की में से हानिकारक पर्दाप्रथा सर्वथा खत्म हो गई है और स्त्रियाँ प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों की ही तरह प्रगति कर रही हैं और भी अनेक छोटे-बड़े सुधार कमाल पाशा ने किये । मुसलमानी धर्मशास्त्र के अनुसार मुल्लाओं ने तुर्की में मानवीय शरीर की तस्वीर या मूर्ति बनाने को धर्म-विरुद्ध बताकर निषिद्ध कर रखा था । चित्रकारी और संगीत जैसी कलाओं की भी वहाँ मनाही थी । ऐसे मूर्खतापूर्ण नियमों के कारण वहाँ की सामान्य जनता का जीवन 'साहित्य-कला-विहीन' अर्द्धसभ्य जातियों की तरह हो रहा था । कमाल ने अपनी कई मूर्तियाँ बनवाई । अंगोरा में चित्रकला सिखाने वाला एक स्कूल कायम किया गया । उसने संगीत और नृत्यकला का प्रचार भी तुर्की में कर सकने की व्यवस्था की ।

अभी तक तुर्की में साप्ताहिक छुट्टी का कोई खास दिन नियत न था । मुसलमान शुक्र के दिन कारोबार बन्द रखते थे और यहूदी शनिवार तथा ईसाई इतवार को विश्राम का दिन मानते थे । कमाल को एक देश के भीतर यह विभिन्नता बुरी जान पड़ी और उसने सर्वत्र शुक्रवार को छुट्टी का दिन नियत कर दिया । तीन बार झुक-झुक कर सलाम करने की प्रथा उठा दी गई और केवल टोप उतार कर सलाम करना और हाथ मिलाकर अभिवादन करना पर्याप्त मान लिया गया । पहले घण्टों की गिनती सुबह से की जाती थी पर अब संसार के अन्य देशों की तरह रात के बारह बजे से नये दिन की गिनती की जाने लगी ।

उस समय तक तुर्की में भीख माँगने का रिवाज था और भारत की तरह वहाँ भी सड़कों और सार्वजनिक स्थानों पर भिखारियों के झुण्ड दिखाई पड़ा करते थे । नई सरकार की आज्ञा से भीख माँगना रोका गया और भिखारियों को सार्वजनिक स्थानों से हटा दिया गया । पागल तथा विकृत अंग—लँगड़े, लूले, काने आदि व्यक्तियों पर हँसना अपराध माना जाने लगा । विवाह के पहले वर-वधू के अच्छे स्वास्थ्य का डॉक्टरी प्रमाण-पत्र पेश करने का नियम बनाया गया जिससे जनता के शारीरिक विकास में सहायता मिले और रोगी तथा दूषित शरीर-सम्पत्ति वालों की संख्या घटती चली जाये । कमाल पाशा ने विवाह को धर्म की क्रिया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानने के बजाय एक सामाजिक प्रथा घोषित कर दिया, जिसका उद्देश्य स्वस्थ और कार्यक्षम नागरिक उत्पन्न करना था ।

इस तरह कमाल पाशा ने दस-पन्द्रह वर्ष तक नवीन तुर्की के निर्माण के लिये तरह-तरह के समयानुकूल परिवर्तन किये और उसे राजनैतिक, आर्थिक, सैनिक दृष्टि से एक सबल राष्ट्र बनाने की कोशिश की जिससे वह संसार के अन्य प्रगतिशील राष्ट्रों के मुकाबले में ठहर सके । उसने विदेशी माल पर महसूल बढ़ाकर देश के उद्योग-धन्धों की वृद्धि की । समस्त देश में बिजली के उत्पादन की व्यवस्था की और विदेशी व्यापार की सुविधा के लिये एक जहाजी बेड़ा भी तैयार कराया ।

मुस्तफा कमाल के इन सब प्रयत्नों और सुधार-योजनाओं से तुर्की की काया-पलट हो गई और तुर्की का पुराने ढंग का आधा नंगा और अभावग्रस्त किसान आधुनिक राष्ट्रों के सुखी और सन्तुष्ट नागरिक के रूप में बदल गया । अब तुर्की जनता ने कमाल के इन सब उपकारों के महत्त्व को समझा और सच्चे हृदय से उसके आदेशों का पालन करके राष्ट्र-निर्माण के कार्यक्रम को सफल बनाने में पूरा सहयोग दिया । अब कमाल एक विद्रोही अथवा आन्दोलनकारी के बजाय राष्ट्र का महान निर्माणकर्त्ता माना जाता था और लोग उसे "अतातुर्क" (तुर्की का पिता) के नाम से पुकारने लगे थे ।

नवम्बर सन् १९३८ में अतातुर्क कमाल का देहावसान हो गया । मरने से पहले उसने अपने राष्ट्र को सब प्रकार से स्वतन्त्र और सुरक्षित देख लिया । संसार के बड़े-बड़े राष्ट्र—अमेरिका, रूस, इंग्लैण्ड, फ्रांस आदि उसे सम्मान की दृष्टि से देखते थे और उसके साथ सन्धि करके घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करते थे । यद्यपि उसका व्यक्तिगत जीवन सदैव एक फौजी आदमी की तरह रहा और अपने खान-पान तथा भोजन विलास में उसने कभी कोई खास नियन्त्रण नहीं लगाया, पर उसने अपनी समस्त शक्ति का उपयोग देश, समाज और राष्ट्रवासियों के उद्धार तथा प्रगति के लिये ही किया । इसलिये तुर्की ही नहीं वरन् संसार के अन्य लोगों ने भी उसे एक महान पुरुष स्वीकार किया । निःसन्देह तुर्की राष्ट्र के लिये वह एक युग-निर्माण व्यक्ति था । केवल राजनीतिक दृष्टि से ही नष्ट-भ्रष्ट होते हुए तुर्की की रक्षा नहीं की वरन् सामाजिक संगठन, शिक्षा, अर्थव्यवस्था आदि सब विषयों में उसकी काया-पलट करके उसे नवजीवन ही प्रदान कर दिया । इसके लिये तुर्की का प्रत्येक नागरिक आगामी सैकड़ों वर्षों तक उसे स्मरण करता रहेगा ।

महापुरुषों की अनेक श्रेणियाँ होती हैं । जिस दृष्टिकोण से हम महात्मा गाँधी, अब्राहम लिंकन, बुद्ध और क्राइस्ट (ईसा) को महापुरुष मानते हैं, उससे सिकन्दर, नेपोलियन और कमाल पाशा को महापुरुष नहीं कहा जा सकता । प्रथम श्रेणी के महापुरुषों ने संसार के उपकार के लिये महान कार्य ही नहीं किये वरन् उनका व्यक्तिगत चरित्र भी मनुष्य मात्र के लिये आदर्श रूप था, जिससे शिक्षा ग्रहण करके हम बहुत कुछ आत्मकल्याण कर सकते हैं पर दूसरी श्रेणी वालों का क्षेत्र सीमित था और उन्होंने जो कुछ किया वह अपने देश के उद्धार और उत्थान के लिये ही किया । साथ ही उनमें चरित्र-सम्बन्धी ऐसी कितनी ही त्रुटियाँ भी पाई जाती थीं जिनका अनुकरण करने की सलाह कोई समझदार व्यक्ति नहीं दे सकता परन्तु एक बात इन दोनों प्रकार के महापुरुषों में समान थी, वह यह कि उन्होंने जो कुछ किया, स्वार्थ छोड़कर समाज अथवा समष्टि के हित के लिये किया । जो कार्य परोपकारार्थ किया जाता है, जिस कष्ट सहन में अपना कोई स्वार्थ न होकर दूसरों की भलाई का लक्ष्य ही मुख्य होता है, वह तपस्या और परमार्थ का रूप धारण कर लेता है । फिर जब कोई व्यक्ति इस प्रकार के सेवा और परोपकार के कार्य के लिये प्राण देने को प्रस्तुत हो जाता है, अथवा अर्पण कर देता है तो उसको 'महापुरुष' का दर्जा देना हमारा कर्त्तव्य हो जाता है । कमाल पाशा कोई साधु-सन्त या त्यागी, दानी मनुष्य नहीं था पर उसने अपने अत्याचार पीड़ित भाइयों के अधिकारों की रक्षा के लिये अपने प्राणों को उत्सर्ग करने की प्रतिज्ञा करली और अनेक वर्षों तक घोर संघर्ष करके उस प्रतिज्ञा को पूरा कर दिखाया । इस कार्य में उसने न तो कभी प्राणों का मोह किया और न वह किसी प्रलोभन में फँसकर कर्त्तव्य विमुख हुआ । कमाल पाशा का चरित्र सिद्ध करता है कि जो व्यक्ति वास्तव में सेवा-भावना रखते हैं, परोपकार के मार्ग पर चलना चाहते हैं वे प्रत्येक परिस्थिति में बहुत कुछ कर सकते हैं ।

हमारे भारतवर्ष की सामाजिक और धार्मिक परिस्थितियाँ भी बहुत कुछ तुर्की से मिलती-जुलती हैं । जात-पाँत, छूआछूत, सम्प्रदायों की भरमार, भाषाभेद, मन्दिरों और तीर्थों में कुपात्रों को दान, भिक्षा-व्यवसाय मृत्युभोज, विवाह तथा अन्य अनेक संस्कारों में फिजूलखर्ची आदि ऐसी बातें हैं जिनके कारण, भारतीय समाज का उत्थान होने में बड़ी बाधायें पड़ रही हैं । यह देखकर यही प्रतीत होता है कि इस देश में भी कमाल जैसे किसी दृढ़ निश्चय तथा मजबूत हाथों वाले शासन का प्रादुर्भाव होने पर ही वास्तविक सुधार हो सकेगा ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

|| जनजागृति के प्रणेता - ज्ञानक्रान्ति के अग्रदूत ||

वन्दे मातरम् मन्त्र के प्रणेता : बंकिम चन्द्र

श्री बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय आज से सौ वर्ष पूर्व बंगाल के बहरामपुर जिले में डिप्टी मजिस्ट्रेट के पद पर कार्य कर रहे थे । डिप्टी मजिस्ट्रेट तो उस समय और भी कई भारतीय बना दिये गये थे, पर बंकिम बाबू में सरकारी नौकरी करते हुए भी जातीयता की रक्षा का जो भाव था, उसका उदाहरण बहुत कम देखने को मिलता है ।

बहरामपुर में अंग्रेजी फौज की एक छोटी छावनी थी । गोरे सिपाहियों की बारक के सामने ही एक लम्बा-चौड़ा मैदान था, जिसके चारों ओर सड़क बनाई गई थी । सरकारी कचहरी इस गोरा-बारक के पीछे बनी हुई थी । कचहरी के लिये जाने वालों को इस मैदान का चक्कर काटकर जाना पड़ता था, जिसमें काफी समय लगता था । मैदान के बीच में होकर भी एक पगडण्डी कचहरी तक गई थी, जिससे जल्दी ही वहाँ पहुँचा जा सकता था । पर गोरे सिपाही भारतवासियों का इस रास्ते निकलना पसन्द नहीं करते थे, इसलिये जब वे किसी को इस पर चलता देख लेते तो उसे रोक कर परेशान करते थे ।

बंकिम बाबू हमेशा पालकी गाड़ी में बैठकर इसी पगडण्डी से कचहरी आया-जाया करते थे । उच्च पदस्थ सरकारी अधिकारी होने के कारण कोई उनको रोकता न था । एक दिन जब कचहरी से लौटते हुए उनकी पालकी मैदान के बीच में पहुँची तो एक गोरे ने उसके दरवाजे पर जोर से धक्का मारा । कहारों ने भयभीत होकर पालकी को जमीन पर रख दिया । बंकिम बाबू जब बाहर निकले तो उन्होंने देखा कि एक लम्बा-तड़ंगा अंग्रेज सामने खड़ा है । उसकी उद्दण्डता देखकर बंकिम बाबू बड़े क्रोधित हुए और गरजकर बोले—"शैतान, तू कौन है ?"

उस हट्टे-कट्टे अंग्रेज ने इनकी बात का कुछ उत्तर न देकर जोर से इनका हाथ पकड़ा और उसे मरोड़ कर दूसरी तरफ धकेल दिया । जिससे यह पगडण्डी से कुछ दूर चले गये । अंग्रेज के इस असभ्यतापूर्ण व्यवहार से, और यह देखकर कि वह एक सम्माननीय भारतवासी को जातीयता के अभिमान के कारण तुच्छ समझता है, बंकिम बाबू का क्रोध और भी भड़क उठा । शारीरिक शक्ति की निगाह से वे उस फौजी का कुछ नहीं कर सकते थे, इसलिये थोड़ी ही दूरी पर गेंद खेलते हुए अन्य अंग्रेजों के पास गये। उनमें एक बहरामपुर के जज मिस्टर वेंब्रिज भी थे । बंकिम बाबू ने उन्हीं से कहा—"महोदय ! क्या आपने देखा कि उस व्यक्ति ने अभी मेरे साथ कैसा व्यवहार किया है ?"

जज साहब ने कहा—"महाशय ! मैं दूर की चीजों को नहीं देख सकता । मेरी दृष्टि शक्ति कमजोर है, इसलिये मैंने कुछ नहीं देखा ।" इसके पश्चात् बंकिम बाबू ने अन्य अंग्रेजों से भी वही बात कही, पर सबने यही उत्तर दिया कि "हमने कुछ नहीं देखा ।"

साहब की उद्दण्डता का प्रतिफल देने के लिये बंकिम बाबू ने उसी समय उस पर मुकदमा चलाने का निश्चय कर लिया था और इसके लिये गवाह तैयार कर लेना चाहते थे । पर इन लोगों में से कोई गवाही के लिये तैयार नहीं हुआ । मिस्टर वेंब्रिज (जज) तो वास्तव में कम देखते थे, पर अन्य अंग्रेजों के सम्बन्ध में ऐसी बात नहीं थी । वे अपने सजातीय के विरुद्ध एक भारतवासी का पक्ष ग्रहण करने को तैयार कैसे होते ? पर यह सब देखकर बंकिम बाबू ने साहस न छोड़ा और अंग्रेजों को सावधान करते हुए कहा—"अच्छा आप लोग ऐसा ही अदालत में कहियेगा ।"

वह अंग्रेज भी कोई साधारण सिपाही न था, उस छावनी का प्रधान अध्यक्ष कर्नल डफिन था । उसकी सभी अंग्रेज अधिकारियों से मित्रता थी और सब लोग उसका रौबदाब भी मानते थे । सब बातें मालूम करके बंकिम बाबू अपने घर चल दिये, पर क्रोध के कारण उनका चेहरा अब भी लाल हो रहा था ।

दूसरे ही दिन बंकिम बाबू ने उन्हीं जज साहब (मिस्टर वेंब्रिज) की इजलास में कर्नल डफिन पर दावा कर दिया । जब कर्नल साहब के नाम सम्मन निकला तो तमाम अंग्रेजों में हलचल मच गई । पर अभी कर्नल डफिन को होश नहीं आया था । वह कहने लगा—"काले आदमी का यह साहस कि वह मेरे ऊपर नालिश करे ! मैं उसे दिखा दूँगा कि किसी अंग्रेज पर नालिश करना और उसमें सफल हो सकना सहज नहीं है ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अन्य कितने ही अंग्रेज भी एक यूरोपियन की इज्जत इस प्रकार बिगड़ती देखकर उसकी सहायता को तैयार हो गये और बंकिम बाबू पर दबाव डालने लगे । जब इसमें सफलता न मिली तो उन्होंने बंकिम बाबू के विरुद्ध संगठित होकर कार्य करने का निश्चय किया ।

पेशी के दिन कर्नल साहब को अदालत में हाजिर होना पड़ा । उस दिन वहाँ नागरिकों की बड़ी भीड़ इकट्ठी हो गई । हिन्दुस्तानी लोग आश्चर्य कर रहे थे कि इतने बड़े अंग्रेज अफसर पर दावा करने का साहस किसने किया ? बंकिम बाबू कौन हैं ? जज साहब कहाँ हैं ? कर्नल साहब कहाँ हैं ? कोई कहते थे—"अंग्रेज-अंग्रेज आपस में मिल जायेंगे और अन्त में बंकिम बाबू को हारना ही पड़ेगा ।" दूसरे की सम्मति थी—"नहीं-नहीं, वेंब्रिज साहब बड़े ईमानदार हैं, न्यायमूर्ति हैं । वे कानून के विरुद्ध कभी सजातीय का पक्ष नहीं ले सकते ।"

पर अब एक नई ही समस्या पैदा हो गई । शहर के सभी वकील और मुख्तार भी इस मुकदमे को देखने जज साहब के इजलास में इकट्ठे हो गये थे, और वे सब बंकिम बाबू के पक्ष में थे । इसलिये जब कर्नल साहब वकील करने गये तो उनको एक भी वकील अपने मुकदमे की पैरवी करने को न मिला । फिर वे मुख्तारों के पास गये तो वहाँ भी सबने यही उत्तर दिया कि हमने "बंकिम बाबू के वकालत नामे पर हस्ताक्षर कर दिये हैं ।"

यह दशा देखकर साहब का नशा उतरा । अब वे कमिश्नर आदि बड़े अफसरों के पास दौड़े, पर उन्होंने अपने पद के कारण इसमें हस्तक्षेप करना उचित न समझा । अन्त में सब लोग जज साहब की ही शरण में गये । पर मिस्टर वेंब्रिज निसन्देह बड़े न्यायप्रिय निकले । उन्होंने मित्रों की खातिर भी अन्याय करना स्वीकार नहीं किया और स्पष्ट कह दिया—"जब तक कर्नल साहब बंकिम बाबू से क्षमा प्रार्थना न करेंगे तब तक मैं इन्हें छोड़ नहीं सकता ।"

अन्त में कर्नल साहब को अपनी शान छोड़कर 'काले आदमी' से क्षमा माँगनी पड़ी । बंकिम बाबू ने भारतीयता के गौरव की रक्षार्थ जो साहस दिखाया उसका अन्य लोगों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ा और वे अंग्रेजों के मुकाबले में अपनी हीनता की वृत्ति को त्यागने लगे ।

बंकिम चन्द्र का जन्म (सन् १८३८ से १८९४) एक उच्च ब्राह्मण परिवार में कलकत्ता के निकट 'काँटाल पाड़ा' ग्राम में हुआ था । उनके पिता श्री यादव चन्द्र चट्टोपाध्याय भी डिप्टी कलेक्टर थे और अपने समय के एक बड़े तेजस्वी अधिकारी माने जाते थे । वे बंगाल के मिदनापुर जिले में काम करते थे, इसलिये बंकिम बाबू की प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा वहीं पर हुई । आरम्भ में इनका मन अंग्रेजी पढ़ने में नहीं लगता था, एक दिन अध्यापक ने जब इनको इसके लिये डाँटा तो अपनी उदासीनता त्याग कर शीघ्र ही उसमें अच्छी प्रगति करके दिखा दी । यह बाल्यावस्था में ज्यादा खेलकूद भी पसन्द नहीं करते थे इसलिये शारीरिक दृष्टि से ये कभी अधिक शक्तिशाली न हो सके । वैसे संयम-नियम से रहने के कारण स्वास्थ्य साधारणतः ठीक ही रहता था ।

बंकिम बाबू आरम्भ से ही एक मेधावी और परिश्रमी विद्यार्थी थे, इसलिये इन्होंने पढ़ाई में शीघ्र ही अच्छी उन्नति कर ली । उस समय तक ऐन्ट्रेन्स, एफ. ए., बी. ए. आदि परीक्षायें आरम्भ नहीं हुई थीं । केवल 'जूनियर', 'सीनियर' नाम की परीक्षायें होती थीं । सन् १८५८ में जब बंकिम बाबू कॉलेज की पढ़ाई समाप्त कर चुके तो उसी वर्ष कलकत्ता विश्वविद्यालय का कार्यारम्भ हुआ और घोषणा की गई कि ५ अप्रैल को बी. ए. की परीक्षा ली जायेगी । उस समय केवल दो-तीन महीने का समय शेष था । इसलिये केवल १३ विद्यार्थी परीक्षा में बैठने को तैयार हुए । इनमें ग्यारह अनुत्तीर्ण हो गये । केवल दो पास हुए जिनमें बंकिम बाबू का नम्बर पहला था ।

पितृभक्ति का अपूर्व उदाहरण

उस युग में बी. ए. पास कर लेना बहुत बड़ी योग्यता का प्रमाण माना जाता था । इसलिये जब यह समाचार गजट में छपा तो बंगाल के छोटे लाट हालिडे साहब ने बंकिम बाबू को बुलवाया और इस सफलता पर बधाई दी । तत्पश्चात् इनसे डिप्टी मजिस्ट्रेट के पद पर काम करने को कहा, जो उस समय भारतवासियों के लिये बहुत बड़ा पद समझा जाता था । बंकिम बाबू ने इसे सुनकर गम्भीरतापूर्वक कहा—"मैं इस कृपा के लिये बहुत कृतज्ञ हूँ परन्तु अभी इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कह सकता । मैं इस सम्बन्ध में पहले अपने पिताजी से पूछ लेना चाहता हूँ । वे जैसा कहेंगे वैसा ही करूँगा ।"

लाट साहब ने बड़े आश्चर्य से कहा—"क्या डिप्टी मजिस्ट्रेट से बढ़कर आप किसी अन्य नौकरी की आशा रखते हैं ? यदि नहीं, तो आप इसे स्वीकार क्यों नहीं करते ?"

बंकिम बाबू—"आपका कथन ठीक है । पर मैं पिताजी की आज्ञा लिये बिना कोई काम नहीं करता । इसीलिये तुरन्त ही स्वीकृति देने में असमर्थ हूँ ।"

तब लाट साहब ने कहा—ठीक है, अपने पिता की आज्ञा ले लो परन्तु शीघ्र उत्तर देना ।

बंकिम बाबू के पिता यह समाचार सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और उनकी आज्ञा प्राप्त करके अगस्त १८५८ में ही वे इस पद पर काम करने लग गये । उनकी पितृ-भक्ति देखकर लाट साहब भी बड़े प्रभावित हुए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साहित्य-सेवा का व्रत

जिस समय बंकिम बाबू विद्यालय की शिक्षा समाप्त करके सरकारी नौकरी में प्रविष्ट हुए, उस समय देश की दशा बड़ी अस्थिर थी। सन् १८५७ के गदर के फलस्वरूप देश की शासन-प्रणाली बदल गई थी और ईस्ट इण्डिया कम्पनी को हटाकर समस्त शासन-भार महारानी विक्टोरिया ने अपने हाथ में ले लिया था। वे एक बड़ी सुयोग्य और सहृदय शासक थीं और भारतवर्ष को आधुनिक प्रगति के मार्ग पर चलाना चाहती थीं। इसलिये यहाँ शीघ्रतापूर्वक शिक्षा का प्रचार किया जा रहा था, प्रेस खोले जा रहे थे और समाचार पत्रों का प्रकाशन बढ़ने लगा था। इस प्रकार देश में एक सार्वजनिक जागृति का श्रीगणेश हुआ था और देश के कितने ही प्रबुद्ध व्यक्ति उसका लाभ उठाकर सामाजिक और व्यक्तिगत उत्थान के कार्यक्रमों में संलग्न होने लगे थे।

इस अवसर पर बंकिम बाबू ने अनुभव किया कि सरकारी नौकरी होने के कारण वे किसी सार्वजनिक आन्दोलन में तो प्रत्यक्ष भाग ले नहीं सकते, इसलिये प्रेरणादायक सत् साहित्य की रचना करके ही जन-जागृति के उद्देश्य की पूर्ति की जाये।

उस समय बंगला भाषा की दशा बहुत हीन थी। हिन्दी की तरह ही उसमें कुछ भक्ति और शृंगार सम्बन्धी कविता—पुस्तकों को छोड़कर कोई उत्तम साहित्य नहीं था। गद्य साहित्य का तो तब तक ठीक तरह से आरम्भ भी नहीं हुआ था। उस समय की स्थिति का वर्णन करते हुए महाकवि रवीन्द्रनाथ ने एक लेख में कहा था—

"उस समय बंगला भाषा को कोई श्रद्धा के साथ नहीं देखता था। संस्कृत के पण्डित उसे ग्राम्य-भाषा कहते थे, अंग्रेजी पढ़े-लिखे उसको 'मूर्खों' की भाषा मानते थे। बंगाल भाषा में ग्रन्थ-रचना करके यश प्राप्त करने की सम्भावना पर कोई स्वप्न में भी विश्वास नहीं करता था। केवल स्त्रियों और बालकों के लिये उसमें छोटी-छोटी पुस्तकें प्रकाशित की जाती थीं। असम्मानित बंगला भाषा उस समय अत्यन्त हीन और मलिन वेष में काल-यापन करती थी। उसमें जो सौन्दर्य और महत्त्वपूर्ण गुण छिपे हैं, वे दरिद्रता के आवरण को भेद कर प्रकट नहीं हो पाते थे।"

बंकिम बाबू के समय में बंगला भाषा की ऐसी ही अवस्था थी। बहुत थोड़े व्यक्ति जो उससे अनुराग रखते थे वे किसी प्रकार उसकी सेवा किये जा रहे थे। नहीं तो सब कोई अंग्रेजी के पीछे पागल थे। स्वयं बंकिम चन्द्र ने आरम्भ में उसी में लिखने का विचार किया और "राजमोहन्स वाइफ" (राजमोहन की पत्नी) नामक एक उपन्यास भी लिख डाला। पर शीघ्र ही उनका यह भ्रम दूर हो गया। उन्होंने समझ लिया कि अपनी भाषा को हीनावस्था में छोड़कर अंग्रेजी के पीछे दौड़ना एक प्रकार का अपराध है। उसमें तो पहले ही एक से एक धुरन्धर लेखक मौजूद हैं। आवश्यकता तो इस बात की है कि अपनी शक्ति का उपयोग मातृभाषा के लिये करके उसे सभ्य-भाषाओं की पंक्ति में खड़े होने योग्य बनाया जाये। तब से वे मातृभाषा के इतने अनुयायी बन गये कि अपना समस्त निजी कार्य बंगला में ही करने लगे। एक बार उन्होंने अपने घनिष्ठ मित्र के पत्र का उत्तर इसीलिये नहीं दिया कि वह अंग्रेजी में था। उन्होंने अपने उस मित्र से एक ही प्रश्न किया कि "जब अंग्रेजी न तो तुम्हारी मातृ-भाषा है और न मेरी, तब उसमें पत्र लिखने की क्या आवश्यकता है?"

यही कारण है कि आज बंकिम चन्द्र को बंगला भाषा की प्राणप्रतिष्ठा करने वाला माना जाता है। इस दृष्टि से वहाँ के साहित्यकारों में उनका वैसा ही महत्त्व माना जाता है जैसा कि हिन्दी वालों में भारतेन्दु बा. हरिश्चन्द्र का। इन्होंने भी हिन्दी के गद्य-साहित्य का निर्माण और प्रचार करने में अपनी पूरी शक्ति लगा दी थी और स्वयं ही नहीं अनेक विद्वानों को प्रेरणा और प्रोत्साहन देकर हिन्दी की जड़ जमाई थी। बंकिम बाबू भी सरकारी नौकरी का कार्य पूरा करके घर आने पर सिवाय साहित्य-सेवा और उसी का प्रचार करने के और किसी तरफ ध्यान नहीं देते थे। वे अन्य प्रतिभाशाली व्यक्तियों को प्रेरणा देकर भी बंगला-साहित्य की वृद्धि का प्रयत्न करते थे।

यह प्रसिद्ध है कि बंगाल के विद्वान् और देशभक्त श्री रमेश चन्द्र दत्त को उन्होंने बंग-साहित्य की सेवा में लगाया था। दत्त महाशय अंग्रेजी शासन में उन पाँच भारतवासियों में से थे जिन्होंने सबसे पहले विलायत की आई. सी. एस. परीक्षा पास करके उच्च पद प्राप्त किया था। साथ ही वे भारतीय संस्कृति के भी इतने बड़े विद्वान् थे कि उनका लिखा "ऐन्शियेण्ट हिस्टरी आफ इण्डियन सिविलाइजेशन" (भारत की प्राचीन सभ्यता का इतिहास) अभी तक एक सम्माननीय ग्रन्थ माना जाता है और विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रम में स्थान पाता है। जब बंकिम बाबू ने रमेश चन्द्र दत्त से भेंट होने पर अनुरोध किया कि अंग्रेजी में लिखने के साथ मातृ-भाषा में भी कुछ लिखने की कृपा किया करें, तो उन्होंने उत्तर दिया "बंगला भाषा में कैसे लिखें? उसमें तो लिखने की कोई निश्चित शैली ही नहीं है।" बंकिम बाबू ने कहा—"अभी निश्चित शैली नहीं है तो कोई बात नहीं, आप जैसे विद्वान जिस प्रकार लिखेंगे वही शैली बन जायेगी।" इस बात से प्रभावित होकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रमेश चन्द्र दत्त ने बंगला में कई पुस्तकें लिखीं जो अभी तक लोकप्रिय बनी हुई हैं ।

बंकिम चन्द्र और रवीन्द्रनाथ

महाकवि रवीन्द्रनाथ को महान् साहित्यकार बनाने में बंकिम बाबू का भी पर्याप्त सहयोग था । वे अपने मासिक पत्र 'बंग-दर्शन' में उनकी रचनाओं को स्थान देकर, उनकी आलोचना करके उन्हें प्रोत्साहित करते थे । कहा जाता है कि एक विवाह के उत्सव में बंकिम और रवीन्द्र दोनों उपस्थित थे । उस समय उनकी आयु पचास के लगभग थी और वे बंग-साहित्य के सम्राट माने जाते थे । लोगों ने स्वागत-सत्कार करके उनको फूल-मालाओं से लाद दिया, पर उन्होंने वे अपने हाथ से रवीन्द्रनाथ को पहना दीं । रवीन्द्र भी उनको अपना गुरु मानते थे । उन्होंने लिखा है—"बंकिम बंगला लेखकों के गुरु और बंगाली पाठकों के मित्र हैं । वे 'सुजलां, सुफलां, मलय शीतलां' बंग-भूमि की मातृवत्सल सन्तान हैं ।" बंकिम बाबू का देहान्त होने पर उन्होंने साधना (मासिक पत्र) में लिखा था—

"जिस दिन से बंकिम बाबू ने समालोचना करना छोड़ दिया, उस दिन से बंगला में कोई अच्छा समालोचक पैदा नहीं हुआ । बंकिम बाबू का स्थान इस दृष्टि से आज तक खाली ही है । अभी तक उसका कोई अधिकारी सम्मुख नहीं आ सका । उनकी समालोचनायें बंगला-साहित्य में अराजकता नहीं फैलने देती थीं । वे साहित्य जगत् के राजा थे । जो लोग बंकिम बाबू और आजकल की समालोचनाओं के बारे में सोचेंगे वे इस बात को मुक्त कण्ठ से स्वीकार करेंगे कि वैसा समालोचक आज तक पैदा नहीं हुआ । आज हमारे साहित्य—सिंहासन से राजा के उठ जाने से साहित्य-क्षेत्र में गड़बड़ी फैली हुई है ।"

जो लोग हमारे कितने ही हिन्दी-पाठकों की तरह 'समालोचना' का अर्थ केवल 'पुस्तक-परिचय' समझते हैं, वे गलती करते हैं । समालोचक का वास्तविक कर्त्तव्य एक चतुर माली की तरह 'साहित्य-वाटिका' की देख-भाल करना है कि उसमें किसी तरह के अनुपयोगी झाड़-झंकाड़ न उग आवें और न किसी प्रकार का कूड़ा-कचड़ा फैलने पावे । यह कार्य निःसन्देह बड़ा कठिन है और इसीलिये अनेक विद्वान् इस क्षेत्र में पैर रखते हुए डरा करते हैं । प्रथम तो निष्पक्ष और खरी समालोचना करना ही सहज नहीं है, क्योंकि उसके लिये पर्याप्त अध्ययन और परिश्रम की आवश्यकता होती है । फिर उससे भी बड़ी विपत्ति यह है कि जिस किसी की रचना के सम्बन्ध में खरी बातें कही जायेंगी, उसकी त्रुटियाँ दिखाई जायेंगी, वही नाराज होकर विरोधी बन बैठेगा । बंकिम बाब के साथ ऐसा ही हुआ । इसकी चर्चा करते हुए रवीन्द्रनाथ ने कहा था—

"बंकिम बाबू से कुछ लोग रुष्ट रहा करते थे और व्यर्थ में उनकी निन्दा किया करते थे । जो लोग दूसरों की नकल करके ही लेखक बन जाना चाहते थे, बंकिम बाबू उनकी खूब धज्जियाँ उड़ाते थे । इसीलिये अनेक लोग उनसे चिढ़ा करते थे । उनमें से कई तो उनको 'बहुत छोटा लेखक' सिद्ध करने का प्रयत्न करते थे । परन्तु इन बातों के होते हुए भी वे कभी समालोचक के कर्त्तव्य से विमुख नहीं हुए । उनकी आलोचनायें कभी-कभी अधिक कड़ी अवश्य होती थीं, परन्तु वे सत्य-पथ से कभी विचलित न होते थे । इन कड़ी समालोचनाओं के कारण कई बार उन्हें गालियाँ भी खानी पड़ती थीं ।"

हम बंकिम चन्द्र जैसे साहित्यकारों को केवल 'लेखक' ही नहीं वरन् उससे बहुत ऊँचा समझते हैं । मनोविनोद, ज्ञान-चर्चा अथवा अर्थोपार्जन के लिये पुस्तक लिखना और बात है, तथा समाज एवं देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर उनके उत्थान और नव-निर्माण के उपयुक्त साहित्य तैयार करना और दूसरों से कराना सर्वथा भिन्न बात है । पेशे के रूप में पुस्तकें लिखने वाले लेखक बहुत से मिल सकते हैं पर अपने हानि-लाभ, यश-अपयश का विचार छोड़ कर समाज को ऊँचा उठाने वाले साहित्यकार विरले ही निकलते हैं । ऐसे साहित्यकार समाज के नेता और मार्गदर्शक होते हैं और उनका यश अनेक राजनैतिक नेताओं की अपेक्षा चिरस्थाई होता है । बंकिम बाबू इसी श्रेणी के सच्चे और सेवाभावी साहित्यिक थे ।

'बंग-दर्शन' का प्रकाशन

साहित्य-प्रचार और नये लेखकों को प्रोत्साहन देने के लिये बंकिम बाबू ने 'बंग-दर्शन' मासिक पत्र भी प्रकाशित किया । किसी अच्छे पत्र-पत्रिका का सफलतापूर्वक चला सकना वर्तमान समय में भी एक कठिन कार्य है, तो जिस समय छापेखाने शुरू ही हुए थे और अधिकांश पढ़े-लिखे लोग भी यह नहीं जानते थे कि 'अखबार' या 'सामयिक पत्र' किसको कहते हैं, उस समय एक अच्छा 'पत्र' प्रकाशित करना और उसका सफलतापूर्वक संचालन करना कितना कठिन होगा, इसे अनुभवी व्यक्ति ही समझ सकते हैं । फिर बंकिम बाबू एक उच्च पदस्थ राजकर्मचारी थे और इस प्रकार के 'सार्वजनिक कार्यों' में हाथ डालना उनके लिये 'लाभदायक' नहीं था । जानकार लोगों का कहना है कि देश और समाज की सेवा के कार्यों में इस प्रकार अधिक ध्यान देने से उस समय की सरकार उनसे कुछ असन्तुष्ट ही रहती थी, और इसीलिये वे जीवन के अन्त तक 'डिप्टी मजिस्ट्रेट' ही बने रहे । यदि वे अन्य सब सरकारी कर्मचारियों की तरह अपना लक्ष्य एक मात्र 'नौकरी' को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही रखते तो अवश्य ही कमिश्नर या उससे भी बड़े पद पर पहुँच सकते थे ।

कुछ भी हो 'बंग-दर्शन' अपने समय का एक प्रतिनिधि मासिक पत्र था । यदि यह कहा जाये कि उसने ही लोगों को पत्र-पत्रिकाओं में लिखने और उनको चलाने की शिक्षा दी तो इसमें कुछ भी अतिशयोक्ति नहीं है । उसके सम्बन्ध में "भारत के गौरव" नामक ग्रन्थ में कहा गया है—

" 'बंग-दर्शन' उस समय एक मात्र साहित्यिक पत्र था और वह भी मामूली ढंग का नहीं था । उसके सम्पादक थे स्वयं बंकिम । उसमें अच्छे से अच्छे लिखने वालों के लेख रहते थे, और उसका सबसे बड़ा आकर्षण था बंकिम की अपनी रचनायें । उसमें उपन्यास, साहित्य, समालोचना और विभिन्न प्रकार के लेख-निबन्ध आदि प्रकाशित होते थे । लोग 'बंग-दर्शन' की राह देखा करते थे और जैसे ही वह आता, वैसे ही पढ़ डालते थे । उसकी समालोचना, व्याख्या तथा सामूहिक पाठ हुआ करता था । लोग बंकिम की रचनाओं की पंक्तियाँ याद कर लेते थे । बंकिम चन्द्र उस युग में कितने प्रसिद्ध हो गये थे, इसका कुछ पता इस बात से लग सकता है कि उनके उपन्यासों, निबन्धों के कुछ अंश याद कर लेना और समय आने पर उनको सुना सकना एक प्रशंसनीय बात मानी जाती थी । जो लोग उनकी भाषा-शैली का प्रयोग अपनी रचनाओं में या पत्रों में कर सकते थे, उनको विद्वान्, बुद्धिमान माना जाता था । आधुनिक बंग-साहित्य के जनक बंकिम चन्द्र ही थे । उनके पहले राजा राममोहनराय और ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने बंगला-गद्य को सँवारा था । बंकिम ने आकर उसे और हरा-भरा तथा सुन्दर बना दिया । उन्होंने बंगाल के घर-घर में साहित्य का सन्देश पहुँचाया ।"

बंकिम बाबू ने इस पत्र को न तो नाम कमाने के लिये निकाला था और न धन कमाने के लिये । उस समय पत्र-पत्रिका निकाल कर इस प्रकार का लाभ उठा सकना सम्भव ही न था, क्योंकि उनके ग्राहक बहुत कम होते थे । हमारे हिन्दी साहित्य के अग्रगामी मासिक पत्र 'हिन्दी प्रदीप', 'ब्राह्मण' आदि के इतिहास से हमको विदित है कि उनकी ग्राहक संख्या कभी दो-चार सौ से ज्यादा नहीं हो सकी और उनको सदा घाटे का ही रोना रहता था । ऐसी दशा में 'बंग-दर्शन' का उद्देश्य भी सिवाय देश सेवा और समाज-सेवा के और कुछ नहीं हो सकता था ।

बंकिम बाबू की रचनायें

बंकिम बाबू साहित्य-संसार में विशेष रूप से एक 'उपन्यासकार' की हैसियत से प्रसिद्ध हुए हैं । उनके पहले बंगला भाषा में या तो उपन्यास थे ही नहीं, और यदि दस-पाँच थे भी तो वे बाजारू किस्से-कहानियों की तरह थे । एक लेखक ने बतलाया है कि "सबसे पहले बंकिम बाबू ने ही बंगला-साहित्य में सुरुचि उत्पन्न की । उसके पहले गाली-गलौज का बाजार खूब गर्म हो जाता था, भ्रष्ट कहानियाँ निकलती थीं और निन्दा तथा अपमानजनक हास्य का बोलबाला था ।" बंकिम बाबू ने विदेशों के श्रेष्ठ साहित्य का अनुशीलन कर अपने देश की आवश्यकता और रुचि के अनुसार उच्चकोटि की पुस्तकें लिखीं । उनसे एक तरफ जन-मानस का परिष्कार हुआ और दूसरी ओर अन्य लेखकों को एक आदर्श प्राप्त हुआ ।

बंकिम बाबू का पहला उपन्यास 'दुर्गेश नन्दिनी' है, जिसमें अकबर के युग की सामाजिक तथा राजनैतिक परिस्थिति पर प्रकाश डाला गया है । इसकी भाषा में संस्कृत शब्दों की अधिकता है । पर जैसे-जैसे वे आगे लिखते गये उनकी भाषा सरल और स्वाभाविक होती गई, जिससे सामान्य पाठकों में उनका प्रचार सम्भव हो सका ।

दूसरा उपन्यास 'कपाल कुण्डला' सामाजिक कहा जा सकता है । यह है तो पूर्ण रूप से काल्पनिक पर इसका आधार बंकिम बाबू के एक व्यक्तिगत अनुभव पर है । जिस समय वे नगवा (मेदिनीपुर) में काम करते थे, एक रात को एक कापालिक ने उनके दरवाजे पर जोर से धक्का मारा । जब नौकरों के सूचना देने पर वे बाहर आये तो देखा कि एक लम्बा-चौड़ा मनुष्य दरवाजे पर खड़ा है । उसका चौड़ा मस्तक प्रकाशमान था । उसके हाथ में मनुष्य की खोपड़ी थी, गले में रुद्राक्ष की माला थी और एक नरमुण्ड भी था । उसकी दाढ़ी और मूँछ बहुत बड़ी थीं । उसने बाघम्बर पहन रखा था, माथे पर कोयले का टीका और शरीर भर में भस्म लगी हुई थी । उसे देखते ही बंकिम बाबू समझ गये कि यह कोई कापालिक है । उन्होंने आश्चर्य के साथ पूछा—"यहाँ आधी रात को क्यों आये हो ?"

कापालिक ने उनके प्रश्न का कुछ उत्तर न देकर कहा—"मेरे साथ चलो ।"

बंकिम बाबू—कहाँ ?

कापालिक—बालियाड़ी में समुद्र किनारे ।

बंकिम बाबू—नहीं, मैं ऐसा नहीं कर सकता ।

इस पर वह बिना कुछ कहे चला गया । दूसरे दिन भी इसी प्रकार वह आधी रात के समय आया और वे ही बातें दुहराईं । तीसरे दिन भी उसने ऐसा ही किया । इसके बाद फिर वह कापालिक कभी नहीं आया, इसके पश्चात् एक दिन बंकिम बाबू ने बलियाड़ी जाकर उस स्थान को अच्छी तरह देखाभाला था । 'कपाल कुण्डला' उपन्यास में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्होंने जो कापालिक के निवास स्थान का वर्णन किया है वह बलियाड़ी से बहुत मिलता-जुलता है ।

'आनन्दमठ' की रचना

बंकिम बाबू ने इसके पश्चात् 'मृणालिनी', 'विषवृक्ष', 'चन्द्रशेखर', 'इन्दिरा', 'राजसिंह' आदि कितने ही उपन्यास लिखे, जिनमें से कई कला की दृष्टि से भी इतने बढ़िया माने गये कि इंगलैण्ड में उनका अनुवाद अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित किया गया । पर जिस उपन्यास के कारण उनका नाम देशभक्तों में अमर हो गया है, वह है, उनका 'आनन्दमठ' । यह अन्य रचनाओं की अपेक्षा छोटा है और इसमें कला का परिचय भी कम मिलता है । पर इसमें देशभक्ति का एक ऐसा आदर्श उपस्थित किया गया है, जिसने सन् १६०५ से आरम्भ होने वाले राजनीतिक आन्दोलन में हजारों व्यक्तियों को पक्का देशभक्त और स्वाधीनता-संग्राम का निर्भीक सैनिक बना दिया । इसी उपन्यास में सबसे पहले 'वन्दे मातरम्' का शब्द और उसका गीत लिखा गया है, जो आज देश में 'राष्ट्रीय-गान' की तरह प्रचलित है । इस उपन्यास की प्रशंसा करते हुए 'भारत के गौरव' पुस्तक में कहा गया है—

"बंकिम का 'आनन्दमठ' उपन्यास जैसे एक नया राग सुनाने के लिये ही लिखा गया था । इस उपन्यास को सामाजिक भी कहा जा सकता है और एक हद तक ऐतिहासिक भी । पर इसका असली उद्देश्य कहानी की आड़ में लोगों को देशभक्ति का पाठ सिखाना था । विदेशी शासन से देश को मुक्त करने की जो भावना हमारे देशवासियों के हृदय में जगी, वह अंग्रेजी पढ़ने या यूरोप का इतिहास जान लेने से नहीं, वरन् अंग्रेजों के शासन में किये गये भारतीयों के अपमान और अत्याचार से ही उत्पन्न हुई थी । बंकिम बाबू का यह उपन्यास उसी भावना का उद्गार है । लगभग काल्पनिक इतिहास को साकार बनाकर बंकिम ने देश के सामने एक महान्, आदर्श खड़ा कर दिया । इस उपन्यास में एक मठ के संन्यासियों ने देश की रक्षा के लिये शत्रुओं से लड़ाई की और इसी आदर्श के लिये अपना प्राण होम दिया । इन साधुओं का मन्त्र था 'वन्दे मातरम्' ।

" 'आनन्दमठ' ही एक ऐसा उपन्यास है, जिसने सबसे पहले राजनीतिक विद्रोह की कहानी सुनाई । नवयुवकों के सामने विदेशी राज्यशक्ति के विरुद्ध खड़े होने का एक आदर्श प्रस्तुत किया । 'आनन्दमठ' का 'प्लाट' बहुत कुछ काल्पनिक है, पर उसके द्वारा भारतीय जनता के सामने स्वाधीनता की लड़ाई का एक इतिहास आया । इस उपन्यास की आड़ में भारतीयों के सामने स्वतन्त्रता के युद्ध का एक आदर्श रख दिया गया, उसका उपाय या साधन बताया गया और साथ ही एक मन्त्र दिया गया । उस जमाने के लिये यही बहुत था । इस उपन्यास के कारण बंकिम की नौकरी जाते-जाते रह गई ।"

'आनन्दमठ' यद्यपि एक मनोरंजक शैली पर लिखा उपन्यास ही है पर उसमें आदि से अन्त तक देश-प्रेम की भावना भरी हुई है । जगह-जगह वार्तालाप के द्वारा समाज-सेवा की प्रेरणा दी गई है । मठ का एक संन्यासी—भवानन्द, महेन्द्रसिंह नाम के बड़े जमींदार को देश-सेवा के लिये प्रेरणा देता हुआ कहता है—

"महेन्द्रसिंह, मेरी धारणा थी कि तुममें कुछ वास्तविक मनुष्यत्व होगा, पर अब देखता हूँ कि सब जैसे हैं, वैसे ही तुम भी हो । तुम भी जमींदारों के लड़कों की तरह केवल घी-दूध खाने में ही बहादुर हो । देखो, साँप जमीन पर छाती के बल रेंगता है, उससे ज्यादा नीच जीव दूसरा कौन होगा ? पर उस पर पैर पड़ जाने से वह भी फन उठाकर काटने को दौड़ता है । क्या तुमको किसी तरह धर्म और देश की दुर्दशा दिखाई नहीं पड़ती । तनिक मगध, मिथिला, कांची, काशी, दिल्ली, काश्मीर—किसी भी स्थान को देखो, सर्वत्र दुर्दशा ही जान पड़ेगी और किस अन्य देश के आदमी खाने के अभाव में घास, पत्तियाँ, लता, झाड़ी आदि को खाते हैं ? किस देश के आदमी सियार, कुत्ता, मुर्दा तक खाते हैं ? किस देश के आदमियों को घर में रुपया रहने से सुरक्षा का भरोसा नहीं; देव, धर्म की आराधना की सुविधा नहीं, घर में लड़की-बहू की लज्जा का ठिकाना नहीं ? सब देशों में राजा-प्रजा में पारस्परिक सम्बन्ध के कुछ नियम प्रचलित हैं । पर हमारे राजा कहाँ रक्षा करते हैं ? धर्म गया, जाति गई, मान गया, अब तो प्राण भी जा रहे हैं ।"

जिस 'संन्यासी-विद्रोह' की घटनाओं को लेकर 'आनन्दमठ' उपन्यास लिखा गया है, वह उस समय हुआ था जब सन् १७५७ का पलासी युद्ध होकर बंगाल में से नबावी शासन निर्बल पड़ गया था और अंग्रेजी राज्य की जड़ क्रमशः जमती जाती थी । पर कुछ स्थानों में मुसलमानों और अंग्रेजों का मिला-जुला शासन चल रहा था, उसी अवसर पर बंगाल के मेदिनीपुर आदि स्थानों में संन्यासियों के एक संगठन का प्रादुर्भाव हुआ था जो अस्त्र-शस्त्र रखते थे और गाँव वालों से खाद्य सामग्री तथा धन वसूल करके अपना काम चलाते थे । इस कारण कभी-कभी राजकर्मचारियों से उनकी मुठभेड़ भी हो जाती थी जिसमें दोनों पक्षों के लोग हताहत होते थे । जब यह समाचार उस समय के गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स को मिला तो उसने कुछ अंग्रेजी सेना संन्यासियों को दबाने को भेजी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एकाध बार संन्यासियों को कुछ सफलता मिल गई पर शीघ्र ही उनका दल तितर-बितर होकर खत्म हो गया ।

इसी 'संन्यासी-विद्रोह' की घटना में कल्पना का पुट देकर बंकिम बाबू ने एक देशभक्तिपूर्ण कथा की सृष्टि की है, यद्यपि उस समय देश में नाममात्र को मुसलमानी शासन भी था पर असली कर्ता-धर्ता अंग्रेज ही थे । इसलिये संन्यासियों का वास्तविक संघर्ष अंग्रेज सरकार की सेना से ही होना था और उन्हीं के द्वारा संन्यासियों के संगठन का अन्त हो सका । पर यदि बंकिम बाबू अपने उपन्यास में मुसलमानों को विपक्षी न बतलाते तो वे बहुत शीघ्र अंग्रेज सरकार के विरोधी सिद्ध किये जा सकते थे । इसलिये उन्होंने आरम्भिक मुठभेड़ मुसलमानी नबाव से वर्णन की है और अंग्रेजों को उसके सहायक के रूप में ही प्रकट किया है ।

इतना ही नहीं ग्रन्थ के अन्त में उन्होंने 'अंग्रेजी राज्य' की स्थापना को 'दैवी-विधान' की तरह बतला कर, पुस्तक को राजद्रोही होने के दोष से बचाने की भी चेष्टा की है । जब अंग्रेजी सेना और संन्यासी-सेना का युद्ध समाप्त हो गया और समस्त सरकारी सिपाही मारे गये, तब संन्यासियों के नेता सत्यानन्द का अपने 'गुरुदेव' से जो एक योगसिद्ध महापुरुष थे जो वार्तालाप हुआ, उसमें गुरु ने यह कहा था कि "हिन्दू-धर्म पर अत्याचार करने वाले जो शासक थे, उसका अन्त हो गया । अब अंग्रेज देश में शान्ति स्थापित करके स्थाई शासन की व्यवस्था करेंगे, यही दैवी विधान है ।" जब सत्यानन्द ने 'हिन्दू-शासन' स्थापित न हो सकने पर शोक प्रकट किया तो 'गुरुदेव' ने कहा—

"सत्यानन्द ! दुःखी न होओ । तुमने जिस प्रकार लूटमार कर धन एकत्रित किया और उसके द्वारा सैन्य संगठन करके नबाव की सेना को पराजित किया, उससे देश का उद्धार नहीं हो सकता । इस युद्ध को बढ़ाने से व्यर्थ में नर-हत्या ही होगी । सनातम-धर्म के उद्धार के लिये अब अंग्रेजों का राज्य होना ही अवश्यम्भावी है । महापुरुषों ने इस बात को जिस प्रकार समझा है, उसी रूप में तुमको मैं उसे समझाता हूँ । तैतीस करोड़ देवताओं की पूजा 'सनातन' धर्म नहीं है । यह एक लौकिक और हीनकोटि का धर्म है । सच्चा सनातन धर्म अब लुप्त हो चुका है । वह धर्म 'ज्ञानात्मक' है । ज्ञान भी दो प्रकार का होता है—एक बहिर्विषयक और दूसरा अन्तर्विषयक । जो अन्तर्विषयक ज्ञान है, वही सनातन धर्म का प्रधान भाग है । लेकिन बहिर्विषयक ज्ञान हुए बिना अन्तर्विषयक ज्ञान होना भी असम्भव है । स्थूल क्या है, इसे जाने बिना सूक्ष्म को भी नहीं जाना जा सकता । इस समय इस देश में बहुत दिन से बहिर्विषयक ज्ञान लुप्त हो गया है, फलतः यथार्थ सनातन धर्म भी लुप्त हो गया है । सनातन धर्म का पुनरुद्धार करना हो तो पहले बहिर्विषयक ज्ञान का प्रचार आवश्यक है । इस समय हमारे देश में ऐसे व्यक्ति नहीं हैं, जो बहिर्विषयक ज्ञान की समुचित शिक्षा दे सकें । इसलिये हमको वह ज्ञान किसी दूसरे देश से ही ग्रहण करना होगा । अंग्रेज इस बहिर्विषयक ज्ञान और लोकशिक्षण में बहुत दक्ष हैं । इसलिये दैवी-शक्ति सम्पन्न महापुरुष इस अवसर पर अंग्रेजों का शासन ही आवश्यक समझते हैं । जब तक हिन्दू इस भौतिक ज्ञान-विज्ञान को प्राप्त करके शक्तिशाली नहीं बन जाते तब तक इनका ही शासन रहेगा ।"

सम्भव है बंकिम बाबू ने अपने उपन्यास को कानून के पंजे से बचाने के लिये, इस प्रकार की 'समझौते' की नीति से काम लिया हो । उनका मत है कि अंग्रेजों ने देश के आर्थिक स्रोतों का शोषण कर अपने देश की शक्ति को खूब बढ़ाया, यह तो सत्य है, पर उनके शासन के फलस्वरूप भारत में आधुनिक ज्ञान-विज्ञान का शीघ्रतापूर्वक प्रचार होकर वह एक संगठित राष्ट्र बन सका, इसको भी स्वीकार करना ही होगा । कुछ भी हो 'आनन्दमठ' जिस 'देशभक्ति' की भावना को उत्पन्न करने के अभिप्राय से लिखा गया था, वह उससे अवश्य पूर्ण हो गया । एक समय था जब अंग्रेज अधिकारी इस पुस्तक से ऐसे ही डरते थे जैसे बम के गोले से । उस समय स्वयं हम तथा हमारे मित्र इस पुस्तक को जिस प्रकार गुप्त रूप से पढ़ते थे । उसकी स्मृति ही इसकी श्रेष्ठता का अमिट प्रमाण है । आज भी उसके 'वन्दे मातरम्' गीत की कुछ पंक्तियाँ हृदय में गूँजती रहती हैं—

बन्दन करों सदा जननी को ॥
शोभित सुजल सुफल सों शीतल,
मलयानिल सों जुड़वत जी को ।
विमल-चाँदनी निशि लहराती,
प्रफुलित कुसुमित लता सुहाती ।
मधुर वचन हँसि वदन लखाती,
सुख वरदायिनि है सब ही को ।
बन्दन करों सदा जननी को ॥

कौन ऐसा भारत-सन्तान होगा जो ऐसी महिमान्वित और कल्याणमयी माता के चरणों की बन्दना करके पुलकित न हो जाये और उसकी पुकार सुनकर सेवा के लिये कर्त्तव्य क्षेत्र में कूद न पड़े ? बंकिम बाबू ने स्वयं उसी समय यह भविष्यवाणी कर दी थी कि "एक दिन 'वन्दे मातरम्' की ध्वनि से सारा भारत गूँज उठेगा ।" और हम उनके स्वप्न को अपनी आँखों से सत्य होते देख चुके हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धर्म-तत्त्व

बंकिम बाबू ने केवल उपन्यास ही नहीं लिखे हैं, वरन् वे गम्भीर और तथ्यपूर्ण निबन्ध लिखने में भी किसी प्रकार कम न थे । उनके मासिक पत्र 'बंग-दर्शन' में प्रकाशित बहुसंख्यक निबन्ध आज भी साहित्य की अमूल्य थाती समझे जाते हैं और पुस्तकों के रूप में प्रकाशित होकर लोकहित साधन कर रहे हैं । उनकी इस प्रकार की हास्य और व्यंग्य की रचनायें 'कमला कान्त का दफ्तर' नामक पुस्तक में प्रकाशित हुई हैं, जिसका साहित्य-जगत् में बड़ा नाम है । उसमें हमारी सामाजिक, साहित्यिक और राजनीतिक त्रुटियों की ऐसी मार्मिक समालोचना की गई है और मीठी चुटकियाँ ली गई हैं कि एक बार पढ़नी आरम्भ करने पर पुस्तक को हाथ से रखने को जी नहीं चाहता ।

पर उच्च कोटि के गम्भीर निबन्धों की दृष्टि से उनकी 'धर्म-तत्त्व' नामक पुस्तक बहुत महत्त्वपूर्ण है । उसमें उन्होंने किसी खास धर्म के सिद्धान्तों की विवेचना न करके 'मानव-धर्म' के प्रमुख लक्षणों का ही वर्णन किया है । उन्होंने बतलाया है कि मनुष्य में जो कई प्रकार की शक्तियाँ हैं, जिनको हम 'वृत्ति' के नाम से पुकार सकते हैं, उन्हीं का अनुशीलन, विकास और चरितार्थ करने का नाम मनुष्यत्व है । इसी को हम मनुष्य का 'धर्म' भी कह सकते हैं । इन सब वृत्तियों का परस्पर सामंजस्य करके उन्हें जीवनोपयोगी और समाजोपयोगी बना लेना ही अनुशीलन की सीमा है और उसी को हम सच्चा सुख भी कह सकते हैं । इसको अन्य शब्दों में यों भी कह सकते हैं कि जब हमारे 'मन, वचन और कर्म' में पूर्ण एकता उत्पन्न हो जाती है, तो हम उसे पूर्ण मनुष्यत्व का लक्षण मान सकते हैं ।

बंकिम बाबू ने लिखा है कि "जब ज्ञान में पाण्डित्य, विचार में दक्षता, कार्य में तत्परता, चित्त में धार्मिकता और सुरस में रसिकता आदि गुण एक स्थान पर पाये जायें तभी मानसिक वृद्धि की पूर्णता मानी जा सकती है । इसके साथ ही सब प्रकार की शारीरिक उन्नति भी होनी आवश्यक है अर्थात् शरीर बलिष्ठ, स्वस्थ तथा सब तरह के शारीरिक कार्यों में खूब दक्ष तथा अभ्यस्त होना चाहिये ।"

इस प्रकार 'धर्म-तत्त्व' में भारतीय जनता के सामने एक नया दृष्टिकोण उपस्थित किया गया है । हमारे देश में हजार व्यक्तियों में से दस-पाँच व्यक्तियों को छोड़कर शेष सब लोग बाह्य पूजा-पाठ, तीर्थ-व्रत, जप-तप, ज्ञान-चर्चा, शास्त्र, कथा-श्रवण आदि को ही पूरा 'धर्म' मानने लग गये हैं । ये बातें धर्म में सहायक अवश्य होती हैं, पर ऐसे लोगों की भी कमी नहीं जो इन सब बातों को करते हुए भी घोर दुष्टता के कार्य करने में संकोच नहीं करते । वे दूसरों का सत्व अपहरण कर सकते हैं, पूरे परिवारों की हत्या कर सकते हैं । गरीबों का नृशंसतापूर्वक शोषण और उत्पीड़न कर सकते हैं, अदालत में झूठे मुकदमे चला सकते और गवाही दे सकते हैं, खाद्य पदार्थों में हानिकारक वस्तुओं की मिलावट करके समाज को हानि पहुँचा सकते हैं, व्यापार में हर तरह की धोखाधड़ी कर सकते हैं, अनाज को गोदामों में छिपा कर लाखों व्यक्तियों को भूखों मारने का कारण बन सकते हैं, और इन सब कामों को करते हुए भी 'धार्मिक' ही नहीं 'धर्ममूर्ति' भी कहला सकते हैं । कारण यही है कि लोग धर्म के सच्चे स्वरूप को भूलकर ऊपरी क्रियाकाण्ड को ही 'धर्म-पालन' समझने लग जाते हैं, और अपने मन में सन्तोष कर लेते हैं कि हम धर्म-शास्त्रों के नियमों का पालन कर तो रहे हैं ! धार्मिक-कर्मकाण्ड भी सामान्य लोगों में तत्सम्बन्धी भाव उत्पन्न करने में सहायक होते हैं, पर इस तरह की बातों के बहुत अधिक बढ़ जाने का यह परिणाम होता है कि लोग कुछ समय में उन्हीं को 'धर्म-सर्वस्व' समझ लेते हैं और जिस मानसिक शुद्धता और श्रेष्ठ कर्मों के अनुष्ठान के लिये उनको किया जाता है, वे सब उनकी निगाह से ओझल हो जाते हैं ।

'कृष्ण-चरित्र' में धर्म का आदर्श

'धर्म-तत्त्व' में वर्णित धर्म के स्वरूप को समझाने, उदाहरण द्वारा उसे लोगों के हृदय में बैठा देने के उद्देश्य से बंकिम बाबू ने 'कृष्ण-चरित्र' की रचना की है । जब 'धर्म-तत्त्व' में वर्णित आदर्श धर्म के नियमों का पूर्णतः पालन कर सकना लोग असम्भव बतलाते हैं, और शंका करते हैं कि इस प्रकार मन-वचन-कर्म की उच्चता और एकता संसार में रहते हुए व्यवहार में नहीं लाई जा सकती, तो यह आवश्यक हो जाता है कि उनके सम्मुख कोई ऐसा उदाहरण उपस्थित किया जाये जिसकी सच्चाई में उनको विश्वास हो ।

बंकिम बाबू ने इस प्रकार के उदाहरण के लिये भगवान कृष्ण को चुना है । वास्तव में धर्म के उपर्युक्त आदर्श के उच्च शिखर पर थोड़े ही व्यक्ति चढ़ सकते हैं । उनकी संख्या कभी बहुत अधिक नहीं हुई । विशेषतः वर्तमान समय में तो, जब एक हजार वर्ष की गुलामी के कारण हिन्दुओं के चरित्र में अनेक प्रकार की निर्बलता और दोषों ने घर कर लिया है, वे किसी ऊँचे आदर्श पर शीघ्र विश्वास भी नहीं कर पाते । पर भगवान कृष्ण का उदाहरण ऐसा है जिसे वे पुराने समय से सुनते आये हैं और वर्तमान समय में भी उस पर श्रद्धा रखते हैं—चाहे वह 'अन्ध-श्रद्धा' ही क्यों न हो । इस श्रद्धा का उल्लेख करते हुए बंकिम बाबू ने अपने ग्रन्थ के आरम्भ में ही कहा है—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"भारतवर्ष के अधिकांश और बंगाल के समस्त हिन्दू श्रीकृष्ण चन्द्र को भगवान का अवतार मानते हैं। "कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्" इस पर सबका दृढ़ विश्वास है। बंगाल में प्रायः सब जगह कृष्ण की उपासना होती है। गाँव-गाँव में कृष्ण के मन्दिर हैं और घर-घर में कृष्ण की पूजा होती है। प्रायः प्रति मास कृष्ण का उत्सव होता है। प्रति उत्सव में कृष्ण की लीला होती है। सबके मुँह से कृष्ण के गीत और नाम सुनाई देते हैं। किसी के वस्त्र पर कृष्ण की नामावली है, तो किसी के शरीर पर ही कृष्ण के नामों की छाप है। कोई कृष्ण का नाम लिये बिना घर के बाहर पैर नहीं रखता, तो कोई कृष्ण का नाम लिखे बिना कुछ लिखता-पढ़ता नहीं। भिखारी कृष्ण का नाम लेकर भीख माँगते हैं। घृणा प्रकाश करने के समय भी 'हरे-कृष्ण—राधा-कृष्ण' कहते हैं। वन के पक्षी पालते हैं तो उन्हें भी राधाकृष्ण का नाम रटाते हैं।"

भगवान कृष्ण के प्रति इस प्रकार की श्रद्धा-भक्ति रखना कभी अनुचित नहीं कहा जा सकता। खास कर जब हम यह भी दृढ़ विश्वास रखते हैं कि श्रीकृष्ण भगवान ही थे, उनमें और भगवान में कोई अन्तर है ही नहीं, तब तो उनका स्मरण जितना अधिक और जिस विधि से किया जाये वह कल्याणकारी ही होगा। पर इसमें कठिनाई यही उत्पन्न हो गई है कि भगवान कृष्ण के चरित्र में स्वार्थी कथा-वाचकों और शृंगारी कवियों ने बहुत-सी चमत्कारी और अश्लील कथायें गढ़कर मिलादी हैं। कहाँ तो भगवान का वह गीता-उपदेश जिससे बढ़कर स्पष्ट और व्यावहारिक धर्म-मार्ग दूसरा मिल ही नहीं सकता और कहाँ मक्खन चुराने और पराई स्त्रियों के साथ छेड़खानी करने की बातें। इसकी चर्चा करते हुए बंकिम बाबू लिखते हैं—

"भगवान को सदा स्मरण करते रहने की अपेक्षा मनुष्यों के लिये और कौन मंगलजनक कार्य हो सकता है? यह प्रश्न यह है कि भगवान को हम लोग क्या समझने लगे हैं? यही कि वे बचपन में चोर थे—दूध, दही, मक्खन चुरा कर खाया करते थे। युवावस्था में वे व्यभिचारी थे और अनेक पराई स्त्रियों का पातिव्रत धर्म उन्होंने नष्ट किया। प्रौढ़ावस्था में वे वंचक और शठ थे—उन्होंने धोखा देकर भीष्म और द्रोण जैसे पूज्य पुरुषों की हत्या कराई। क्या इसी का नाम 'भगवत्-चरित्र' है? जो केवल शुद्ध-सत्त्व है, जिससे सब प्रकार की शुद्धियाँ होती हैं और जिसके नाम से अशुद्धि एवं पाप दूर होते हैं, उसका मनुष्य देह धारण करके इस प्रकार के समस्त पाप करना क्या भगवान को शोभा दे सकता है।

"सनातन धर्म के द्वेषी यह आरोप लगाया करते हैं कि 'भगवत्-चरित्र' की ऐसी कल्पना करने के कारण ही भारतवर्ष में पाप का स्रोत बढ़ गया है। इस आरोप का अभी तक कोई सफलतापूर्वक खण्डन नहीं कर सका है। मैं स्वयं श्रीकृष्ण को भगवान मानता हूँ और उन पर विश्वास करता हूँ। अंग्रेजी शिक्षा से मेरा वह विश्वास और भी दृढ़ हो गया है। पुराणों और इतिहास में भगवान श्रीकृष्ण का चरित्र कैसा वर्णन किया गया है यह जानने के लिये जहाँ तक बना इन ग्रन्थों का मन्थन किया। इसका फल यह हुआ कि उनके सम्बन्ध मे जो पाप-कथायें प्रचलित है, वे सर्वथा निर्मूल जान पड़ीं। कथाकारों और कवियों ने श्रीकृष्ण के विषय में जो मनगढ़न्त बातें लिखी हैं, उन्हें निकाल देने पर जो कृष्ण-चरित्र बचता है, वह अति विशुद्ध, परम पवित्र, अतिशय महान् मालूम हुआ। मुझे यह भी अनुभव हुआ कि ऐसा सर्वगुण सम्पन्न, सर्वपापरहित आदर्श चरित्र कहीं नहीं है। न किसी देश के इतिहास में है और न किसी काव्य में।"

"कृष्ण-चरित्र" की भूमिका में ही लेखक ने यह स्पष्ट कह दिया है कि "श्रीकृष्ण के मानव-चरित्र की आलोचना करना ही मेरा उद्देश्य है। मैं उन्हें ईश्वर मानता हूँ, यह बात भी मैंने कहीं नहीं छिपाई है किन्तु सब पाठक भी मेरे उस विश्वास को स्वीकार कर लें इसके लिये मैंने कोई प्रयत्न नहीं किया है।" बंकिम बाबू की इस नीति को कोई बुरा नहीं कह सकता। राम और कृष्ण के कार्यों में जगह-जगह अलौकिकता अथवा चमत्कारी घटना सम्मिलित कर देने का ही यह परिणाम हुआ है कि लोगों ने उनके प्रति मौखिक श्रद्धा तो रखी पर उनके उदाहरण से लाभ उठाना छोड़ दिया। जब कोई मौका आया तो लोग यही कहकर अलग हो गये कि "वे तो भगवान थे, हम उनका अनुकरण कैसे कर सकते हैं?" यह एक बड़ी हानिकारक प्रवृत्ति है, जिससे हम अपने धर्म ग्रन्थों में वर्णित सभी श्रेष्ठ आदर्शों से लाभ उठाने से वंचित रह जाते हैं। सम्भव है कि किसी जमाने में कथा कहने वाले विद्वानों ने अवतार-कथाओं में ये चमत्कारी अंश इसलिये जोड़ दिये हों कि इनके प्रभाव से सामान्य और अपढ़ जनता धर्म कर्म में विश्वास बनाये रहेगी, पर इस समय तो उनका परिणाम विपरीत ही दृष्टिगोचर हो रहा है। इसलिये यह आवश्यक है कि इन दैवी महामानवों के चरित्र पर मानव-दृष्टि से ही विचार किया जाये जिससे लोग उनके द्वारा उपस्थित किये आदर्श पर अपनी सामर्थ्य और परिस्थिति के अनुसार न्यूनाधिक अंशों में चलने का प्रयत्न करने लगें। इन उदाहरणों की वास्तविकता और महत्ता का वर्णन करते हुए बंकिम बाबू ने लिखा है—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"यह सच है कि उपासक की प्रथम अवस्था में निराकार परमेश्वर उसका आदर्श नहीं हो सकता । वरन् ईश्वर के अनुरूप मनुष्य अर्थात् जिनमें गुणों की अधिकता के कारण ईश्वरांश मालूम होता है अथवा जो 'देहधारी ईश्वर' प्रतीत होते हैं, वे ही उनके आदर्श हो सकते हैं । इसीलिये ईसामसीह क्रिस्तानों के और गौतम बुद्ध बौद्धों के आदर्श हैं । पर धर्म में प्रवृत करने वाला जैसा आदर्श हिन्दू शास्त्रों में है, वैसा संसार के और किसी धर्म में नहीं है, न किसी जाति में है । जनकादि राजर्षि, नारदादि देवर्षि, वशिष्ठादि ब्रह्मर्षि सबके सब धर्म के परम आदर्श हैं । रामचन्द्र, युधिष्ठिर, अर्जुन, लक्ष्मण, भीष्म आदि क्षत्रिय भी सम्पूर्णता प्राप्त आदर्श हैं । ईसामसीह और गौतम बुद्ध केवल उदासीन, कोपीनधारी और मोहरहित धर्मवेत्ता थे । वह सर्वगुण सम्पन्न नहीं थे । पर हिन्दुओं के आदर्श पुरुषों का सर्वांगसुन्दर विकास हुआ है । यह सिंहासनासीन होकर भी उदासीन हैं । धनुर्धारी होकर भी धर्मवित्ता हैं । राजा होकर भी पण्डित हैं । शक्तिमान होकर भी प्रेममय हैं । हिन्दुओं का एक आदर्श और है, जो इन सबसे भी बढ़ा-चढ़ा है । यह वही आदर्श है जिससे युधिष्ठिर ने धर्म सीखा, अर्जुन जिसका शिष्य हुआ, राम-लक्ष्मण जिसके अंश स्वरूप हैं और जिसके चरित्र के समान महामहिमामय चरित्र मनुष्य-भाषा में कभी वर्णित नहीं हुआ । वह आदर्श भगवान कृष्ण का है ।"

श्री कृष्ण चरित्र को चमत्कारी घटनायें निकाल कर आदर्श मानव की दृष्टि से लिखने पर कितने ही व्यक्ति बंकिम बाबू के विरोधी बन गये । उनके जीवन-चरित्र के एक लेखक ने लिखा है कि "बंकिम बाबू ने श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में प्रसिद्ध सभी कथाओं को स्वीकार नहीं किया । बहुत-सी घटनाओं को इन्होंने क्षेपक कहकर छोड़ दिया था । इसलिये 'कृष्ण-चरित्र' लिखने पर उनको खूब गालियाँ भी सुननी पड़ीं ।" पर हम जानते हैं कि इस प्रकार गाली देने वाले दो ही प्रकार के व्यक्ति हो सकते हैं । एक तो अज्ञानी अन्धभक्त और दूसरे कथा कहकर धन कमाने वाले पण्डितजी । ये लोग अपने अज्ञान अथवा स्वार्थ के कारण ही बिना सोचे-समझे और बिना किसी प्रमाण के सभी विवेकयुक्त बातों का विरोध करने लग जाते हैं । यदि वे धर्म-शास्त्रों का अच्छी तरह मनन करें तो उनमें भी श्रीकृष्ण और श्री राम आदि को ईश्वरावतार मानते हुए भी यह कहा गया है कि उन्होंने जो कुछ किया वह 'मनुष्य' की हैसियत से ही किया । यदि उनको अपनी दैवी शक्ति से ही काम लेना था, तो मनुष्य का रूप धारण करने की क्या आवश्यकता थी, वे अपनी इच्छा मात्र से ही हर तरह का परिवर्तन कर सकते थे । 'विष्णु पुराण' में इस सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए कहा गया है—

मनुष्य धर्मशीलस्य लीला सा जगतः पतेः ।
अस्त्राण्यनेक रूपाणि यदरातिषु मुंचति ॥ १४ ॥
मनसैव जगत्सृष्टिं संहारंच करोति यः ।
तस्यारिपक्ष क्षपणे कोऽयमुद्यमविस्तरः ॥ १५ ॥
तथापि यो मनुष्याणां धर्मस्तमनु वर्तते ।
कुर्वन बलवता सन्धिं हीनैर्युद्धं करोत्यसौ ॥ १६ ॥
सामचोप प्रदानंच तथाभेद प्रदर्शयन् ।
करोति दण्डपातंच कंचिदेव पलायनम् ॥ १७ ॥
मनुष्य देहिनां चेष्टामित्येवमनु वर्ततः ।
लीला जगत्पतेस्तस्य छन्दतः संप्रवर्तते ॥ १८ ॥

—*(अंश ५. अध्याय २२)*

अर्थात्—"जगतपति होकर भी उसने शत्रुओं पर जो अस्त्र चलाये वह मनुष्य-धर्म के कारण उसकी लीला है । अन्यथा जो मन से ही जगत् की सृष्टि और संहार करते रहते हैं, वह विनाश के लिये इतना उद्यम क्यों करेगा ? पर वह संसार में आकर मनुष्य-धर्म का अनुसरण करता है, इसलिये वह बलवान के साथ सन्धि कर लेता है, और निर्बल से युद्ध करता है । वह साम, दाम, दण्ड, भेद से काम लेता है और कभी मौका देखकर भाग भी जाता है । इस प्रकार मनुष्य-धर्म का अनुसरण करने वाला वह जगतपति अपनी इच्छा से लीलायें करता है ।"

निःसन्देह विष्णुपुराणकार का यह कथन सर्वथा युक्तियुक्त है कि यद्यपि भगवान कृष्ण दैवी शक्तियों से युक्त थे, पर मनुष्य-समाज में रहकर वे उसी प्रकार का उदाहरण उपस्थित करना चाहते थे, जिसका अनुकरण अन्य मनुष्य भी कर सकें । दैवी-शक्ति से काम लेकर किसी कठिन समस्या को हल करने से मानवता के विकास में कोई सहायता नहीं मिलती, उल्टा लोग कहने लगते हैं कि यह तो ईश्वरीय शक्ति का कार्य है, हम उसे कैसे कर सकते हैं ? इसलिये बंकिम बाबू ने श्रीकृष्ण के प्रति भगवान के रूप में भक्ति रखते हुए भी उनके उन्हीं कार्यों का वर्णन किया है जो मानव-शक्ति से सम्भव हैं । उन्होंने कृष्ण भगवान की विविध शक्तियों का परिचय देते हुए ग्रन्थ के अन्त में यह निष्कर्ष निकाला है—

"भगवान कृष्ण समस्त मानव-गुणों के प्रकाश से पूर्ण तेजस्वी थे । वह अपराजेय, अपराजित, विशुद्ध, पुण्यमय, प्रेममय, दयामय, दृढ़कर्मी, धर्मात्मा, वेदज्ञ, नीतिज्ञ, धर्मज्ञ, लोकहितैषी, न्यायशील, क्षमाशील, निरपेक्ष, शास्ता, निरहंकार योगी और तपस्वी थे । वे मानुषी-शक्ति से कार्य करते थे, परन्तु उनका चरित्र अमानुषी था । अब पाठक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपनी बुद्धि से ही निर्णय करें कि जिसकी शक्ति मानुषी और चरित्र मनुष्यातीत था वह कौन हो सकता है ? जो श्रीकृष्ण को मनुष्य-भाव से देखते हों वे उनको कम से कम यूरोपियन विद्वान् राइस डेविड्स के मतानुसार गौतम बुद्ध के तुल्य तो मान ही लें। राइस डेविड्स ने बुद्ध को "हिन्दुओं में सबसे बड़ा ज्ञानी और महान् पुरुष" लिखा है और जिसको श्रीकृष्ण के कार्यों में 'भगवत्-चरित्र' की झलक दिखाई दे वे अन्त में हमारे साथ हाथ जोड़कर विनयपूर्वक कहें—

नाकणात् करणादवा कारणाकारणान्न च।
शरीर ग्रहणं वापि धर्मत्राणाय ते परम्॥

"जो न हो सकने योग्य कार्य को भी करने में समर्थ हैं और कारणों के भी कारण हैं वे धर्म की रक्षा के लिये मनुष्य शरीर को ग्रहण करके मानव-चरित्र करते हैं।"

निःसन्देह बंकिम बाबू के इस कथन में कुछ भी अत्युक्ति नहीं कि भगवान श्रीकृष्ण के समान आदर्श चरित्र वाला कोई महापुरुष संसार में अब तक दूसरा नहीं हुआ यद्यपि मनुष्यों का मार्ग प्रदर्शन करने के लिये दैवी-आत्मायें सभी देशों और युगों में अवतीर्ण होती रहती हैं, पर अभी तक भगवान कृष्ण से बढ़कर अथवा उनके तुल्य दैवी-प्रकाश और किसी में देखने में नहीं आया। पर उनके चरित्र का वास्तविक मूल्यांकन करने के लिये आवश्यक है कि महाभारत और पुराणों में वर्णित कृष्ण-कथा में से अस्वाभाविक अंशों को निकाल कर उनके विशुद्ध परोपकार, दुष्ट दमन और सज्जनों की रक्षा के कार्यों का दिग्दर्शन कराया जाये। बंकिम बाबू ने 'कृष्ण-चरित्र' लिखकर इसी उद्देश्य की पूर्ति की है जिसके लिये वे निश्चय ही सभी सत्य, धर्मानुयायियों की प्रशंसा के पात्र माने जायेंगे।

प्रशंसनीय साहस और आत्म-गौरव

बंकिम बाबू उन मनुष्यों में से नहीं थे जो बड़े-बड़े सिद्धान्तों को पुस्तकों में तो लिख देते हैं, पर स्वयं उनसे विपरीत आचरण करते हैं। इसी कारण अनेक विद्वानों की रचनायें और भाषण आदि लोगों पर कुछ प्रभाव नहीं डाल सकते। बंकिम बाबू ने 'धर्म-तत्त्व' और 'कृष्ण-चरित्र' में आदर्श मनुष्य के जो लक्षण बतलाये थे वे स्वयं उनके अनुसार आचरण करने की चेष्टा करते थे। वे सरकारी नौकरी करते थे, तो अपने उत्तरदायित्व का पूर्ण रूप से निर्वाह करने का प्रयत्न करते थे। उनके ३३ वर्ष के सेवाकाल में कितने ही अवसर बड़े खतरे के आये पर उन्होंने कभी कर्त्तव्य-पालन से पैर पीछे नहीं हटाया, और अपने साहस तथा सत्य-निष्ठा के बल पर उसे सफलतापूर्वक पार कर लिया।

जिस समय बंकिम बाबू एक उच्च सरकारी पद पर कार्य करने लगे थे, उस समय की परिस्थिति आज से बहुत भिन्न थी। तब इंग्लैण्ड और भारत दोनों की सरकारों का यह उद्देश्य रहता था कि किसी भी तरह भारत में काम करने वाले अंग्रेज अफसरों के रौब-दाब में कमी न आने पावे। वे जानते थे कि भारतवर्ष में अंग्रेजों की संख्या बहुत थोड़ी रहती है, और वे उस देश पर तभी शासन कर सकते हैं जब उनका आतंक और योग्यता का सिक्का भारतवासियों पर जमा रहे। इस सम्बन्ध में अंग्रेजों और ऐंग्लोइण्डियन लोगों के विचार कैसे कट्टरतापूर्ण और संकीर्ण थे इसके लिये हम भारतभक्त एण्ड्रूज के जीवन-चरित्र से एक ऐसा उदाहरण देना पर्याप्त समझते हैं। वे सन् १९०४ में जब इंग्लैण्ड से भारतवर्ष आये और एक कॉलेज में प्रोफेसर का कार्य करने लगे तो उनके भारतवासियों के प्रति मित्रता के भावों को देखकर अनेक अंग्रेज उनको इस प्रकार समझाया करते थे—

"कभी किसी हालत में किसी 'नेटिव' (भारतीय) से मत दबना और न किसी 'नेटिव' के दिल में यह ख्याल आने देना कि वह तुमसे ऊँचा है। हम भारतवर्ष पर केवल एक ही उपाय से राज्य कर सकते हैं और वह यही है कि हम अपनी 'पोजीशन' (दर्जे) को ऊँचा बनाये रखें। यद्यपि आप 'मिशनरी' (पादरी) हैं, तो भी अपने आपको पहले अंग्रेज समझना होगा। इस बात को कदापि न भूलें कि आप 'साहब' हैं।"

जब सन् १९०४ में यह दशा थी तो उससे चालीस वर्ष पहले, जबकि गदर होकर ही चुका था और उसमें अंग्रेजों ने बड़े-बड़े भारतीयों को बुरी तरह कुचला था, अंग्रेजों का आतंक देश पर कितना अधिक होगा इसका अनुमान कर सकना कठिन नहीं है। पर उस जमाने में भी बंकिम बाबू ने 'भारतीयता' के गौरव को किस प्रकार अक्षुण्ण रखा, इस सम्बन्ध में बहरामपुर की एक घटना हम अन्यत्र लिख चुके हैं। उसके अतिरिक्त भी उन्होंने अनेक बार अंग्रेजों से टक्कर लेकर जातीय-गौरव के भाव का प्रमाण दिया उनमें से एकाध घटना का वर्णन अप्रसांगिक न होगा।

अंग्रेज लुटेरों का दमन

जिस समय बंकिम बाबू की बदली बंगाल के खुलना जिले में हुई तो वहाँ उन्होंने नील की खेती करने वाले किसानों पर अंग्रेजों को बड़ा अत्याचार करते देखा। इनमें सबसे मशहूर मारेल साहब था, जिसने मारेलगंज नाम का एक गाँव ही बसा लिया था। यहाँ पाँच-छः सौ लाठी चलाने वाले आदमी अपने पास रख छोड़े थे, जिनके बल पर वह अपना आतंक लोगों पर कायम किये हुए था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पर एक गाँव 'बड़खाली' पर उसका बस नहीं चलता था, क्योंकि वहाँ के निवासियों में बड़ी एकता थी और वे मिलकर आतंककारियों का मुकाबला करते थे । एक बार किसी बात पर विशेष नाराज होकर मारेल साहब ने 'बड़खाली' गाँव पर धावा बोल दिया । दोनों पक्षों में बड़ा घोर संग्राम हुआ । जब मारेल साहब का दल दबने लगा तो उनके 'दलपति' हेली साहब ने बन्दूक चलाना शुरू किया और 'बड़खाली' के नेता रहीमुल्ला को मार दिया । बन्दूक के भय से गाँव वाले भाग गये तो मारेल साहब के दल ने गाँव को मनमाना लूटा, औरतों को बेइज्जत किया और घरों को जला दिया ।

जैसे ही इस 'गदर' का समाचार बंकिम बाबू को मिला, वे पुलिस का एक दल लेकर शीघ्रतापूर्वक 'बड़खाली' की तरफ चले । पर तब तक मारेल साहब की 'विजयी सेना' लूट का माल और स्त्रियों को भी लेकर अपने गाँव में पहुँच चुकी थी । बंकिम बाबू के आने का समाचार सुनकर मारेल साहब और हेली साहब अपने साथियों के साथ भाग निकले । तो भी बंकिम बाबू ने पीछा करके उनमें से कितनों को ही पकड़ा और एक को फाँसी तथा पच्चीस को काले पानी का दण्ड दिलाया । इस घटना से अंग्रेजों में बड़ी खलबली मच गई और लोगों में यह चर्चा होने लगी कि "अंग्रेजों ने उस आदमी को एक लाख रुपया इनाम देने की घोषणा की है जो बंकिम बाबू को जान से मार देगा ।" पर बंकिम बाबू ने कभी इस पर ध्यान न दिया और निर्भीकतापूर्वक अपना काम करते रहे ।

इसी प्रकार हबड़ा में एक गरीब बुढ़िया पर म्युनिसपैलिटी वालों ने व्यर्थ का मुकदमा चलाया और कहा कि उसने सरकारी आज्ञा की अवहेलना की है । बंकिम बाबू ने उसमें सरकारी अधिकारियों की ही भूल समझकर बुढ़िया को छोड़ दिया । इस पर हवड़ा के कलक्टर बकलैण्ड साहब बहुत असन्तुष्ट हुए और उन्होंने उस मिसिल पर बंकिम बाबू के फैसले के विरुद्ध एक नोट (टिप्पणी) लिख दिया । इस पर बंकिम बाबू भी बिगड़ उठे कि "आपने किस नियम से मेरे फैसले के विरुद्ध लिखा है ? आप एक महीने के भीतर मुझसे क्षमा माँगिये और सब कागजात कमिश्नर साहब के पास भेज दीजिये ।" बकलैण्ड साहब पहले तो अकड़े रहे, पर जब बंकिम बाबू लगातार उच्च अधिकारियों को लिखते रहे तो उसको क्षमा माँगनी पड़ी ।

इन घटनाओं में बंकिम बाबू का भाव किसी प्रकार के अहंकार अथवा हठवादिता का न था । वे समझते थे कि अंग्रेज जातीय दृष्टि से अपने को प्रत्येक भारतवासी से श्रेष्ठ समझते हैं और उनका अपमान कर देना साधारण बात मानते हैं । इसी मनोवृत्ति का विरोध करने के लिये वे किसी भी अन्याय को देखकर अंग्रेज अफसरों से लड़ जाते थे और अपनी योग्यता और सूझबूझ के आधार पर उनको परास्त भी कर देते थे ।

बंकिम बाबू की प्रतिभा और ख्याति

बंकिम बाबू ने अपनी अधिकांश रचनाओं में आदर्श चरित्र-चित्रण ही किया है । यद्यपि आज-कल 'उच्च श्रेणी' के साहित्यकार 'कला—कला के लिये' की आवाज उठाया करते हैं, पर कम से कम उस युग में अधिकांश श्रेष्ठ लेखक जो कुछ लिखते थे उसका उद्देश्य लोगों को सदुपदेश देकर सत्मार्ग दिखलाना ही होता था । जिन बुरे लोगों का वर्णन किया जाता था, उनका परिणाम सदा शोचनीय ही दिखलाया जाता था । वे लेखक अपने सामने यही लक्ष्य रखते थे कि उनकी रचनाओं द्वारा सत्प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन मिले और दुष्ट वृत्तियों को जहाँ तक सम्भव हो दबाया जाये ।

बंकिम बाबू के उपन्यासों में जितने स्त्री-पात्र आये हैं, उनका चरित्र उन्होंने प्रायः उच्च, पवित्र और अनुकरणीय दिखलाया है । यद्यपि बंगाल के पुरुष युद्ध-विद्या और तलवार चलाने में प्रसिद्ध नहीं हैं, पर बंकिम बाबू ने बंगाली स्त्रियों को भी तलवार चलाते और वीरता प्रकट करते दिखाया है । इसका उद्देश्य यही था कि बंगाली अपनी त्रुटि को दूर करके यथाशक्ति वीर बनने का प्रयत्न करें और जीवन-संग्राम में प्रशंसनीय ढंग से जूझना सीखें ।

सन् १८९१ में बंकिम बाबू ने बहुत चेष्टा करके पेंशन ली । उनकी इच्छा थी कि वे अपना समय और शक्ति साहित्य-सेवा में ही लगावें । उस समय तक उनकी रचनाओं का आदर समस्त भारत में ही नहीं होने लगा था, वरन् तीन-चार उपन्यास अंग्रेजी में अनुवादित किये जाकर इंग्लैण्ड में भी प्रकाशित किये गये थे । पर लगातार अधिक परिश्रम करते रहने से उनका स्वास्थ्य निर्बल पड़ गया । सन् १८९४ में उनकी बहुमूत्र की बीमारी जोर पकड़ गई और मूत्र नली में एक फोड़ा हो गया । इसका बहुत कुछ इलाज किया गया और आपरेशन भी हुआ । पर कोई चिकित्सा कारगर न हुई और उसी वर्ष उन्होंने समस्त साहित्य-जगत् को शोक संतप्त छोड़कर परलोक प्रयाण किया ।

राष्ट्र निर्माता बंकिम

वर्तमान युग राजनीति-प्रधान है और इस कारण बहुत से लोग यह समझा करते हैं, कि समाज के मार्ग दर्शक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और उद्धारक राजनीतिक व्यक्ति ही हो सकते हैं । जो कोई सभा मंच पर खड़ा होकर जितने जोर से भाषण कर सकता है, देश के शासकों या विरोधी दलों पर तीव्र आघात कर सकता है, समाज सुधार और राष्ट्र-निर्माण की बड़ी-बड़ी योजनायें उपस्थित कर सकता है, वही उनकी दृष्टि में देशभक्त और समाज का नेता कहलाने का अधिकारी होता है ।

इस दृष्टि से यदि विचार किया जाये तो बंकिम बाबू एक लेखक मात्र थे और वह भी मुख्यतया उपन्यासों के । वर्तमान समय में लेखकों की कमी नहीं है, वरन् उनकी संख्या दिन पर दिन बढ़ती ही जाती है । छापेखानों और प्रकाशकों की वृद्धि होने के साथ-साथ नये-नये लेखकों का प्रादुर्भाव होना स्वाभाविक भी है । प्रेस वालों को छापने के लिये कुछ काम चाहिये और प्रकाशकों को भी अपना धन्धा जारी रखने के लिये बढ़िया या घटिया कैसी भी रचनाओं को प्रकाशित करना आवश्यक है । इसलिये यदि आजकल के पाठक लेखकों को सामान्य श्रेणी का मनुष्य अथवा अन्य धन्धे-रोजगारों की तरह एक पेशा करने वाला ही समझने लगें तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं ।

बंकिम बाबू की साहित्य-सेवा का लक्ष्य राष्ट्र को जागृत करके जातीयता के मार्ग पर अग्रसर होने की प्रेरणा देना ही था । सरकारी नौकर होने के कारण वे प्रत्यक्ष रूप से इस कार्य को नहीं कर सकते । अतः उन्होंने साहित्य-सेवा के मार्ग को अपनाया और ऐसे ऐतिहासिक और सामाजिक उपन्यासों की रचना की जिनसे देशवासियों को अपने कर्त्तव्य का बोध हो सके । अनेक व्यक्ति साहित्य की महान शक्ति को नहीं समझ पाते, यद्यपि इतिहास इस बात का साक्षी है कि संसार में अनेक युद्ध और क्रान्तियाँ साहित्यिक रचनाओं में सन्निहित उद्दाम प्रेरणाओं द्वारा ही जीते गये हैं । बंकिम बाबू ही नहीं, उनके अनुयायी के तुल्य महाकवि रवीन्द्रनाथ ने भी साहित्य द्वारा ऐसी मार्मिक भावनाओं को जन्म दिया है । उनकी अनेक कवितायें इसका ज्वलन्त उदाहरण हैं ।

इसमें सन्देह नहीं कि भारतवर्ष में इस प्राणोत्पादक विचार-धारा को जन्म देने वालों में बंकिम बाबू प्रथम और प्रमुख हैं, उनसे पहले भारतीय साहित्य में या तो प्राचीन ग्रन्थ थे, या अधिकांश में निरर्थक काव्य-साहित्य या साधारण कोटि की समाज सुधार सम्बन्धी रचनायें थीं । बंकिम बाबू ने ही सर्वप्रथम आधुनिक युग के अनुकूल प्रेरणादायक साहित्य का सृजन किया जो विविध रूपों में विकसित होकर आज तक भारतीय जनता को प्रभावित कर रहा है ।

स्वाधीनता के मंत्रदाता : लोकमान्य तिलक

उत्थान और पतन जगत का अटल नियम है । जो एक समय ऊपर उठता है उसे कुछ समय पश्चात् नीचे भी उतरना पड़ता है । फिर कुछ समय पश्चात् उसको पहले से भी अधिक ऊपर उठने का अवसर मिल सकता है, यदि वह अपनी आत्मा और परमात्मा में विश्वास रखे और अपना कर्त्तव्य पालन करता रहे । प्राकृतिक नियमानुसार इस प्रकार के परिवर्तन में कोई दोष नहीं माना जाता वरन् जीवन के विविध प्रकार के अनुभव प्राप्त करते हुए प्रगति का यही मार्ग माना गया है । इसी तथ्य को समझकर हमारे किसी कवि ने गाया है—"सब दिन जात न एक समान ।"

भारतवर्ष के इतिहास में हमको इस सिद्धान्त की सच्चाई का पूरा प्रमाण मिलता है । प्राचीन ऋषि-मुनियों ने धर्म और आस्तिकता के आधार पर भारतीय-संस्कृति के भवन का इतना सुदृढ़ निर्माण किया कि काल-चक्र के अनेक धक्के खाकर, उतार-चढ़ाव देखकर भी उसकी नींव मजबूत बनी रही । अनेक बार बाहरी शक्तियों ने उससे टक्कर ली, थोड़े बहुत समय के लिये आंशिक रूप से उस पर अपना प्रभाव भी जमाया, पर अन्त में आक्रमणकारियों को आत्मसात करके भारतीय-संस्कृति पुनः अधिक शक्तिशाली रूप में प्रकट हुई । महाभारत के गृह-युद्ध के पश्चात् देश में पर्याप्त शिथिलता आ गई और लगभग दो ढाई हजार वर्ष तक वह सामान्य रूप से जीवन-यापन करता रहा । तब सिकन्दर के आक्रमण के रूप में उसको एक धक्का लगा । यद्यपि सिकन्दर की गति लाहौर के आस-पास ही रुक गई, पर इसने भारत की संस्कृति और सभ्यता पर विशेष प्रभाव डाला । सिकन्दर यूनानी संस्कृति का प्रतिनिधि था, जिसको अपने भौतिक ज्ञान और शक्ति पर अभिमान है । भारत की आध्यात्मिक संस्कृति से उसका संयोग होने से एक नवीन ज्ञान-शक्ति प्रस्फुटित हुई । गौतम बुद्ध के रूप में इस देश को एक नया मार्ग-दर्शक मिला और उससे अनुप्राणित होकर भारतीय-संस्कृति नवीन शक्ति से प्रगति करने लगी और एशिया के एक छोर से दूसरे छोर तक छा गई ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इसी प्रकार बाद में हूण, शक, सिदियन जातियों के छोटे-बड़े आक्रमण होते रहे, पर अप्रत्यक्ष रूप से वे इस देश की प्रगति में सहायक ही सिद्ध हुए । बाहर से आने वाली जातियाँ भारतीय-संस्कृति से प्रभावित होकर आर्य जाति में ही समाती चली गईं और अपनी कुछ विशेषताओं को देकर इस देश की स्थिति को अधिक दृढ़ बनाती गईं ।

भारत को दूसरा बड़ा धक्का मुसलमानी आक्रमण के रूप में सहन करना पड़ा । ये लोग यहीं पर स्थायी रूप से बस गये और अपनी विजातीय संस्कृति और धर्म को यहाँ के निवासियों पर जबर्दस्ती लादने का प्रयत्न करने लगे । मुसलमानों ने भौतिक दृष्टि से भारत के एक भाग को अवश्य पराभूत कर दिया, पर वे उसकी आत्मा को प्रभावित न कर सके । मुसलमानी शासनकाल में भी यहाँ चैतन्य, रामानन्द तुलसी, समर्थ रामदास जैसी दिव्य विभूतियाँ प्रकट होती रहीं जिन्होंने हिन्दू-जाति के मनोबल को ऊँचा उठाये रखा और समस्त देश में भारतीय-धर्म की एक नई लहर प्रवाहित कर दी जिसने अन्त में 'मुसलमानियत' को अधिकांश में निरस्त कर दिया ।

तीसरा धक्का 'ईसाइयत' का था । यूरोप की कितनी ही जातियाँ भौतिक ज्ञान-विज्ञान से शक्तिशालिनी बनकर संसार पर अधिकार जमाने के लिये दौड़ीं और उनमें से अंग्रेज भारत पर अपना व्यापक प्रभाव जमाने में सफल हो गये । उन्होंने केवल राजनीतिक दृष्टि से ही समस्त देश को अपने अधीन नहीं कर लिया, वरन् यह भी चेष्टा की कि धर्म और सभ्यता की दृष्टि से भी यहाँ के निवासियों को पराभूत करके पूर्णरूप से अपना अनुयायी बना लिया जाये । और वास्तव में एक बार 'ईसाई सभ्यता' की लहर देश के कितने ही भागों में, विशेषतः उस समय के प्रगतिशील बंगाल में इतने जोरों से फैली कि भारतीय संस्कृति के हितैषियों के हृदय शंकाकुल हो गये । पर फिर भी भारतीय संस्कृति की सुदृढ़ता ने अपना रंग दिखाया और राजा राममोहन राय, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द आदि के रूप में हिन्दू धर्म की पताका को संभालने वाले उत्पन्न कर दिये, जिन्होंने 'ईसाइयत' के आक्रमण को अधिकांश में विफल कर दिया ।

इस प्रकार धार्मिक और सांस्कृतिक दृष्टि से तो अंग्रेजों का प्रभाव बहुत कुछ रोक दिया गया, पर राजनीतिक दृष्टि से उनका 'शिकंजा' दिन पर दिन मजबूत होता जाता था । सन् १८५७ में एकबार देश ने उनके शासन को हटाने की चेष्टा की पर यहाँ के पुराने हथियारों के मुकाबले में उनके नये ढंग के अस्त्र-शस्त्र अधिक कारगर सिद्ध हुए । उसके पश्चात् तो उन्होंने 'आर्म्स एक्ट' द्वारा इस देश को पूरी तरह निःशस्त्र ही कर दिया, जिससे उनको किसी प्रकार के सशस्त्र विद्रोह का भय नहीं रह गया ।

स्वदेशी और स्वराज्य का शंखनाद

ऐसे संकट-काल में भारत के राजनीतिक क्षेत्र में लोकमान्य तिलक का आविर्भाव हुआ जिन्होंने शारीरिक शक्ति के बजाय मानसिक और भावना क्षेत्र में अंग्रेजों का मुकाबला करके उनके प्रभाव को कम करना आरम्भ किया । यह तिलक की ही महिमा थी कि अंग्रेजों के एक प्रधान गढ़ बम्बई में उन्नीसवीं शताब्दी के समाप्त होने के पहले ही स्वदेशी और स्वराज्य का शंखनाद सुनाई पड़ने लगा, जिससे समस्त देश चौकन्ना हो गया । बीसवीं शताब्दी आरम्भ होते ही एक नवीन रूप में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध विद्रोह खड़ा हो गया, जिसने अन्त में सन् १९४७ में उनको यहाँ से हटा कर ही छोड़ा ।

लोकमान्य का जन्म सन् १८५६ में महाराष्ट्र के रत्नागिरी जिले में हुआ था । उनके पिता श्रीगंगाधर तिलक एक स्कूल में मामूली अध्यापक थे । उन्होंने अपने पुत्र का नाम 'बलवन्त' रखा था । पर प्यार से सब उसे 'बाल' पुकारते थे और आगे चलकर वही नाम समस्त संसार में प्रसिद्ध हो गया । उनकी प्रारंभिक शिक्षा पूना के स्कूल में हुई । सन् १८७६ में उन्होंने 'डेन कालेज' से बी. ए. की परीक्षा पास की और इसके तीन वर्ष बाद बम्बई विश्वविद्यालय से एल. एल. बी. की उपाधि प्राप्त कर ली ।

लोकमान्य तिलक की प्रतिभा और अध्यवसाय को देखते हुए उनके मित्रों को आशा थी कि वे वकालत के धन्धे में अपूर्व सफलता प्राप्त करके शीघ्र ही धन और वैभव के स्वामी बन जायेंगे । पर तिलक का ध्यान किसी और ही तरफ था । वे देख रहे थे कि भारतवासी केवल राजनीतिक दृष्टि से ही अंग्रेजों के अधीन हो गये हैं । वे पश्चिमी सभ्यता की चमक-दमक की चकाचौंध से भ्रमित होकर अपनी सभ्यता और संस्कृति को तिलांजलि देते जाते हैं और यदि यही स्थिति अधिक समय तक बनी रही, तो वे ही अंग्रेजी शासन के सुदृढ़ स्तम्भ बन जायेंगे । उस दशा में भारत के पुनः स्वाधीन और आत्मावलम्बी होने की आशा सदा के लिये क्षीण हो जायेगी । इसलिये उन्होंने वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण करते ही लड़कों की शिक्षा कि लिये एक ऐसी शिक्षण संस्था स्थापित करने का उद्योग आरम्भ किया जहाँ पर जीवन निर्वाह की शिक्षा देने के साथ ही उनमें जातीय और राष्ट्रीय भावों की वृद्धि भी की जाये । जबकि सरकारी स्कूलों में लड़कों को केवल सरकारी क्लर्क बनने की निगाह से ही पढ़ाया-लिखाया जाता था । लोकमान्य उनको ऐसा भारतीय नागरिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनाना चाहते थे जो अपने धर्म, सभ्यता और संस्कृति की रक्षा के लिये भी सचेष्ट रहें ।

लोकमान्य तिलक के सार्वजनिक जीवन का सबसे पहला कदम पूना में सन् १८८० में 'न्यू इंगलिश स्कूल' की स्थापना करना था । इसमें उनके दो प्रधान सहयोगी श्रीविष्णु शास्त्री गोखले और अन्य अनेक देशभक्त विद्वान् भी सम्मिलित हो गये, पर इसकी जड़ जमाने वाले लोकमान्य तिलक ही थे इसमें सन्देह नहीं कि महाराष्ट्र में राष्ट्रीय भावों के प्रसार में इस संस्था ने बड़ा महत्त्वपूर्ण योगदान किया और पूना को तो राजनीतिक आन्दोलन का एक ऐसा जोरदार केन्द्र बना दिया कि अंग्रेज सरकार अन्तिम समय तक उससे भयभीत ही बनी रही ।

'न्यू इंगलिश स्कूल' स्थापना के ४-५ वर्ष बाद ही लो. तिलक ने पूना में ही फर्गुसन कालेज की नींव डाली और उसे भी एक आदर्श शिक्षा संस्था बना दिया । यह कहने में कुछ अतिशयोक्ति नहीं कि आज बम्बई प्रान्त में जो राजनीतिक जागृति दिखाई पड़ रही है उसका अधिकांश श्रेय 'फर्गुसन कालेज' में शिक्षा प्राप्त करके निकलने वाले विद्यार्थियों को ही है ।

समाचार-पत्र प्रकाशन

देश में नवीन राष्ट्रीय-चेतना और देश-सेवा की भावना उत्पन्न करने का कार्य स्कूलों द्वारा बहुत शीघ्र नहीं हो सकता था । इसलिये लोकमान्य का ध्यान आरम्भ से ही समाचार-पत्र प्रकाशन की तरफ था । जैसे ही उनकी शिक्षा-संस्था का काम कुछ जम गया और उनको उससे अवकाश मिला उन्होंने इस ओर भी ध्यान दिया । मराठी भाषा में 'केसरी' और अंग्रेजी में 'मराठा' नाम के साप्ताहिक पत्रों का श्रीगणेश तो उन्होंने सन् १८८१ में ही कर दिया था और सहकारियों की सहायता से उनका संचालन करते जाते थे । आगे चलकर उन्होंने शिक्षा-संस्थाओं का भार अन्य लोगों को दे दिया तो वे पूरी शक्ति इन्हीं में लगाने लगे । कहते हैं कि समय पड़ने पर वे इनका टाइप स्वयं ढोते थे, छपे कागजों को मोड़ने तथा पैकट बनाने आदि का काम भी स्वयं कर लेते थे । इस प्रकार उन्होंने सम्पादक से लेकर दफ्तरी और कुली तक का काम स्वयं करके इन पत्रों की जड़ जमाई । वह जमाना समाचार-पत्रों के अनुकूल न था । न तो सरकारी कानून के अनुसार उनको किसी प्रकार की स्वतंत्रता थी और न जनता उनका महत्त्व समझती थी । इसलिये उस समय जितने पत्र निकलते थे वे सब त्यागी और सेवाभावी व्यक्तियों द्वारा ही संचालित थे और उनको वे अपना तन-मन-धन लगाकर ही स्थिर रख पाते थे । अन्यथा १०० में से ९५ समाचार-पत्र जन्म लेने के साल-छः महीने के भीतर ही अपनी जीवन लीला समाप्त कर देते थे ।

यह तिलक महाराज की अपार विद्वता का परिणाम था कि कुछ वर्षों में ही ये दोनों पत्र पूर्ण स्वावलम्बी हो गये और उन्होंने महाराष्ट्र ही नहीं समस्त देश के सार्वजनिक और राजनीतिक जीवन पर चिरस्मरणीय प्रभाव डाला । उस समय अधिकांश समाचार-पत्र सरकार की आलोचना करते समय विरोध का एक भी शब्द, लिखने में भयभीत न होते थे । अगर कभी किसी सुधार के लिये लिखना पड़ता था तो वह एक प्रार्थना के रूप में ही होता था । उस युग में केवल लोकमान्य तिलक 'केसरी' तथा कलकत्ते का 'अमृत बाजार पत्रिका' ही ऐसे पत्र थे जो निर्भय होकर सरकार की अनुचित कार्यवाहियों की बड़ी आलोचना करते थे और बड़े-बड़े अधिकारियों की चालों का भण्डाफोड़ कर देते थे ।

'केसरी' के मुखपृष्ठ पर ही आदर्श-वाक्य (मोटो) के रूप में एक पद्य छपा करता था, जिसका हिन्दी भाषान्तर किसी कवि ने इस प्रकार किया था—

रे गयन्द मतिअन्ध छिन्हु समुचित तोहि नाहीं ।
बसिबो अब यह विपिन घोर दुर्गम भुवि माही ॥
गज शिलानि सो जानि नखन सो विद्रापति करि ।
गिरि-कन्दर में परयो आज निद्रित यह केहरि ॥

इस पद्य में तिलक महाराज ने विदेशी शासकों को 'अन्योक्ति' अलंकार के रूप में चेतावनी दी है कि "यह भारत रूपी सिंह अभी निद्रित अवस्था में पड़ा है और इसी से निष्क्रिय जान पड़ता है । तुम्हारा हित इसी में है कि समय रहते ही इस देश को छोड़ जाओ अन्यथा जब यह जागृत होगा तो जान बचाना कठिन पड़ जायेगा ।"

उस समय हिन्दी में किसी राष्ट्रीय पत्र का बड़ा अभाव था, इसलिये तिलक महाराज की प्रेरणा से नागपुर से 'हिन्दी केसरी' निकाला गया, जिसमें लोकमान्य तिलक के मराठी लेखों का भाषान्तर प्रकाशित किया जाता था । पर वह थोड़े ही दिन तक चल सका, क्योंकि सन् १९०८ में तिलक महाराज पर राज विद्रोह का मुकदमा चल कर सजा हो जाने पर उसे बन्द कर दिया गया ।

कोल्हापुर के दीवान ने, जो अंग्रेजों का पिठ्ठू था, वहाँ के शासक को अपदस्थ करके राज्य के समस्त साधनों को स्वयं हथियाने का कुचक्र रचाया । लोकमान्य तिलक ने उसकी सब करतूतों को प्रकट करके ऐसे तीव्र प्रहार किये कि चारों तरफ हलचल मच गई । अंग्रेज सरकार के बलबूते पर उसने लोकमान्य तिलक तथा उनके मित्र 'भदाण' के सम्पादक श्री आगरकर पर मान हानि का मुकदमा चलाया,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिसमें जनता ने पूरी तरह से तिलक का साथ दिया और फीरोज शाह मेहता तथा तैलंग जैसे नामी वकीलों ने उनकी तरफ से अदालत में पैरवी की । पर सरकार उनके विरुद्ध थी, इसलिये दोनों को चार-चार महीने की कड़ी कैद की सजा सुना दी गई । जब सजा समाप्त करके वे बाहर निकले तो उनका बड़ी धूमधाम से स्वागत किया गया और उसी समय से उनकी लोकप्रियता दिन पर दिन बढ़ती चली गई ।

सामाजिक जागृति के त्यौहार

पर्व और त्यौहारों का भी जन-जीवन में बहुत प्रमुख स्थान होता है और हिन्दू जाति में तो इनको विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण माना गया है । यद्यपि आजकल त्यौहारों के मनाने में रूढ़िवादिता की प्रवृत्ति बहुत बढ़ गई है, इसलिये अनेक व्यक्ति उनको अनुपयोगी कहने लग गये हैं तो भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि पिछले जमाने में 'मुसलमानियत' और 'ईसाइयत' से हिन्दू जाति की रक्षा करने में पर्व और त्यौहारों ने विशेष रूप से योगदान किया है । इनके प्रभाव से अशिक्षित और अविकसित लोगों में भी अपने धर्म के प्रति आस्था बनी रही और अनेक कठिनाइयों तथा प्रलोभन आने पर भी वे अपने परम्परागत धर्म-विश्वासों पर दृढ़ रहे । लोकमान्य तिलक ने इस तथ्य को समझ कर जनता में ऐसे त्यौहारों का प्रचलन किया जो वर्तमान समय की दृष्टि से विशेष उपयोगी हों और लोगों में जातीयता के भावों की वृद्धि कर सकें ।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने सन् १८९३ में 'गणपति-उत्सव' तथा १८९४ में 'शिवाजी-जयन्ती'—दो बड़े त्यौहार समारोहपूर्वक संगठित रूप में मनाने का प्रचलन किया । गणेश जी का पूजन और गणेश-चतुर्थी का त्यौहार यद्यपि प्राचीन समय से मनाया जा रहा था, पर लोकमान्य तिलक ने उसे जातीय-पर्व का रूप दिया । श्री शिवाजी महाराज की स्मृति को पुनर्जीवित करने और उसे हिन्दुत्व की रक्षा के लिये प्रेरणादायक रूप में मनाने का श्री गणेश उन्होंने किया । इसके फल से समस्त महाराष्ट्र में उत्साह की एक लहर व्याप्त हो गई और चारों तरफ जागृति के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे । इससे अंग्रेज अधिकारियों में भय और रोष उत्पन्न हो गया और वे इस जागृति को दबाने का प्रयत्न करने लगे ।

इसी समय पूना में और उसके बाद बम्बई में हिन्दू-मुस्लिम दंगे हो गये । अंग्रेज अधिकारियों ने इसका दोष लोकमान्य तिलक द्वारा प्रचारित 'शिवाजी जयन्ती' के उत्सव पर डालना चाहा । उसके संकेत पर कुछ मुसलमान नेताओं ने लोकमान्य के विरुद्ध ऐसे आक्षेप सार्वजनिक रूप से लगाये भी । सरकारी अधिकारियों का कहना था कि इन उत्सवों के कारण मुसलमान बहुत रुष्ट हो गये हैं इसी कारण दंगे भड़क उठे । पर तिलक जी ने इन आक्षेपों को सर्वथा असत्य बतलाते हुए दंगों का कारण सरकार को ही बतलाया और अपने पत्रों में स्पष्ट रूप से लिखा—

"मैं समझता हूँ कि इन सब झगड़ों का कारण सरकार ही है । उसकी पक्षपातपूर्ण नीति के कारण ही दंगों की शुरुआत होती है । देश में इस समय हिन्दू-मुस्लिम द्वेष के बीज बोये जा रहे हैं । लार्ड डफरिन की भेदनीति ही सब दंगों का मूल कारण है ।"

लोकमान्य ने उस समय जो कुछ लिखा था, वह बाद में अंग्रेजी सरकार के कारनामों से अक्षरशः सत्य सिद्ध हो गया । उसने मुसलमानों को विशेष रूप से बढ़ावा देकर कांग्रेस से अलग रहने और अपने पृथक अधिकार माँगने की मनोवृत्ति को भड़काया । इसी के फल से देश में समय-समय पर साम्प्रदायिक दंगे होते रहे, मुसलमान भारतीय राजनीतिक आन्दोलन से अलग होकर 'मुस्लिम लोग' पृथक अधिकारों की माँग करने लगे, जिसका अंतिम परिणाम पाकिस्तान की स्थापना हुआ । पर तिलक जी कभी सरकार के चक्कर में नहीं आये । उन्होंने हिन्दुओं को कभी मुसलमानों के प्रति शत्रु-भाव रखने की प्रेरणा नहीं दी वरन् कई दंगों में कट्टर मुसलमानों द्वारा कुछ लोगों के मारे जाने पर भी हिन्दुओं से बदले की भावना रखकर कोई अनुचित कार्य न करने की ही अपील की—

"यदि मुसलमान पशुता एवं अमानुषिक कृत्यों पर तुल गये हैं तो तुम्हें भी तत्काल रक्तपात और अनुचित उपायों का अवलम्बन नहीं करना चाहिये । अपने को संगठन द्वारा अधिक से अधिक दृढ़ बनाने का प्रयास करो । जब इस प्रकार शक्तिशाली हो जाओगे तो दंगे होंगे ही नहीं ।"

इस पर भी कुछ मुसलमान नेताओं ने उनको अपना कट्टर साम्प्रदायिक शत्रु बतलाया । पर यह उनकी भूल थी । लोकमान्य भारतीय स्वाधीनता के सच्चे उपासक थे और वे किसी भारतीय को धर्म के आधार पर शत्रु नहीं मानते थे । यही कारण था कि 'अलीबन्धु' जैसे प्रमुख मुसलमान नेताओं ने यह कहा कि "राजनीति में तिलक ही हमारे गुरु हैं ।" इसके अतिरिक्त 'आफताब' के सम्पादक सैयद तैदर रजा और मौलाना हसरत मोहानी जैसे धार्मिक मुसलमान विद्वान् उनके अनुयायी और भक्त थे ।

लोकमान्य तिलक ने इन बातों को केवल मुख से ही नहीं कहा वरन् स्थान-स्थान घूमकर इनका प्रचार किया और दंगे की भावनाओं को ठण्डा किया । फिर भी उनकी आलोचना तत्कालीन वायसराय लार्ड डफरिन को बहुत बुरी लगी और सरकारी अधिकारियों ने हर उपाय से उनको

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बदनाम करने की चेष्टा की । पर नतीजा उल्टा ही निकला । जनता को सरकार पर कभी विश्वास न था, इसलिये उसके बुराई करने पर लोगों की श्रद्धा-भक्ति तिलक महाराज के प्रति और भी बढ़ गई । वास्तव में स्पष्टवादिता और प्रत्येक दशा में अपने सिद्धान्त पर दृढ़तापूर्वक टिके रहना ही महान् नेताओं के लक्षण हैं । जो लोग हवा के साथ रुख बदलते रहते हैं, और थोड़े से लाभ की खातिर एक पक्ष को त्याग कर दूसरे पक्ष में घुसते रहते हैं, उनका सार्वजनिक जीवन अधिक समय तक नहीं टिक सकता, और वे शीघ्र ही जनता की निगाह से गिर जाते हैं, हमको इस सिद्धान्त का पालन केवल राजनीति में ही नहीं करना चाहिये वरन् समाज, धर्म, व्यक्तिगत व्यवहार सर्वत्र इसका ध्यान रखना आवश्यक है । जो आदमी अपने सिद्धान्त पर दृढ़ रहना नहीं जानते अथवा जिनका कोई सिद्धान्त नहीं होता है वे कभी सम्मान के पात्र नहीं बन सकते ।

स्वाधीनता के लिये संघर्ष और कारावास

जिस समय तिलक महाराज ने लेखों और भाषणों द्वारा स्वाधीनता आन्दोलन छोड़ा था, वह ऐसा समय था कि लोग स्वराज्य और स्वतंत्रता का नाम लेते डरते थे । सन् १८५७ के गदर के अवसर पर किया गया घोर दमन लोगों को अभी तक आतंकित किये हुए था और अंग्रेजों की शक्ति को दिन पर दिन बढ़ते देख कर कोई सिर उठाने का साहस न करता था । पर लो. तिलक इस स्थिति को बदलने का निश्चय कर चुके थे, इसलिये वे सदा सरकार के सभी अनुचित कार्यों की तीव्र आलोचना करते रहे, और उसके लिये बार-बार 'दण्ड' का पुरस्कार सहर्ष ग्रहण करते रहे ।

उस समय तक कांग्रेस थोड़े से राजनीतिक व्याख्यान दाताओं की वाद विवाद-समिति की तरह थी । ज्यादातर नर्म विचारों के राजनीतिक ही उसमें भाग लेते थे और साल भर में एक जगह इकट्ठे होकर दस-पाँच विद्वतापूर्ण भाषण कर लेने और शासन-सुधार सम्बन्धी प्रस्ताव पास कर लेने में ही अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझ लेते थे । पर तिलक जी कांग्रेस को स्वाधीनता प्राप्ति का एक प्रभावशाली साधन बनाना चाहते थे, इसलिये वे उस समय भी जोरदार भाषण करते थे और लोगों को स्वाधीनता के लिये प्रयत्न करने की प्रेरणा भी देते थे । सन् १८८६ के कांग्रेस अधिवेशन में दिया गया भाषण माताओं ने बड़ा ओजस्वी माना और अनेक लोगों ने उसे सुन कर देश की स्वतंत्रता के लिये कुछ करने का निश्चय किया ।

सन् १८९६ में भारत में प्लेग का बड़ा प्रकोप हुआ जो एक वर्ष से ज्यादा समय तक विभिन्न भागों में आतंक पैदा करता रहा । पूना नगर में सरकार की ओर से जो 'रेंड' नाम का अंग्रेज अफसर नियुक्त किया गया था, उसका व्यवहार जनता के साथ बड़ा कठोर था और उससे जनता बड़ी आतंकित हो गई थी । इससे पूना के नवयुवक बड़े रोष में आये और चाफेकर नामक युवक ने पिस्तौल से रेंड की हत्या करदी । इस पर समस्त अंग्रेज अफसर क्रुद्ध हो उठे और चारों ओर दमन की धूम मचादी, जिससे जनता घबरा गई । लोकमान्य तिलक ने सरकारी अधिकारियों पर दोषारोपण करते हुए 'केसरी' में कई लेख लिखे । यद्यपि उनमें कानून के विरुद्ध कोई बात न थी, पर सरकार ने 'अदालत की मानहानि' के नाम पर तिलक जी को गिरफ्तार कर लिया । उल्टी-सीधी कार्यवाही करके १८ महीने की कड़ी कैद की सजा दे दी । जेल में उनके साथ बुरा व्यवहार किया गया और खराब भोजन दिया गया, जिससे वे बीमार पड़ गये । जब यह समाचार चारों तरफ फैला तो भारतीय जनता ही नहीं इंग्लैण्ड के अनेक प्रसिद्ध पुरुष सरकारी नीति की निन्दा करने लगे । मैक्स मूलर, सर विलियम हन्टर, विलियम केन और दादा भाई नौरोजी आदि प्रसिद्ध विद्वानों और नेताओं ने इंग्लैण्ड के उच्च अधिकारियों को बतलाया कि तिलक जैसे महान् विद्वान् के साथ इस प्रकार का व्यवहार किया जाना ब्रिटिश-शासन के लिये कलंक की बात होगी । इन सज्जनों के सम्मिलित प्रयत्न से अन्त में तिलक जी को एक वर्ष बाद रिहा कर दिया गया ।

जेल से छूटने पर जनता ने उनका जैसा स्वागत किया उसकी मिसाल उस समय तक कभी देखने में नहीं आई थी । एक प्रकार से तिलक महाराज ने स्वयं कष्ट सहकर 'जेल' को भी पवित्र कर दिया जिसके फलस्वरूप आगे चलकर देश सेवा का व्रत धारण करने वालों ने जेलों का भय ही त्याग दिया । जेल की सजा जो अभी तक अधिकांश में चोर-डाकुओं या अन्य नीच कार्यों के करने वालों तक ही सीमित थी, सेवा, परोपकार और अन्याय के विरुद्ध संघर्ष की प्रतीक बन गई । समाचार पत्रों में जेल खाने का नाम 'कृष्ण-जन्म-मन्दिर' लिखा जाने लगा । जहाँ लोग गिरफ्तारी और जेल भेजे जाने को निन्दा और लज्जा की बात मानते थे वहाँ तिलक-महाराज की जेल यात्रा के पश्चात् उसे सम्मान और जन-सेवा का प्रमाण माना जाने लगा ।

कांग्रेस में गर्मदल की स्थापना

जैसा हम ऊपर कह चुके हैं "भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस" की स्थापना सरकार के सामने जनता की छोटी-बड़ी शिकायतें उपस्थित करने और सामान्य शासन सम्बन्धी सुधारों का प्रस्ताव पास करके उन्हें सरकार की सेवा में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भेजने के उद्देश्य से की गई थी, उसमें कई अंग्रेजों और राजभक्त सज्जनों ने भी भाग लिया था। केवल लोकमान्य तिलक जैसे स्वाधीनता प्रेमी नेता ही कभी-कभी उसमें 'गर्म भाषण' सुना देते थे। पर सन् १९०५ में 'बंग-भंग' का आन्दोलन छिड़ जाने पर देश में इतनी अधिक राजनीतिक उत्तेजना उत्पन्न हो गई और नवयुवक-वर्ग ऐसे क्रांतिकारी आन्दोलन के लिये उद्यत हो गया कि 'कांग्रेस' जैसी देश का राजनीतिक नेतृत्व करने वाली संस्था के लिये उससे अलग रह सकना कठिन हो गया। उस समय इस संस्था की बागडोर मुख्यतः ऐसे ही लोगों के हाथ में थी जो कुर्सी पर बैठकर एकाध देशभक्ति के विचारों का लेख देने या सजे हुए सभा मण्डल में खड़े होकर सुन्दर भाषण देने को ही राजनीतिक आन्दोलन का लक्षण मानते थे। पर इस समय देश में अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध जैसा गर्म-वातावरण उत्पन्न हो गया था, उसमें ऐसी ढीली और निष्क्रिय नीति से काम चल सकना कठिन था। जनता का एक बड़ा भाग कांग्रेस से कोई समयानुकूल जोरदार आन्दोलन की आशा करने लगा।

तिलक महाराज उस समय गर्म-दल के सर्व प्रधान नेता थे। वे सरकार के अन्यायपूर्ण कार्यों के विरोध में अंग्रेजी माल का बहिष्कार और सरकारी स्कूलों के 'बायकाट' आदि का प्रचार कर रहे थे। देश के सभी स्वाधीनता-प्रेमी नेता के साथ थे। पर 'नर्म-दल' के राजनीतिज्ञ इससे डरते थे। वे विद्वान् और भाषण देने में कुशल अवश्य थे और सामान्य जन हितकारी कार्यों के भी समर्थक थे पर सरकारी अन्याय का खुल कर विरोध करने और उसके फलस्वरूप कष्ट सहन करने का साहस उनमें न था। साथ ही वे अपने 'नेता-पद' को भी छोड़ना नहीं चाहते थे। इससे दोनों दलों में बनारस कांग्रेस (१९०५) से ही तनातनी होने लग गई थी। सन् १९०६ का कांग्रेस-अधिवेशन कलकत्ता में हुआ और उसके अध्यक्ष वयोवृद्ध नेता दादाभाई नौरोजी बनाये गये, जिनको सभी दलों के व्यक्ति सम्मान की दृष्टि से देखते थे। उन्होंने अपने भाषण में कांग्रेस का लक्ष्य 'स्वराज्य' प्राप्त करना घोषित किया, जो उस समय एक बड़ी बात मानी गई। इसका अर्थ नर्मदल वालों ने 'औपनिवेशिक शासन' के अधिकार समझ लिया और गर्मदल वालों ने 'पूर्ण स्वाधीनता' की भावना से इसे ग्रहण किया। पर यह मतभेद उन लोगों के भीतर ही बना रहा, दादाभाई के प्रभाव से उनके सामने कोई अधिक बोल न सका।

पर सन् १९०७ की सूरत कांग्रेस में यह मतभेद बड़े उग्र रूप में प्रकट हुआ। तिलक महाराज वहाँ पहले से ही पहुँच गये थे। वे भाषण देकर और अपने अनुयायियों से बातें करके अनुकूल वातावरण तैयार कर रहे थे। कांग्रेस के खुले अधिवेशन में उनकी नर्मदल के नेताओं से टक्कर हुई और बात यहाँ तक बढ़ी कि मार-पीट और कुर्सियाँ फेंककर मारने की नौबत आ गई। इस पर उस दिन का अधिवेशन भंग हो गया। दूसरे, दिन नर्मदल वालों ने श्री अरविन्द घोष की अध्यक्षता में अपनी 'कॉन्फ्रेन्स' अलग की और इस प्रकार कांग्रेस में दो दल हो गये जो अपने अधिवेशन आठ-नौ वर्ष तक अलग-अलग ही करते रहे।

'बम' पार्टी और लोकमान्य तिलक को निर्वासन दण्ड

इस घटना के पश्चात् देश में राजनीतिक आन्दोलन का तूफान बड़ी तेजी से बहने लगा। बंगाल के युवकों ने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये सशस्त्र क्रांति का कार्यक्रम बनाया, और खुदीराम बोस ने एक अंग्रेज अफसर को मारने के उद्देश्य से बम फेंका, जिससे संयोग वश दो अन्य अंग्रेज स्त्रियाँ मारी गईं। इस पर अंग्रेज समाचार पत्रों ने बड़ा शोर मचाया और सब उग्रवादी नेताओं को एक साथ पकड़ लेने की सलाह दी। 'पायोनियर' (इलाहाबाद) ने तो यहाँ तक लिख डाला कि अब अगर किसी अंग्रेज की हत्या की जाये तो उसके बदले में दस भारतवासियों को फाँसी पर चढ़ा दिया जाये।

पर तिलक महाराज इस घोर दमन-काण्ड को देखकर भी भयभीत न हुए। उन्होंने अपने पत्र में "कल्ट आफ बम" (बम का सिद्धान्त) शीर्षक लेख लिखा, जिसमें अंग्रेज स्त्रियों की मृत्यु पर बड़ा दुःख प्रकट करते हुए लिखा था कि भारतवर्ष में युवकों ने जो 'बम' का प्रयोग आरम्भ किया है इसका उत्तरदायित्व सरकार की भारत-विरोधी नीति ही है और इसका निवारण देश को न्यायपूर्ण अधिकार देने से ही होगा, केवल दमन के सहारे उसका रोका जा सकना कठिन है। "बम चलाना यद्यपि बहुत बुरा काम है, तथापि इसके मूल में सरकार की दमन नीति ही काम कर रही है। सरकार की इस गलत नीति के कारण ही 'बम' का आविर्भाव हुआ है।"

सरकार ने इन लेखों के आधार पर ही तिलक जी को गिरफ्तार कर लिया और मनमाने ढंग से मुकदमा चलाकर ६ वर्ष की सजा दे दी। उस समय तिलक महाराज की आयु ५२ वर्ष की थी और उनका स्वास्थ्य भी कमजोर पड़ गया था, पर उन्होंने इस दण्ड को सहर्ष स्वीकार किया और बड़े साहस के साथ थोड़े से शब्दों में ही यह प्रकट कर दिया कि सरकार का यह कार्य बिल्कुल अन्यायपूर्ण है। वह इस प्रकार दण्ड देकर आन्दोलन को कुचल देना चाहती है, पर इससे तो वह उल्टा बढ़ेगा ही। उनके उस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बयान का सारांश उसी समय किसी कवि ने इस प्रकार प्रकट किया था—

मुझे आज यद्यपि जूरी ने अपराधी ठहराया है।
तो भी मेरे मन ने मुझको निर्दोषी बतलाया है॥
ईश्वर का संकेत मनोगत दिखलाई यह मुझे पड़े।
मेरे संकट सहने ही से इस हलचल का तेज बढ़े॥

सरकार ने लोकमान्य तिलक को भारतीय जेलों में रखना भी खतरनाक समझ कर मॉंडले (बर्मा) की जेल में भेज दिया। वहॉं की जलवायु भारतवासियों के अनुकूल नहीं थी, इससे उनका स्वास्थ्य और भी खराब रहने लगा तो भी उन्होंने अपना समय धार्मिक ग्रन्थों के अध्ययन में लगाया और सैकड़ों ग्रन्थों का सार इकट्ठा करके 'गीता-रहस्य' नामक अमर ग्रन्थ की रचना कर डाली। जेल में रहते हुए ही सन् १९१२ में पूना में उनकी धर्मपत्नी का देहान्त हो गया। पर उन्होंने किसी भी कष्ट के पड़ने पर धैर्य नहीं छोड़ा और ६ वर्ष पूरा करके सन् १९१४ में ही छूटकर घर आये।

अपना लक्ष्य पूरा करने के लिये हमको किस प्रकार सब प्रकार की हानि और कष्टों की चिन्ता छोड़कर आगे कदम बढ़ाते जाना चाहिये यही भगवान तिलक के जीवन का सन्देश और आदर्श है, जो लोग कोई छोटी-मोटी कठिनाई आ जाने अथवा थोड़ी हानि होते ही मैदान से हट जाते हैं वे कोई बड़ा काम सिद्ध नहीं कर सकते। लोकमान्य तिलक के साहस और उत्साह को भंग करने के लिये सरकार ने उनको घर से दो हजार मील के फासले पर, जहॉं कोई इष्ट-मित्र न था और न कोई उनकी बात समझ सकता था, ले जाकर डाल दिया। पर वे अपने निर्धारित मार्ग पर डटे रहे और अन्त में पहले से भी अधिक तेजस्वी बनकर बाहर निकले। इसमें कुछ भी 'सन्देह' नहीं कि उनकी यह 'तपस्या' भारतवर्ष को स्वाधीनता प्रदान कराने में बहुत बड़ी सहायक सिद्ध हुई। यदि हम कोई भी बड़ा काम करने की अभिलाषा रखते हैं तो निश्चय ही वह तपस्या और कष्ट सहन के बिना सम्भव नहीं हो सकता।

होमरूल (स्वराज्य) आन्दोलन

सरकार का तो ख्याल था कि तिलक महाराज को इतनी लम्बी और देश-निष्कासन की सजा देने से उनका साहस टूट जायेगा और उनके पीछे से उनका संगठन तथा पत्र आदि समाप्त हो जायेंगे, पर परिणाम उल्टा निकला यद्यपि मॉंडले की जेल में रहने से लोकमान्य का स्वास्थ्य अवश्य बहुत खराब हो गया था, पर उनके साहस में किसी प्रकार का अन्तर नहीं पड़ा था। स्वदेश लौटने के कुछ सप्ताह बाद ही उन्होंने अपना कार्य आरम्भ किया और श्रीमती ऐनीबेसेण्ट के साथ मिलकर 'होमरूल आन्दोलन' ऐसे जोर से चलाया कि चारों तरफ नई जागृति और हलचल उत्पन्न हो गई। श्रीमती बेसेण्ट स्वयं बहुत बड़ी व्याख्यान दाता और प्रचार-कार्य में निपुण थीं। लोकमान्य तिलक का सहयोग पाकर उनका कार्य दिन दूना बढ़ने लगा और शीघ्र ही देश के समस्त बड़े नगरों में 'होमरूल-लीग' की स्थापना हो गई और जनता बहुत बड़ी संख्या में इस आन्दोलन में भाग लेने लगी।

इधर लोकमान्य भी जगह-जगह दौरा करके तथा भाषण देकर लोगों को स्वराज्य प्राप्त करने की प्रेरणा दे रहे थे। सन् १९१६ में बम्बई में उन्होंने अनेक भाषण देकर जनता में काफी जागृति उत्पन्न की। इस पर बम्बई सरकार ने उनसे चालीस हजार की जमानत मॉंग कर उनके काम में पुनः अड़ंगा लगाना चाहा। पर जब यह मामला मजिस्ट्रेट के सामने पेश हुआ तो उसने सरकारी आज्ञा को अवैध घोषित कर दिया। फिर जब वे इस कार्य के लिये दिल्ली और पंजाब में गये तो वहॉं की सरकार ने उनका प्रवेश अपने यहॉं रोक दिया। इसी समय सर वेलेंटाइन शिरोल नामक भारत के एक पेंशनयाफ्ता अंग्रेज अधिकारी ने 'इंडियन अनेटस' (भारत में अशक्ति) पुस्तक लिखकर यह दिखलाया कि भारत में समस्त अशक्ति और हलचल के कारण तिलक ही हैं। इस बात को पढ़कर लोकमान्य तिलक ने शिरोल साहब पर विलायत की प्रिवी कौंसिल में दावा दायर कर दिया और इस कार्य के लिये इंग्लैण्ड जाने का विचार किया। पर इस अवसर पर भी ब्रिटिश सरकार ने उनका पासपोर्ट रद्द कर दिया। जिससे उन्हें कोलम्बो से वापस लौटना पड़ा। इस तरह सरकार तिलक महाराज के कार्य में पग-पग पर रोड़ा अटकाती रही और वे भी उसका मुकाबला करते हुए भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम को प्रतिदिन आगे बढ़ाते रहे।

विदेश यात्रा और होमरूल आन्दोलन का प्रचार

सन् १९१८ में भारतवर्ष के शासन-सुधार के सम्बन्ध में 'मांटेग्यू-चेम्सफोर्ड योजना' प्रकाशित की गई और ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने इस पर भारतीय लोकमत को जानने की इच्छा प्रकट की। इस प्रसंग में होमरूल लीग ने भी एक डेपुटेशन इंग्लैण्ड भेजने का निश्चय किया और इसके लिये लोकमान्य तिलक तथा श्रीमती बेसेण्ट को सदस्य चुना गया। तिलक महाराज का कहना था कि "इस योजना से यद्यपि कोई विशेष लाभ होने की आशा नहीं, फिर भी जो कुछ मिल जाये, उसका लाभ उठाना चाहिये और नवनिर्मित कौंसिलों में जाकर अपने अधिकारों को अधिक बढ़ाने के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिये आन्दोलन करना चाहिये।" इंग्लैण्ड पहुँच कर उन्होंने मजदूर दल के सदस्यों को, जो भारतवर्ष से सहानुभूति रखते थे भारत की वास्तविक दशा से परिचित कराया। उन्होंने इंग्लैण्ड में स्थापित कांग्रेस की शाखा का फिर से संगठन किया और उसे ऐसी प्रेरणा दी जिससे वहाँ भी भारतीय स्वतंत्रता के लिये जगह-जगह आन्दोलन होने लगे। जिस समय तिलक महाराज इंग्लैण्ड में ही थे और जगह-जगह घूमकर भारतवर्ष की माँगों को वहाँ की जनता के सम्मुख रख रहे थे, उसी समय भारतवर्ष में रौलेट एक्ट के विरुद्ध जोरदार आन्दोलन छेड़ दिया गया और जलियाँवाला बाग का भयंकर हत्याकाण्ड हो गया। लोकमान्य ने 'बम्बई क्रॉनिकल' पत्र के सम्पादक मि. हार्नीमैन के साथ, जो इंग्लैण्ड में उनके सहयोगी के रूप में काम कर रहे थे, इस अन्यायपूर्ण घटना का घोर विरोध किया, और भारतीय अधिकारों के दावे को दूने जोर से ब्रिटिश जनता के सामने उपस्थित किया।

लोकमान्य तिलक भारतीय राजनीति के गुरु थे

तिलक महाराज की एक विशेषता यह भी थी कि जिस क्षेत्र में उन्होंने पदार्पण किया उसमें वे अगुआ बनकर ही रहे। उनकी योग्यता और प्रतिभा बहुत बढ़ी-चढ़ी थी और साथ ही वे समस्त भय और हानि-लाभ का ख्याल छोड़कर ऐसी तल्लीनता से काम करते थे कि उनका सबसे आगे बढ़ जाना निश्चित ही रहता था। लोग कहते थे कि तिलक तो 'यथा नाम तथा गुण' हैं। जैसे तिलक सदा मस्तक पर धारण किया जाता है उसी प्रकार तिलक महाराज भी सदा शीर्ष स्थान पर ही रहते हैं।

साधारण राजनीतिक कार्यकर्ता और नवयुवक आन्दोलनकारी ही नहीं ला. लाजपतराय, महात्मा गाँधी और अरविन्द घोष जैसे महारथी भी उनको गुरु की तरह पूज्य ही मानते थे। वे आयु में इन सबसे अधिक थे और विद्या की निगाह से भी बहुत ऊँचे थे। साथ ही हृदय की शुद्धता, आचरण में पवित्रता, धर्म में आस्था, वार्तालाप में स्पष्टता, उद्देश्य में अडिगता और सबसे बढ़कर देश के लिये सब कुछ न्यौछावर करने की मनोवृत्ति आदि अनेक सद्गुण उनमें ऐसे पाये जाते थे कि जो कोई उनके पास आता था, वही पूरी तरह प्रभावित हो जाता था। देश-सेवा तथा भारतीय जनता के उद्धार को उन्होंने अपने जीवन का एक व्रत मानो बना लिया था। कठिन से कठिन अवस्था में भी वे उससे पैर पीछे नहीं हटाते थे। जब उनके बड़े पुत्र विश्वनाथ का देहान्त छोटी आयु में ही हो गया तो वे उसकी अन्त्येष्टि क्रिया करके जैसे ही घर लौटे, वैसे ही सार्वजनिक कामों में लग गये। यह देखकर उनके एक मित्र ने कहा—"क्या आपको अपने पुत्र से प्रेम नहीं था ? कम से कम आज तो आपको यह काम-काज बन्द रखना चाहिये।" तिलक महाराज ने उत्तर दिया—"मुझे विश्वनाथ बहुत अधिक प्रिय था, उसकी मृत्यु का मुझे बहुत शोक है। पर अभी मेरे अन्य लाखों पुत्र जनता के रूप में मौजूद हैं, उनकी हित-रक्षा, भलाई का काम भी तो मुझे निरन्तर करते रहना आवश्यक है।"

पत्नी के वियोग के अवसर पर भी उन्होंने ऐसा ही धैर्य का परिचय दिया था। उस समय वे माँडले की जेल में थे और पत्नी की मृत्यु का समाचार उनको तार द्वारा भेजा गया। यदि तिलक महाराज चाहते तो उस अवसर पर सरकार से प्रार्थना करके घर आ सकते थे पर उन्होंने पूर्ण आत्म-संयम से काम लिया। उन्होंने उत्तर में लिखा कि—"इस समाचार से मेरे दिल और दिमाग को बड़ा धक्का लगा है और शोक हुआ है। ऐसे अवसर पर मैं उसके पास न रह सका, इसका मुझे जितना दुःख है उसे मैं लिख नहीं सकता। पर यहाँ भी मैं देश के प्रति अपना कर्त्तव्य पालन करने के लिये जेल की कोठरी में बैठा हुआ हूँ। यह भी भगवान का विधान है और उसे हमको स्वीकार करना ही पड़ेगा।"

लोकमान्य तिलक का चरित्र हमेशा पवित्र और शुद्ध रहा। अन्य अनेक नेताओं की तरह उनके ऊपर कभी सार्वजनिक धन को अपना लेने अथवा सदाचार के विरुद्ध किसी प्रकार का कृत्य करने का आरोप नहीं लगाया गया। आचार-विचार की दृष्टि से वे पक्के भारतीय थे। उन्होंने अपनी धोती, अंगरखी और पगड़ी को कभी नहीं छोड़ा। विदेशों की बड़ी-बड़ी सभाओं में वे इसी तरह गये और इंग्लैण्ड के शासन-कर्ताओं से भी उन्होंने इसी वेष में भेंट की। सूरत कांग्रेस के अधिवेशन पर हमारे एक मित्र ने उनको देखा कि अन्य महाराष्ट्रीय प्रतिनिधियों के साथ नंगे बदन केवल धोती पहने और लम्बी चोटी फटकारते वे भोजन करने को इस प्रकार जा रहे थे कि उनमें और अन्य लोगों में कुछ भी अन्तर नहीं जान पड़ता था। भारत-पूज्य नेता होने पर भी सब में घुल-मिल कर रहने के इसी गुण ने उनको जनता के हृदय का हार बना दिया था।

समाज-सुधार और तिलक

यद्यपि आचार और व्यवहार में तिलक महाराज कट्टर धार्मिक माने जाते थे, पर वे अन्ध-विश्वासी नहीं थे। वे जान बूझकर किसी धर्म सम्बन्धी नियम का उल्लंघन कभी नहीं करते थे, पर अपने कर्त्तव्य पालन में दिखावटी परम्परा की बातों को बाधक भी नहीं होने देते थे। जब अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मुकदमे और होमरूल आन्दोलन के लिये उन्हें विदेश-यात्रा की आवश्यकता पड़ी तो यह प्रश्न उठा कि बहुसंख्यक हिन्दू, विदेश-यात्रा को शास्त्रानुसार वर्जित मानते हैं, इसलिये इंग्लैण्ड कैसे जायें ? लोकमान्य ने इस सम्बन्ध में काशी के पंडितों से व्यवस्था चाही । पर उन 'कलियुगी' पंडितों ने कहा कि हम विदेश-यात्रा की शास्त्रीय व्यवस्था दे सकते हैं, पर इसके लिये पाँच हजार रुपया भेंट देने होंगे । तिलक महाराज, जो स्वयं हिन्दू शास्त्रों के सबसे बड़े ज्ञाता थे, इस 'धर्म की दुकानदारी' को देखकर बड़े नाराज हुए और उन्होंने पंडितों की बात को तुरन्त ठुकरा दिया । वे स्वेच्छापूर्वक इंग्लैण्ड चले गये और वहाँ से वापस आने पर स्वयं ने ही शास्त्र विधि के अनुसार उसका प्रायश्चित कर लिया ।

वे बाल-विवाह की प्रथा के बहुत विरोधी थे । इस सम्बन्ध में अनेक लेखों और भाषणों द्वारा उन्होंने खूब प्रचार किया और सरकार से आग्रह किया कि वह इस कानून को रोक दे । यद्यपि सरकार उस समय कोई ऐसा कानून न बना सकी, पर लोकमान्य तिलक के स्वर्गवास के पश्चात् बाल-विवाह-निरोधक कानून पास हो गया ।

समाज-सुधार के सम्बन्ध में लोकमान्य तिलक का यही मत था कि इस कार्य में किसी प्रकार की जोर जबर्दस्ती करने की बजाय जहाँ तक सम्भव हो शिक्षा प्रचार से काम लेना चाहिये । अपने 'केसरी' और 'मराठा' पत्रों में वे इस प्रकार के लोक-शिक्षण सम्बन्धी लेख सदा प्रकाशित करते थे, और उनसे लाखों लोगों का मत परिवर्तन हुआ इसमें सन्देह नहीं ।

यद्यपि वर्तमान समय में लोकमान्य तिलक के जमाने की अपेक्षा स्थिति बहुत बदल गई है और सुधारों की गाड़ी बहुत तेजी से दौड़ रही है, पर देश अल्पशिक्षित जनता और बहुत से पढ़े-लिखे व्यक्ति अब भी लकीर के फकीर बने हुए हैं । वे समयानुकूल आवश्यकीय सुधारों को क्रियान्वित करने को भी तैयार नहीं होते । इसे हम न बुद्धिमत्ता कह सकते हैं और न कर्तव्य-परायणता । लोकमान्य तिलक का चरित्र हमको बतलाता है कि किस प्रकार मनुष्य अपने धर्म पर पूर्णतया दृढ़ रह कर भी हानिकारक रूढ़ियों के बन्धनों को तोड़ सकता है ।

लोकमान्य सच्चे धर्म का पालन करने वाले थे । वे अनेक बार जेल गये और वहाँ जाकर बहुत कष्ट-सहन भी किया, यह सब वे धर्म के आधार पर ही करते थे । 'तिलक जीवनादर्श' के लेखक ने इस सम्बन्ध में उनकी प्रशंसा करते हुए लिखा है—

"आत्मिक बल में अद्वितीय थे, इसलिये इंग्लैण्ड के "रिव्यू आफ रिव्यूज" के संसार प्रसिद्ध सम्पादक श्री डब्ल्यू. टी. स्टेड के सामने जेल जाना साधारण बात समझते थे । तिलक ने आत्मबल से गोरी नौकरशाही को हमेशा नीचा दिखाया । यह आत्मबल तिलक जी ने 'गीता' के कर्मयोग द्वारा ही प्राप्त किया था । उनके रोम-रोम में बिजली चमकती थी, वे जहाँ पहुँच जाते थे वही स्थान पवित्र हो जाता था और उनके दर्शन से पापी भी नम्र हो जाता था । उनकी प्रतिभा मुर्दे में जान डाल देती थी, जिस किसी के साथ वे वार्तालाप करते थे वह अपने को धन्य समझ लेता था । तिलक पक्के ईश्वर भक्त थे । ईश्वर में उनको पूरा विश्वास था, इसलिये कठिन से कठिन कार्य को अपने सिर पर ले लेते थे और कहते थे कि—"ईश्वरीय ज्योति ही मेरी मार्ग दर्शक है ।"

विद्वता और साहित्य सेवा

तिलक महाराज की कीर्ति भारत के कोने-कोने में फैलने का मुख्य कारण उनकी अकृत्रिम शक्ति ही थी, पर विदेशों में वे अपनी विद्वता के लिये ही विशेष रूप से प्रसिद्ध थे । सबसे पहले सन् १८९३ में उन्होंने 'ओरायन' नामक ग्रन्थ लिखा था । इसमें वैदिक ज्योतिष और गणित के आधार पर सिद्ध किया था, यूनान-भाषा का 'ओरायन' शब्द भारतीय वेदों के 'अग्रहायण' शब्द से निकला है । इस पुस्तक में यूनानी और आर्य सभ्यता की ऐसी तुलना की गई थी उसे पढ़कर वेदों के विद्वान् मैक्समूलर और जैकोबी भी मुग्ध हो गये । इस विद्वतापूर्ण ग्रंथ के द्वारा उनका नाम देश-विदेशों के विद्वत्-समाज में फैल गया ।

इसके पश्चात् डेढ़ साल की सजा होने के अवसर पर वैदिक-साहित्य का विशेष रूप से अध्ययन करके ज्योतिष, गणित और जीवशास्त्र के सिद्धान्तों के अनुसार उसके कितने ही तथ्यों की समीक्षा की और यह निष्कर्ष निकाला कि प्राचीन आर्य जाति ध्रुव प्रदेश के आस-पास निवास करती थी और वहीं से चलकर वह भारत तथा अन्य अनेक देशों में फैली थी । उनका यह "आर्कटिक होम इन दि वेदाज" (ध्रुव प्रदेशों में आर्यों का घर) नामक ग्रंथ, जो कई वर्ष के कठिन परिश्रम से लिखा गया था, बड़े-बड़े विद्वानों द्वारा बहुत खोजपूर्ण और पुरातत्त्व सम्बन्धी ज्ञान की एक अपूर्व कृति स्वीकार किया जाता है ।

ये दोनों ग्रंथ अंग्रेजी में लिखे गये थे, इसलिये इनका नाम विदेशों में अधिक हुआ । भारत के सामान्य पाठक इनसे बहुत कम परिचित हैं । तिलक महाराज के जिस ग्रंथ ने भारतीय जनता को विशेष रूप से आकर्षित किया, वह उनका लिखा 'गीता-रहस्य' है । यह महा-ग्रंथ माँडले के कारागार में लिखा गया था और उसमें भारतीय शास्त्रों तथा यूरोपियन दार्शनिकों की रचनाओं को मथ कर ऐसा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

'गीतामृत' खोज निकाला है जो आज भी अनेक वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी अपनी गरिमा और महत्ता से अपूर्व जान पड़ता है ।

"श्रीमद्‌भगवद्‌गीता" का यह भाष्य और विशेषतः उसकी इन पृष्ठ की अध्यात्म-तत्त्व से परिपूर्ण भूमिका से युक्त ग्रंथ प्रकाशित होते ही देश भर में इतना अधिक प्रसिद्ध हो गया कि इसकी जो दस-पाँच हजार प्रतियाँ प्रथम बार मराठी भाषा में छपीं वह देखते-देखते कुछ सप्ताह के भीतर ही समाप्त हो गईं और माँग ज्यों की त्यों बनी रही । हम नहीं जानते कि गत सौ वर्षों में, जब से छपी हुई पुस्तकों का प्रचार होने लगा है, कोई इतना बड़ा ग्रंथ इतनी शीघ्रता से बिका हो । उसके बाद तो न मालूम अब तक इस ग्रंथ के कितने संस्करण हो चुके हैं । हिन्दी गुजराती आदि भारत की अन्य भाषाओं में भी अनुवादित होकर यह कितनी बार छप कर बिक चुकी है, उसका पूरा हिसाब बतला सकना कठिन है । इसके प्रकाशित होते ही भारत के धार्मिक जगत में भी इसकी चर्चा बड़े जोरों से शुरू हो गई और प्राची धार्मिक सम्प्रदाय के अनुयायी विद्वानों ने अपने सिद्धान्त की दृष्टि से तिलक महाराज के विचारों की विवेचना और आलोचना करते हुए कितने ही ग्रंथ 'गीता' की स्वतंत्र टीकायें करके प्रकाशित किये । इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि उस समय तिलक महाराज के राजनीतिक आन्दोलन के साथ-साथ उनका यह 'गीता-विवेचन' भी सार्वजनिक आन्दोलन के एक अंग की तरह बन गया था और साहित्य प्रेमी देश भक्तों में इसकी खूब चर्चा होती थी ।

और इसमें भी सन्देह नहीं कि देश के राष्ट्रीय-जीवन की निगाह से भी यह ग्रंथ एक महत्त्वपूर्ण प्रयत्न है । भारतीय जनता पर 'गीता' का बहुत अधिक प्रभाव है और सभी प्रकार के व्यक्ति इसका परायण और पाठ करते रहते हैं । लोकमान्य के इस भाष्य से पहले भी इसकी पचासों टीकायें और भाष्य हो चुके थे, जिनमें शंकराचार्य का भाष्य विद्वानों में बहुत प्रचलित था और सम्मानित माना जाता था । पर इन समस्त प्राचीन भाष्यों में 'गीता' का जो सार निकाला गया था, वह प्रायः वैराग्य और त्याग मूलक ही था । भारत की साधारण जनता 'गीता' को संन्यासियों और संसार त्यागियों के लिये ही उपयोगी मानती थी । अनेक अज्ञानी लोग तो समझते थे कि जो कोई 'गीता' का अध्ययन करेगा, वह घर बार त्याग कर 'साधु' बन जायेगा । लोकमान्य तिलक के सम्मुख यह समस्या उस समय प्रकट हुई जब सोलह वर्ष की आयु में उन्होंने मरणासन्न पिता को 'गीता' सुनाई । उसी समय 'गीता' का महत्त्व और गाम्भीर्य उनके हृदय पर अंकित हो गया और जैसे-जैसे उनकी आयु और ज्ञान की वृद्धि होती गई वे इस विषय पर समयानुसार विचार करते रहे । इस अध्ययन का क्या परिणाम हुआ यह तिलक जी के शब्दों में ही सुनिये—

"जब संस्कृत और अंग्रेजी का अभ्यास अधिक हो गया, तब हमने गीता के संस्कृत-भाष्य, अन्यान्य टीकायें और मराठी तथा अंग्रेजी में लिखे हुए अनेक पंडितों के विवेचन समय-समय पर पढ़े । परन्तु अब, मन में एक शंका उत्पन्न हुई और वह दिनोंदिन बढ़ती गई । वह शंका यह है कि, जो 'गीता' उस अर्जुन को, युद्ध में प्रवृत्त करने के लिये बतलाई गई थी कि जो स्वजनों के साथ युद्ध करने को बड़ा भारी कुकर्म समझ कर खिन्न हो गया था, उस गीता में ब्रह्मज्ञान से या भक्ति से मोक्षप्राप्ति की विधि का, निरे मोक्षमार्ग का, विवेचन क्यों किया गया है ? यह शंका इसलिये और भी दृढ़ होती गई, कि 'गीता' की किसी भी टीका में इस विषय का योग्य उत्तर ढूँढ़े न मिला । कौन जानता है कि हमारे ही समान और लोगों को भी यह शंका न हुई होगी । परन्तु टीकाओं पर ही निर्भर रहने से, टिकाकारों का दिया हुआ उत्तर समाधान कारक न भी जँचे, तो भी उसको छोड़कर दूसरा उत्तर सूझता ही नहीं है । इसलिये हमने गीता की समस्त टीकाओं और भाष्यों को लपेट कर रख दिया और केवल गीता के ही स्वतन्त्र विचार पूर्वक अनेक परायण किये । ऐसा करने पर टीकाकारों के चंगुल से छूटे और यह बोध हुआ कि 'गीता' निवृत्ति-प्रधान नहीं है, यह तो कर्म-प्रधान है ।"

इस प्रकार तिलक जी ने अपनी एक धार्मिक रचना द्वारा भी भारतीय जन-जीवन पर ऐसा प्रभाव डाला कि लाखों मनुष्य धर्म अध्यात्म के उपयोगी स्वरूप को समझ जाने से, अपने जीवन को अधिक उन्नतिशील और समाजोपयोगी मार्ग पर चला सकने में समर्थ हो गये । उस समय से 'गीता' का प्रचार इतना बढ़ा कि जो केवल थोड़े से संन्यासी और साधुओं के पाठ की चीज समझी जाती थी, वह विद्वानों और समझदार व्यक्तियों के अध्ययन और चर्चा का विषय बन गई । इस बीच में इस पर भारत के पचासों विद्वानों ने टीका और विवेचन लिखे हैं, जिनमें महात्मा गाँधी, अरविन्द घोष और श्री राधा कृष्णन (भू. पू. राष्ट्रपति) जैसे शीर्षस्थानीय नेताओं के नाम भी लिये जा सकते हैं । तिलक महाराज ने भारतवर्ष के धर्म-भावोपन्न सुशिक्षित व्यक्तियों का ध्यान 'गीता' के द्वारा जो समाज-सेवा और जन-कल्याण की तरफ आकर्षित किया यह उनकी असाधारण महानता है ।

आध्यात्मिक जीवन का उदाहरण

लोकमान्य तिलक ने अध्यात्म का विवेचन और प्रचार केवल 'गीता रहस्य' लिखकर ही नहीं किया वरन् अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवन द्वारा भी देशवासियों के सम्मुख व्यावहारिक-अध्यात्म का आदर्श रखा। वे 'गीता' के अनासक्त मार्ग के अनुयायी थे इसलिये एक वैभवशाली गृहस्थ का-सा जीवन बिताते हुए भी कभी उसमें लिप्त नहीं होते थे। उनके लिये परिवार और सेवकों से युक्त अपना विशाल घर और जेलखाने की तंग तथा अंधेरी कोठरी एक समान थी। इसी अनासक्त भावना के आधार पर वे अपनी पत्नी, पुत्र तथा अन्य स्वजनों का वियोग बिना दु:ख-सागर में, निमग्न हुए, सहन कर सके। उनके 'जीवनादर्श' पर दृष्टिपात् करते हुए एक स्थान पर कहा गया है—

"लोकमान्य तिलक का जीवन मनुष्य को शिक्षा देता है कि निम्नलिखित तीन प्रश्नों का उत्तर मनुष्य को अपने कार्यों से देना चाहिये। मैं कहाँ से आया? क्यों आया? कहाँ जाना है? इन तीन सवालों को कार्य रूप में परिणत करने के लिये ही परमात्मा ने हमें मनुष्य योनि में भेजा है। तिलक जी ने इनका उत्तर अपने जीवन द्वारा देकर प्रभु के सच्चे पुत्र होने का अधिकार प्राप्त कर लिया था। भगवान के कार्य को पूरा करने के लिये ही उन्होंने स्वर्ग का आनन्द परित्याग करके भारतवर्ष में जन्म लिया था। भारत को परतंत्रता की बेड़ी से मुक्त करने के लिये रात-दिन घोर प्रयत्न करते रहे। अन्त में उसी उद्देश्य को सिद्ध करने के लिये प्राण परित्याग किया। उनका जीवन संसार में यश-सौरभ फैलाकर भारतवर्ष में नव-जीवन का संचार करने वाला सिद्ध हुआ। इसलिये तिलक महाराज अजर-अमर हैं। उनके जीवन से दो शिक्षायें प्राप्त हो सकती हैं। प्रथम, कैसे जीना? दूसरी कैसे मरना? उन्होंने अपनी आत्मा के, ईश्वर के और जनता के प्रति कर्त्तव्य का पूर्ण रूप से पालन करके जीवन सफल बनाया था। इसी से उनको मृत्यु का भी भय नहीं था।"

ता. ३१ जुलाई १९२० के दिन बम्बई के सरदार गृह में अपनी मृत्यु से कुछ घण्टे पहले ही उन्होंने डाक्टर देशमुख से कहा—"मैं अपनी इच्छा से ही जीवित रहा हूँ, और यदि मरना होगा तो केवल अपनी इच्छा से ही मरूँगा।" यह लक्षण किसी "जीवन मुक्त" पुरुष का ही हो सकता है, और तिलक भगवान के जीवन-कार्यों पर दृष्टिपात करके हम कह सकते हैं कि वास्तव में वे संसार में रहते हुए भी सांसारिक विषयों में निर्लिप्त थे।

राजनीतिक मतभेद और स्वाधीनता

भारतवर्ष के राजनीतिक-संग्राम में लोकमान्य तिलक का स्थान अद्वितीय था और इसी से उनको भारतीय स्वाधीनता का मंत्रदाता कहा जाता है। यह सच है कि भारतवर्ष को अंग्रेजों के चंगुल से छुड़ाने वाले महात्मा गाँधी ही हैं और उन्होंने शान्तिमय आन्दोलन को देश भर में फैलाकर इस कठिन समस्या को किसी प्रकार सुलझाया, पर यह भी सर्वथा सत्य है कि यदि गाँधी जी से पहले तीस वर्षों में लोकमान्य तिलक ने देश में राजनीतिक जागृति न फैलायी होती और लाखों व्यक्तियों के हृदय में देश के लिये आत्म-बलिदान की भावना उत्पन्न न की होती, तो महात्मा जी के लिये भी सफलता प्राप्त करना कहीं अधिक कठिन होता।

लोकमान्य भारतवर्ष के लिये वास्तविक स्वतंत्रता के इच्छुक थे, इसलिये जो लोग राजनीतिक आन्दोलन में केवल इसलिये भाग लेते थे कि देश को कुछ अधिकार प्राप्त हो जायें और उनके द्वारा हम भी अपनी स्थिति को सम्माननीय बनालें, उनसे उनका मतभेद और संघर्ष हो जाता था। सूरत कांग्रेस अधिवेशन के समय यही स्थिति उत्पन्न हो गई थी। सर्वश्री रास बिहारी बोस, सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, गोखले, फीरोजशाह मेहता, वाचा आदि नरम विचारों के राजनीतिक नेता, देश भर में घोर असन्तोष और स्वदेशी आन्दोलन होने पर भी वही पुराना राग अलापे जा रहे थे और सरकार से छोटे-मोटे शासन सुधारों की प्रार्थना करके ही सन्तुष्ट थे। पर लोकमान्य तिलक और उनके सहकारी श्री अरविन्द, लाला लाजपतराय, लाला हरदयाल आदि, जनता की जागृति और उत्साह को देखकर सरकार से स्वराज्य की माँग को जल्दी ही पूरा कराने पर जोर दे रहे थे। कांग्रेस-अधिवेशन में पहले दिन स्वागताध्यक्ष का भाषण हुआ और उस दिन की अन्य कार्यवाही भी निर्विघ्न समाप्त हो गई। पर दूसरे दिन नरम दल वालों ने सभापति पद के लिये श्री रास बिहारी का नाम पेश किया तो लोकमान्य तिलक ने बोलने का अवसर माँगा, क्योंकि वे इस प्रस्ताव में संशोधन करके लाला लाजपतराय का नाम रखना चाहते थे। यह कोई अनुचित या अनियमित बात न थी। प्रतिनिधियों का बहुमत जिसका समर्थन करता उसी का निर्वाचन किया जा सकता था। पर नरम दल वालों ने कांग्रेस कार्यालय और व्यवस्था पर अपना अधिकार होने के कारण लोकमान्य को बोलने का अवसर देने से इन्कार कर दिया। तिलक जी भी अपने बोल सकने के अधिकार पर अड़ गये। इसी पर पंडाल में अशान्ति और शोरगुल होने लगा और कुछ लोगों ने हाथापाई भी शुरू कर दी, जिससे अधिवेशन भंग हो गया।

नरम दल वाले इसका दोषारोपण तिलक जी पर करते थे, पर उन्होंने जो कुछ किया वह देश को आगे बढ़ाने और स्वतंत्रता के विरोधियों से टक्कर लेने की भावना से ही किया था। उन्होंने उसी समय यह घोषणा कर दी कि—"शासनाधिकार प्रतिवर्ष प्रस्ताव पास कर लेने से प्राप्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं किये जा सकते ।" उनके लिये 'कर्म' करने की आवश्यकता होती है और बलिदान के लिये तैयार होना पड़ता है । साल भर में एक बार शानदार अधिवेशन कर लेना और कुछ प्रस्ताव पास करके फिर साल भर अपने खाने-पीने के धंधे में लगे रहने से सार्वजनिक सेवा के कोई बड़े काम पूरे नहीं किये जा सकते । हमारा तो कहना है कि यह सिद्धान्त केवल राजनीतिक सुधारों के लिये ही यथार्थ नहीं है, वरन् धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक, नैतिक कैसा भी सुधार क्यों न करना हो उसके लिये सच्चे कार्यकर्ताओं को अपने हित का बलिदान करना ही पड़ता है । इसके लिये प्रेरणा देते हुए लोकमान्य ने कहा—

"हमारी मातृभूमि अपने हर एक पुत्र को उठकर काम करने को कह रही है और मैं नहीं समझता कि उसके पुत्र इस प्रकार की अवहेलना करेंगे । तो भी मैं अपना कर्त्तव्य समझ कर आप सबसे यह प्रार्थना करता हूँ, कि पारस्परिक मतभेदों को दूर करके राष्ट्रीय आदर्शों की पूर्ति के लिये जी जान से उद्योग करें । इस कार्य में प्रतिस्पर्द्धा, ईर्ष्या-द्वेष अथवा भय की कोई गुंजाइश नहीं है । भगवान् हमारे प्रयत्नों को सफल बनायेंगे और हम नहीं तो हमारी आगामी पीढ़ी इसके फलों का उपयोग करेगी ।"

सच्चे और निःस्वार्थी कार्यकर्ता का यही मार्ग है । जब तक वह भय और लालच को त्याग कर कार्यक्षेत्र में कूद न पड़ेगा तब तक सच्ची सफलता कोसों दूर रहेगी । ऐसे व्यक्ति चाहे जनता को धोखे में डालकर कुछ धन हथिया लें, चाहे सामान्य लोगों की भीड़भाड़ में क्षणिक वाहवाही प्राप्त करलें, पर इन बातों से न तो उनकी भलाई हो सकती है और न देश का कल्याण । राजनीतिक क्षेत्र की बात तो जाने दें, क्योंकि उसमें तो अनेक व्यक्ति चालाकी, धूर्तता और झूठ को खुल्लमखुल्ला आवश्यक बतलाते हैं, पर जो लोग धर्म और समाज के क्षेत्र में काम करते हुए 'कुनीति' का अवलम्बन करते हैं वे तो निश्चय ही स्वर्ग और मोक्ष के बजाय अपने लिये रसातल का मार्ग प्रशस्त करते हैं, हम नहीं समझते कि वे धर्म का नाम लेकर और उसके ज्ञाता, उपदेष्टा बनकर इस प्रकार के आचरण का साहस किस प्रकार करते हैं ? ऐसे लोग या तो ईश्वर को मानते ही नहीं अथवा दूसरों को दिखाने के लिये झूठ-मूठ उसका नाम लेते हैं । कोई सच्चा आस्तिक धार्मिक मामलों में ऐसी दुरंगी चाल नहीं चल सकता, क्योंकि वह सदैव ईश्वर को भले-बुरे कर्मों का निरीक्षण करने वाला जानता है ।

तिलक महाराज की शक्ति का रहस्य

भारतीय जनता पर लोकमान्य तिलक के इस असीम प्रभाव का क्या कारण था ? किस कारण सर्वशक्ति सम्पन्न ब्रिटिश गवर्नमेंट उनसे इतना डरती थी कि सदा उनके पीछे कोई न कोई मुकदमा, जेल, निर्वासन आदि की सजा लगाती ही रहती थी ? आर्थिक स्थिति की दृष्टि से वे सामान्य स्थिति के व्यक्ति थे, वंश की निगाह से भी कोई राजा या रईस नहीं थे, एक सामान्य स्कूल-मास्टर के पुत्र थे । फिर भी उनमें कोई ऐसी शक्ति उत्पन्न हो गई थी कि जिसके प्रभाव से भारत की जनता, यहाँ के सभी क्षेत्रों के नेता और राजपुरुष उनका लोहा मानते थे ।

वह रहस्य यही है कि लोकमान्य तिलक वास्तव में महान् आत्मा थे । उन्होंने अपने जीवन के आरम्भ से ही देश सेवा और भारतीय जनता के मार्ग-दर्शन का जो व्रत ग्रहण किया उसे अंतिम क्षण तक यथार्थ रूप में निबाहा और उसकी पूर्ति के लिये अपने तन-मन-धन को पूरी सच्चाई के साथ अर्पित कर दिया । उनके इस गुण की प्रशंसा करते हुए, उनके जीवन-चरित्र लेखकों ने मुक्त कण्ठ से उनके अदम्य साहस और निस्वार्थ सेवा भावना की अनेक घटनायें वर्णन की हैं और अन्त में सबका निष्कर्ष इस प्रकार निकाला है—

"भारत के लिये तमाम यातनायें, शान्ति और धैर्य के साथ उन्होंने सहन कीं । सिवाय फाँसी पर चढ़ाये जाने के भारत की नौकरशाही के पास कोई शस्त्र, ऐसा नहीं बचा जिसका प्रयोग उनके ऊपर न किया गया हो । उनको बार-बार कारागार में बन्द किया गया, हथकड़ियों के कंगन उनको पहनाये गये, जेल में सब तरह की सख्त मजदूरी कराई गई । वे बराबर अदालतों में रगड़े गये, खूब सताये गये पर एक तपस्वी की तरह ऐसी प्रचण्ड अग्निपरीक्षाओं में तप कर वे निरन्तर अधिक चमकते ही गये । कारागार की कोठरियों में भी तिलक ने भारत की स्वतंत्रता की माला जपी और सदैव ईश्वर से यही प्रार्थना की कि उनकी इस तपस्या के फलस्वरूप हमारी प्यारी मातृभूमि बन्धनमुक्त हो । जेल के निकृष्ट और अस्वास्थ्यकर भोजन को उन्होंने मोहनभोग समझ कर ग्रहण किया । उनको अपने शरीर से मोह नहीं था, क्योंकि वे इसे परोपकारार्थ प्रभु की दी हुई वस्तु मानते थे ।

'जिस समय सन् १९०८ में उन पर राजद्रोह का प्रसिद्ध मुकदमा चल रहा था, उस समय नौकरशाही यही चाह रही थी कि किसी प्रकार तिलक महाराज दब जायें और क्षमा माँग लें । पर वे इस प्रकार दब कर जान बचाना जानते ही नहीं थे । वे तो सच्चे शूरमा थे जो रणक्षेत्र में शत्रु पर चोट करने और उसके प्रहारों को सहने में ही आनन्द अनुभव करते हैं । उस मुकदमे में उन्होंने अपने कार्यों तथा विचारों को न्याययुक्त सिद्ध करने के लिये स्वयं ही पैरवी की और २१ घण्टे तक सिंह की तरह गर्ज कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भाषण करते रहे । उस समय जान पड़ता था कि एक तपस्वी अपने तपोबल से राजाओं का सिंहासन हिला दे सकता है । साधन और शक्ति सम्पन्न अंग्रेजी सरकार तिलक महाराज की इस दैवी शक्ति से घबरा गई और मनमाना फैसला करके उनको देश से बाहर भेज दिया, ताकि भारतीय जनता उनके उग्रतावादी विचारों की 'छूत' से बची रहे । पर परिणाम यह हुआ कि इस प्रकार आत्मसमर्पण करने से वे देश के बालक से लेकर वृद्ध तक सबके गले के हार बन गये ।

तिलक महाराज से सरकारी अधिकारी और पुलिस वाले कितना भयभीत होते थे इसका एक उदाहरण सन् १९१६ में सामने आया । "जब वे अपने सहकारी श्री खापर्डे के साथ कानपुर आये तो पुलिस ने ऐसा आतंक फैलाया कि कोई उनको अपने घर में ठहराने को तैयार न हुआ । तब एक धर्मशाला में उनके ठहरने की व्यवस्था की गई । उनकी सभा की घोषणा करते हुए भी लोग डरते थे और जिस देशभक्त ने साहसपूर्वक यह कार्य किया, उसे पुलिस ने कोई झूठा इल्जाम लगाकर पकड़ लिया और २७ दिन तक हवालात में रखा । जब सन्ध्या समय परेड के विशाल मैदान में तिलक महाराज के भाषण के लिये सभा का आयोजन किया गया तो अधिकारियों की नाराजगी के भय से कोई प्रसिद्ध पुरुष सभापतित्व करने को तैयार नहीं हुआ, तब एक रिटायर्ड प्रधानाचार्य को अध्यक्ष बनाकर काम चलाया गया । पर तिलक जी के भाषण को सुनने के लिये जनता की भीड़ इस प्रकार उमड़ पड़ी कि उस लम्बे चौड़े मैदान में तिल रखने की भी जगह न रही ।"

तिलक महाराज नवयुवकों को प्रोत्साहन देकर देश सेवा और राष्ट्रोत्थान की प्रेरणा देने के लिये सदा तैयार रहते थे । वे जानते थे कि यदि आरम्भ से ही सेवा और त्याग की भावनायें जागृत करके युवकों को सद्मार्ग पर प्रेरित कर दिया जायेगा तो वे निश्चय ही अपना जीवन सार्थक बना सकेंगे । इस दृष्टि से उनके लिये मि. चर्चिल की वह उक्ति पूर्णतया चरितार्थ होती थी जो उन्होंने इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध नेता श्री बालफोर के सम्बन्ध में कही थी—

"उन्हें युवकों से प्रेम था । वे उनकी माँगें स्वीकार कर लेते थे और प्रोत्साहन देते थे । उनके हृदय में सदा तरुणों की-सी उमंग रहती थी, किन्तु साथ ही वह श्रोता में यह भाव भी उत्पन्न कर देते थे कि उनमें ज्ञान की अनन्त राशि संग्रहीत है । वह स्वयं तो कभी घबड़ाते ही न थे, बल्कि अपने आस-पास रहने वालों के साहस को स्थिर रखने में पूरा योग देते थे । वे अत्यन्त कष्टपूर्ण और परेशानी की परिस्थितियों में भी सब लोगों को शान्त रखते थे और अपने साथ लेकर उस कठिनाई से पार लगा देते थे ।"

एक अन्य लेखक के मतानुसार "जब हम तिलक जी का ध्यान करते हैं तो हमारा मस्तक गर्व से ऊँचा हो जाता है । जब उनकी ओर दृष्टिपात करते हैं तो हिन्दू-संस्कृति का सच्चा स्वरूप सामने आ जाता है । वे सत्य के विरुद्ध कभी किसी से नहीं डरते थे । यदि हम कहें कि भारत में स्वतंत्रता युग भी तिलक से ही आरम्भ हुआ तो इसमें कुछ भी अतिशयोक्ति नहीं है । जिस समय लोग स्वतंत्रता का नाम भी लेने का साहस नहीं करते थे उस समय तिलक जी ने उच्च स्वर से यह घोषणा की कि—"स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हम उसे लेकर रहेंगे ।"

उनको भारतीयता की वृद्धि का बड़ा ध्यान रहता था । उनकी वेशभूषा और घर के भीतर रहन-सहन भी पूरी तरह भारतीय ही नहीं था, वरन् वे स्वदेशी वस्तुओं के भी बड़े भक्त थे । बंगाल से आरम्भ होने वाले सन् १९०५ के प्रसिद्ध 'स्वदेशी आन्दोलन' के बहुत पहले ही उन्होंने स्वदेशी वस्तु व्यवहार का प्रचार करना प्रारम्भ कर दिया था । इस सम्बन्ध में उन्होंने अपने एक भाषण में कहा था कि—"स्वदेशी की जो ज्वाला दिन प्रतिदिन भड़क रही है वह अब दबाई नहीं जा सकती । यह तब तक स्थिर रहेगी जब तक हमारे समस्त बन्धन टूट नहीं जायेंगे और भारत विश्व की स्वतन्त्र जातियों के बीच अपना उचित स्थान प्राप्त न कर लेगा ।" लोकमान्य तिलक और उनके समकालीन पंजाब के नेता लाला लाजपतराय और बंगाल के श्री विपिनचन्द्र पाल के प्रयत्नों से बंग-भंग आन्दोलन के समय स्वदेशी-प्रेम की ऐसी लहर उठी थी कि सामान्य अशिक्षित जनता भी उससे अछूती नहीं बची । घर-घर में स्वदेशी की चर्चा सुनाई पड़ती थी और विदेशी वस्त्र, विदेशी चीनी, साबुन आदि को लोग 'अपवित्र' समझ कर त्यागने लगे थे । स्वदेशी के सम्बन्ध में अनेक भजन और गीत सार्वजनिक सभाओं में सुनाई पड़ने लगे थे । उसी जमाने में कानपुर में एक 'लावनी-दंगल' में किसी माली ने एक लोकगीत बना कर गाया था—

लाल बाल और पाल कहें यों सुन के खयाल न यों तानो ।
छोड़ो सब परदेशी चीजें, खालिस स्वदेशी पहचानो ॥

तत्पश्चात् इसी स्वदेशी-व्रत को खद्दर-आन्दोलन के रूप में चलाकर महात्मा गाँधी ने पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया । इस विषय में गाँधी जी लोकमान्य तिलक को अपना गुरु मानते थे और जब तक वे जीवित रहे तब तक उनकी सहमति से ही असहयोग आन्दोलन को चलाते रहे । लोकमान्य तिलक की तरह महात्मा जी माननीय गोखले को भी अपना राजनीतिक गुरु मानते थे, यद्यपि राजनीति में नरम और गरम दलों के प्रमुख नेता होने के कारण इन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दोनों में विरोध भी रहा करता था। फिर भी देश सेवा की दृष्टि से गोखले का महत्त्व तिलक जी भी स्वीकार करते थे और सन् १९१५ में श्री गोखले का स्वर्गवास होने पर लोकमान्य ने उनकी अर्थी को कन्धा लगाया और उसी समय अपने हृदयोद्‌गार इस प्रकार प्रकट किये—

"यह आँसू बहाने का अवसर है। माननीय गोखले के निधन से भारत की बड़ी क्षति हुई है। इस हानि की पूर्ति किसी प्रकार सम्भव नहीं। गोखले भारतमाता के अमूल्य रत्न थे, महाराष्ट्र के नेता और कर्त्तव्यनिष्ठ सेवक थे। उन्होंने अपना सारा जीवन देश के लिये समर्पित कर दिया। परमेश्वर के सम्मुख अपनी कर्त्तव्यनिष्ठा का जितना अच्छा हिसाब गोखले दे सकेंगे उतना शायद ही कोई दे सके। क्या आप लोग उनके इस रिक्त स्थान की पूर्ति कर सकेंगे।"

इन्हीं दुर्लभ गुणों के कारण महात्मा गाँधी ने अपने राजनीतिक कार्य के आरम्भ काल में इन दोनों महान् नेताओं से प्रेरणा लेकर उनको अपना मार्गदर्शक मान लिया था। एक लेखक की सम्मति में "गाँधी जी को यदि तिलक हिमालय के समान अटल, अविचल दिखाई देते तो गोखले मन्दाकिनी की विमल धारा के समान अत्यन्त निर्मल और उदार प्रतीत हुए। तिलक में आत्म-गौरव की पराकाष्ठा थी तो गोखले में, आत्मसमर्पण की। तिलक स्वाभिमानी थे तो गोखले अतिशय विनम्र।" महात्मा जी ने इन दोनों की ही विशेषताओं को ग्रहण करके भारतीय स्वाधीनता-संग्राम में पदार्पण किया और असम्भव समझे जाने वाले लक्ष्य को प्राप्त करके दिखा दिया।

अंतिम समय और अमर कीर्ति

जिस समय तिलक महाराज विलायत से लौटकर आये उस समय भारतवर्ष का राजनीतिक वातावरण बहुत गर्म था। रौलेट एक्ट के विरुद्ध समस्त नेताओं और दलों ने प्रबल आन्दोलन छेड़ रखा था। जलियाँवाला बाग के हत्याकाण्ड के कारण युवकों में रोष की लहर व्याप्त थी और उसके उत्तरदायी जनरल डायर और माइकेल ओडायर से बदला लेने के लिये वे विलायत तक में पिस्तौलें लेकर उनका पीछा कर रहे थे। ऐसे समय में महात्मा गाँधी ने असहयोग आन्दोलन का शंखनाद किया। लोकमान्य ने भी एकाध भाषण देकर उसका समर्थन किया और देशवासियों को उसमें भाग लेने की प्रेरणा दी।

पर अब उनका स्वास्थ्य विशेष निर्बल हो चुका था। ६४ वर्ष की आयु में बहुमूत्र की बीमारी अधिक कष्ट देने लगी थी और उन्होंने अधिक इधर-उधर जाना बहुत कम कर दिया था। बम्बई हाईकोर्ट में उनका एक मुकदमा था, उसके लिये वे बम्बई आये और पाँच-छः दिन तक मुकदमे के सम्बन्ध में बहस करते रहे। मुकदमे में तो उनकी जीत हो गई, पर अधिक परिश्रम करने से उनको ज्वर आने लगा। उसके कुछ समय बाद ही २२ जुलाई, १९२० को उनकी ६४वीं वर्षगांठ कोलाबा (बम्बई) में बहुत धूम-धाम से मनाई-गई। उसमें भाग लेने को उन्हें भी वहाँ जाना पड़ा। सार्वजनिक उत्सव के अनेक कार्यक्रमों में उपस्थित रहना आवश्यक होने के कारण स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ा और बीमारी बढ़ गई। उनको बम्बई के 'सरदार गृह होटल' में लाकर रखा गया, जहाँ वे सदैव ठहरा करते थे। शहर के बड़े-बड़े डॉक्टरों ने इलाज किया और उनको बचाने की बहुत कोशिश की गई। पर कोई उपाय कारगर नहीं हुआ, बीमारी बढ़ती ही चली गई और ३१ जुलाई की आधी रात को उन्होंने अपनी इह लीला सम्वरण करके महाप्रयाण किया।

धर्मप्राण-महामना : पं. मदनमोहन मालवीय जी

इलाहाबाद में चौक के निकट एक गली में एक बीमार कुत्ता पड़ा था। उसके चोट लगने से घाव हो गया था और उसमें कीड़े पड़कर उसे काटने लगे थे। इसी पीड़ा से वह छटपटाता हुआ बुरी तरह चिल्ला रहा था। उसके करुण शब्द सुनकर बहुत से राहगीर ठहर जाते थे, पर सिवाय तमाशा देखने के कोई और कुछ न करता था। बहुत हुआ तो कोई मौखिक सहानुभूति के दो-चार उद्‌गार प्रकट कर देता था। उसी समय एक दस-बारह वर्ष की आयु का बालक स्कूल से घर जाता हुआ वहाँ आया और कुत्ते की पीड़ा को देखकर दयार्द्र हो उठा। वह तुरन्त थोड़ी दूर पर रहने वाले डॉक्टर के यहाँ पहुँचा और कुत्ते की पीड़ा का सब समाचार उसे सुनाया। डॉक्टर भी सहृदय था, उसने बालक की सद्भावना देखकर बिना मूल्य कुछ दवा दे दी कि इसे घाव पर लगा दो। बालक कुत्ते के पास आया और उसके घाव पर दवा लगाने लगा। आरम्भ में दवा की तेजी से कुत्ते को पीड़ा अधिक जान पड़ने लगी तो

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह गुर्राने और दाँत दिखाने लगा । कई दर्शकों ने कहा—"अरे बच्चे, हट जाओ, वह तुमको काट लेगा । क्या पता यह पागल भी हो ।" पर वह बालक इस प्राणिदया के कार्य से विरत नहीं हुआ और कुछ परिश्रम करके उसने दवा लगा ही दी ।

इस बालक का नाम था—मदनमोहन जो आगे चलकर भारतवर्ष के एक महान् नेता 'महामना मालवीय जी' के नाम से प्रसिद्ध हुआ । उस छोटी अवस्था में भी उनके हृदय में दीन-दुःखी और पीड़ित जनों के प्रति इतनी करुणा की भावना थी कि वे स्वयं के हानि-लाभ अथवा कष्ट सहन की परवाह न करके उनकी सहायता के लिये तैयार हो जाते थे । जैसे-जैसे वे बड़े होते गये उनकी यह सद्वृत्ति विकसित होती गई और वह समस्त देश को ही आत्मीय की भाँति प्रेम करने लगे तथा उसके सभी निवासियों के अभावों तथा कष्टों को अनुभव करके उनकी सेवा में दत्तचित्त हो गये । उनमें इतनी प्रतिभा, इतनी योग्यता तथा साथ ही परिश्रमशीलता थी कि यदि वे अन्य लोगों की तरह खाने-कमाने में लगे रहते तो निश्चय ही बहुत बड़ी सम्पदा के स्वामी हो जाते और राजाओं की तरह महलों में रहकर स्वर्गीय सुखों का उपभोग कर सकते थे । पर उन्होंने उस मार्ग को छोड़कर सार्वजनिक सेवा का ही मार्ग अपनाया और इसलिये आजन्म साधारण स्थिति में रहकर स्वयं अनेक प्रकार के अभाव सहन करते रहे । देश और समाज के लिये उनका यह त्याग और आत्म-बलिदान इतना महान् था कि जनता ने उनको स्वयं 'महामना' की उपाधि दे डाली और स्वर्गवास हो जाने के पश्चात् आज भी वे समस्त राष्ट्र के श्रद्धाभाजन तथा पूजनीय बने हुए हैं ।

शिक्षा-प्रचार की लगन

सन् १८६१ में जन्मे मालवीय जी का बाल्यकाल और स्कूली जीवन उल्लास और खेलकूद में गुजरा क्योंकि ये स्वभाव से ही तेजस्वी और किसी की जोर-जबर्दस्ती सहन न करने वाले थे । पर घर में गरीबी के कारण खर्च की सदा तंगी ही बनी रहती थी । इनके पिता पं. ब्रजनाथ जी कथा बाँचने का कार्य करते थे और उससे जो आय हो जाती थी उसी से एक बड़े परिवार का भरण-पोषण करना होता था । उस समय स्कूल की फीस बहुत थोड़ी थी, पर उसको भी समय पर दे सकने की गुंजाइश नहीं थी । इसलिये इनकी माता समय-समय पर अपने कड़ों को गिरवी रखकर फीस और स्कूल के खर्च की व्यवस्था करती थीं और जब रुपया आ जाता था तो उनको छुड़ा लेती थीं । बड़े हो जाने पर भी मालवीय जी को अपने वे धन हीन अवस्था के दिन याद रहे और वे सदैव निर्धन विद्यार्थियों की फीस माफ कराके तथा अन्य प्रकार से सहायता करते रहे । हिन्दू विश्वविद्यालय में सैकड़ों विद्यार्थी स्वयं अथवा किसी अन्य के द्वारा मालवीय जी की सेवा में फीस माफ कराने की प्रार्थना करते थे और वे यथासम्भव किसी को निराश न होने देते थे । विद्या-प्रचार की लगन मालवीय जी में इतनी अधिक थी कि उन्होंने हिन्दू विश्वविद्यालय स्थापित करने से बहुत पहले ही शिक्षा-प्रचार का महत्त्व जनता को समझाना आरम्भ कर दिया था । अब से ६० वर्ष पहले जब उन्होंने प्रयाग से 'अभ्युदय' (साप्ताहिक पत्र) को प्रकाशित करना आरम्भ किया तो 'अभ्युदय' के एक-एक अक्षर की व्याख्या करते हुए लिखा था—

"इसका दूसरा अक्षर 'भ' हमको सबसे पहले उन्हीं भगवत् की भक्ति का स्मरण दिलाता है, जिन्होंने कहा है—'न मे भक्तः प्रणश्यति' । फिर यह हमको भूति (लक्ष्मी जी) का स्मरण दिलाता है । फिर यह सबको भगवद् गीता, भागवत, भागीरथी, भारती, भाषा और भारत का स्मरण दिलाकर आत्मा को आप्यायित करता है तथा यह उपदेश करता है कि यदि देश का, समाज का अभ्युदय चाहते हो तो भारत, भगवद्गीता भागवत का उपदेश कण्ठ में धारण करो, भगवान, भागीरथी, भारती भाषा, भारतवर्ष में भक्ति करो, भागीरथी के पवित्र तट पर भारती की उपासना का एक बहुत बड़ा मन्दिर है—एक विश्वविद्यालय बनाओ और संस्कृत एवं भाषा के द्वारा विद्या का प्रचार करो ।"

इसी प्रकार एक अन्य लेख में जो कुछ ही महीने बाद लिखा गया था उन्होंने देशवासियों की शिक्षा के प्रति उदासीनता पर बहुत खेद प्रकट किया और कहा—"भारतवर्ष की दशा ऐसी शोचनीय हो गई है कि नीची जातियों में शिक्षा-प्रचार के लिये क्या कहा जाये, उच्च जातियों में भी विद्या का अभाव है । इसका कारण हमारी सरकार की उदासीनता और सर्वसाधारण का उसकी ओर उचित ध्यान न देना ही है । सरकार इस देश में शिक्षा-प्रचार के लिये एक आना प्रति व्यक्ति के हिसाब से व्यय करती है । स्वयं इस देश के राजा महाराजा, सेठ-साहूकार धनी लोग जो अपना समय सुखपूर्वक व्यतीत करते हैं, वे भी अपने देशवासियों की शिक्षा के लिये बहुत कम ध्यान देते हैं । भाँति-भाँति के विषय-भोग अथवा अपनी शान-शौकत के लिये वे चाहे जितना धन फूँक दें, परन्तु अपनी सन्तान की शिक्षा के लिये भी आवश्यक धन खर्च करना उनको बहुत अखरता है । हम स्वीकार करते हैं कि सरकार हमारी शिक्षा के लिये बहुत ही कम व्यय करती है, पर क्या हम स्वयं अपनी शिक्षा का कुछ भी प्रबन्ध नहीं कर सकते ? सरकार जब कोई नया टैक्स हमारे सिर पर मढ़ देती है तो हम चाहे प्रसन्नता से अथवा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अप्रसन्नता से, वह धन देते जरूर हैं, हम क्यों देते हैं ? क्योंकि सरकार बहुत जबर्दस्त है । इसी प्रकार यदि हम शिक्षा-प्रचार के लिये अपने ऊपर टैक्स लगा लें और उसे नियमित रूप से शिक्षा-प्रचार के कार्य में लगाते जायें, तो क्या शिक्षा-क्षेत्र में हमारी उन्नत्ति हो नहीं सकती ? क्या हम लोग, जो स्वतन्त्रता के पक्षपाती हैं, स्वराज्य पाने की इच्छा रखते हैं, थोड़ा-सा स्वार्थ-त्याग करके देश में शिक्षा का प्रचार बढ़ाने का साहस नहीं कर सकते ?"

मालवीय जी केवल लड़कों की शिक्षा के लिये ही प्रयत्नशील नहीं रहे वरन् लड़कियों की शिक्षा को भी वे उतना ही आवश्यक और महत्त्वपूर्ण समझते थे । उन्होंने अपने हिन्दू विश्वविद्यालय में लड़कों की शिक्षा की तरह कन्या-शिक्षा की भी उचित व्यवस्था की थी और उनको ऊँची से ऊँची शिक्षा प्राप्त करने की सुविधायें दी थीं । हमको याद है कि विश्वविद्यालय के एम. ए. संस्कृत-विभाग में पढ़ाने वाले एक अध्यापक ने एक लड़की को वेद पढ़ाने से इन्कार किया था, पर मालवीय जी ने इसका प्रतिवाद करके उसको पढ़ सकने की अनुमति दी । इसके बहुत समय पहले ही सुदृढ़ तर्कों के आधार पर स्त्री-शिक्षा का महत्त्व सिद्ध कर चुके थे । उन्होंने कहा था—

"हमारे जातीय जीवन में सैकड़ों वर्षों से अन्धविश्वास रूपी संस्कार इकट्ठे हो गये हैं जिनके कारण ही हमारी जाति प्राण-विहीन समझी जाती है । इन कुसंस्कारों को हटाने के लिये ब्रह्मचर्य और सच्चरित्र-रूपी पैने हथियारों का उपयोग करना जातीय-जीवन के उत्थान का एकमात्र मार्ग है । परन्तु हमारा सच्चरित्र होना, ब्रह्मचारी बनना अथवा अन्धविश्वास का परित्याग करना तभी हो सकता है जब हम अपने स्त्री-वर्ग का सुधार कर उसे अपने अनुकूल बना लें । जब तक हम इस वर्ग को अपने साथ लेकर नहीं चलते, तब तक हम कभी जातीय-जीवन की लहलहाती लता को देखकर आनन्दित नहीं हो सकते । क्योंकि मनुष्य-समाज का कल्याण अथवा अकल्याण, उच्च अथवा नीच होना स्त्रियों के ही हाथ में है । बाल्यावस्था से लेकर वृद्धावस्था तक पुरुष इन्हीं के हाथ की कठपुतली है । वे जिस प्रकार चाहें उसको चलावें । पुरुषों को सदा उनके अधीन रहना पड़ता है । यदि स्त्रियाँ पुरुषों के साथ रहकर उनके लाभ अथवा सुख की सहायक न हों, तो पुरुष कभी सुखी अथवा आनन्दित नहीं रह सकते । पुरुषों की अवनति तथा उन्नति वास्तव में स्त्रियों के ही हाथ में है । परन्तु ऐसा तभी हो सकता है जब उनको सब प्रकार की गूढ़ नीति समझने और यथासमय उसका उत्तम रूप से उपयोग करने के लिये उपयुक्त शिक्षा दी जाये । हमारा तात्पर्य शिक्षा से हृदय और मन की सारी शक्तियों का सम्यक् रूप से विकास और उनकी पूर्ण पुष्टि से है । स्त्रियों को ईश्वर की दी हुई विपुल शक्ति को जीवन के उच्च आदर्श के सामने लाकर सुगठित करना और कर्मशील बनाना ही हमारा उद्देश्य है और यही हमारे जातीय जीवन का मूल और कर्त्तव्य-कर्म है ।"

मालवीयजी को यद्यपि अनेक लोग पुरातनवादी कहते थे, पर स्त्री-शिक्षा के सम्बन्ध में उन्होंने दकियानूसी लोगों की इस दलील को सर्वथा अग्राह्य कर दिया कि "यदि स्त्रियों को पुरुषों के समान शिक्षा मिलने लगेगी तो समाज में घोर विप्लव और घरों में महान् अनर्थ पैदा हो जायेंगे । स्त्रियाँ घरों से निकल कर सभा-समाज करती फिरेंगी, गृह-कार्य, सन्तान-पालन, पति की सेवा और कुटुम्बियों के आदर-सत्कार की ओर उनका लक्ष्य बिल्कुल न रहेगा ।" इसका उत्तर देते हुए उन्होंने लिखा—"हमें इस प्रकार के पाप का कोई कारण दिखलाई नहीं पड़ता । क्या कभी किसी ने यह भी सुना है कि विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा प्राप्त करके पुरुष धन पैदा करने, अपने परिवार का पालन-पोषण करने अथवा गृह-कर्त्तव्य साधन के अयोग्य हो गया हो ? जिस शिक्षा द्वारा पुरुषों में मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक गुणों का प्रकाश होता है, जिसकी सहायता से जीवन उच्च हो जाता है, उसी शिक्षा को पाकर स्त्रियों के मन और हृदय उन्नत न होकर अधोगति की ओर आकर्षित होंगे—यह कैसे आश्चर्य की बात है । जो शिक्षा पुरुषों को प्रकाश की ओर ले जाती है वही स्त्रियों को अन्धकार की ओर घसीट ले जायेगी—यह कहाँ का विचित्र न्याय है ?"

शिक्षा के सम्बन्ध में मालवीय जी के विचार सदैव ऐसे ही उदार रहे और वे अपने अन्तिम समय तक हर तरह से विद्यार्थियों की सहायता करते रहे । हिन्दू विश्वविद्यालय में उस समय हजारों विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते थे । उनमें से कितने ही गरीब घरों के होते थे जो कठिनाइयों के बीच जैसे-तैसे विद्याभ्यास को जारी रखते थे । मालवीय जी केवल शिक्षा और नियम सम्बन्धी त्रुटियों के हो जाने पर ही उनकी सहायता नहीं करते थे, वरन् उनके रहन-सहन, खान-पान और स्वास्थ्य आदि का भी ध्यान रखते थे । इस तरह की एक-दो घटनाओं का जिक्र करते हुए लेखक ने बतलाया है—

"मालवीय जी का प्रतिदिन का यह नियम था कि वे नित्य कर्म से निवृत्त होकर कभी आचार्य ध्रुव जी के साथ और कभी अकेले ही किसी छात्रावास या कालेज में जाकर निरीक्षण करते । छात्रावास में विद्यार्थियों का सुख-दुःख पूछते थे । वे पूछते थे कि व्यायाम करते हो या नहीं ? सन्ध्या-वन्दन करते हो या नहीं ? दूध पीते हो या नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इत्यादि ? एक दिन एक छात्रावास में जा रहे थे कि एक लड़का आता हुआ दिखलाई पड़ा । मालवीय जी ने उसे देखकर पूछा कि दूध पीते हो या नहीं ? उसने उत्तर दिया कि वह बहुत गरीब है, दूध के लिये पैसे कहाँ से लावे । मालवीय जी जब घर लौटे तो उन्होंने उस लड़के के लिये दूध का प्रबन्ध करा दिया । ऐसी घटनायें आये दिन हुआ करती थीं ।"

"एक बार मालवीय जी रात्रि में किसी छात्रावास में गये । एक संस्कृत का विद्यार्थी चूल्हे पर दूध गरम कर रहा था । वे उस पर नाराज हुए और कहा, इससे गन्दगी फैलती है और कमरे के भीतर दमचूल्हा जलाना नियम के विरुद्ध है । यह कहकर उन्होंने उस पर पाँच रुपया जुर्माना किया । परन्तु घर आकर उन्होंने पाँच रुपया भेज दिये कि वह उस जुर्माने को जमा कर दे और भविष्य में ऐसा अपराध न करे ।"

"जयकुमार नाम का छात्र आचार्य के अन्तिम वर्ष की परीक्षा देने वाला था । पिता का स्वर्गवास हो जाने से वह अन्त्येष्टि के लिये घर गया । उसको लौटने में देर हो गई जिससे उपस्थिति में कमी पड़ गई और नियमानुसार परीक्षा में सम्मिलित होना असम्भव हो गया । उसने मालवीय जी के सामने जाकर अपना प्रार्थना-पत्र रखा और यह श्लोक पढ़ा—

या त्वरा द्रौपदी त्राणे या त्वरा गजमोक्षणे ।
मय्यार्ते करुणानाथ ! सा त्वरा क्व गताहिते ।

"द्रौपदी के उद्धार और गजराज की रक्षा में आपने जो शीघ्रता प्रकट की थी, हे करुणामय ! मेरी विपत्ति के समय वह शीघ्रता कहाँ चली गई ?"

इसे बोलते हुए उसके नेत्रों से आँसू बहने लगे । मालवीय जी के नेत्रों में भी आँसू आ गये और प्रार्थना-पत्र पर उसी समय लिख दिया—'ही शुड वी एडमिटेड ।' तत्पश्चात् वह छात्र प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हो गया ।"

इस प्रकार की सैकड़ों घटनायें मालवीय जी के जीवन की हैं, जिनमें उन्होंने तरह-तरह से सहायता देकर बहुसंख्यक युवकों के जीवन को बर्बाद होने से बचा लिया और उनको भावी जीवन में सफलता प्राप्त करने का अवसर दिया । हिन्दू विश्वविद्यालय की सफलता और वहाँ के छात्रों तथा अध्यापकों को कर्त्तव्यपरायण तथा उन्नतशील बनाने के लिये तो उन्होंने अपना जीवन ही अर्पण कर दिया ।

देश सेवा की लगन

मालवीय जी के हृदय में आरम्भ से ही देश-सेवा और समाजोत्थान की भावना प्रबल थी । यद्यपि घर की गरीबी और माता के आग्रह से उन्होंने बी. ए. पास कर लेने पर लगभग दो वर्ष तक गवर्नमेंट स्कूल में अध्यापकी की और बाद में कई वर्ष तक वकालत भी की पर उनका ध्यान सदा 'देश-सेवा', 'समाज-सेवा' और 'धर्म-सेवा' की तरफ आकर्षित रहता था । इसलिये दो-डेढ़ वर्ष तक अध्यापकी करने के पश्चात् ही वे कालाकांकर के राजा रामपालसिंह के निमन्त्रण पर उसे छोड़कर 'हिन्दुस्तान' दैनिक पत्र का सम्पादन करने चले गये । यद्यपि राजा साहब ने उनको साठ की जगह दो सौ वेतन दिया था, पर वे मुख्यतया इसी ख्याल से गये थे कि अखबार के द्वारा वे अपने तीनों प्रकार के सेवा-कार्यों को अधिक अच्छी तरह पूरा कर सकेंगे ।

मालवीय जी ने ढाई वर्ष तक 'हिन्दुस्तान' का सम्पादन बड़े उत्साह और योग्यता से किया । उस समय उनकी आयु यद्यपि २६ वर्ष की ही थी, पर वे भारतीय राजनीति में पूर्ण अभिज्ञता प्राप्त कर चुके थे और कांग्रेस के नेताओं में उनकी गिनती होने लग गई थी । कलकत्ता में होने वाले द्वितीय वार्षिक अधिवेशन में उनका भाषण सुनकर ही राजा रामपालसिंह ने उनको 'हिन्दुस्तान' का सम्पादक चुना था । 'हिन्दुस्तान' के लेख बड़े तथ्यपूर्ण और प्रभावशाली होते थे और उनके कारण थोड़े समय में उनका नाम देशभर में फैल गया । वह हिन्दी का पहला दैनिक था जिसका नाम देश-विदेशों तक फैला और जिसने राजनीति तथा साहित्य-क्षेत्र में कुछ कहने लायक काम कर दिखाया । ढाई वर्ष बाद उन्होंने किस प्रकार उसे छोड़ा इसकी कथा भी उनकी महानता तथा दृढ़ता की परिचायक है । उसे भी संक्षेप में सुन लीजिये ।

जब राजा रामपालसिंह ने मालवीय जी से 'हिन्दुस्तान' का सम्पादन करने को कहा तो उसे स्वीकार करने में उनको एक बड़ा संकोच हुआ । मालवीय जी कट्टर सनातनधर्मी ब्राह्मण थे और राजा साहब विलायत से लौटे हुए क्षत्रिय, जिनको मद्य-माँस से जरा भी एतराज न था । विलायत से वे एक यूरोपियन महिला को विवाह करके ले भी आये थे । मालवीय जी को किसी मदिरा पीये हुए व्यक्ति के पास बैठना कठिन जान पड़ता था । इसलिये उन्होंने राजा साहब से यह शर्त तय कर ली कि जब वे मद्य पिये हों तो उनको बातचीत के लिये न बुलावें, अन्यथा वे वहाँ कार्य न करेंगे । ढाई वर्ष तक यह व्यवस्था ठीक चली, पर एक दिन नशे में राजा साहब से भूल हो गई और उन्होंने उसी समय मालवीय जी को बुला लिया । ज्योंही मालवीय जी को यह मालूम पड़ा कि राजा साहब मद्य पिये हुए हैं, त्योंही वे बात समाप्त करके चले आये और उसी समय नाव में बैठकर प्रयाग वापस आ गये । बाद में राजा साहब ने अपनी भूल स्वीकार करके मालवीय जी से पुनः सम्पादन भार सँभालने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

के लिये अनुरोध किया, पर वे किसी तरह राजी न हुए। तब राजा साहब ने उनको वकालत पढ़कर वकील बनने की सलाह दी और उसका तमाम खर्च देने का वायदा किया। मालवीय जी ने बहुत इन्कार किया, पर वे बराबर २५०) महीना भेजते रहे जब तक कि मालवीय जी वकालत न करने लग गये।

मालवीय जी की वकालत खूब चली और कुछ समय बाद उनकी आमदनी कई हजार रु. महीना तक हो गई। उस समय की एक घटना है कि राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रधानमन्त्री पं. अयोध्यानाथ ने ह्यूम साहब से शिकायत की कि जब से मालवीय जी वकालत करने लगे हैं तब से कांग्रेस के काम में ढिलाई करने लगे हैं। ह्यूम साहब ने कहा—"ठीक ही करते हैं, इन्हें कानून की ओर ही पूरा ध्यान लगाना चाहिये।" फिर मालवीय जी की ओर देखकर बोले—"देखो मदनमोहन! ईश्वर ने तुम्हें तीव्र बुद्धि दी है। अगर मन लगा कर तुम दस वर्ष भी वकालत कर लोगे तो निश्चय ही आगे बढ़ जाओगे। तब तुम अपनी प्रतिष्ठा के कारण अधिक जन-सेवा कर सकोगे।"

वकालत के पेशे में भी मालवीय जी ने सेवा-भावना का त्याग नहीं किया, जैसा वकीलों में प्रायः देखा जाता है। एक दिन वे काम समाप्त करके बाहर जा रहे थे तो एक व्यक्ति शोकाकुल-सा इनके पास आया और कहने लगा—"आज हाईकोर्ट में मेरा मुकदमा है। मुन्शी कालिन्दीप्रसाद मेरे वकील हैं पर वे कहीं चले गये हैं। मैं बहुत गरीब आदमी हूँ, मेरे पास किसी दूसरे वकील को देने के लिये रुपये नहीं हैं। जिस वकील के पास जाता हूँ, उनका मुन्शी पहले फीस माँगता है। समझ में नहीं आता क्या करूँ। आप धर्मात्मा हैं इसीलिये आपकी शरण में आया हूँ।" मालवीय जी का हृदय उसकी बेवसी देखकर पसीज उठा। वे स्वयं तो उस समय दूसरे काम में लगे थे, पर उन्होंने अपने एक खास व्यक्ति के साथ मुन्शी गोकुलप्रसाद वकील के पास भेज दिया। उस आदमी का काम बिना कुछ खर्च किये हो गया। वे ऐसे असहाय लोगों की सहायता प्रायः कर दिया करते थे।

यद्यपि मालवीय जी की वकालत अच्छी चली और ह्यूम साहब की शिक्षा के अनुसार उससे उन्हें पर्याप्त धन भी मिल गया, पर उनकी अन्तरात्मा उसकी तरफ आकर्षित नहीं होती थी। इसलिये जहाँ अन्य लोग आमदनी बढ़ने से उसी कार्य में तल्लीन हो जाते हैं, मालवीय जी आवश्यकतानुसार धन प्राप्त हो जाने पर उससे विरक्त होने लग गये और धीरे-धीरे उसे छोड़कर अपना पूरा समय समाज-सेवा तथा देशोत्थान के अन्य कार्यों में लगाने लगे।

'अभ्युदय' का प्रकाशन

मालवीय जी सामयिक पत्रों को विशेष महत्त्व देते थे, क्योंकि उस जमाने में समाज-सेवा तथा देश-सेवा का प्रमुख माध्यम वे ही थे। 'हिन्दोस्थान' का कार्य बन्द कर देने के बाद वे इलाहाबाद से निकलने वाले 'इण्डियन ओपिनियन' पत्र के कार्य में सहयोग देने लगे थे। उसके लेख भी बड़े जोरदार हुआ करते थे। यहाँ मालवीय जी का ध्यान अपना एक निजी पत्र हिन्दी में प्रकाशित करने की तरफ लगा था, जिसके द्वारा वे जनसाधारण के निकट सम्पर्क में बने रहें। 'अभ्युदय' के प्रथम अंक में उसका उद्देश्य बतलाते हुए उन्होंने लिखा—

"अभ्युदय का अर्थ है सब ओर से उदय—ऊपर उठना। देश के अभ्युदय का अर्थ है—देश का, अर्थात् देश के निवासियों का सब ओर से उदय। स्थायी सुख, सम्पत्ति और प्रभाव उसी के परिणाम होते हैं। सुख धन से होता है, धन धर्म से—सदाचार, विद्या और बुद्धि से प्राप्त होता है। विद्या और बुद्धि धर्म के आवश्यक अंग हैं। मनु भगवान के समय से सभी तत्त्वदर्शी इस विषय में एक मत हैं। इसलिये विद्या और बुद्धि करना हमारा परम कर्त्तव्य है। बिना इसके धर्म नहीं हो सकता, धर्म के बिना धन नहीं हो सकता और धन के बिना सुख नहीं मिल सकता।"

मालवीयजी ने यहाँ भारतीय शास्त्रों का सार-रहस्य थोड़े से शब्दों में प्रकट कर दिया है। धन मनुष्य को सुख मिलने का साधन अवश्य है, पर उसी अवस्था में जबकि वह धर्मानुकूल मार्ग से कमाया जाये। आजकल की तरह भ्रष्टाचार, रिश्वत, मिलावट, छीना-झपटी— किसी भी तरह से प्राप्त किया हुआ धन वास्तविक सुख का साधन नहीं हो सकता। हम ऐसे पाप की कमाई से 'धनी' बनने वालों को मूढ़तावश भले ही सुखी समझा करें, और चाहे वे स्वयं भी महलों और मोटरों में बैठकर बड़प्पन का प्रदर्शन करते रहें पर यदि उनके हृदय के भीतर घुसकर देखा जाये तो वहाँ सदैव अशांति और असन्तोष का हाहाकार ही सुनाई पड़ेगा। इसलिये मालवीय जी का यह लिखना सोलह आने सत्य था कि जो धन, धर्म (न्याय, ईमानदारी) द्वारा प्राप्त होगा वही सुख का साधन हो सकता है। इस बात को उन्होंने स्वयं ही आगे चलकर स्पष्ट किया था। उन्होंने अपने कथन की व्याख्या करते हुए कहा—

"देश के थोड़े से मनुष्यों को सुख प्राप्त होने से देश का अभ्युदय नहीं कहा जा सकता, जब कार्यपरायण और पाप से बच कर रहने वाले समस्त मनुष्यों को सुख प्राप्त हो और वह सुख स्थायी हो तभी उस देश के विषय में कहा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जा सकता है कि उसका अभ्युदय हुआ है । सुख स्थायी तभी हो सकता है जब वह धर्म से उत्पन्न और धर्म से रक्षित हो । अधर्म से उत्पन्न या अधर्म से रक्षित सुख स्थायी नहीं होता और उसका परिणाम विष से भी अधिक कड़वा होता है । इसलिये अभ्युदय के लिये सर्वप्रथम धर्म, द्वितीय बिना धर्म के विरोध के उपार्जित धन, और तृतीय धर्म और अर्थ के विरोध बिना प्राप्त होने वाला काम, अर्थात् विषय-सुख आवश्यक हैं । इन्हीं तीन को प्राचीन आचार्यों ने त्रिवर्ग कहा है ।"

'अभ्युदय' के उच्च उद्देश्य और भारतवर्ष की महानता पर प्रकाश डालते हुए भी उन्होंने ठीक ही लिखा था—"पृथ्वी-मण्डल पर जितने पर्वत हैं, उनमें सबसे ऊँचा नगाधिराज हिमालय है । उसका सबसे ऊँचा धवल शिखर पृथ्वी के सब पर्वतों की धवल चोटियों के ऊपर आकाश को शोभित करता है । हमारी प्रार्थना और अभिलाषा है और परमेश्वर इसको पूर्ण करेगा, कि हमारे देश के अभ्युदय से किसी अंश में कम न रहे, वरन् बढ़ा-चढ़ा ही रहे जैसा कि हिमगिरि के शिखर और पर्वतों के शिखर से बढ़े-चढ़े हैं ।" समय ने सिद्ध कर दिया कि मालवीय जी की दूरदर्शिता और संकल्प बल साधारण न था । अन्त में वह सफल हुआ और सफलता में मालवीय जी का श्रेय कम न था ।

'लीडर' की स्थापना

दो वर्ष तक 'अभ्युदय' का सम्पादन करने के पश्चात् मालवीय जी को प्रांतीय कौंसिल का सदस्य बना लिया गया, जिससे उनको 'अभ्युदय' का सम्पादन भार श्री पुरुषोत्तमदास जी टण्डन के सुपुर्द कर देना पड़ा । पर इसके पश्चात् भी सार्वजनिक सेवा के लिये समाचार-पत्र निकालने की आवश्यकता को वे भुला न सके और कौंसिल के सदस्य बनते ही उन्होंने एक अंग्रेजी दैनिक पत्र निकालने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया । इस विचारधारा ने उनको किस प्रकार प्रभावित किया इसका वर्णन करते हुए एक अवसर पर उन्होंने स्वयं कहा था—

'लीडर' के स्थापित होने के पूर्व एक दैनिक समाचार-पत्र की इलाहाबाद में बड़ी आवश्यकता थी । सन् १८७९ में स्वर्गीय पंडित अयोध्यानाथ जी ने 'इण्डियन हेरल्ड' निकाला था और उस पर बड़ा धन व्यय किया था । वह पत्र तीन वर्ष चल सका । 'लीडर' के स्थापित होने का एक यह कारण भी था कि मैंने वकालत छोड़ने का निश्चय कर लिया था, और यह विचार कर रहा था कि तमाम सार्वजनिक कामों से अलग हो जाऊँ, जिससे हिन्दू विश्वविद्यालय के लिये ठीक कार्य कर सकूँ । उस समय मेरे मन में आया कि यदि मैं बिना एक पत्र स्थापित किये सार्वजनिक जीवन से अलग होता हूँ, तब मैं अपने प्रान्त के प्रति अपने धर्म को निवाहता हूँ । आज उसकी आवश्यकता इतनी अधिक और अनिवार्य जान पड़ी कि मैंने विचार किया कि सार्वजनिक जीवन से पृथक होने के पहले एक पत्र यहाँ अवश्य स्थापित कर जाना चाहिये । मैंने इसका जिक्र छः मित्रों से किया और उन्होंने प्रसन्नता से उसके लिये धन दे दिया । आरम्भ में इसके लिये चौंतीस हजार रुपया इकट्ठा हुआ । इतना रुपया एक दैनिक पत्र निकालने के लिये बहुत कम था । लेकिन मुझे अपने मित्रों पर विश्वास था । जिन्होंने फिर सहायता करने को कह दिया था और यह आशा सफल भी हुई । 'लीडर' ने निःस्वार्थ भाव से देश और प्रान्त की बड़ी लगन से सेवा की है ।

जन्म होने के दो-डेढ़ वर्ष के भीतर ही 'लीडर' का मूल धन समाप्त होने पर आ गया । जब बैंक में केवल पाँच हजार रुपया बच रहा तो डायरेक्टरों ने उसकी अंत्येष्टि करने का इरादा कर लिया पर जब मालवीय जी के मुँह से ये शब्द निकले कि—'लीडर बिल नाट डाई' ('लीडर नहीं मरेगा') तो डायरेक्टरों में नई प्रेरणा और स्फूर्ति आ गई और वह फिर नये जोश के साथ चलने लगा ।

मालवीय जी की धर्म-भावना

हिन्दू-विश्वविद्यालय के एक बड़े समारोह में 'लीडर'—सम्पादक श्री सी. वाई चिन्तामणि ने भाषण देते हुए पहला वाक्य यह कहा था—

"यदि मोहनदास करमचन्द गाँधी को 'महात्मा मोहनदास करमचन्द गाँधी' कहा जा सकता है तो हम पण्डित मदनमोहन मालवीय को सच्चाई के साथ 'धर्मात्मा पं. मदनमोहन मालवीय' कह सकते हैं ।"

इसमें सन्देह नहीं कि श्री चिन्तामणि ने मालवीय जी के सम्बन्ध में जो मनोभाव प्रकट किये वे दिखावटी या प्रशंसा-सूचक न थे, पर जो कोई मालवीय जी को थोड़ा-बहुत जानता है वह अवश्य इन शब्दों की यथार्थता को अनुभव करेगा । मालवीय जी शास्त्र और परम्परा के दृढ़ अनुयायी होते हुए भी धर्म के वास्तविक मर्म को समझते थे और उनका पालन करते थे । वे धर्म का लक्षण यह बतलाते थे—

यत्तु आर्याः क्रियमाणं प्रशंसन्ति स धर्मः ।

अर्थात्—"जिसे आर्यजन कहें कि अमुक कार्य करना प्रशंसनीय है वही धर्म है ।"

इसकी विशेष व्याख्या करने के लिये वे प्रायः निम्नलिखित श्लोक कहा करते थे—

अनुगन्तुं सतां वर्त्म कृत्स्नं यदि न शक्यते ।
स्वल्पमप्यनुगन्तव्यं मार्गस्थो नावसीदति ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अर्थात्—"सत्पुरुषों व सज्जनों के मार्ग का यदि किसी कारणवश पूरी तरह अनुसरण न किया जा सके तो उस मार्ग पर थोड़ा-थोड़ा ही चले। यदि वह उस पर चलेगा तो उसको निराशा न होगी।"

सन्मार्ग की विवेचना करने के लिये वे सामवेद के एक मन्त्र को प्रमाण मानते थे जिसका अर्थ है कि दान द्वारा कृपणता पर विजय प्राप्त करके अक्रोध द्वारा क्रोध को जीतो। श्रद्धा से अश्रद्धा का पराभाव करो। सत्य से असत्य को पीछे हटाओ। यही सन्मार्ग है, यही अमृत है, यही स्वर्ग और प्रकाश की ओर गमन करना है। मालवीय जी स्वयं इस पर आचरण करते थे। इसका प्रमाण कानपुर के कांग्रेस अधिवेशन में मिला, जब मालवीय जी मोतीलाल जी नेहरू के किसी प्रश्न का विरोध करने उठे। मोतीलाल जी का स्वभाव बहुत तेज था और वे अपना विरोध कभी सहन नहीं कर सकते थे। इसलिये मालवीय जी को खड़े होते देख कर कहने लगे—"निश्चिन्त होकर बैठ जाओ और पंडित जी से महाभारत और भागवत की कथा सुनो।" मालवीय जी ने हँसकर उत्तर दिया—"भाई मोतीलाल जी ने यदि इन ग्रन्थों को ध्यान और श्रद्धा के साथ पढ़ा होता तो वे ऐसा न कहते।" मालवीय जी की शान्ति ने मोतीलाल जी के क्रोध को जीत लिया।

ब्राह्मण ही क्या प्रत्येक मनुष्य के लिये 'तप' एक आवश्यक धर्म-कर्त्तव्य है। गीता (१८-४२) में शम, दम, तप, शौच आदि नौ गुणों को सच्चे ज्ञानी का लक्षण बतलाया है। मालवीय जी ने 'तप' की व्याख्या के लिये नीचे लिखा पद्य रचा था—

घट-घट व्यापक राम जप रे।
मत कर बैर झूठ मत भाखै॥
मत पर धन हर मत मद चाखै।
जीव मत मार जुआ मत खेलै॥
मत पर तिय लख यही तेरो तप रे॥

अस्पृश्यता निवारण में सहयोग

मालवीय जी एक प्रसिद्ध सनातनधर्मी माने जाते थे और आचार-विचार पर इतने दृढ़ थे कि वे विलायत-यात्रा के समय अपने साथ गंगाजल और गंगा की मिट्टी ले गये थे और विदेश में निरन्तर उन्हीं का उपयोग किया। पर धर्म के बहाने वे किसी अन्यायपूर्ण प्रथा का समर्थन करने को तैयार नहीं थे। जब महात्मा गाँधी ने अछूतोद्धार का आन्दोलन उठाया तो मालवीय जी ने भी उसमें सहयोग दिया और शूद्रों को 'मन्त्र दीक्षा' देने का निश्चय किया। पर वे किसी धार्मिक कार्य में स्वेच्छाचारिता के व्यवहार को बुरा मानते थे। इसलिये इसको कार्य रूप में परिणत करने के पहले उन्होंने सनातन धर्म के अनेक प्रसिद्ध पंडितों का एक बृहत् सम्मेलन प्रयाग में किया और उसके सामने मनु तथा अन्य ऋषियों के वचनों का प्रमाण देते हुए एक प्रस्ताव रखा। इससे पुराने विचार के पंडितों में हलचल मच गई और एक पंडित ने उठकर यहाँ तक कह दिया कि—'मालवीय जी अपने को मनु आदि से भी अधिक समझते हैं। उनके कहने से शूद्रों को 'मन्त्र दीक्षा' नहीं दी जा सकती।' पर इससे मालवीय जी तनिक भी विचलित न हुए और उन्होंने एक घण्टा तक संस्कृत में भाषण करते हुए अन्त में कहा—"मैंने आप जैसे विद्वानों के चरणों में मनु आदि ऋषियों के वचनों की समीक्षा, जैसी मेरी तुच्छ बुद्धि में आई, प्रस्तुत की है। निर्णय तो आप लोगों के हाथ में है। जैसा आप निर्णय करेंगे उसका मैं पालन करूँगा। उनकी मधुर तथा विनम्र वाणी तथा युक्तियुक्त समीक्षा का इतना प्रभाव पड़ा कि सब पंडितों ने एक मत से प्रस्ताव का अनुमोदन कर दिया और प्रस्ताव सर्वसम्मति से पास हो गया।

इसके पश्चात् उन्होंने स्वयं काशी में गंगा तट पर बैठ कर चारों वर्णों के लोगों—यहाँ तक कि चाण्डालों को भी 'ॐ नमः शिवाय', 'ॐ नमो नारायण', 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' आदि मन्त्रों की दीक्षा देनी आरम्भ कर दी। इसके कुछ वर्ष बाद जब वे नासिक गये तो वहाँ गोदावरी के तट पर बहुत से हरिजनों को दीक्षा दी। प्रयाग तथा कलकत्ता में भी कई बार ऐसे ही दीक्षा-समारोह हुए। कहीं-कहीं धर्म के नाम पर अन्ध-श्रद्धा में ग्रस्त लोगों ने विरोध करके हुल्लड़ मचाया, कहीं पत्थर-ढेला भी फेंके गये, पर मालवीय जी अपना काम करते रहे और मीठी वाणी से विरोधियों को शान्त करते रहे। यही सच्चे धार्मिक जनों का लक्षण है।

महानता तथा सर्वप्रियता

उनकी ऐसी महानता को देखकर ही एक बहुत बड़े सरकारी अधिकारी श्री बी. एन. मेहता ने, जो संस्कृत और पाश्चात्य साहित्य दोनों के प्रकाण्ड विद्वान थे, कहा था—

"वे (मालवीय जी) बौनों और केकड़ों के समूह के बीच में दृढ़ चट्टान की भाँति खड़े हैं। उनका सुन्दर, साँचे में ढला-सा शरीर, जिसका प्रत्येक अवयव बाह्य-आन्तरिक सामंजस्य से दमक रहा है, उनकी निरन्तर तप की साधना, उनके उद्देश्य की महानता को समझकर, कौन ऐसा है जो बीसवीं शताब्दी के शंकर में समाविष्ट 'अति ब्राह्मण' को तुरन्त न पहचान लेगा? कैलाश पर्वत के शिखर की भाँति वे उज्ज्वल वस्त्रों में आच्छादित होकर ऊँची मूर्ति के समान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खड़े हैं । वे सृष्टि के आरम्भ में होने वाले उस कमल की तरह हैं जिसे कोई चीज दूषित नहीं कर सकती ।"

महात्मा गाँधी भी मालवीय जी के महान गुणों के कारण उनका बड़ा सम्मान करते थे । सन् १९३१ में विलायत-यात्रा के अवसर पर उन्होंने कहा था—

"मैं तो मालवीयजी महाराज का पुजारी हूँ । पुजारी स्तुति के ठीक वचन कैसे लिख सकता है ? जो कुछ लिखेगा उसे अपूर्ण-सा प्रतीत होगा । मालवीय जी के दर्शन मैंने सन् १८९० की साल में चित्र द्वारा किये थे । वही छवि मैं आज भी देख रहा हूँ । जैसे उनकी वेशभूषा में, वैसे ही उनके विचारों में पूर्ण ऐक्य चला आया है । इस ऐक्य में मैंने माधुर्य और शक्ति को पाया है । आज मालवीय जी के साथ देश-भक्ति में कौन मुकाबला कर सकता है ? यौवन काल से लेकर आज तक उनकी देश-भक्ति का प्रवाह अविच्छिन्न चलता आया है ।"

मालवीय जी धर्म-भक्त, देश-भक्त और समाज-भक्त होने के साथ ही सुधारक भी थे, पर उनके सुधार कार्य में अन्य लोगों से कुछ अन्तर था । अन्य सुधारक जहाँ समाज से विद्रोह, संघर्ष करने लग जाते हैं वहाँ मालवीय जी समाज से मिलकर चलने की पक्षपाती थे । वे सुधार अवश्य करते थे, जैसा उनके हरिजनों के मन्त्र-दीक्षा देने के कार्य से प्रकट होता है, पर उन्होंने उस कार्य को लोगों को समझा-बुझा कर और राजी करके ही किया । उनका मत था कि समाज से विद्रोह करके अथवा उससे पृथक होकर अपने नये रास्ते पर चलने से कोई ठोस कार्य नहीं कर सकते । उस अवस्था में समाज हमारी बात की तरफ ध्यान ही न देगा वरन् उल्टा उसका विरोध करेगा । जिससे सुधार का उद्देश्य कुछ भी पूरा न हो सकेगा । यही बात उन्होंने अपने भतीजे श्री कृष्णकान्त मालवीय को लिखी थी जब उन्होंने विधवाओं की समस्या पर एक लेख 'अभ्युदय' में लिखा । उसकी कई बातें मालवीय जी को अपने सिद्धान्तों के विपरीत जान पड़ी और उन्होंने कृष्णकान्त जी को एक पत्र द्वारा उनकी भर्त्सना करते हुए लिखा—

"तुम समाज का हित करना चाहते हो, समाज की सेवा करना चाहते हो, किन्तु समाज कभी तुम्हारी सेवा स्वीकार न करेगा—तुमको सेवा का अवसर ही न देगा—यदि तुम मर्म की बातों में समाज की मर्यादा का पालन न करोगे और समाज को मर्मवेधी वचन प्रकट रूप में कहकर दुखित और लज्जित करोगे । .... सत्कार्य का उत्साह प्रशंसनीय है, किन्तु तभी जबकि वह मात्रा और मर्यादा के भीतर रहे । यदि उत्साह की बाढ़ में विवेक और विचार को बह जाने दोगे तो समाज का कुछ भी उपकार न कर सकोगे ।"

यही कारण था कि मालवीय जी ने सुधार के कामों में कभी जल्दबाजी नहीं की और जो कुछ किया वह समाज को समझा-बुझा कर और साथ लेकर ही किया । उनका कहना था कि जब हम समाज का सुधार करना चाहते हैं, उसके कल्याण के लिये प्रयत्न कर रहे हैं तो उसके साथ रहकर ही वैसा किया जा सकता है । समाज से लड़कर उसकी निन्दा, बुराई करके तो और भी बिगाड़ होगा, सुधार की आशा कैसे की जा सकती है ? उन्होंने अछूतों के साथ होने वाले अन्याय को बहुत पहले अनुभव कर लिया था । उन्होंने सन् १९०८ में ही लिखा था—

"वर्तमान समय में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य सभी अपने कर्मों और धर्म से गिर गये हैं और सभी किसी न किसी प्रकार से दास बने हुए हैं । दास वृत्ति शूद्रों का लक्षण है, इसलिये हम लोग सब प्रकार से शूद्र हो गये हैं । ऐसी व्यवस्था में वर्णाश्रम धर्म कहाँ रहा ? सामाजिक दृष्टि से देखने और विचार करने से यही जान पड़ता है कि वर्णाश्रम-धर्म समाज और देश की स्थिति को स्थिर रखने और उसको समृद्ध बनाने का एक नियम है । पाश्चात्य देशों में जिसे 'डिवीजन आफ लेबर' अर्थात् कर्म विभाजन कहते हैं उसी को ऋषियों ने वर्णाश्रम-धर्म के नाम से कहा था और इस प्रकार का कार्य-विभाग क्रम सभी देशों में प्रचलित था और वास्तव में इसके बिना देश का काम चल नहीं सकता ।"

जिस व्यक्ति के प्राचीन धार्मिक परम्परा के विषय में ऐसे बुद्धि और तर्कसंगत विचार हों, उसे किसी भी वर्ग या श्रेणी की उपेक्षा करने वाला अथवा घृणा करने वाला कैसे कहा जा सकता है ? यह हो सकता है कि अनेक गर्म विचारों के अथवा उतावले स्वभाव के व्यक्ति उनकी कार्यप्रणाली को पसन्द न करें अथवा उसे प्रभावशाली न मानें पर स्थायी और ठोस कार्य के इच्छुक उसके महत्त्व को अवश्य स्वीकार करेंगे । मालवीय जी स्वभाव से ही यथासम्भव समझौते से कार्य को सिद्ध करने की नीति में विश्वास रखते थे और इसका परिणाम यह हुआ कि सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में ही नहीं राजनीतिक क्षेत्र में भी उन्होंने बड़ी-बड़ी कठिन समस्याओं को सुलझा दिया । यही कारण था कि राजनीतिक आन्दोलन के सम्बन्ध में अनेक बार थोड़ा-बहुत मतभेद रहने पर भी प्रत्येक दल को सिद्धान्त के छोटे-बड़े नेता उनका सम्मान करते थे—उनसे प्रेम करते थे । यद्यपि लाला लाजपतराय और मालवीय जी के राजनीतिक विचारों में पर्याप्त अन्तर और मतभेद था, पर उन्होंने मुक्त कण्ठ से कहा था—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"आफ आल द इण्डियन लीडर्स आई लव मालवीय जी द मोस्ट, दो आई रेस्पेक्ट गाँधी जी द बेस्ट ।" (समस्त भारतीय नेताओं में मैं मालवीय जी को सबसे अधिक प्रेम करता हूँ, यद्यपि सबसे अधिक सम्मान मेरी दृष्टि में गाँधी जी का है ।) इस बँटवारे को लाला जी ने 'सम्मान का समुचित' विभाजन माना था ।

मालवीय जी भिक्षुक के रूप में

मालवीय जी को अनेक विद्वानों ने 'भिक्षुक-सम्राट' की पदवी दी थी । निःसन्देह अधिकांश लोगों को एक छोटी-सी संस्था या सार्वजनिक समारोह के लिये हजार-पाँच सौ रुपया चन्दा इकट्ठा करने में ही पहाड़ को उठाने जैसा भार प्रतीत होता है । यद्यपि वे जानते हैं कि यह कार्य हम लोक-कल्याण के लिये कर रहे हैं और हमारा इसमें किसी प्रकार का स्वार्थ नहीं है, तो भी किसी के सामने हाथ पसारना उन्हें संकोचजनक ही जान पड़ता है । यह मालवीय जी का ही साहस था जो उन्होंने अकेले ही 'हिन्दू विश्वविद्यालय' जैसी विशाल संस्था को खोलने का संकल्प कर लिया और उसके लिये कई करोड़ रुपया इकट्ठा कर दिखाया । उनकी इस विशेषता का जिक्र करते हुए सेण्ट जॉन्स कॉलेज (आगरा) के रसायन-विभाग के प्राध्यापक ने 'प्रिंस आफ बैगर्स' (भिक्षुओं के राजा) शीर्षक से लेख लिखा था जिसमें उन्होंने कहा था—

"बहुत लोगों ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया है कि पिछले बीस वर्ष में भारत ने संसार को दो सर्वोच्च भिक्षुक दिये हैं जिनके सामने अन्य सब बौने ही जान पड़ते हैं, जैसे हिमालय के सामने अन्य सब पर्वत नगण्य जान पड़ते हैं । .... निःसन्देह उन दो में से एक तो महात्मा गाँधी हैं । हमारे ध्यान में उनके सिवा केवल एक ही व्यक्ति और है जिसे उनकी बगल में बिठाया जा सकता है, और वे हैं पंडित मालवीय जी । प्रत्येक कला के आचार्य की भाँति उनका अपना एक अलग ढंग और एक निराली पद्धति थी । वे छोटे आदमियों को परेशान नहीं करते थे, वरन् यह ध्यान रखते थे कि राजा, महाराजा, जगत-सेठ और करोड़पती उनकी तरफ आकर्षित हों ।"

"यह निश्चित है कि उनका ढंग और कार्यप्रणाली 'अर्द्ध नग्न फकीर' (महात्मा गाँधी) से भिन्न होगी । उत्तर प्रदेश के भिक्षुक के लिये यह स्वाभाविक था कि वह भिक्षा माँगने में अधिक शिष्ट और अधिक परिमार्जित ही नहीं अधिक शानदार भी हो । उनका यह ढंग उनके नितान्त निर्मल श्वेत वस्त्र, भव्य शरीर और मीठी मनोहारिणी वाणी से, बड़ी खूबी के साथ संतुलित जान पड़ता था ।" इसमें कोई सन्देह नहीं कि मालवीय जी के चन्दा माँगने पर यह प्राचीन दोहा पूरी तरह लागू होता था—

> मर जाऊँ माँगू नहीं, अपने हित के काज ।
> पर कारज हित माँगिबो, मोहि न आवै लाज ॥

मालवीय जी विश्वविद्यालय के निमित्त धन इकट्ठा करने में कहाँ तक आत्म-त्याग कर सकते थे इसका एक उदाहरण तब देखने में आया जब उन्होंने राजा बलदेवदास बिड़ला से एक बड़ी रकम प्राप्त की थी । बात यह हुई कि मालवीय जी ने सुना कि राजा बलदेवदास कुछ दान करना चाहते हैं, पर शर्त यह है कि कोई ब्राह्मण उसे गंगाजी में बैठकर ग्रहण करे । मालवीय जी इसके लिये तुरन्त तैयार हो गये । यद्यपि इष्ट मित्रों तथा काशी के पंडितों ने भी इसका विरोध किया पर मालवीय जी ने अपना विचार न बदला । जब राजा बलदेवदास जी को मालूम हुआ कि मालवीय जी जैसा सात्त्विक ब्राह्मण उनका दान लेने को तैयार है तो उनको आश्चर्य और प्रसन्नता दोनों हुए । उन्होंने दान की रकम भी काफी बढ़ा दी और गंगाजी के भीतर खड़े होकर दान की रकम का चैक कुशा हाथ में लेकर मालवीय जी को दान दे दिया । मालवीयजी ने भी उस एक लाख से अधिक रकम को कुछ रुपया अपनी तरफ से मिलाकर विश्वविद्यालय को दान कर दिया ।

विश्वविद्यालय के चन्दे के लिये मालवीय जी ने कहीं भी जाने और किसी से भी माँगने में संकोच नहीं किया । यद्यपि अलीगढ़ की मुस्लिम यूनीवर्सिटी के मुकाबले में 'हिन्दू-यूनीवर्सिटी' स्थापित होने की बात अनेक लोगों को बहुत 'अपील' करती थी, पर वह जमाना ऐसा था कि लोग सार्वजनिक कार्यों के महत्त्व को बहुत कम अनुभव करते थे और ऐसे कामों में प्राय. तभी भाग लेते थे जब सरकार को उसके अनुकूल समझ लेते थे । ऐसे लोगों में इलाहाबाद के ही एक रईस साँवलदास जी कक्कड़ थे । वे अंग्रेजी सरकार के बड़े भक्त थे और उच्च सरकारी अधिकारियों के सम्पर्क में रहते थे । उस समय अधिकांश लोग स्कूल-कॉलिजों आदि की स्थापना और व्यवस्था सरकार का कार्य और अधिकार समझते थे । ऐसे लोग जहाँ तक हो सकता था सार्वजनिक कार्यों से दूर ही रहते थे, क्योंकि उनको सन्देह रहता था कि शायद इस तरह कोई काम सरकारी अधिकारियों को नापसन्द हो । पर मालवीय जी मुहल्ले का पुराना परिचय होने के आधार पर उनके पास भी पहुँच गये और उनसे चन्दा ले आये । इस घटना का जिक्र करते हुए एक बार साँवलदास जी ने बतलाया था—

"एक दिन जब मैं दफ्तर के काम से जा रहा था, मालवीय जी मेरे पास चंदा के लिये आये और मैं उनकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनमोहिनी वाणी से इतना बेबस हो गया कि बिना तनिक भी सोचे-समझे उन्हें तुरन्त चैक दे दिया। बाद में मैं अक्सर सोचता था कि मुझे उस पर विचार करने के लिये कुछ समय लेना चाहिये था और इतनी जल्दबाजी नहीं करनी चाहिये थी परन्तु पण्डित जी के माँगने में कुछ ऐसी जादू की शक्ति थी जो रोकी नहीं जा सकती थी। उनके विषय में किसी उर्दू शायर का यह कथन बिल्कुल सच था—

असर लुभाने का प्यारे! तेरे बयान में है।
किसी की आँख में जादू, तेरी जबान में है॥

मालवीय जी का यह जादू वास्तव में उनकी निःस्वार्थ भावना ही थी। जो व्यक्ति अपनी अच्छी आमदनी और आराम के धन्धे को छोड़ कर सार्वजनिक कार्यों के लिये जगह-जगह दौड़ता फिरे और तरह-तरह की असुविधायें सहन करे उस पर कोई जल्दी स्वार्थपरता या चालाकी का सन्देह नहीं कर सकता था। जब लोग यह देखते थे कि मालवीय जी में इतनी योग्यता है कि वे वकालत द्वारा दस-पाँच हजार रुपया माहवारी पैदा करके ठाठ के साथ जीवन-यापन कर सकते हैं अथवा सरकार में कोई बड़ी पदवी पाकर यश और नामबरी का आनन्द भी उठा सकते हैं, पर फिर भी वे उस सबका त्याग करके तरह-तरह के झंझटों और कठिनाइयों से भरे मार्ग को अपना रहे हैं, तो निश्चय ही उन पर बड़ा प्रभाव पड़ता था। उनकी वाणी में जो ईश्वर प्रदत्त मधुरता और मोहित कर लेने वाली शक्ति थी। वह इस प्रभाव से मिलकर श्रोता पर एक अलौकिक प्रभाव डालती थी, जिससे सामान्य व्यक्ति ही नहीं बड़े-बड़े विद्वान् और मनीषी उनके अनुयायी बन जाते थे। उनकी इस विशेषता को लक्ष्य करके ही राष्ट्रकवि श्री मैथिलीशरण ने गाया था—

भारत को अभिमान तुम्हारा, तुम भारत के अभिमानी।
पूज्य पुरोहित थे हम सबके, रहे सदैव समाधानी॥
तुम्हें कुशल याचक कहते हैं, किन्तु कौन तुम-सा दानी।
अक्षय शिक्षा सत्र तुम्हारा, हे ब्राह्मण-ब्रह्म ज्ञानी॥
स्वयं मदन मोहन की तुम में, तन्मयता है समा गई।
कल्याणी वाणी जन-जन के, हित में धूनी रमा गई॥

मालवीय जी की तुलना प्राचीन समय के उन मुनि-ऋषियों से की जा सकती है कि जो राजा-महाराजा और श्रीमन्तों से सुवर्ण सहित हजारों गायों का दान लेकर उनके द्वारा गुरुकुलों का संचालन करते थे यद्यपि देश-काल में परिवर्तन हो जाने से अब बड़े-बड़े दान बैंकों के चैक द्वारा दिये जाते हैं और गुरुकुलों का स्थान आलीशान इमारतों में चलने वाले विद्यालयों ने ले लिया है, पर तथ्य की निगाह से दोनों में कोई अन्तर नहीं। यह मालवीय जी के तप-त्याग, और आत्म-समर्पण का ही परिणाम था कि वे अकेले करोड़ों का चन्दा प्राप्त कर सके और उसकी एक-एक पाई उन्होंने विश्वविद्यालय के निमित्त खर्च कर दी।

मालवीय जी और देश-भक्ति

हमने कभी-कभी किसी के मुँह से सुना है कि—"मालवीय जी राजभक्त थे, अंग्रेजों से मिलकर रहते थे, इसलिये उनको देश-भक्त नहीं कहा जा सकता।" हम अच्छी तरह जानते हैं कि जो लोग ऐसी बातें मुँह से निकालते हैं वे स्वयं सिवाय बातें बनाने वाले के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं होते। वे सार्वजनिक हित के लिये कोई त्याग, कष्ट सहन नहीं करते, पर दूसरों की आलोचना करके ही वे स्वयं बड़े देश-भक्त अथवा राजनीतिज्ञ बनना चाहा करते हैं।

मालवीय जी की देश-भक्ति उथली, दिखावटी अथवा सामयिक नहीं थी। वे आरम्भ से ही राष्ट्रीयता तथा देश-भक्ति के मूल तत्त्व को जानते थे और भारतवर्ष में उसका अभाव देखकर उसके प्रचार का प्राणपण से उद्योग करते रहते थे। इस सम्बन्ध में उन्होंने अब से साठ वर्ष पूर्व एक लेख में इस विषय पर विचार करते हुए लिखा था—

"राष्ट्रपिता किसे कहते हैं? राष्ट्रपिता उस भाव का नाम है जो कि देश के सम्पूर्ण निवासियों के हृदय में देश हित की लालसा के साथ व्याप्त रहा हो, जिसके सामने अन्य सब भाव नीची श्रेणी में रहते हों। भारत में यह राष्ट्रीय भाव कैसे पैदा हो? प्रत्येक भाव में भक्ति और प्रेम होते हैं। प्रकृति का यह नियम है कि मनुष्य जिस वस्तु से प्रेम रखता है उसका दास बन जाता है और उसके आगे अन्य वस्तुओं को तुच्छ समझता है। धन से प्रेम रखने वाले धर्म और यश की कुछ भी अपेक्षा नहीं करते। इसी प्रकार जिनको धर्म और यश प्यारा है, उनके आगे धन मिट्टी के समान है। एक युवक विद्या के उपार्जन में समस्त विषय-भोगों का परित्याग कर देता है और दूसरा खेल-कूद में ही अपना समय बिताता है। एक दयालु आत्मा को तो दूसरों के साथ इतनी सहानुभूति होती है कि उनके दुःख से वह प्रति क्षण व्यग्र रहता है, और दूसरी ऐसी भी आत्मा होती है जो 'आप मरै जग परलै होय' की कहावत पर ही चलती है। कुछ ऐसे पुरुष हैं जो गवर्नमेन्ट की खैरख्वाही के पुछल्लों के लिये सच-झूठ बोल, न्याय-अन्याय का विचार न कर, दिन-रात खुशामद में ही लगे रहते हैं, और दूसरे ऐसे भी हैं जिनके प्रेम और भक्ति का विषय अपनी मातृ-भूमि ही है। वे सच्चे सपूत दिन-रात कष्ट और हानियाँ उठाते हुए भी देश का हित करने में ही मग्न रहते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"जब देश में इसी भाव की बहुत-सी आत्मायें उत्पन्न हो जाती हैं और उन सबका मन मिल जाता है तो वे एक ही उद्देश्य रखते हुए, अपने सच्चे प्रयत्नों से अपने आपको नमूना-अगुआ बनाते हुए, आपत्तियाँ झेलते हुए समस्त देशवासियों के हृदय में देश-भक्ति के भाव उत्पन्न कर देते हैं। थोड़े दिनों में देश की सब लोगों में प्रेम और भक्ति का विषय हो जाता है और मतभेद, वर्णभेद, जातिभेद के होते हुए भी राष्ट्रीयता का श्रेष्ठ भाव देशव्यापी हो जाता है। जापान राष्ट्रीयता की इस श्रेणी पर पहुँच चुका है। जापानियों में बौद्ध, ईसाई और अन्य मतावलम्बी भी हैं परन्तु यदि किसी से पूछा जाये कि आप कौन हो, तो वह अपने को बौद्ध, ईसाई अथवा अन्य मतावलम्बी नहीं बतायेगा, किन्तु कहेगा कि मैं जापानी हूँ। मेरा धर्म जापान है, मेरा कर्म जापान है, मैं जापान हूँ और मेरा सर्वस्व जापान है।"

आगे चलकर बतलाया है कि भारतवासी प्राचीन काल में धर्म को ही सब कुछ मानते थे। पर जैसा आजकल हो रहा है धर्म को एक तमाशा बना लेना मूर्खता है। धर्म की आड़ में अपनी काहिली, निर्बलता और मानसिक अयोग्यता को छिपाना नाश का कारण होता है। सच्चा धर्म वही है जो देश-भक्ति द्वारा प्राप्त हो। देश-भक्ति का संचार हमारे हृदय से स्वार्थ को निकाल कर फेंक देगा। हम अदूरदर्शी, स्वार्थी और खुशामदियों की तरह ऐसे कार्य कदापि न करें जिनसे कि देशवासियों को हानि पहुँचे, बल्कि दूरदर्शी, परमार्थी, सत्यशील और दृढ़ताप्रिय आत्माओं की भाँति असंख्यों कष्ट उठाते हुए भी वही करेंगे, जिसमें देश का भला हो, निर्धन धनवान, निर्बल बलवान और मूर्ख भी बुद्धिमान हो जायें। प्रत्येक प्रकार के सामाजिक दुःख मिटें और दुर्भिक्ष आदि विपत्तियाँ दूर होकर बिलबिलाती हुई आत्माओं को सुख पहुँचे। देश-भक्ति द्वारा इतने धर्मों का सम्पादन होता हुआ देखकर भी यदि कोई धर्म के आगे देश-भक्ति को कुछ नहीं समझता, तो जान लीजिये कि वह यह नहीं जानता कि 'धर्म' क्या वस्तु है। प्रायः हमारे देश-भाइयों का विचार है कि ईश्वर का भजन और उपासना करनी चाहिये जिससे परलोक सँभले, और झगड़ों में क्या रखा है! वास्तव में झगड़ों में कुछ नहीं रखा है, परन्तु देश-भक्ति उन झगड़ों में शामिल नहीं है। यह धर्म का एक साधन है, और जैसे कि गृहस्थाश्रम का पालन किये बिना संन्यास ग्रहण करना अधर्म है, उसी प्रकार बिना देश-भक्ति किये मत-मतान्तरों में पड़े रहना गलत है।

महामना मालवीय जी के हृदयोद्‌गार बतलाते हैं कि वे देश-भक्ति को साधारण कर्तव्य ही नहीं वरन् एक परम-धर्म मानते थे। जिसके बिना ठाकुरजी की कोरी भजन-पूजा या एकान्त स्थान में बैठकर मन्त्र जप करना निरर्थक हो जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि धर्म के लिये जीवन अर्पण कर देने वाले मालवीय जी जो बात साठ वर्ष पहले कह चुके हैं वह आज युग-निर्माण योजना के अन्तर्गत कही जा रही है। केवल मन्दिर में जाकर भगवान की मूर्ति के दर्शन कर लेने, उनकी पूजा या स्तुति करने, घर के एक कोने में बैठकर घण्टा-दो-घण्टा जप या पाठ कर लेने से ही धर्म का साधन नहीं हो सकता। ये सब धर्म की प्रेरणा देने वाली विधियाँ हैं। शास्त्रों में पुकार-पुकार कर कह दिया है 'परोपकाराय सतां विभूतयः'—बिना दूसरों के कष्ट में सहायता पहुँचाये, बिना नीचे गिरे हुओं को ऊपर उठाये धर्म की प्राप्ति नहीं हो सकती। मालवीय जी इस तथ्य को बहुत अच्छी तरह समझते थे। इसीलिये जहाँ वे शारीरिक शौच के लिये गंगाजी की मिट्टी लेकर विलायत जाते थे और रेल में यात्रा करते हुए भी ब्रह्म-मुहूर्त में स्नान, ध्यान, तिलक आदि कर लेते थे वहाँ वे देश के प्रत्येक आन्दोलन में, प्रत्येक कठिन समस्या के अवसर पर मैदान में आगे बढ़कर महत्त्वपूर्ण कार्य करने से भी कभी पीछे नहीं हटते थे। उनके इसी गुण को देखकर भारत के प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने लिखा था—

"मालवीय जी में अनेक गुण थे, किन्तु उनके जीवन में दो प्रधान धारायें थीं—पहली भारतीय सनातन धर्म-परम्परा में उनका गहन विश्वास, और दूसरी उनकी उत्कृष्ट देश-भक्ति। वस्तुतः ये दोनों उनमें मिलकर एक हो गई थीं—धर्म ही उनका देश था और देश ही उनका धर्म। एक से जुदा दूसरे को वे देख नहीं सकते थे। इसलिये अनेक समाज-सुधारकों और देश-नेताओं से उनका मत न मिलता था, परन्तु इस मतभेद के बावजूद गंगा की निर्मलता को लेकर चलने वाला उनका व्यक्तित्व देश को संकट में देखकर उस पर सर्वस्व न्यौछावर कर देने के लिये आतुर हो उठता था। अपने धर्म विश्वास में निष्ठा रखते हुए भी हृदय के ऐसे कोमल और उदार थे कि किसी को भी दुःख और कष्ट में देख नहीं पाते थे। अस्पृश्यता मानकर भी वे अस्पृश्यों के लिये रोते थे, अपने धर्म में अडिग रहते हुए भी वे दूसरे धर्मावलम्बियों का आदर और सम्मान करते थे। उपदेश देने के स्वभाव के बावजूद वह सेवा के लिये कष्ट सहने को आगे आ जाते थे।"

सच्चे महापुरुषों का यही लक्षण होता है कि उनके घर के या उनके दल वाले ही उनका गुणगान नहीं करते वरन् मतभेद रखने वाले, उदासीन और प्रतिपक्षी भी उनकी प्रशंसा करते हैं। कारण यही होता है कि वे जो कुछ करते हैं वह परोपकार की भावना से होता है, उसमें प्यार और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निःस्वार्थता का पूरा समावेश होता है। यही कारण है कि यद्यपि कांग्रेस के कर्णधार श्री जवाहरलाल नेहरू का मन मालवीय जी के धार्मिक और राजनीतिक विचारों से बहुत भिन्न था और उन्होंने कभी उनके साथ मिलकर काम नहीं किया, पर जब अवसर आया तो उन्होंने उनके प्रति पूर्ण श्रद्धा की भावना प्रकट की और उनके चरित्र को अनुकरणीय बतलाया। उन्होंने कहा था—

"हमारे सामने तो कई ऐसी मिसालें हैं जिनसे हम सीख सकते हैं—आजकल के लोग, आजकल के नौजवान बहुत कुछ सीख सकते हैं, मालवीय जी के जीवन से। उनके सामने जो लक्ष्य था, जैसे उन्होंने काम किया और सफलता पाई, इन सबसे हम मूर्तियाँ खड़ी करें, संस्था बनायें, यह तो ठीक है, लेकिन आखिर में सबक सीखें उनकी जिन्दगी से, उनके काम से और सीखकर उसी रास्ते पर चलें। आजकल के जमाने में उसको समझकर चलें और आगे बढ़ेंगे तो यही उनका सबसे बड़ा स्मारक हो सकता है। यह अच्छा है कि समय आया उनकी शताब्दी मनाने का, तो पुराने और नये लोग सब फिर सोचें, विचार करें, और सीखें कि वे क्या-क्या बातें थीं, जिनसे मालवीय जी इतने बड़े पुरुष हुए, कैसे उन्होंने भारत की आजादी के रास्ते में, अपनी संस्कृति का आदर करने के रास्ते में सबको बढ़ाया, और यह कि उनके बतलाये रास्ते पर चलकर हम भारत की सेवा किस तरह करें और आगे बढ़ें?"

महान् पुरुषों के सम्मान का सच्चा मार्ग यही है कि उनके विचारों को समझा जाये और जितना सम्भव हो उनके अनुसार कार्य करके दिखाया जाये। केवल उनकी जय-जयकार करना, उनके चित्र और मूर्तियाँ स्थापित कर देना, उनके नाम पर सड़क, पार्क या अन्य कोई स्मारक बना देना, उनका वास्तविक सम्मान करना नहीं माना जा सकता। महान् पुरुष इस हाड़-माँस के सौ-पचास वर्ष स्थिर रहने वाले शरीर को अधिक महत्त्व नहीं देते। वे तो अपने सत्कार्यों और उनसे होने वाले जन-साधारण के हित को ही महत्त्वपूर्ण समझते हैं। उनका वह यश रूपी शरीर सैकड़ों-हजारों वर्षों तक स्थिर रहता है, इसलिये वे लोगों को उसी को अधिक महत्त्व देने तथा उससे प्रेरणा लेकर समाज और व्यक्तियों की सेवा करने का ही उपदेश देते हैं। पाठकों का कर्त्तव्य है कि वे जवाहरलाल जी के कथन का मर्म समझें और नेताओं तथा देशभक्तों का बाह्य सम्मान करके साथ ही उनकी शिक्षाओं को अपने जीवन में क्रियान्वित करके दिखलावें।

परोपकार और उदारता

मालवीय जी का हृदय बड़ा कोमल और भावनायें अत्यन्त उदार थीं, इसलिये अनेक बार दोषी व्यक्तियों की भी सहायता करने को उद्यत रहते थे और यदि किसी से त्रुटि हो जाती तो उसे पुनः अवसर देने को शीघ्र ही तैयार हो जाते थे। वे देशभर में सबसे बड़े विश्वविद्यालय के कुलपति (वाइस चांसलर) थे और इस कारण उनके पास सदैव ही कोई न कोई छात्र किसी न किसी तरह की सहायता के लिये आया ही करते थे। जैसा हम अन्यत्र बतला चुके हैं उन्होंने अपने कार्यकाल में न जाने कितने विद्यार्थियों की फीस माफ कराके, कितनों को अपने पास से आर्थिक सहायता देकर विद्याभ्यास का अवसर दिया। इसके फलस्वरूप सैकड़ों युवक जीवन सफलता पाकर सद्मार्ग पर चलने योग्य हो गये। यदि उनकी उस समय सहायता न की गई होती तो वे असफल जीवन ही व्यतीत करते और अनेक कुमार्ग पर चलने वाले भी बन जाते। श्री कृष्णदास नामक सज्जन ने अपना स्वानुभव लिखते हुए मालवीय जी की उदारता का वर्णन इन शब्दों में किया था—

"मैं एम. ए. पास किस प्रकार हुआ? आज तक सपने में जब उस घटना को देखता हूँ तो चौंक उठता हूँ। अगर मालवीय जी महाराज का विशेष अनुग्रह न होता, यदि उन्हें मेरी सत्यवादिता पर अटूट विश्वास न होता, तो मैं अकारण अपमानित होकर उस विश्वविद्यालय से निकाला जाता, जिसका जर्रा-जर्रा मेरे लिये शिवालय था।"

"उन दिनों राजनीतिक संघर्ष की लहर तेजी के साथ बह रही थी। मैं उसमें आपाद-मस्तक डूबा हुआ था। मुझे कक्षा में जाने और पढ़ने-लिखने तक की फुर्सत न थी। अपनी समझ में मैं अपने जीवन का हर क्षण उस संघर्ष से जूझने में व्यतीत कर रहा था। नतीजा यह हुआ कि मेरा नाम कट गया, हाजिरी गायब हो गई। मैं जितने दिन कक्षा में जाकर बैठा उसका कोई लेखा-जोखा न रहा। परीक्षा में बैठने की मुझे अनुमति मिलेगी या नहीं, यह संदिग्ध हो गया। तत्कालीन रजिस्ट्रार मेरे सख्त विरोधी थे। मगर मेरे प्रोफेसर श्री मुकुटबिहारीलाल ने मेरी सारी बकाया फीस जमा कर दी। वह मेरी 'राजनीतिक कारगुजारियों' से बहुत ज्यादा प्रभावित थे। समस्या हाजिरी की आई। आचार्य गुरुमुखनिहालसिंह घनघोर देश-भक्त और विद्यार्थी वात्सल्य महानुभाव थे। उन्होंने मेरी हाजिरी की समस्या अपनी सिफारिश से हल कर दी। रजिस्ट्रार महोदय अब भी सन्तुष्ट न थे। मालवीय जी महाराज के सामने मेरा मामला पेश हुआ। उन्हें मेरी सारी राजनीतिक हरकतों का पूरा पता था। उन्होंने कहा—"ऐसे देश-भक्त नवयुवक को परीक्षा में बैठने का अवसर न देना सर्वथा अनुचित होगा।" मुझे अनुमति मिल गई।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"इसके बाद एक कठिन समस्या और आई। ऐच्छिक विषयों को फार्म में भरते समय मुझसे गलती हो गई और यह उस समय पकड़ी गई जब मैं परीक्षा देने को अपनी सीट पर पहुँच गया। अन्त में मेरा मामला मालवीय जी के सामने पेश हुआ। उस समय प्रो-वाइस चांसलर राजा ज्वालाप्रसाद, पण्डित बल्देवप्रसाद दुबे, पण्डित कन्हैयालाल, बा. शिवप्रसाद गुप्त आदि भी उपस्थित थे। मालवीय जी ने मुझे देखते ही कहा—"मुझे तुमसे ऐसी आशा न थी।"

मैंने काँपते स्वर में कहा—"बाबू, आप मुझे बेईमान न समझें। मुझे एम. ए. की डिगरी न मिले न सही। आपकी नजरों से उतर जाना मेरे लिये असह्य होगा।" उस समय मेरी आँखों से आँसुओं की अनवरत धारा प्रवाहित हो रही थी। यह देखकर भोले बाबा का आसन डोल गया। उन्होंने अपने सचिव पं. त्रिलोचन पंत को आदेश दिया—"इस लड़के को मेरी गाड़ी में ले जाओ और रसगुल्ला खिलाकर वापस ले आओ। उप-कुलपति की कार में अपराधी विद्यार्थी रसगुल्ला खाने को चल पड़ा।"

सारांश यह है कि मालवीय जी ने नवयुवक की नेकनीयती पर विश्वास करके उसे क्षमा ही नहीं कर दिया वरन् एक विषय में फिर से परीक्षा लेने का आदेश देकर उसे सम्मान सहित उत्तीर्ण होने का अवसर भी दिया।

जब श्री कृष्णदास परीक्षोत्तीर्ण होकर विश्वविद्यालय छोड़ने के पहले मालवीय जी के दर्शन करने गये तो उन्होंने कहा—"तुम्हारी शरारतों और बदमाशियों के कारण सभी लोग मुझसे नाराज रहते हैं। मगर मैं जानता हूँ कि तुम आगे चल कर अवश्य कुछ करोगे। अपनी माँ—मातृ-भूमि के ऋण को भूलना मत। उसे तुम जैसे तरुणों से बहुत आशा है।" इसके पश्चात् जब कई बार राजनीतिक आन्दोलनों में जेल काटकर सन् १९४४ में वे पुनः मालवीय जी के पास पहुँचे तो मालवीय जी के पुत्र गोविन्द जी ने विनोद में कहा—"बाबू! बदमशवा आ गया। कई वर्ष की सजा काट आया है।" उस समय वे बीमारी और अत्यन्त कमजोरी के कारण बिस्तर पर ही पड़े रहते थे। तो भी उन्होंने श्री कृष्णदास को पास बुलाया और उनके सर पर हाथ फेरते हुए कहा—"गोविन्द, देखो मैंने कहा था न कि यह लड़का आगे चलकर कुछ करेगा। इसने मेरे मुँह की लाली रख ली।"

इसी प्रकार एक अन्य नवयुवक जो विश्वविद्यालय के कार्यालय में नौकर था, कम वेतन में खर्चा न चला सकने के कारण अपने पास जमा होने वाले रुपये में से बीस रुपया महीना गुप्त रूप से निकालने लग गया। जब यह रकम दो हजार रुपया के लगभग हो गई तो भेद खुला। वह चुपचाप अपने घर चला गया और शर्म के मारे उसने विष खाकर आत्म-हत्या का प्रयत्न किया। पर वमन हो जाने से उसकी जान बच गई। विश्वविद्यालय के अधिकारी पुलिस में रिपोर्ट करके उसे गिरफ्तार कराने की व्यवस्था कर रहे थे, पर उसके एक सम्बन्धी ने मालवीय जी से मोहलत माँग कर उसका पता लगाने की चेष्टा की और अपराधी के मुख से सब कच्चा चिट्ठा सुनकर उसके घरवालों से दो हजार रु. विश्वविद्यालय को चुका देने को समझाया। विश्वविद्यालय के अधिकारी फिर भी पुलिस को इत्तला देने पर गौर दे रहे थे, पर मालवीय जी ने निर्णय किया कि इससे एक युवक का भविष्य नष्ट हो जायेगा न मालूम वह कौन-सा कुकृत्य कर बैठे। अन्त में उसे क्षमा कर दिया गया।

एक बिगड़े हुए कश्मीरी परिवार के गुण्डा स्वभाव के छात्र ने एक दिन होस्टल में किसी वेश्या को बुलाकर अपने इष्ट-मित्रों के बीच में नाच कराया। समाचार मिलने पर मालवीय जी भी वहाँ पहुँच गये। कुछ लड़के वहाँ से भागने लगे, पर मालवीय जी ने सबको बैठने को कहा और कहने लगे—"बच्चो! जिस मार्ग पर तुम चल रहे हो, इसका परिणाम बहुत बुरा है। बड़ी आशा करके तुम्हारे माता-पिता ने तुमको हमारे भरोसे यहाँ अध्ययन करने के लिये भेजा है। युवावस्था में कुसंगत में पड़कर प्रायः लड़के कुमार्ग में चले जाते हैं, पर जब उसका दोष समझ में आ जाये तो उसे छोड़ देना चाहिये।" मालवीय जी के ऐसे स्नेहपूर्ण भाव से दिये गये उपदेश से वह लड़का संकोच से दब गया, सर नीचा करके इतना ही कह सका—"महाराज क्षमा कीजिये!" मालवीय जी ने कहा—"शाबास! अच्छा हम जाते हैं।"

मालवीय जी वाइस-चांसलर थे। वे उस विद्यार्थी को कैसा भी दण्ड दे सकते थे। उन्होंने पूरी उदारता और प्रेम-भावना से काम लिया। परिणाम यह निकला कि उन बिगड़े हुए छात्रों ने बुरे रास्ते को बिल्कुल छोड़ दिया और बाद में वह काश्मीरी लड़का परीक्षोत्तीर्ण होकर कहीं इन्जीनियर हो गया।

मालवीय जी की इन्हीं विशेषताओं का नतीजा था कि धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक सभी क्षेत्रों में पचास-साठ वर्ष काम करने के बाद भी उनका कभी किसी से मनोमालिन्य अथवा द्वेष-भाव नहीं हुआ। मतभेद होने से अनेक लोग उनसे पृथक रहते थे, कभी-कभी उनके किसी काम का विरोध भी करते थे, पर उनकी मधुर वाणी, प्रेम-भावना और उदार-व्यवहार के कारण व्यक्तिगत रूप से उन सबका सम्मान ही करते थे। भारतवासी ही नहीं श्री सी. एफ. एण्ड्रूज जैसे भारत-भक्त अंग्रेज ने भी उनके सम्बन्ध में ऐसी ही सम्मति प्रगट की थी—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"जो लोग उनके निकट सम्पर्क में आये उन्होंने उनको अत्यन्त सौम्य और आकर्षक ही पाया । कोई भी व्यक्ति यहाँ तक कि स्वयं महात्मा गाँधी भी असंख्य हिन्दू जनता को इतने प्रिय नहीं जितने कि मालवीय जी ।"

मालवीय जी कितने अधिक लोकप्रिय और जनता के श्रद्धाभाजन थे इसका प्रत्यक्ष उदाहरण १२ नवम्बर, १६४६ को देखने में आया जबकि मालवीय जी का देहान्त होने पर काशी में उनकी अर्थी का इतना बड़ा जुलूस निकला कि जितना उससे पूर्व कभी देखने में न आया । उनके अन्तिम दर्शन करने को विश्वविद्यालय में ही इतनी अधिक भीड़ टूट पड़ी कि उसकी व्यवस्था कर सकना असम्भव हो गया । जिसे देखो वही शोकमग्न दिखाई पड़ता था, हजारों व्यक्ति आँसू बहा कर व्याकुल हो रहे थे ।

मालवीय जी का चरित्र सबके लिये यह शिक्षा देता है कि सामान्य धार्मिक या सामाजिक मतभेदों पर अधिक जोर देना या उनके कारण अपनी शक्ति और समय को बर्बाद करना बुद्धिमानी का चिह्न नहीं है । इन विषयों में लोगों के विचारों और व्यवहार में भिन्नता होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है । सब मनुष्य कभी एक विचार के नहीं हो सकते । पर यदि इस प्रकार के अन्तर को महत्त्व देकर हम स्वयं सत्य और न्याय सिद्धान्तों की रक्षा करते हुए अपने मार्ग के अनुसार ही लोगों की भलाई के कार्य करते रहें तो हमारा जीवन अवश्य सार्थक हो सकता है । सच्चे काम करने वाले और उदार चरित्र सज्जनों की प्रशंसा अपरिचित और उदासीन व्यक्ति भी करते थे ।

धैर्य और ईश्वर विश्वास

यद्यपि मालवीय जी का अधिकांश समय हिन्दू विश्वविद्यालय के संचालन तथा राजनीतिक कार्यों में लगता रहता था, आध्यात्मिक कर्त्तव्यों का पालन करने में उन्होंने कभी शिथिलता नहीं आने दी । वे हृदय से सच्चे आस्तिक थे और भगवान की कृपा पर पूरा विश्वास रखते थे । इसके परिणामस्वरूप उनको समय-समय पर ऐसे अनुभव होते रहते थे, जिनको परमात्मा के सिवाय कुछ नहीं कहा जा सकता । हिन्दू विश्वविद्यालय का काम बहुत बड़ा था और उसमें चाहे जब लाखों रुपया के खर्च की आवश्यकता पड़ जाती थी । पर उनका कोई काम रुकता न था और समय पर कहीं न कहीं से आ ही जाता था । ऐसे अवसर पर मालवीय जी के प्रेमाश्रु आ जाते थे कि भगवान उनके लिये कितना कष्ट उठाते हैं ?

हिन्दू विश्वविद्यालय के भीतर भगवान विश्वनाथ का एक मन्दिर बनाने का निश्चय किया गया था । यह एक बड़ा काम था, क्योंकि मालवीय जी इसे दस-बीस लाख रुपया लगाकर ऐसा दर्शनीय बनाना चाहते थे कि वह विश्वविद्यालय के अनुरूप समझा जाये । पर विश्वविद्यालय की आन्तरिक व्यवस्था का भार और व्यय इतना अधिक था कि कार्यारम्भ करने पर भी वह कई वर्ष तक ज्यों का त्यों पड़ा रहा । अपनी ७५वीं वर्ष-गाँठ पर आयोजित उत्सव पर उन्होंने इस सम्बन्ध में कहा—

"इस मन्दिर के लिये क्या कहूँ । यह अब तक क्यों नहीं बना इसलिये मुझे बड़ा दुःख है । पचास मील पैदल चलकर एक तपस्वी महात्मा आये और इसकी नींव रख गये, तब से यह अभी तक नहीं बन सका । पर इसका सब दोष मुझ पर ही है । आप घबराइये नहीं विदेशों में भी बड़े-बड़े भवनों के बनने में यों ही देर होती है । कुकुरमुत्ता तो यों ही उग आता है, पर बड़े वृक्ष के बढ़ने में समय लगता है । मैंने इसके लिये काफी समय नहीं दिया, इसकी मुझे बड़ी शर्म है । पर अभी मेरा इस वर्ष का कार्यक्रम है, आप विश्वास रखें, मैं अभी नहीं मरूँगा (इसके ठीक दस वर्ष बाद ८५ वर्ष की आयु में ही उनका देहान्त हुआ) । शरीर छूटने पर भी मैं नहीं मरूँगा, बल्कि हिन्दू विश्वविद्यालय में या यहीं कहीं जन्म लेकर हिन्दू जाति और देश की सेवा करूँगा ।" इस विशाल मन्दिर को मालवीय जी अपने सामने ही बहुत कुछ पूरा करा गये और मरते समय सेठ जुगलकिशोर बिड़ला से प्रतिज्ञा करा गये कि वे इसे पूर्ण करा देंगे ।

उनका यही धैर्य और भगवान पर अटल विश्वास उनके बड़े पुत्र श्री रमाकान्त मालवीय की मृत्यु के समय देखा गया । वृद्धावस्था में अपने पुत्र का निधन अपनी आँखों से देखना पड़े इससे बड़ा दुर्भाग्य और क्या हो सकता है ? पर विधि का विधान ऐसा ही था । जब मालवीय जी की आयु ८२ वर्ष की थी तो रमाकान्त बहुत बीमार हो गये और बड़े-बड़े चिकित्सकों द्वारा इलाज किये जा सकने पर भी उनकी प्राण रक्षा न की जा सकी । एक दिन जब उनकी हालत बहुत बिगड़ गई थी और वे भयंकर कष्ट पा रहे थे तो लोगों ने जाकर मालवीय जी से कहा—"महाराज, रमाकान्त जी इस समय घोर कष्ट में हैं । अब कुछ रह नहीं गया है, केवल प्राण अटके हैं । वे आपके आज्ञाकारी पुत्र हैं, बिना आपकी आज्ञा के प्राण नहीं छोड़ेंगे, आप उनका कष्ट से जल्दी उद्धार कीजिये ।" मालवीय जी तुरन्त लाठी टेकते हुए उनके सामने जाकर खड़े हो गये और कुछ क्षण देखने के पश्चात् कहा—'बेटा ! तुम्हें बड़ा कष्ट हो रहा है, अब तुम जाओ ।' रमाकान्त जी की आँखें ज्वर की तीव्रता से निकली पड़ती थीं सदा के लिये बन्द हो गईं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साहित्यिक-ऋषि : रवीन्द्रनाथ टैगोर

इंग्लैण्ड में जाड़े का मौसम कितना कठिन और कष्टप्रद होता है इसे भुक्त भोगी जानते हैं। मोटे-मोटे ऊनी कपड़े लाद लेने पर भी शीत से पीछा नहीं छूटता। ऐसे ही एक दिन महाकवि रवीन्द्र लन्दन की एक सड़क पर जा रहे थे। चलते-चलते उन्होंने देखा कि मार्ग के पास ही एक भिक्षुक खड़ा है। उसके फटे जूतों में से उसके पैर दिखाई पड़ रहे थे क्योंकि उसके पास मोजे नहीं थे। कपड़ों की कमी से शरीर भी कुछ खुला था। इंग्लैण्ड में भीख माँगना कानूनन जुर्म माना जाता है, इसलिये उसने कुछ कहा तो नहीं पर एक क्षण के लिये अर्थपूर्ण दृष्टि से देखता रहा। रवि बाबू का हृदय उसकी दीनता पर द्रवित हो गया और उसके हाथ पर एक गिन्नी (सुवर्ण मुद्रा) रखकर आगे चल दिये। एक मिनट बाद ही दौड़ता हुआ वह इनके पास आया और कहने लगा—"महोदय, आपने भूल से मुझे गिन्नी दे दी है।" यह कहकर वह उसे वापस करने लगा। जब रवि बाबू ने आश्वासन दिया तब वह उसे लेकर गया।

इस छोटी-सी घटना से जहाँ महाकवि की दयार्द्र प्रकृति का पता लगता है वहाँ यह भी विदित होता है कि इंग्लैण्ड जैसे "रुपया परस्त" समझे जाने वाले देश के निवासी हम "संसार को नश्वर" कहने वाले लोगों की अपेक्षा कितने अधिक ईमानदार और सत्य-व्यवहार करने वाले हैं। एक गरीब भिखारी की तो बात क्या यहाँ के अधिकांश सफेदपोश बाबू और धनी व्यक्ति भी भूल से किसी से कुछ अधिक पा जायें तो उसे चुपके से जेब के हवाले करते हैं। इतना ही क्यों हमने प्रायः सेठ साहूकारों को तरकारी मण्डी में सौदा तुल जाने पर छोटी के बदले बड़ी चीज लेने का प्रयत्न करते देखा है। भाव-ताव और लेन-देन में झूठ व्यवहार को यहाँ अधिकांश व्यक्ति एक बुराई के बदले 'चतुरता' समझते हैं। इतने पर भी हम अपने को संसार भर में सबसे अधिक धार्मिक और आदर्शवादी मानते हैं। इस दम्भ का कुछ ठिकाना नहीं है।

रवि बाबू का यह अनुभव कुछ निराला नहीं था। एक अन्य अवसर पर उन्होंने जेब में छोटा सिक्का न होने पर स्टेशन के एक कुली को एक आने के बदले एक शिलिंग (१२ आना) दे दिया तो वह कुछ देर बाद उसे लौटाने आया, क्योंकि वह अपनी नियत मजदूरी के सिवाय और कुछ लेना बुरा समझता था। ऐसे ही अन्य अनेक उदाहरण भारतीय सज्जनों के पढ़ने को मिलते हैं, जिनसे विदित होता है कि लेन-देन और व्यवहार में सत्यता का पालन करना उनका स्वभाव बन गया है, जबकि हमारे यहाँ बालकों को छोटेपन से ही ऐसी बातों में चालाकी और तिकड़म बरतने की प्रेरणा दी जाती है। निःसन्देह यह एक शोचनीय मनोवृत्ति है, और हमको इस सम्बन्ध में रवि बाबू के भ्रमण वृत्तान्त में वर्णित इन घटनाओं से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

इसी 'भ्रमण वृत्तान्त' में एक और ध्यान देने योग्य बात रवीन्द्रनाथ का स्वदेशी प्रेम और भारतीय होने का गर्व अनुभव करना है वैसे इनका ठाकुर परिवार हर तरह से 'आधुनिक' था। इनके सबसे बड़े भाई सत्येन्द्र नाथ ठाकुर जो अहमदाबाद में जज थे, अंग्रेजीयत के इतने प्रेमी थे कि उनके सभी बच्चे प्रायः इंग्लैण्ड में ही रहते थे। उन्होंने रवीन्द्र को भी इसलिये अपने पास बुलाकर रखा था कि इंग्लैण्ड-यात्रा के पहले अंग्रेजों का सा रहन-सहन सीखलें। पर बड़ी कोशिश करने पर इनमें कोई परिवर्तन न हो सका और ये उस १७ वर्ष की युवावस्था में इंग्लैण्ड में भारतीय पोशाक में ही रहा करते थे। इस कारण अनेक बार उनको असुविधा भी उठानी पड़ती थी और रास्ते में बीसियों लोग एक तमाशे की तरह उनको देखने के लिये दौड़-दौड़ कर आते थे। स्कूल के बालक तो उनकी खूब हँसी उड़ाते थे और कभी कोई उद्दण्ड लड़का चिल्लाकर कहता—'अरे इस काले को देखो।' पर रवि बाबू ऐसी बातों से कभी संकुचित, लज्जित नहीं हुए। उन्होंने किसी प्रकार के दबाव से विलायती कोट, पेन्ट और टाई धारण करना स्वीकार न किया।

भारतवासियों में विदेशी शासन के प्रभाव से यह एक बड़ा दोष उत्पन्न हो गया है कि वे अपनी पोशाक की अपेक्षा विदेशी पोशाक पहनने में अधिक गौरव अनुभव करते हैं। अंग्रेजी पेन्ट उठने-बैठने में कितनी असुविधाजनक होती है यह किसी से छिपी नहीं। टाई का पहिनना स्पष्ट ही निरर्थक और मूर्खता की-सी बात जान पड़ती है। फिर भी लोग बड़े शौक से इनका व्यवहार करते हैं। खासकर आजकल पेन्ट का व्यवहार तो नवयुवकों में इतना अधिक बढ़ गया है कि उतना अंग्रेजी शासन काल में भी न था। तंग पेन्ट के पहनने से टाँगे कैसी भद्दी, बाँस की तरह लम्बी लगने लगती हैं यह भी प्रत्यक्ष ही है। हम देखते हैं कि हमारे देश में जितने विदेशी पर्यटक आते हैं उनमें से कोई अपनी पोशाक को नहीं बदलता। अंग्रेज हाकिम यहाँ पर बीस-बीस वर्ष रह जाते थे, पर सदैव अपनी भारी और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चुस्त पोशाक ही पहनते थे, चाहे वह वहाँ गर्मी के मौसम में कष्टदायक ही सिद्ध होती थी । इसका कारण उनकी जातीयता का भाव ही था । रवि बाबू ने भी इस तथ्य को समझा और इंग्लैण्ड में बड़े-बड़े लोगों से मित्रता होने पर भी उन्होंने भारतीय वेशभूषा में परिवर्तन नहीं किया ।

जन्म और बाल्यावस्था

ऐसे स्वदेश और साहित्य के प्रेमी महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर का जन्म सन् (१८६१-१९०९) कलकत्ता के भारत प्रसिद्ध ठाकुर वंश में हुआ था । ठाकुर का अर्थ हिन्दी प्रान्तों में क्षत्रियों से लिया जाता है पर रवीन्द्रनाथ ब्राह्मण थे । यद्यपि कुछ प्राचीनतावादी बादशाही जमाने की किसी घटना के आधार पर उनको "ब्राह्मणत्व" से हीन बतलाते थे, पर धन, मान, विद्या, पदवी सब बातों की दृष्टि से वह वंश बंगाल के सर्वोच्च घरानों में से एक समझा जाता था । रवीन्द्रनाथ के पिता महर्षि देवेन्द्र नाथ ठाकुर देश के एक माननीय धार्मिक और सामाजिक नेता थे और उनके सभी भाई बहुत ऊँचे पदों पर आसीन थे ।

रवि बाबू के पिता प्रायः बाहर रहते थे और माता बीमार रहा करती थीं, इसलिये इनकी देखभाल प्रायः नौकरों के ही जिम्मे रहती थी । घर का वह नौकर प्रायः इनको बैठाकर इनके चारों तरफ एक लकीर खींच देता और इनसे कहता है कि यदि तुम इस लकीर के बाहर पैर रखोगे तो बड़ी हानि उठाओगे । इस प्रकार इनको डराकर वह बाजार चला जाता और बड़ी देर में लौटकर आता । रवीन्द्र को उस घेरे में बैठे-बैठे बड़ा कष्ट प्रतीत होता, पर अबोध होने के कारण वे उससे बाहर नहीं निकलते । फिर कुछ बड़े होने पर जब उनको स्कूल भेजा गया तो वहाँ भी शिक्षकों का कठोर शासन, डाँट-फटकार और धमकाते रहना ही दिखाई पड़ा था । घर में अपने चौदह भाई बहिनों में सबसे छोटे थे, इसलिये सबसे दबना पड़ता । इस परिस्थिति में उनका स्वभाव अन्तर्मुख होने लगा और वे कल्पना-लोक में विचरण करके मन को प्रसन्न करने की चेष्टा करने लगे । सम्भवतः इसी परिस्थिति ने उनके भीतर निहित "कवि" को अपेक्षाकृत शीघ्र जागृत किया और १२ वर्ष की आयु से ही उनकी कवितायें मासिक पत्रों में प्रकाशित होने लगीं ।

ठाकुर परिवार के प्रयत्न से कलकत्ते में एक हिन्दू मेला प्रचलित किया गया था । इसमें देश की बनी अनेक वस्तुओं और सूती, रेशमी वस्त्र आदि का प्रदर्शन होता था । अनेक कारीगर अपने गुण का परिचय देने को इसमें भाग लेते थे । संगीत, कविता और साहित्य चर्चा भी होती थी । उसी छोटी आयु में एक बार उस अवसर पर आपने स्वदेशी-प्रेम के सम्बन्ध में बड़ी सुन्दर कविता पढ़ी । इसे जनता ने बहुत पसन्द किया और उसे अमृत बाजार पत्रिका में प्रकाशित भी किया गया ।

रवि बाबू के घर में प्रायः श्रेष्ठ लेखकों और कवियों का आना-जाना लगा रहता था और साहित्य गोष्ठियाँ होती रहती थीं । इससे कविता की तरफ इनकी जन्मजात रुचि और प्रतिभा निरन्तर विकसित होती रही । सन् १८७३ में उपनयन संस्कार होने के पश्चात् वे अपने पिता के साथ भ्रमण करने को हिमालय पर्वत पर गये । उस प्राकृतिक वातावरण में इनको जो प्रेरणा मिली उससे पर्वतीय जल स्रोतों के समान इनकी काव्य-रचना का प्रवाह भी वेग से प्रवाहित होने लगा । वे वहाँ पर्वतों के सुरम्य स्थानों, वृक्षावली, फूलों से लदे पेड़ों, नदी, नालों के किनारे आनन्द के साथ घूमते रहते और किसी पेड़ के नीचे कविता लिखने बैठ जाते ।

पहाड़ पर से घर वापस आने पर भी उन्होंने अपना वही साहित्यिक क्रम बनाये रखा और भाई तथा घर वालों के आग्रह पर भी स्कूली पढ़ाई में मन नहीं लगाया । अवकाश के समय जब घर की स्त्रियाँ उनकी माता के कमरे में जमा होतीं तो वे एक ऊँचे स्थान पर बैठकर भ्रमण की घटनाओं को सुनाया करते । उनकी शैली एक कहानी के ढंग पर होती थी, जिससे सब उसे बड़ी रुचि के साथ सुनते थे । यहीं से उनमें कहानी लिखने की प्रवृत्ति का जन्म हुआ । बंकिम चन्द्र चटर्जी का "बंग दर्शन" मासिक पत्र उनको बहुत पसन्द था । विशेष रूप से उसके साहित्यिक निबन्ध और आलोचनायें उनको बहुत पसन्द आती थीं । इनका प्रभाव उनके ऊपर स्थायी रहा और बहुत वर्षों बाद बंकिम बाबू का देहान्त हो जाने पर उन्होंने एक लेख में इसकी चर्चा करते हुए लिखा था—

"जिस दिन से बंकिम बाबू ने समालोचना करना छोड़ दिया, उस दिन से बंगला भाषा में कोई अच्छा समालोचक पैदा नहीं हुआ । बंकिम बाबू का स्थान आज तक इस दृष्टि से खाली ही पड़ा है । अभी तक उनका कोई उत्तराधिकारी पैदा नहीं हुआ । उनकी समालोचनायें बंगला-साहित्य में अराजकता नहीं फैलने देती थीं । बंकिम साहित्य-जगत् के राजा थे । आज हमारे साहित्य-सिंहासन के राजा के उठ जाने से हमारे साहित्य में गड़बड़ी फैली हुई है ।"

इस प्रकार रवि बाबू की साहित्यिक प्रवृत्तियाँ आरम्भिक जीवन में ही बढ़ती चली गईं । उनके भाई श्री ज्योतीन्द्र नाथ ठाकुर, "भारती" नामक मासिक पत्रिका प्रकाशित करने लगे । उसमें भी उन्होंने बहुत से विविध विषयक लेख प्रकाशित कराये । इसी में उन्होंने "भानुसिंह र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पदावली" नाम की कविता पुस्तक क्रमशः प्रकाशित कराई जो बाद में पुस्तक रूप में छपने पर हाथों हाथ बिक गई।

रवि बाबू का साहित्यिक-जीवन अनेक वर्तमान लेखकों को प्रेरणात्मक सिद्ध हो सकता है। उन्होंने दृढ़तापूर्वक साहित्य-साधना करके इस क्षेत्र में सफलता प्राप्त की। उनके घर वाले उनको एक बड़ा बैरिस्टर अथवा सरकारी अफसर बनाना चाहते थे, पर उन्होंने उन उच्च पदों की तरफ आकर्षित न होकर अपनी समस्त शक्ति साहित्य सेवा के लिये ही अर्पित कर दी। यह सच है कि उनको कुछ विशेष साधन प्राप्त थे, पर तब भी उन्होंने अपना लक्ष्य प्राप्त करने में पर्याप्त परिश्रम किया। आजकल अनेक व्यक्ति सामान्य प्रतिभा और साधनों के बल पर ही सुलेखक होने का स्वप्न देखा करते हैं और आश्चर्य यह कि वे इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये उचित परिश्रम भी नहीं करना चाहते। उनकी इच्छा यही रहती है कि वे आरम्भ में ही जो कुछ भला-बुरा लिखें वही छप जाये और उनकी प्रशंसा होने लगे। पर किसी भी कार्य में इस प्रकार थोथी इच्छाओं से सफलता नहीं मिल सकती। अगर वे रवि बाबू की तरह अपनी शक्तियों को लक्ष्य की पूर्ति में लगा दें और उसके लिये आवश्यक परिश्रम और त्याग करें तो वे अवश्य सफल हो सकते हैं।

विलायत यात्रा और शिक्षा

जब घर वालों ने देखा कि रवि बाबू यहाँ पढ़ने में मन नहीं लगाते तो उनको विलायत भेजने का प्रस्ताव किया गया जिससे वे बैरिस्टरी या कोई अन्य उच्च परीक्षा पास कर लें। इंग्लैण्ड के विद्यालय में उन्होंने अपनी योग्यता का सच्चा परिचय दिया जिससे वहाँ के प्रधानाचार्य सन्तुष्ट रहने लगे, पर उनका अधिक समय मिल्टन बायरन, टेनीसन, शैली आदि विख्यात अंग्रेजी कवियों की रचनाओं के अध्ययन में ही जाता था। उन्होंने उसी समय इस सम्बन्ध में कई लेख भी "भारती" में प्रकाशित कराये।

यूरोप में जाकर रवीन्द्रनाथ ने अपना समय केवल कॉलेज के भीतर ही नहीं लगाया वरन् वहाँ के सामाजिक और सार्वजनिक जीवन पर भी निगाह डालते और अपने देश के साथ उसकी तुलना करते रहे। यह सन् १८७९-८० की बात है जब भारतवर्ष का विदेशी संस्कृति से सम्पर्क होना आरम्भ हुआ था। इस विषय में उन्होंने अपने अनुभव का वर्णन करते हुए लिखा—

"यूरोप की भूमि में यह मेरा पहला ही चरण है। आप तो जानते ही हैं कि मैं कैसा कल्पनाशील हूँ। मैंने सोचा था कि वहाँ पहुँचते ही एक अपूर्व दृश्य मेरी आँखों को आकर्षित करेगा। परन्तु जैसा मैं लड़कपन से देखता चला आ रहा हूँ कल्पना और वास्तविकता में प्रायः मेल नहीं होता। इस नवीन देश में आने से पहले मैंने उसे जिस नये रूप में सोच रखा था यह बात देखने में न आई। इंग्लैण्ड आने पर सबसे अधिक मैंने क्या देखा? लोगों में व्यस्तता का भाव। जो लोग रास्ते में चलते हैं उनका मुँह देखने में बड़ा मजा आता है। बंगाल में छड़ी लेकर "हुश-हुश" करते वे चला करते हैं। आस-पास के आदमियों के ऊपर दृष्टि जरा भी नहीं पड़ती। उनके मुँह पर एक घबराहट सी झलकती रहती है। वे हृदय से यही प्रयत्न करते हैं कि कहीं उनका समय व्यर्थ न बीत जाये। इस देश के लोगों का स्वभाव "दुलारा-लड़का" बनने का नहीं है, और न आराम से गद्दी पर पड़े रहना किसी को अच्छा लगता है।"

जब वे पेरिस गये तो वहाँ का आडम्बरपूर्ण जीवन उनको बड़ा अटपटा जान पड़ा। उन्होंने लिखा—"यह एक सुहावना नगर है। मालूम पड़ता है मानो यहाँ कोई मनुष्य निर्धन है ही नहीं। मैंने सोचा कि तीन हाथ के मनुष्य के लिये इतने बड़े और सुसज्जित मकानों की क्या आवश्यकता है? मैं एक होटल में जाकर ठहरा। उसके सभी कमरे इतने बड़े थे कि ढीला कपड़ा पहनने में जैसी असुविधा होती है, वैसी ही असुविधा मुझे इस होटल में जान पड़ने लगी। उस मकान में विस्तार का कोई ठिकाना न था। फाटक, दालान, बगीचा, अटारी, पत्थर के मार्ग, गाड़ी-घोड़ा और आदमियों का कोलाहल देखकर मैं दंग रह गया।"

महाकवि रवीन्द्र भारत के शान्त वातावरण के अभ्यस्त थे। एक कवि के रूप में उनका प्रकृति की गोद में एकान्त चिन्तन और मनन प्रिय था। इसलिये ऐसे व्यस्तता और हलचलपूर्ण स्थान अगर उनको अपनी रुचि के प्रतिकूल प्रतीत हो तो कोई आश्चर्य नहीं। फिर भी हम जीवन के किसी एक पक्ष का ही अधिकाधिक विकसित होते रहना प्रशंसनीय नहीं समझते। यूरोप वालों की उद्योगशीलता निःसन्देह अनुकरणीय है, इसी से वे संसार में अपनी प्रधानता स्थापित करने में सफल हुए हैं। भारतवासियों में इस गुण की कमी है। प्रकृति के उदार और चित्तवृत्ति में सन्तोषी होने से वे प्रायः आलस्य और शिथिलता का जीवन व्यतीत करने लग जाते हैं। इस दृष्टि से यूरोप वालों से वे शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं।

पर उस उद्योग के परिणाम को अधिकतर शान-शौकत और बाह्य आडम्बर में व्यय कर देने के हम पक्षपाती नहीं। मनुष्य यदि अधिक उपार्जन कर सकता है तो यह आवश्यक नहीं कि वह अधिक उपभोग भी करे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"अगर भगवान" ने हमको अधिक योग्यता और कार्य शक्ति दी है तो उसका लाभ कम विकसित शक्ति वाले अन्य मानवों की प्रगति में ही किया जाना चाहिये । यद्यपि रवि बाबू को शाही होटल में दो चार दिन ठहरने से वहाँ कोई निर्धन न दिखाई दिया, पर हम जानते हैं कि पेरिस और लन्दन जैसे महानगरों के भीतर और आस-पास लाखों व्यक्ति ऐसे रहते हैं जिनका जीवन अभावग्रस्त होता है और जिनके बच्चे को भरपेट भोजन और पर्याप्त वस्त्र नहीं मिलते । अगर व्यक्ति और समाज की समृद्धि बढ़ती है तो उसका उपयोग सबसे पहले समाज के इस दुर्भाग्यग्रस्त समुदाय की दशा सुधारने में ही किया जाना चाहिये ।

हमारे देश में तो स्थिति और भयंकर पाई जाती है । यहाँ किसी भी जगह भूखे और नंगों की टोलियाँ देखी जा सकती हैं । गरीब बालकों को ठण्ड से ठिठुरने पर भी सामान्य वस्त्र नहीं मिलते । आहार में पौष्टिक तत्त्वों का अभाव रहता है । घर के नाम पर उनको टूटे-फूटे और अस्वास्थ्यकर झोंपड़ों में नये-नये मकान और कोठियाँ खड़ी हो जाती हैं । वे विवाह-शादियों में लाखों रुपया फूँक देते हैं । यह स्थिति अवश्य ही बदली जानी चाहिये, तभी हम सच्ची प्रगति के दर्शन कर सकेंगे ।

बैलगाड़ी द्वारा देश-भ्रमण

पर रवि बाबू गरीबों की उपर्युक्त स्थिति से अनजान नहीं थे और अपनी विशाल सहृदयता के कारण उसमें हर तरह से सहायता करने को प्रस्तुत रहते थे । जब कभी ऐसा अवसर आ जाता था, वे किसी तरह के हानि-लाभ की चिन्ता छोड़कर कर्म क्षेत्र में खड़े हो जाते थे । जब वे विलायत से भारतवर्ष लौट आये तो देश के गरीबों की स्थिति का निरीक्षण करने के लिये कलकत्ते से पेशावर तक बैलगाड़ी में यात्रा करने का निश्चय किया । इस यात्रा का वर्णन करते हुए उनके एक जीवन चरित्र में कहा गया है—

"मार्ग में उनको अनगिनती गाँव और दीन कृषकों की झोंपड़ियाँ देखने का अवसर प्राप्त हुआ । उन्होंने देखा कि तरह-तरह के कष्टों में फटे-पुराने चिथड़े लपेटे हुए उनका जीवन व्यतीत होता है । गरीबों की दुर्दशा देखकर इनका चित्त दुःखी हो गया । वे सोचने लगे कि पंखों के नीचे सोने वाले अमीरों को क्या पता कि गरीबी कैसी होती है । इन दृश्यों को देखकर जो विचार मंथन हुआ उससे इन लोगों की दशा सुधारने के कितने ही उपाय उनको सूझे । जैसे कि ग्रामों में पंचायतें बननी चाहिये जो अपने गाँव के सुख-दुःख को समझकर उचित प्रबन्ध कर सकें । वायु रहित तंग कोठरियों में पशुओं के साथ बेढंगा जीवन व्यतीत करने वाले किसानों की अवस्था को महलों में निवास करने वाले धनी किस प्रकार समझ सकते हैं ? वे तो गरीबों का खून चूसना और खस की टट्टियों में आराम से रहना जानते हैं । उन्होंने देखा कि ग्रामों में शिक्षा का बड़ा अभाव है । पेट पालने के लिये छोटी अवस्था में ही बालकों को मजदूरी करनी पड़ती है । धनाभाव से वे प्रायः अशिक्षित रह जाते हैं ।"

इस प्रकार समस्त देश के किसानों की दशा को स्वयं देखकर उन्होंने अपनी रचनाओं में उसका यथार्थ चित्रण किया जिससे शिक्षित देशवासियों की आँखें खुल गईं । उन्होंने इन आवश्यकताओं की तरफ सरकार का भी ध्यान आकर्षित किया जिसके फलस्वरूप अनेक गाँवों में विद्यालय स्थापित किये गये और किसानों के लिये नहर तथा कुओं द्वारा सिंचाई की सुविधाओं में वृद्धि की गई ।

इस प्रकार रवीन्द्रनाथ ने एक ऐसा कार्य सम्पन्न किया जिसे प्राचीन समय से सभी सन्त महात्मा करते आये हैं । भारतवर्ष में तीर्थ यात्रा की सार्वजनिक प्रणाली पाई जाती है और सन्त-महात्माओं के लिये तो यह एक आवश्यक नियम माना गया है कि वे एक बार 'चारों धाम' की यात्रा कर आयें । इसका आशय यही कि वे एक बार समस्त देश का भ्रमण करके समाज की दशा की अच्छी तरह जानकारी प्राप्त कर लें और फिर अपनी शक्ति और साधनों के अनुसार उसकी प्रगति के मार्ग सोचें और तदनुसार कार्य करें । शंकराचार्य, चैतन्य, नानक, नामदेव, ज्ञानेश्वर, गो. तुलसीदास, समर्थगुरु रामदास, तुकाराम आदि धर्म तथा समाज के सभी प्रमुख सूत्रधारों ने इसी मार्ग का अनुसरण किया था । उस युग में यात्रा के साधन बहुत अल्प और श्रम साध्य थे । इसलिये इन सबने साधु रूप से पैदल ही यात्रा की थी ।

रवीन्द्रनाथ ने भी देश समाज की दशा का अध्ययन करने के लिये वही मार्ग अपनाया । उस समय रेलगाड़ी चल निकली थी, पर रेल-यात्रा से पिछड़े हुए गाँवों और भूखे-नंगे कृषकों की अवस्था का क्या पता लग सकता है ? वर्तमान परिस्थिति और अपनी सामाजिक स्थिति के कारण रवीन्द्रनाथ पैदल यात्रा नहीं कर सकते थे, इसलिये उन्होंने इसी से मिलता-जुलता साधन बैलगाड़ी द्वारा यात्रा करने का अपनाया । इससे उन्होंने जो अनुभव प्राप्त किया वह निःसन्देह अमूल्य था और यह स्वीकार करना पड़ेगा कि इस प्रकार वे समाज की अच्छी सेवा कर सके । आज भी मोटरों में यात्रा करने वाले 'नेता' अगर एकाध वर्ष इस प्रकार पैदल या बैलगाड़ी द्वारा देश भ्रमण करके अपने ज्ञान को परिपक्व कर लिया करें, तो वे वर्तमान समय की अपेक्षा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बहुत अधिक ठोस सेवा कर सकने में समर्थ हो सकें इसमें सन्देह नहीं ।

"बंग-दर्शन" का प्रकाशन

श्री बंकिम चन्द्र चटर्जी द्वारा संचालित जिस "बंग-दर्शन" मासिक पत्र का ऊपर जिक्र किया जा चुका है, वह उनके देहान्त के पश्चात् बन्द हो गया था । रवीन्द्रनाथ ने उसके महत्व और आवश्यकता को समझ कर सन् १९०१ में उसे पुनः प्रकाशित करना आरम्भ किया । यह सत्साहित्य द्वारा सामाजिक प्रगति का एक प्रबल साधन तो था ही पर रवि बाबू उसके माध्यम से राजनीतिक अन्याय के विरुद्ध भी आवाज उठाया करते थे । सन् १८९९ में दक्षिण अफ्रीका निवासी, गोरों ने वहाँ की बोअर जाति का विध्वंस करना आरम्भ किया । वे [illegible] जातियों के साथ भी बहुत हीनता का व्यवहार करते थे । रवि बाबू ने उस अवसर पर गोरों के इस स्वार्थ मूलक कार्य को घृणित बतला कर उसके विरोध में कई लेख 'बंगदर्शन' में लिखे थे । इसी मासिक पत्र में महाकवि की कितनी ही रचनायें क्रमशः प्रकाशित हुई थीं । इन्हीं रचनाओं में से एक 'चोखेरबाली' है जिसका अनुवाद हिन्दी में 'आँख की किरकिरी' के नाम से हो चुका है । इस उपन्यास ने बंगाल साहित्य में एक नया आदर्श उपस्थित किया । इससे पहले अधिकांश उपन्यास घटना प्रधान होते थे, पर इसमें बहुत कम घटनायें देकर मनोविश्लेषण और अन्तर्द्वन्द्व को प्रधानता दी गई थी ।

"साहित्य भी सामाजिक जागृति और सुधार का एक बहुत बड़ा माध्यम है जो लोग इसे केवल मनोरंजन या दिमागी अय्याशी का साधन मानते हैं, वे इसके वास्तविक महत्त्व से अनजान हैं । वे 'रस [illegible]' और राजा-रईसों के प्रशंसक माने जा सकते हैं पर सच्चे साहित्यिकों में उनकी गणना नहीं हो सकती । साहित्य का पहला लक्षण लोक-कल्याण है । जिस रचना से समाज या व्यक्तियों को किसी प्रकार की उच्च प्रेरणा प्राप्त नहीं होती, और वे अपने अन्य अभावग्रस्त बन्धुओं और समाज की सेवा के लिये उद्यत नहीं हो जाते, 'साहित्य' नहीं कहा जा सकता ।"

रवि बाबू की समस्त साहित्यिक कृतियाँ, चाहे वे कवितायें हों या उपन्यास, कहानी, निबन्ध आदि, इसी उद्देश्य से लिखी गई हैं कि उनसे मनुष्यों का मानसिक स्तर उच्च हो और वे हीन प्रवृत्तियों को त्यागकर समाज के उपयोगी [illegible] । उनकी 'जन-गण-मन अधिनायक' वाली कविता तो देश प्रेम की सच्ची अनुभूति का चमत्कार होने के कारण राष्ट्रीय गीत के रूप में स्वीकार कर ली गई है । [illegible] कविता [illegible] के समान [illegible] जाती थी ।

उसमें [illegible] भावना को थोड़े से शब्दों में इतने प्रभावोत्पादक रूप में व्यक्त किया गया है कि श्रोता मन्त्रमुग्ध हो जाते हैं । इसी प्रकार उनके उपन्यास सामाजिक कुरीतियों तथा मानवीय त्रुटियों को दूर करके उच्च जीवन मार्ग पर चलने की प्रेरणा देने वाले हैं । भारतीय साहित्यिकों के लिये महाकवि रवीन्द्रनाथ निश्चय ही आदर्श स्वरूप हैं ।

स्वदेशी समाज की स्थापना

सन् १९०५ का वर्ष बंगाल के लिये नहीं समस्त भारत के लिये एक नवीन युग के प्रवेश द्वार के समान था । उस समय देश पर लार्ड कर्जन का कूटनीतिपूर्ण शासन चल रहा था । वे जब से भारत के वाइसराय बनकर आये थे, बराबर जन-जागृति को दबाने की तरकीबें कर रहे थे । भारतवासियों की स्वाधीनता की भावनाओं से उनको चिढ़ थी । इसलिये उन्होंने अन्तिम प्रहार यह किया कि १६ अक्टूबर, १९०५ को बंगाल को दो भागों में बाँटने की आज्ञा दे दी । बंगाल के नेता इसका विरोध आरम्भ से ही कर रहे थे और श्री रवीन्द्र ने सन् १९०४ में ही इसका प्रतिकार करने के लिये एक 'स्वदेशी समाज' की स्थापना कर दी थी । इसके सदस्य प्रतिज्ञा करते थे कि वे स्वदेशी वस्तुओं का ही प्रयोग करेंगे । इतना ही नहीं शिक्षा, दीक्षा, साहित्य, समाज आदि सभी विषयों में 'निजत्व' की भावना को ही प्रधानता देंगे ।

यह संस्था बहुत शीघ्र सुदृढ़ होकर समस्त प्रान्तों में फैल गई हजारों व्यक्ति उसमें सम्मिलित होने लगे । पर जब 'बंग-भंग' के विरुद्ध किया गया सब आन्दोलन, विरोध और प्रार्थनायें आदि असफल सिद्ध हो गये तो लोगों ने १६ अक्टूबर को सरकारी आदेश के प्रचारित होते ही भारत की राजधानी कलकत्ता में एक विशाल जुलूस निकाला, जिसके प्रधान संचालक महाकवि श्री रवीन्द्र ही थे । वह जुलूस महाकवि का 'विधिर बन्धन काटिबे तुमि एमनि शक्तिमान' (क्या तुम ऐसे शक्तिशाली हो कि विधाता द्वारा निर्मित बन्धन का भी विच्छेद कर दोगे ?) गीत गाता हुआ समस्त नगर में घूमा और लाखों व्यक्तियों ने गंगा स्नान करके परस्पर राखी बाँधकर यह प्रतिज्ञा की कि ऐसे अन्यायपूर्ण आदेश को कदापि स्वीकार न किया जायेगा ।

स्वदेशी की भावना ने थोड़े ही समय में इतनी जड़ जमा ली कि देश का वस्त्र व्यवसाय और अनेक उद्योग-धन्धे पनपने लग गये और विलायती माल का आयात दिन पर दिन कम होने लगा । स्वदेशी स्कूल, स्वदेशी कॉलेज, स्वदेशी बैंक, स्वदेशी [illegible] फण्ड आदि की धूम मच गई और लोगों में स्वाधीनता की एक नई ही भावना फूट पड़ी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अंग्रेज अधिकारियों ने तो यह कार्य भारतवासियों में फूट उत्पन्न करके उन्हें निर्बल बनाने के उद्देश्य से किया था पर परिणाम उल्टा निकला। उसी दिन से जनता में जो नई चेतना उत्पन्न हुई और राजनीतिक आन्दोलन छेड़ा गया वह अन्त में भारत को विदेशियों के पंजे से मुक्त करा के ही समाप्त हुआ।

वास्तव में स्वदेशी मन्त्र केवल किसी सामयिक आन्दोलन से सम्बन्धित नहीं वरन् यह मानव-जीवन को सुखी बनाने का राजमार्ग है। इसका असली तात्पर्य है—स्वावलम्बी होना। जो लोग इसे संकीर्णता का चिह्न समझते हैं, या इसका आधार किसी से द्वेष करना मानते हैं, वे भूलते हैं। 'स्वदेशी' का अर्थ है जीवन को सरल तथा आडम्बरशून्य बनाना। हम अपने जीवन-निर्वाह की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये जितने कम पराश्रित होंगे उतना ही हमारा जीवन सुखी हो सकता है। जो लोग प्रातःकाल उठते ही अपने नाश्ते के लिये दिल्ली की बनी डबल रोटी और डेनमार्क से आया मक्खन चाहते हैं और उसी के अभ्यस्त हो गये हैं, उनको समय-समय पर असुविधा उठानी पड़े तो क्या आश्चर्य है? जो ग्रामीण अपने घर में तैयार होने वाली मोटी रोटी और छाछ को खाकर खेतों में परिश्रम करने को चल देता है, उसके लिये वैसा अवसर कदाचित ही कभी आये।

महात्मा गाँधी ने इसी सिद्धान्त को समझकर लोगों से 'खद्दर' व्यवहार की प्रतिज्ञा करने को कहा था। उनका आशय यही था कि जीवन की दो सबसे बड़ी और दैनिक आवश्यकतायें—भोजन और वस्त्र के सम्बन्ध में मनुष्य पूर्ण स्वावलम्बी हो सके तो उसके कष्टों तथा परेशानियों का बहुत कुछ अन्त हो सकता है। हम जानते हैं कि महात्मा जी का उपदेश, इस विषय में एक सर्वोच्च आदर्श की भाँति था और प्रत्येक व्यक्ति उसे पूरी तरह पालन नहीं कर सकता तो भी एक मार्ग-दर्शन के रूप में उसे स्वीकार करना कल्याणकारी ही माना जावेगा। लोकमान्य तिलक ने भी स्वदेशी की महिमा को बहुत पहले ही समझ लिया था और बीसवीं शताब्दी आरम्भ होने से कई वर्ष पूर्व पूना में स्वदेशी आन्दोलन आरम्भ किया था। इससे हम समझ सकते हैं कि भारत के मूर्धन्य विद्वानों तथा जन-नेताओं ने भारतीय जनता की आर्थिक अवस्था के सुधार के लिये आरम्भ से ही व्यवहार की प्रेरणा दी थी। महाकवि रवीन्द्र ने भी इस तथ्य को अपनी दिव्य दृष्टि से शीघ्र ही जान लिया था और भारतीय समाज को स्वावलम्बी बनाने के लिये ही "स्वदेशी समाज" जैसी संस्था की कल्पना की थी। पर जब उसमें एक तीव्र आन्दोलन का समावेश हो गया और उसने अधिक उग्रता तथा हिंसा का रूप ग्रहण कर लिया तो वे उस 'आन्दोलन' से पृथक हो गये, और उसका संचालन अन्य नेताओं के लिये छोड़ दिया। उनकी कवि-प्रकृति इसके अनुकूल न थी।

शान्ति निकेतन की स्थापना

रवि बाबू का 'ठाकुर' वंश स्वयं एक बड़ी जमींदारी का मालिक था और उसकी देखभाल करने के लिये उनको युवावस्था से ही समय-समय पर अपने 'शैलादह' गाँव में रहना पड़ता था। वहीं से उनको ग्रामीण जीवन का परिचय हुआ और दरिद्रता की मूर्ति तथा अभावों के बीच ही पलने वाले किसानों की दुर्दशा अपनी आँखों से देखने को मिली। इस अनुभव से प्रभावित होकर उन्होंने जो पत्र अपने मित्रों तथा स्वजनों को लिखे थे उनमें निरीह ग्रामीणों की दरिद्रता का बड़ा ही करुणाजनक चित्र खींचा गया है। उन्होंने एक ऐसे पत्र में लिखा था—

वे भोले-भाले किसान! वे ईश्वर के निस्सहाय शिशु! मैं नहीं जानता कि सम्पत्ति के समान वितरण वाला साम्यवादी सिद्धान्त यहाँ व्यवहार में लाया जा सकता है या नहीं? पर यदि ऐसा सम्भव नहीं हो सकता तो सचमुच यह बड़ा कठोर विधान है और मानव उसके हाथों अत्यन्त दुःखी और असहाय रह जाता है।

पर श्री रवीन्द्र केवल कल्पना में उड़ने वाले कवि न थे। वे सहानुभूति के दिखावटी आँसू बहाकर ही अपने हृदय को सान्त्वना देने वाले जीव नहीं थे। उन्होंने अपने इन 'अन्नदाताओं' की समस्या पर खूब विचार किया और निश्चय किया कि उनकी दुर्दशा का एक बड़ा कारण उनकी अविद्या और अशिक्षा भी है। पर वर्तमान समय के स्कूल और कॉलिजों की खर्चीली और 'पुस्तकीय' शिक्षा न तो उनके लिये सम्भव है और न विशेष कल्याणकारी सिद्ध हो सकती है।

बहुत कुछ विचार करके वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि भारतीय किसानों की शिक्षा-समस्या को हल करने के लिये यहाँ ऋषियों की प्राचीन गुरुकुल प्रणाली ही फलप्रद सिद्ध हो सकती है, जिसमें कम से कम व्यय में व्यावहारिक ज्ञान प्रदान किया जाता था। उसमें गुरु और शिष्य एक-दूसरे के इतने अधिक निकट रहते हैं और उनके जीवन में ऐसा 'साम्य' पाया जाता है कि वे परस्पर सच्चे शुभचिन्तक बने बिना रह ही नहीं सकते। उस प्रणाली की तुलना वर्तमान शहरी स्कूलों से नहीं की जा सकती जहाँ 'गुरु और शिष्यों' का कुछ घंटों के लिये अनिश्चित मिलन हो जाता है और वे एक-दूसरे को प्रसन्नदायक होने के बजाय 'भार स्वरूप' जान पड़ते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस उद्देश्य को सम्मुख रखकर उन्होंने शैलाइदह का निवास छोड़कर 'बोलपुर' को अपना केन्द्र बनाया जहाँ उनके पिता देवेन्द्रनाथ ठाकुर ने बहुत वर्षों पहले एक 'साधना कुटीर' बनाई थी। यह एक एकान्त स्थान है जहाँ की वन-सुषुमा और प्राकृतिक जलाशय आदि मनुष्य को आधुनिक कृत्रिमता से दूर ले जाते हैं। यहीं पर उन्होंने सन् १६०१ के लगभग दो छात्र और दो अध्यापकों को लेकर इस संस्था का श्रीगणेश किया। अनेक लोग तो इसे 'नाम बड़ा और दर्शन थोड़ा' वाला मामला समझकर हँसी करने लगे, पर श्री रवीन्द्र और उनकी सहधर्मिणी मृणालिनी देवी उसकी व्यवस्था में आन्तरिक निष्ठा से लगी हुई थीं। कुछ ही समय में छात्रों की संख्या यथेष्ट हो गई और कार्य भार तथा अर्थ व्यय भी काफी बढ़ गया। रवि बाबू को जो कुछ रुपया घर से मिलता था उसका एक बड़ा अंश इसी में लग जाता था, फिर भी खर्च पूरा नहीं पड़ता था। तब मृणालिनी देवी ने अपने आभूषण बेचकर उसका खर्च चलाया और जब उससे भी काम न चला तो श्री रवीन्द्र ने अपना एक निजी मकान और बहुत-सी पुस्तकें बेच डालीं। इस प्रकार दृढ़ संकल्प करके उन्होंने इस संस्था को चलाया। बीच-बीच में इस पर कठिन अर्थ-संकट आते रहे जिनका निवारण महाकवि ने अपूर्व कर्मवीरता और परिश्रम से किया, और लोगों को दिखा दिया कि वे कोरे कवि नहीं हैं वरन् भगवान कृष्ण के अनुयायी एक सच्चे 'कर्मयोगी' भी हैं।

सच पूछा जाये तो महाकवि ने अपना सर्वस्व इसी संस्था को अर्पित कर दिया। अपनी अपार योग्यता और विश्वव्यापी ख्याति के द्वारा नोबेल पुरस्कार और अन्य देशों के भ्रमण आदि से जितना भी धन प्राप्त हुआ वह सब उसी में लगाया गया। समय आने पर इसी संस्था के अन्तर्गत विश्वभारती का निर्माण किया गया। उसमें विदेशों के शिक्षार्थी उसी प्रकार आकर सच्चा ज्ञान प्राप्त करने लगे जिस प्रकार प्राचीन काल में तक्षशिला और नालन्दा आदि के विश्वविद्यालयों में संसार भर के विद्यार्थी आकर भारतीय ज्ञानामृत से अपनी आत्मा को परिपुष्ट करते थे। पं. जवाहरलाल नेहरू ने इस संस्था के सम्बन्ध में ठीक ही कहा था—"जिसने शांति निकेतन को नहीं देखा उसने हिन्दुस्तान को ही नहीं देखा।"

विश्व-भ्रमण और भारतीय संस्कृति का प्रचार

महाकवि रवीन्द्रनाथ ने अपनी रचनाओं द्वारा संसार में भारतीय संस्कृति का जो मान बढ़ाया वह भी उनकी एक महत्त्वपूर्ण सेवा है। अंग्रेजों ने हमारे देश को अपने अधीन करके केवल उसका आर्थिक शोषण ही नहीं किया था वरन् वे उसकी सभ्यता संस्कृति को अत्यन्त हीन साबित करके संसार को यह भी बतलाना चाहते थे कि वे भारत में शासन करके इन लोगों को 'सभ्य' बना रहे हैं। पर जिस समय महाकवि डेनमार्क की 'सहकारी शिक्षण पद्धति' का अध्ययन करने के उद्देश्य से इंग्लैण्ड पहुँचे और वहाँ उन्होंने अपनी 'गीतांजलि' की कुछ कविताओं का अनुवाद श्रेष्ठ अंग्रेज साहित्यकारों और कलाकारों को सुनाया तो विद्वानों में उनके नाम की धूम मच गई। तत्कालीन प्रसिद्ध अंग्रेज की योट्स के आग्रह पर "इण्डिया सोसाइटी" ने "गीतांजलि" का अंग्रेजी अनुवाद पुस्तकाकार सन् १६१२ में प्रकाशित किया। उसके आध्यात्मिक भावों की उच्चता और काव्य-सौन्दर्य से लोग इतने आकर्षित हुए कि सैकड़ों उनके दर्शनों को आने लगे और जगह-जगह उनके सम्मान में समारोह होने लगे। "गीतांजली" का सारांश एक लेखक के शब्दों में इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है—

"गीतांजलि" में वैष्णव कवियों की प्रेम-भावना का अनुपम परिचय दिया गया है। साथ ही उसमें उपनिषदों के सर्वोच्च आध्यात्मिक विचारों का भी बड़ी मार्मिकता से समावेश है। कवि का यह अनूठा ग्रन्थ आध्यात्मिक गगन पर ज्ञान-सूर्य बनकर उदित हुआ है, जिसकी निर्मल ज्योति का प्रकाश समस्त विश्व का हृदय आलोकित कर रहा है। कवि लिखता है—"प्रभु की निकटता पाने के लिये बाह्य जप-तप-योग और वैराग्य की आवश्यकता नहीं। वह तो हृदय में स्पष्ट रूप से बैठा हुआ है और हम प्रत्येक क्षण उसके स्पर्श का अनुभव करके पुलकित हुआ करते हैं। कवि उस 'जीवन-देवता' को संसार में सभी ओर देखता है। इसी उद्देश्य से सब प्रकार के पापों और कुकर्मों से बचकर रहना चाहता है जिससे उसका शरीर भगवद्-स्पर्श योग्य रह सके। कवि को मृत्यु भी एक शत्रु की तरह नहीं, वरन् मित्र जान पड़ती है। एक गीत में वह कहता है—"मृत्यु दयामयी जननी है। जिस प्रकार माता बच्चे के मुँह से अपना एक स्तन छुड़ा लेती है तो वह दूसरा स्तन पाने के विश्वास से आश्वस्त रहता है; उसी प्रकार मृत्यु मानव रूपी शिशु को एक रिक्त जीवन से हटाकर दूसरे परिपूर्ण जीवन में प्रविष्ट कराती है।"

इंग्लैण्ड से महाकवि अमेरिका गये। वहाँ भी उनका अपूर्व सम्मान हुआ और सैकड़ों संस्थाओं ने उनको भाषण के लिये निमन्त्रित किया। यूरोप और अमरीका में उन्होंने भारतीय ज्ञान को श्रेष्ठ और कमनीय रूप में प्रकट किया उससे हमारे देश का सम्मान बहुत बढ़ गया। वहाँ के निवासी कहने लगे कि जिस देश में रवीन्द्रनाथ के समान विचारक और विद्वान् उत्पन्न हो सकते हैं, उसे असभ्य और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

असंस्कृत कैसे कहा जा सकता है ? उन्होंने समझ लिया कि भारत के विरुद्ध प्रचार करना अंग्रेज शासकों की स्वार्थपूर्ण नीति का ही एक अंग है । वेद और उपनिषदों के अध्यात्म-ज्ञान के प्रणेता, जिसका परिचय रवीन्द्रनाथ अपनी कविताओं में दे रहे हैं कभी असभ्य नहीं हो सकते ।

अमेरिका में महाकवि का जो अभूतपूर्व स्वागत-सम्मान हुआ, उसका बढ़ा-चढ़ा सचित्र वर्णन वहाँ के पत्रों में प्रकाशित होने से यूरोप के अन्य देश वालों में भी उनके सम्बन्ध में उत्सुकता पैदा हो गई और जगह-जगह से उनके पास निमन्त्रण आने लगे । इसलिये कुछ समय पश्चात् दुबारा उनको यूरोप यात्रा करनी पड़ी थी । डेनमार्क जाने का विचार तो वे बहुत पहले कर चुके थे । वहाँ की राजधानी कोपेनहेगेन में हजारों नगर निवासी उनके स्वागतार्थ आये । विश्वविद्यालय में उनका भाषण ऐसा पसन्द किया गया कि हजारों लड़कों और नागरिकों ने उनका जुलूस जलती हुई मशालों के साथ निकाला और इस प्रकार भारत की दार्शनिक और धार्मिक विचारधारा का हार्दिक सम्मान किया । स्वीडेन में भी उनका ऐसा ही सम्मान किया गया । वहाँ के जुलूस में सबसे आगे उस देश के लाट-पादरी (प्रधान धर्मगुरु) चल रहे थे । इतना सम्मान वहाँ किसी विदेशी विद्वान का कम ही देखने में आया था ।

जर्मनी वालों को तो आर्य संस्कृति पर विशेष अभिमान है और वेदों का सबसे अधिक प्रचार उसी देश में हुआ है । वहाँ के विश्वविद्यालय में रवीन्द्रनाथ का दर्शन करने और भाषण सुनने इतनी अधिक भीड़ हो गई कि सभा-भवन हॉल ही नहीं बरामदा और सीढ़ियाँ भी जन-समूह से भर गईं । दरवाजे और सीढ़ियों पर जन-समूह की अधिकता के कारण स्वयं महाकवि का सभा-मंच तक पहुँचना कठिन हो गया । उनके सम्बन्ध में लोगों ने जो बातें सुन रखी थीं उससे वे यही समझ रहे थे कि रवि बाबू भगवान ईसा मसीह के सदृश ही हैं और वास्तव में यूरोप में महाकवि को एड़ियों तक लम्बे लबादे, सफेद लम्बी दाढ़ी और सफेद सर के बालों ने एक ईसाई सन्त के रूप में ही परिवर्तित कर दिया था । जब वहाँ से कोई दर्शक हटने को राजी न हुआ तब एक अध्यापक बहुत-से लड़कों को लेकर बाहर चले आये और बाहरी दर्शकों को अपना स्थान देकर रास्ता साफ कराया । इस पर लड़के निराशा प्रकट करने लगे । महाकवि ने कहा—"तुम लोग खेद मत करो, कल मैं तुमसे अलग बातचीत करूँगा । उस सभा में चौदह-पन्द्रह हजार दर्शक इकट्ठे हो गये थे । जर्मनी में रवि बाबू की पुस्तकों का भी बड़ा आदर हुआ । तीन सप्ताह के भीतर उनकी एक पुस्तक की पचास हजार प्रतियाँ बिक गईं ।"

फ्रांस वालों ने भी स्वागत में किसी प्रकार की कमी नहीं रखी । वहाँ के अधिकांश निवासी रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय के अनुयायी हैं, जो भारतवर्ष के भक्ति-मार्ग से मिलता-जुलता है । महाकवि रवीन्द्र की पोशाक तथा आकृति पुराने ढंग के पादरियों से मिलती-जुलती जान पड़ती थी । इसलिये कितने ही लोग तो भक्तिपूर्वक झुककर उनके लबादे का किनारा चूमते थे और ताली पीटकर प्रसन्नता का भाव प्रकट करते थे ।

महाकवि जहाँ कहीं गये उन्होंने भारतीय अध्यात्म पर आधारित समानता तथा प्रेम का सन्देश ही दिया—"हम सब भाई-भाई हैं । अमीर-गरीब का भेद निरर्थक है । मनुष्य मनुष्य में कोई अन्तर नहीं । भाई के साथ द्वेष करना अथवा लड़ना धर्म नहीं है । सबसे प्रेम करना ही मानवता का सार है । प्रेम व भाई-चारे का व्यवहार संसार का सबसे बड़ा सत्य सिद्धान्त है ।"

नोबेल पुरस्कार की प्राप्ति

यूरोप के स्वीडेन देश में अल्फ्रेड नोबेल नाम के एक बहुत बड़े उद्योगपति हुए हैं, जिन्होंने अपनी सम्पत्ति का एक बहुत बड़ा भाग संसार के विद्वानों, वैज्ञानिकों और शान्ति प्रचारकों को पुरस्कार देने के लिये अर्पित कर दिया था । उसी संस्था की तरफ से प्रति वर्ष एक लाख बीस हजार रुपये का एक पुरस्कार संसार के किसी भी देश के ऐसे साहित्यकार को दिया जाता है, जिसकी रचना एक निर्णायक समिति द्वारा सर्वश्रेष्ठ स्वीकार करली जाये । सन् १९१३ में जब महाकवि यूरोप की यात्रा करके वापस आये तो कुछ ही सप्ताह में समाचार आया कि इस वर्ष का नोबेल पुरस्कार उनकी पुस्तक 'गीतांजलि' पर देने का निश्चय किया गया है । इस समाचार से समस्त भारत में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई । यह महाकवि की विद्वता और प्रतिभा का तो आदर था ही पर लोगों ने इसे एक राष्ट्रीय सम्मान भी समझा । महाकवि के सम्मान में वहाँ भी बड़ा समारोह किया गया । उस वर्ष लाट साहब की कोठी पर एक बड़ा दरबार हुआ तो उसी अवसर पर नोबेल पुरस्कार और एक तमगा उन्होंने अपने हाथ से महाकवि को प्रदान किया ।

संस्कृत भाषा में एक सुभाषित है कि 'धनवान अथवा राजा तो अपने देश में ही पूजा जाता है । पर विद्वान सर्वत्र पूजनीय होता है ।' यद्यपि उस समय भारतवर्ष पूर्ण रूप से अंग्रेजों के आधीन था और गोरी जातियाँ यहाँ के निवासियों को 'काला' कहकर उपेक्षा की दृष्टि से देखती थीं, पर उसी जाति का होने पर भी रवीन्द्रनाथ का सब जगह एक देवदूत अथवा राजा-महाराजाओं जैसा स्वागत किया गया । यह सब उनकी सरस्वती आराधना का ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिणाम था । उन्होंने स्कूल-कॉलेजों की सदोष शिक्षा-पद्धति से विरक्त होकर अपना मार्ग स्वयं ही बनाया और अपने अध्यवसाय से अपने को शिक्षित और ज्ञान सम्पन्न बनाया और फिर इस ज्ञान-साधना से स्वयं कोई लाभ न उठा कर उसका लाभ पूरी तरह अपने देशवासियों को दिया ।

कुछ समय पश्चात् भारत सरकार ने भी महाकवि के कार्य के महत्त्व को स्वीकार किया और उनको एक बहुत बड़ी पदवी प्रदान की । यह 'सर' अथवा 'नाइट' की पदवी सामान्यतः इंग्लैण्ड के रईसों और विशिष्ट देश सेवकों को दी जाती है । वही उन दिनों भारत के दो-चार गिने-चुने विद्वानों को दी गई, जिनमें रवीन्द्र भी एक थे । बंगाल के गवर्नर स्वयं शान्ति निकेतन गये और महाकवि के पास कई दिन तक अतिथि के रूप में ठहरे रहे । पर यह स्थिति थोड़े ही समय तक रही, क्योंकि भारतवर्ष में अंग्रेजों की शासन-नीति के विरुद्ध आन्दोलन चल रहा था और महाकवि को भी उससे पूरी सहानुभूति थी । वे भारतवासियों पर सरकारी अन्याय का खुलकर विरोध करते थे । जब रौलेट एक्ट के विरोध में आन्दोलन छिड़ा और अमृतसर के "जलियाँवाला बाग" की एक सार्वजनिक सभा में कई सौ व्यक्ति जनरल डायर द्वारा मशीनगन से भून डाले गये तो महाकवि ने भी उसका बड़ा विरोध किया और ऐसी सरकार से किसी प्रकार का सम्बन्ध रखना बुरा समझकर उसकी प्रदान की हुई 'सर' की पदवी को वापस कर दिया । इस अवसर पर समाज के वाइसराय लार्ड चेम्सफोर्ड को उन्होंने एक लम्बा पत्र लिखा, जिसमें कहा गया था—

"हमारी आँखें खुल गई हैं कि हमारी अवस्था कैसी असहाय है । अभागी भारतीय जनता को इस समय जो दण्ड दिया गया है उसका उदाहरण किसी सभ्य सरकार के इतिहास में नहीं मिल सकता । पर हमारे शासक इस कृत्य के लिये उल्टा अपने को शाबासी दे रहे हैं कि उन्होंने भारतवासियों को 'अच्छा सबक' सिखा दिया है । अधिकांश अधगोरे (ऐंग्लो इण्डियन) समाचार पत्रों ने इस निर्दयता की प्रशंसा की है और उनमें से कुछ ने तो पाशविकता की सीमा पर पहुँचकर हमारी यातनाओं का उपहास भी किया है । सरकारी अधिकारियों ने उन समाचार पत्रों पर तो किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं लगाया, उल्टा जनता के साथ सहानुभूति रखने वाले भारतीय समाचार पत्रों का ही गला दबाया । इस अवसर पर मैं कम से कम इतना तो कर ही सकता हूँ कि भारी से भारी दुष्परिणाम भोगने के लिये तैयार होकर अपने उन करोड़ों देशवासियों की विरोध भावना को व्यक्त करूँ, जो आतंक और भय के कारण चुपचाप सरकारी दमन को सह रहे हैं । समय आ गया है कि जब सरकार द्वारा प्रदत्त 'सम्मान के पट्टे' (पदवियाँ) राष्ट्रीय अपमान के साथ मेल नहीं खा सकते । वे हमारी निर्लज्जता को और भी चमका देते हैं । अतएव मैं विवश होकर सादर प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझे सम्राट की दी गई 'नाइट' की उपाधि से मुक्त कर दें ।"

इस प्रकार महाकवि ने यह दिखला दिया कि जहाँ मानवता और राष्ट्रीयता का प्रश्न उपस्थित हो, वहाँ प्रत्येक क्षेत्र के व्यक्ति को आगे बढ़कर उसके विरोध में अपना दायित्व निभाना चाहिये । यद्यपि एक उच्चकोटि के कवि का दृष्टिकोण बड़ा व्यापक होता है और वह मानव मात्र को एक ही परमपिता की सन्तान मानकर सबको सम दृष्टि से ही देखता है, पर जब लोगों का एक समुदाय दूसरे समुदाय के साथ अमानवीय व्यवहार करे तो कवि का भी यह धर्म हो जाता है कि अन्याय के विरुद्ध स्वर ऊँचा करे । यद्यपि अपनी वृद्धावस्था और शान्त प्रकृति के कारण अंग्रेजों के विरुद्ध उग्र आन्दोलन में पूरी तरह भाग ले सकने में समर्थ नहीं थे, तो भी उन्होंने ब्रिटिश सम्राट द्वारा प्रदान की हुई इतनी बड़ी पदवी को ठुकरा कर और दण्ड के लिये प्रस्तुत होकर अपना असन्तोष अच्छी तरह प्रकट कर दिया । यही प्रत्येक स्वाभिमानी व्यक्ति का कर्तव्य होना चाहिये । अन्याय के सम्मुख सिर झुकाना बहुत बड़ी हीनता और कायरता की निशानी है ।

एशियाई देशों में सम्मान

यूरोप और अमेरिका के देशों में भ्रमण करने के पश्चात् महाकवि जापान, चीन, ईरान आदि एशियाई देशों में भी गये और वहाँ भी उनका राजसी स्वागत किया गया । जापान में वहाँ के एक बहुत बड़े राष्ट्र नेता ओकुमा ने उनकी प्रशंसा में जापानी भाषा में भाषण किया और रवि बाबू ने उसका उत्तर बंगला भाषा में दिया । जापान के विद्वानों ने महाकवि का बड़ा सम्मान किया । पर वहाँ भी उन्होंने अपनी न्यायप्रियता का परिचय दिया जिससे जापान सरकार उनसे नाराज हो गई । बात यह थी कि उन दिनों पड़ोसी चीन को निर्बल देखकर शक्तिशाली जापानी सरकार उस पर कब्जा करने की योजना बना रही थी । महाकवि को यह 'दस्युवृत्ति' कब पसन्द आ सकती थी । अतएव उन्होंने जापान में बैठकर ही वहाँ के शासकों की इस स्वार्थपूर्ण नीति की भर्त्सना की । निरंकुश और अधिनायकवाद में विश्वास रखने वाले शासनकर्ताओं को यह बात कैसे सहन हो सकती थी ? फिर भी महाकवि ने उनकी चिन्ता न करके अपनी निष्पक्ष सम्मति प्रकट कर दी और उनके देश से अपेक्षाकृत शीघ्र ही चले आये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ समय पश्चात् पीकिंग विश्वविद्यालय के निमन्त्रण पर चीन भी गये । रास्ते में बर्मा, सुमात्रा, बाली, जावा आदि में भी उनका स्वागत किया गया । चीन में तो उनका ऐसा स्वागत-समारोह किया गया जैसा राजा-महाराजाओं का ही किया जाता है । फौजी अफसर उनकी देख-भाल करते थे । प्रत्येक स्टेशन पर इस बात की पूछताछ की जाती थी कि उनको किसी बात की असुविधा तो नहीं है । चीन के विद्यार्थियों के आग्रह पर महाकवि को सम्राट के महल के पास ही ठहराया गया । चीन सम्राट ने यद्यपि उस समय प्रजातन्त्र स्थापित हो जाने से उन्हें शासन-भार से मुक्त कर दिया गया था, स्वयं अपने महल में उनकी बड़ी खातिर की । घन्टा भर तक बात-चीत की और एक बहुत पुरानी बहुमूल्य तस्वीर उन्हें भेंट स्वरूप दी । पर महाकवि इस राज्य सम्मान को पाकर भी सामान्य जनता को नहीं भूले । उन्होंने सार्वजनिक सभा में कहा—"भाइयो ! मैं एक सामान्य कवि हूँ । पर मैं एक मनुष्य हूँ और उसी हैसियत से तुम्हारे सामने खड़ा हूँ । मेरे हृदय में तुम सबके लिये ऊँचा स्थान है । तुमने भी मुझे बड़े प्रेम के साथ अपनाया है । इस प्रकार का प्रेम बराबर वालों में ही हो सकता है । मैं भी तुमसे बड़ा नहीं बराबर का ही हूँ ।

जिन दिनों महाकवि चीन में ठहरे थे, तभी उनकी वर्षगाँठ का अवसर आ गया । चीन वालों ने अपनी पद्धति के अनुसार समारोह मनाया और उनके लिये शानदार नीले रंग का पैजामा, नारंगी रंग का पीला कुर्ता और बैंजनी रंग की सुन्दर टोपी तैयार की गई और लोगों के आग्रह से महाकवि को उस पोशाक को धारण करके उस समारोह में भाग लेना पड़ा । वहाँ के लोग उनको अपने जातीय स्वरूप में देखकर बड़े प्रसन्न हुए और उनको चु-चेन्तान का नया नाम दिया जिसका अर्थ होता है 'मेघ' के समान शक्तिशाली भारत—सूर्य !'

ईरान भी प्राचीन काल से बड़े-बड़े कवियों की भूमि रही है । वहाँ के बादशाह ने स्वयं निमन्त्रण भेजकर विश्व-कवि का अपने यहाँ अपूर्व स्वागत किया । इटली पहुँचने पर वहाँ के तानाशाह मुसोलिनी ने कहा—"मैं आपकी रचनाओं को बड़े प्रेम से पढ़ता हूँ और मुझे वे पसन्द आती हैं ।" इटली में उनको सरकारी मेहमान की हैसियत से रखा गया और उसी तरह का सब इन्तजाम किया गया जैसा अन्य देशों के बड़े शासकों या राजाओं के आने पर किया जाता है ।

स्विट्जरलैण्ड का देश प्राकृतिक शोभा की दृष्टि से यूरोप का "नन्दन कानन" माना जाता है । ऐसी भूमि कवियों के लिये स्वभावतः आकर्षक और प्रसन्नता दायक होती है । वहाँ की शोभा देखकर महाकवि बहुत प्रसन्न हुए और यूरोप वालों को अपना सन्देश देते हुए कहा—"भारत की सभ्यता बहुत पुरानी है । इसकी मिट्टी के कण-कण में सत्य की भावना पाई जाती है । भारत ने ही उस समय यूरोप को शिक्षित बनाया था जिस समय यूरोप के लोग आदिम अवस्था में थे और ज्ञान-विज्ञान से अपरिचित थे, उस समय भारत एक महान् और सभ्य देश था । वहाँ के निवासी जलयानों द्वारा दूर-दूर के देशों में गये और वहाँ अपनी शिक्षा व संस्कृति का प्रचार किया ।"

महाकवि रूस भी गये, जहाँ की सभ्यता, संस्कृति अब एक नये ढाँचे में ढाली गई है । वहाँ अमीर-गरीब का भेद नहीं रखा गया है और सबको परिश्रम करके ही जीवन-निर्वाह करना पड़ता है । वहाँ का शासन प्रबन्ध सामान्य जनता के प्रतिनिधि चलाते हैं । वहाँ पर सब प्रकार के उद्योग-धन्धे तथा खेती सहकारी पद्धति पर चलाये जाते हैं जिसमें कोई एक व्यक्ति स्वामी नहीं होता । इस प्रकार की व्यवस्था को देखकर महाकवि बहुत प्रभावित हुए । उन्होंने रूस की प्रशंसा में कितने ही पत्र लिखकर अपने इष्टमित्रों और घर वालों को भेजे । जिस बात को वहाँ पर उन्होंने सबसे अधिक पसन्द किया वह थी वहाँ के लोगों में बराबरी की भावना । कोई किसी को छोटा-बड़ा नहीं समझता । हम भारतवासी भी मनुष्य मात्र को एक ही ईश्वर की सन्तान मानकर सबको बराबर बतलाते हैं । इतना ही नहीं हमने इससे भी आगे बढ़कर 'आत्मवत् सर्व भूतेषु' के सिद्धान्त की घोषणा की है । पर व्यवहार में हम 'महान् सिद्धान्तों' के प्रतिकूल ही चलते हैं । हम अपने ही समाज के एक अंग—अछूतों के साथ जैसा निकृष्ट व्यवहार करते हैं उसकी तुलना संसार के किसी भी देश में नहीं मिलती । महाकवि रवीन्द्र ने इस त्रुटि को बहुत अच्छी तरह समझा और इसीलिये रूस का उदाहरण दिखलाकर हमको समता का व्यवहार अपनाने की प्रेरणा दी ।

रवीन्द्रनाथ और गाँधी जी

महात्मा गाँधी के साथ रवीन्द्रनाथ का बड़ा प्रेम था, और इन दो महामानवों को निकट लाने का कार्य किया था तीसरे महामानव एण्ड्रूज ने । एण्ड्रूज साहब असली अंग्रेज थे और विलायत के ईसाई मिशन की नौकरी करके दिल्ली के एक क्रिश्चियन कॉलेज में पढ़ाने आये थे । पर अंग्रेजों की अहमन्यता तथा भारतवासियों के प्रति उनका दुर्व्यवहार देखकर उनका हृदय बड़ा व्यथित हुआ और वे भारतवर्ष को उसका न्यायपूर्ण अधिकार दिलाने के समर्थक बन गये । वे ईसाइयों के कॉलेज की नौकरी छोड़कर महाकवि रवीन्द्रनाथ के शान्ति निकेतन में चले आये और भारतीय

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

युवकों को शिक्षा देने के साथ ही आवश्यकता पड़ने पर यहाँ के राजनैतिक आन्दोलन में भी भाग लेने लगे। महाकवि की अनुमति से वे महात्मा गाँधी के सत्याग्रह आन्दोलन में सहायतार्थ दक्षिण अफ्रीका गये। रास्ते में उनको अन्य गोरे यात्रियों ने बहुत डराया कि तुमको दक्षिण अफ्रीका का शासनकर्ता जरनल स्मट जहाज से उतरते ही गिरफ्तार कर लेगा। पर मि. एण्ड्रूज ने इन बातों की चिन्ता न करके दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह संग्राम में गाँधी जी की बड़ी सहायता की और उनकी अधिकांश माँगों को स्वीकार कराके दोनों पक्षों में सुलह करा दी। वे गाँधी के पुत्रों को लेकर शान्ति निकेतन में वापस आये और जब गाँधी जी अफ्रीका से भारत आये तो उनको भी शान्ति निकेतन में ठहराया। गाँधी जी महाकवि को 'गुरुदेव' कहकर सम्बोधित करते थे और विद्या तथा आयु की दृष्टि से वे इस पदवी के योग्य भी थे। रवीन्द्रनाथ भी गाँधी जी से अत्यन्त प्रेम रखते थे। जब यरवदा जेल में गाँधी जी ने सरकारी नीति के विरोध में आमरण अनशन किया तो महाकवि उनकी कुशलता के लिये चिन्तित होकर स्वयं पूना गये और गाँधी जी से मिलकर उनके छुटकारे के लिये विलायत की सरकार के पास तार भेजा उनके प्रयत्न से दोनों में समझौता हो गया और गाँधी जी ने अनशन छोड़ दिया। उस समय गाँधी जी का स्वास्थ्य बड़ा नाजुक हो गया था और महाकवि बराबर उनके बिस्तर के पास बैठकर देख-भाल करते रहते थे। गाँधी जी को रवीन्द्रनाथ का संगीत बहुत प्रिय था। अनशन छोड़ने के दिन उन्होंने महाकवि के मुख से ही एक सुन्दर गीत सुना।

पर व्यक्तिगत रूप में ऐसा प्रगाढ़ प्रेम होने पर भी राजनीतिक आन्दोलन के सम्बन्ध में दोनों में बहुत कुछ मतभेद भी रहता था। जब गाँधी जी ने अपने आन्दोलन का आधार अहिंसा को बनाया तो वह उनको पसन्द आया। पर जब उन्होंने असहयोग की घोषणा करके लड़कों को स्कूल और कॉलेज छोड़ने के लिये कहा, विलायती कपड़ों की होली जलाने का कार्यक्रम आरम्भ किया तो महाकवि ने उसका विरोध किया। वे कहते थे कि इस प्रकार लड़कों को भड़काने से वे आवारा बन जायेंगे। वस्त्र बहिष्कार और चरखा के सम्बन्ध में वे कहते थे—"गाँधी जी मशीनों के खिलाफ हैं तो मेरी भी वही सम्मति है। पर हमारी बुराइयों की जड़ तो भीतरी कमजोरी है। हम चलने, बोलने और हँसने में भी डरते हैं। अंग्रेज सरकार के हुक्म पर उठते-बैठते हैं। हमारी अपनी ताकत कुछ भी नहीं। हम कायर हैं, सरकार से हर बात में डरते रहते हैं। इस जबर्दस्ती के मैं विरुद्ध हूँ। पर गाँधी जी भी लोगों पर ऐसी ही जबर्दस्ती कर रहे हैं। वह देश को स्वतन्त्र करना चाहते हैं पर लोगों के स्वतन्त्र-विचारों पर वह हुक्म चला रहे हैं। इस तरह अगर हमको स्वतन्त्रता मिल भी जायेगी, तो भी हम सच्चे अर्थों में स्वतन्त्र न हो सकेंगे।"

'विश्व भारती' और 'श्री निकेतन' की स्थापना

रवीन्द्रनाथ केवल कवि और कलाकार ही नहीं थे वरन् जैसा हम अन्यत्र लिख चुके हैं वे एक सच्चे कर्मयोगी भी थे। जहाँ वे एक ओर शान्ति निकेतन में बालकों और युवकों को विद्या, कला, ज्ञान की शिक्षा देते थे, वहीं सन् १९१२ में ही उन्होंने शान्ति निकेतन से ३ मील पर बहुत-सी जमीन खरीद कर 'श्री निकेतन' की स्थापना की। इस संस्था का उद्देश्य विद्यार्थियों को कृषि, उद्योग और व्यवसाय का व्यावहारिक प्रशिक्षण देना था। अब तक यहाँ से हजारों विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करके सफलतापूर्वक देश की प्रगति में योगदान कर चुके हैं।

महाकवि ने यूरोप, अमेरिका के विद्वानों और विश्वविद्यालयों के निमन्त्रण पर उन देशों की आठ बार यात्रा की थी और वहाँ की प्रगति तथा परिस्थितियों का सूक्ष्म निरीक्षण किया था। उन्होंने इस तथ्य को भली प्रकार समझ लिया कि जहाँ भारत को यूरोप से पुरुषार्थ और भौतिक साधनों में प्रगति सम्बन्धी शिक्षा ग्रहण करने की आवश्यकता है, वहाँ यूरोप भी भारत से अध्यात्म विषयक ज्ञान प्राप्त करके अपनी स्थिति को सुदृढ़ कर सकता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने 'विश्व भारती' की स्थापना की। इसका आदर्श-वाक्य (मोटो) रखा गया "विश्व भवत्येकं नीडम्" अर्थात् "यहाँ सारे संसार को शरण मिल सकती है।"

सचमुच वर्तमान युग में विश्व की सबसे बड़ी समस्या यही है कि वह भौतिकवाद और अध्यात्मवाद में समन्वय किस प्रकार करे? अब तक विश्व की अधिकांश संस्कृतियों का विकास एकांगी हुआ है। कम से कम पिछले पाँच-सात सौ वर्ष से यूरोप भौतिक साधनों और शक्ति को बढ़ाने में लगा हुआ है और एशिया के देश इस बीच में प्रायः प्राचीनता के नाम पर आध्यात्मिक विषयों पर ऊहापोह में तल्लीन रहे। वास्तविक अध्यात्म तो बहुत उच्चकोटि का और चारों पुरुषार्थों को प्रदान करने वाला मार्ग है पर जब मनुष्य केवल उसके सैद्धान्तिक ढाँचे को ग्रहण कर लेता है और वास्तविक शक्ति से रहित होकर सांसारिक दृष्टि से उसका पतन हो जाता है और वह परमुखापेक्षी बन जाता है। इसी स्थिति को देखकर आज अधिकांश शिक्षित कहलाने वाले 'अध्यात्म' को एक निकम्मी चीज समझने लगे हैं और भारतवर्ष को ही इसका सबसे बड़ा उदाहरण बतलाते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महाकवि ने इस समस्या को अच्छी तरह समझा था और इसी को हल करने के लिये आदर्श के रूप में 'विश्व भारती' की स्थापना की थी। उनका उद्देश्य यही था कि जिस प्रकार यूरोप अमेरिका की कुछ संस्थायें भारतीय छात्रों को विज्ञान और आधुनिक कला-कौशल की शिक्षा दे रही हैं उसी प्रकार भारत में भी कोई संस्था ऐसी होनी चाहिये, जहाँ सब देशों के ज्ञानाभिलाषी सम्मिलित हों। अध्यात्म के सिद्धान्त और व्यवहार को जानने की सुविधा प्राप्त कर सकें। इसीलिये उन्होंने संसार भर के देशों का कई-कई बार भ्रमण करके वहाँ के विद्वानों तथा संस्थाओं से सम्बन्ध स्थापित किया और उनके तथा अपने विचारों के आदान-प्रदान की व्यवस्था की। इसके परिणामस्वरूप वे 'विश्व भारती' का शिक्षाक्रम ऐसा आकर्षक और सर्वोपयोगी बना सके कि प्रत्येक देश और मजहब के विद्यार्थी उसमें अपनेपन की भावना को उपलब्ध करने लगे। इसी से भारत के अनेक हिन्दू-मुस्लिम शासकों, भारत सरकार, चीन सरकार, विदेशों के धनियों तथा संस्थाओं ने उसे सहायता और सहयोग दिया, उसमें संसार के सभी प्रमुख देशों के उच्च कोटि के साहित्य, इतिहास, धर्म और संस्कृति के अध्ययन की व्यवस्था है। इसमें उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति ही भाग लेते हैं। अन्य विद्यार्थियों के लिये 'शान्ति निकेतन' का शिक्षाक्रम इससे पृथक है। वह प्रातःकालीन प्रार्थना से आरम्भ होकर रात्रि में भी समस्त छात्रों के सामूहिक गायन से समाप्त होता है।

ज्ञान-यज्ञ के सर्वहुत होता

जैसा पाठकों को अब तक के जीवन-वृतान्त से प्रतीत हुआ होगा महाकवि रवीन्द्र संसार के उन इने-गिने मानव तन धारियों में से एक महान आत्मा थे, जिनका जन्म किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिये ही होता है। इसलिये वे संसार में चाहे धन, मान, पदवी प्राप्त करके बड़े आदमी कहलायें, चाहे लँगोटी लगा और सूखी रोटी खाकर निर्धन अवस्था में रहें, पर वे कोई ऐसा महान् कार्य पूरा कर जाते हैं जिससे आगामी पीढ़ियाँ सैकड़ों वर्षों तक उनका गुणानुवाद करती रहती हैं। महाकवि रवीन्द्र वंशक्रम से उच्च पदस्थ और धनी व्यक्ति थे और तत्पश्चात् अपनी अप्रतिम योग्यता से भी उन्होंने बहुत कुछ कमाया। उनकी लिखी पुस्तकों की बिक्री भी देश-विदेश में इतनी हो जाती थी कि उससे भी काफी आय होती थी। पर इस सम्पत्ति को उन्होंने 'ज्ञान-यज्ञ' में समर्पित कर दिया।

उनका यह 'ज्ञान-यज्ञ' 'शान्ति निकेतन' और 'विश्व भारती' के रूप में था। यद्यपि इसमें रहने वालों का रहन-सहन बहुत सादा और सात्विकतापूर्ण था, तो भी जब उसका अधिक विस्तार हो गया और उसमें एक अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की योग्यता के शिक्षकों को रखने की आवश्यकता पड़ी तो उनके निजी साधन अपर्याप्त सिद्ध हुए। बाहर के धनिकों ने स्वेच्छा से जो सहायता दी वह भी इस व्यय की पूर्ति न कर सकी। इस पर भी महाकवि ने हिम्मत नहीं हारी और वे बहुत-सा काम अपने हाथ से ही करके उसका संचालन करते रहे। अन्तिम वर्षों में जब वे ८० वर्ष के लगभग हो चुके तो संस्था के लिये धन का ऐसा अभाव हुआ कि उन्होंने नाटकों में अभिनय करके उसके लिये धन एकत्रित करने का निश्चय किया। तदनुसार वे अपनी शिष्य मण्डली के साथ बाहर निकले और कई स्थानों में अभिनय किये। जब गाँधी जी ने यह सुना कि महाकवि को इस अन्तिम अवस्था में स्वास्थ्य के ठीक न होते हुए भी संस्था के व्यय-निर्वाह के लिये नगर-नगर भटकना पड़ रहा है, तो उन्होंने अपने एक धनिक अनुयायी को उनकी सहायता के लिये प्रेरणा दी और बम्बई पहुँचते ही महाकवि को ६० हजार का एक चेक प्राप्त हो गया। व्यय की समस्या हल हो जाने पर अपने आश्रम में वापस आ गये।

महापुरुषों का यही लक्षण बताया गया है कि सम्पत्ति-विपत्ति में अपनी चित्तवृत्ति को सन्तुलित रखें और उद्देश्य से किसी दशा में पीछे पैर न हटावें। भला-बुरा समय सब पर आता है; सुख-दुःख, हानि-लाभ, सफलता-असफलता, मान-अपमान के द्वन्द्व से कोई बच नहीं सकता तो फिर अपनी निर्बलता प्रकट करने से, अपनी चित्तवृत्ति को हीन बनाने से क्या उपकार हो सकता है? जो निर्बल चित्त पुरुष अपना दुःख चाहे जिसके सामने रोते रहते हैं, उनकी सहायता तो कोई करता नहीं, उल्टा सामने नहीं तो पीठ-पीछे हँसी उड़ाने वाले अनेक निकल आते हैं। इसलिये श्रेष्ठ मनुष्यों की कार्यप्रणाली यही होती है कि वे किसी भी परिस्थिति में धैर्य नहीं छोड़ते और फल की चिन्ता न करके अपने कर्त्तव्य-पालन में लगे रहते हैं। इसका परिणाम प्रायः यह होता है कि, ईश्वर उनकी सहायता करता है जो अपनी सहायता आप करते हैं, वाली कहावत के अनुसार किसी न किसी स्रोत से उनको सहायता भी मिल जाती है। यदि सहायता न भी मिले तो हृदय में यह सन्तोष रहता है कि हमने अपनी सामर्थ्य भर उद्योग कर लिया, सफलता-असफलता तो परमात्मा के अधीन है.

इसी दैवी नियम को अपना आदर्श मानकर महाकवि दोनों संस्थाओं का संचालन अपने जीवन के अन्तिम वर्ष (१९४१) तक करते रहे। सन् ४० के सितम्बर से ही वे बीमार हो गये और मई १९४१ तक हालत खराब रही। इलाज के लिये उनको शान्ति निकेतन से कलकत्ता लाया गया जहाँ प्रसिद्ध डॉक्टर उनकी देख-भाल करते थे। उस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय गाँधी जी ने अपने प्राइवेट सेक्रेटरी महादेव देसाई को उनका समाचार लेने वर्धा से कलकत्ता भेजा । गाँधी जी का प्रेमपूर्ण सन्देश सुनकर उनकी आँखों से आँसू बहने लगे । इसके पहले कभी किसी ने उनकी आँखों में आँसू नहीं देखे थे । गाँधी जी के हार्दिक प्रेम ने ही उनके हृदय को इस प्रकार द्रवित कर दिया ।

इसके बाद बीच में उनकी तबियत कुछ सँभली । महाकवि की वर्षगाँठ बैसाख महीने में बड़ी धूम-धाम से मनाई गई । सब आश्रमवासियों ने खूब सजावट की और महाकवि को अनेक वस्तुयें भेंट दी गईं यद्यपि सब लोग उनको देखकर यह नहीं जानते थे कि यही उनकी अन्तिम वर्षगाँठ है, पर वे स्वयं इस बात को अच्छी तरह समझते थे । उन्होंने उस अवसर पर जो कविता बनाई उसमें आने वाली मृत्यु का स्पष्ट संकेत था ।

वर्षा आरम्भ होने पर उनका स्वास्थ्य फिर बिगड़ने लगा और इलाज के लिये फिर कलकत्ता जाना पड़ा, वहाँ सात जून १९४१ को उन्होंने अन्तिम साँस ली और अपना कर्त्तव्य पूरा करके जहाँ से आये थे वहीं चले गये ।

रवीन्द्र का साहित्य और कला

भारतवर्ष में कवियों और ग्रन्थकारों की कमी नहीं है । सभी प्रदेशों में और भाषाओं में दो-चार ऐसे कवि और रचयिता अवश्य हुए हैं जिनका नाम और यश स्थायी हो गया है इन सबकी रचनायें उत्कृष्ट श्रेणी की और मानव-मन को श्रेष्ठता का मार्गदर्शन कराने वाली हैं । पर रवीन्द्र के काव्य और कथा-साहित्य में कई ऐसी विशेषतायें हैं जो उनको सच्चे अर्थ में विश्व कवि बनाती हैं ।

पहली विशेषता यह है कि उन्होंने जो कुछ लिखा है वह किसी एक देश या जाति के लोगों को लक्ष्य करके नहीं लिखा । एक सच्चे अध्यात्मवादी की तरह उनको मनुष्यों के बीच किसी तरह का अन्तर नहीं जान पड़ता, वरन् 'एकोऽहम् बहुस्याम' की वैदिक घोषणा के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति उनको एक ही स्रोत से निर्गत प्रतीत होता है । यद्यपि उन्होंने अपनी रचनायें बँग्ला भाषा में लिखीं, इस कारण उनमें जो नाम आदि आये और जिन प्राकृतिक वातावरण तथा दृश्यों का चित्रण किया गया, वह अधिकांश में वहीं से सम्बन्धित था, तो भी उनका लक्ष्य मानव मात्र को अपना सन्देश सुनाना रहा । उनके द्वारा रचित बहुसंख्यक पुस्तकों पर इसी दृष्टि से विचार करते हुए एक विद्वान् ने रवीन्द्र-साहित्य का विश्लेषण इन शब्दों में किया है—

'कवीन्द्र-रवीन्द्र की प्रतिभा सर्वतोमुखी थी । उन्होंने कविता की है, कहानियाँ लिखी हैं और नाटक निर्मित किये हैं, उपन्यास रचे हैं और निबन्ध लिखे हैं । कितनी विविधता है उनके साहित्य में, शायद ही उनके समकालीन किसी लेखक का 'केनवास' (क्षेत्र) इतना विस्तीर्ण हो । रवि ठाकुर का साहित्य किसी देश और काल का साहित्य नहीं वह साहित्य है समस्त विश्व का और सब कालों का । वह संसार की मानवता से सम्बन्ध रखता है और चिर-समस्याओं सम्बन्धी सन्देश देता है । प्यासी मानवता के लिये वह खारा समुद्र न होकर क्षीर-सागर है । वे मानव दुःखों के निवारणार्थ समाज की कटु या तीखी आलोचना करके अपने साहित्य द्वारा कोई व्याख्यान नहीं देते, पर जो कुछ कहते हैं मानव की निर्बलताओं को अत्यन्त सहानुभूतिपूर्वक देखते हुए कलात्मक ढंग से । फिर उनका कथन उस देवदूत के सदृश जान पड़ता है जो मानव के सामाजिक सम्बन्धों से जकड़ा हुआ नहीं है । वह उनसे कुछ दूर है, कुछ हटा हुआ, पर इतनी दूर और इतना हटा हुआ भी नहीं कि निस्पृह और सहानुभूति से रहित हो जाये ।

"उनका साहित्य ऐसी मनोदशा में रचा हुआ जान पड़ता है, जो मनोदशा उसी मन की हो सकती है, जो छोटे-से शरीर में रहते हुए भी अपने को समस्त सृष्टि में व्याप्त अनुभव करे । इसीलिये उनके साहित्य में अत्यधिक व्यापकता है । वह तर्क पर आश्रित नहीं श्रद्धा पर आश्रित है । वह श्रद्धा किसी प्रकार के अन्ध-विश्वासों की श्रद्धा नहीं है, पर यह ऐसी श्रद्धा है जो अनित्य और अस्थायी वस्तुओं से परे नित्य और स्थायी वस्तु पर ही रह सकती है । रवि ठाकुर के साहित्य में किसी प्रकार के सिद्धान्त की कट्टरता या हठधर्मी अथवा वाद-विवाद नहीं मिलेगा । उसका लक्ष्य है मानवता को हर दृष्टि से सच्चा मानव बनाने और उसे ऊँचा उठाने का । कवि सम्राट का इस प्रकार का साहित्य इसलिये हो सका कि उनके आस्तिक और आशावादी मन को मानव की निर्बलतायें आच्छादित नहीं कर पाईं ।"

"सत्य तो यह है कि महाकवि रवीन्द्र भारतवर्ष के प्राचीन महाकवियों की परम्परा में से थे और महाभारत तथा रामायण जैसी दैवी भावयुक्त रचनाओं से प्रेरणा ग्रहण करके वे उसी मार्ग पर चले थे । व्यास, वाल्मीकि, तुलसी आदि महाकवियों ने जो कुछ लिखा है, वह यद्यपि हिन्दूधर्म से सम्बन्धित माना जाता है, पर इस वैज्ञानिक-युग में भी यूरोप और अमेरिका के विद्वान् उसे अपनी भाषाओं में अनुवादित करके और अध्ययन करके उसे महत्त्व दे रहे हैं । इसका कारण यही है कि उन्होंने जो कुछ कहा है वह मानव मात्र को एक मानते हुए ही कहा गया है । महाकवि रवीन्द्र भी इसी मार्ग के अनुयायी थे और उनकी रचनायें किसी संकीर्ण घेरे में आबद्ध न होकर विश्व-मानव की एकता और श्रेष्ठता का ही सन्देश देती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन

उत्तर प्रदेश के अंग्रेज गवर्नर लखनऊ से प्रयाग आकर इलाहाबाद के गवर्नमेन्ट हाउस में कुछ दिन तक निवास करने वाले थे। यह शानदार इमारत उस समय बनाई गई थी जब इस प्रान्त की राजधानी इलाहाबाद ही थी और गवर्नर वहाँ स्थायी रूप से रहा करते थे। पर राजधानी के लखनऊ स्थानान्तरित हो जाने से यह 'लाट साहब की कोठी' प्रायः खाली पड़ी रहती थी, यद्यपि पुलिस का एक गारद अब भी उसकी रखवाली के लिये तैनात था। इसलिये साल में एकाध महीने के लिये जब गवर्नर उसमें आकर ठहरते थे, तो वहाँ बड़ी तैयारियाँ होतीं और हर चीज की सफाई की जाती। उसमें एक तालाब या बड़ा कुण्ड भी था, जो वैसे खाली पड़ा रहता था पर आवश्यकता पड़ने पर नल के पानी से भर दिया जाता था। एक वर्ष जिस समय 'गवर्नर साहब' इलाहाबाद पधारे, वहाँ पानी का बड़ा अभाव था। वर्षा की कमी से यमुना नदी की धारा क्षीण पड़ गई थी और नलों में इतना पानी भी कठिनता से आता था जिससे नगर-निवासी अपनी प्यास बुझा सकें। सार्वजनिक नलों के सामने सदा बर्तन हाथ में लिये स्त्री, पुरुष और बच्चों की भीड़ लगी रहती थी और पानी के लिये प्रायः कहा-सुनी और झगड़े होते रहते थे।

ऐसे जल-कष्ट के समय गवर्नमेन्ट हाउस के तालाब में हजारों मन पानी केवल एक व्यक्ति के स्नान के लिये बर्बाद कर देना निश्चय ही घोर हृदयहीनता का परिचायक था। पर लखनऊ के आजीवन रंगरेलियाँ मनाने वाले 'नबावों के उत्तराधिकारी' गवर्नर साहब को गरीब भारतवासियों के प्यासे रहने की क्या चिन्ता हो सकती थी ? जब गवर्नमेन्ट हाउस में पदार्पण करने पर उन्होंने देखा कि तालाब सूखा ही पड़ा है तो उनके दिमाग का पारा कुछ ऊँचा चला गया और उन्होंने अपने प्राइवेट सेक्रेटरी को म्युनिसपैलिटी के चेयरमैन के पास जबाव तलब करने के लिये भेजा कि इस प्रकार की 'गलती' क्यों हुई और अब तालाब को तुरन्त भरा जाये। उस युग में अंग्रेज गवर्नर का पद 'भगवान के पद' से कुछ ही कम समझा जाता था और अधिकांश भारतीय पदाधिकारी उनकी अप्रसन्नता का ख्याल करके काँप उठते थे। पर अंग्रेज गवर्नर के अंग्रेज प्राइवेट सेक्रेटरी के आश्चर्य का उस समय ठिकाना न रहा जब इलाहाबाद म्युनिसपल बोर्ड के चेयरमैन ने उनको टका-सा जबाव दे दिया कि 'नगर की जनता को प्यासा मारकर गवर्नर साहब के स्नान के लिये नल के पानी से तालाब नहीं भरा जा सकता है।' प्राइवेट सेक्रेटरी ने अपना अंग्रेजी रौब-दाब दिखाकर काम निकालना चाहा पर चेयरमैन की दृढ़ता के सामने उसकी एक भी न चली।

उस युग में समस्त प्रान्त के कर्त्ता-धर्त्ता गवर्नर के आराम की उपेक्षा करके गरीब जनता के कष्टों और अभावों का ख्याल रखने वाले, और अपने आत्म-बल से अंग्रेज अधिकारी को फटकार देने वाले चेयरमैन थे—राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन। वे उन थोड़े से भारतवासियों में से थे जो उस अंग्रेज-प्रधान युग में भी अपने जातीय गौरव की रक्षा के लिये तत्पर रहते थे। वे उन कर्तव्यपरायण लोगों में से थे जो अपने वास्तविक उत्तरदायित्व का निर्वाह करने के लिये न पदवी की परवाह करते हैं, न धन की और न सुख-दुःख की। जनता के मध्य अन्य लोगों की तरह ही रहने के कारण वे अच्छी तरह जानते थे कि पानी की कमी के कारण नागरिकों को कितनी असुविधा सहन करनी पड़ रही है और गरीबों की स्थिति कैसी कष्टजनक हो रही है। ऐसे समय में एक व्यक्ति के मनोविनोद के लिये हजारों मन पेय-जल को तालाब के भरने में बर्बाद करना नैतिकता की दृष्टि से निःसन्देह एक अक्षम्य अपराध था। यदि और कोई सरकारी कृपा का भिखारी 'रायबहादुर' या 'रायसाहब' चेयरमैन होता तो वह सिर के बल चलकर गवर्नर की आज्ञापालन करता। पर खद्दर का फटा कुरता और टाट का जूता पहनने वाले टण्डन जी इन बातों को कैसे महत्त्व दे सकते थे ? उन्होंने गवर्नर की प्रसन्नता के बजाय सेवा-धर्म के पालन को ही उच्च माना।

उसी 'चेयरमैन' के जमाने की दूसरी घटना भी उनकी महानता पर प्रकाश डालने वाली है। अपने पद का भार सँभालने के कुछ ही समय बाद म्युनिसपैलिटी का हिसाब-किताब देखने पर उनको जान पड़ा कि नल के टैक्स का कई हजार रुपया इलाहाबाद सैनिक छावनी के अधिकारियों के नाम वसूल होने को पड़ा है। यद्यपि टैक्स का बिल नियमित रूप से छावनी के बड़े अफसर के पास भेजा जाता था, पर वे उसकी तरफ ध्यान ही नहीं देते थे। इसके पहले अन्य चेयरमैनों को भी इसका पता था, पर फौजी अंग्रेज अफसर से कड़ा तकाजा करने का उनको साहस न होता था। टण्डन जी ने स्थिति को समझकर एक के बाद एक कई पत्र तकाजे के उनको भिजवाये और जब उन्होंने उस पर कुछ ध्यान न दिया, तब आपने उनको नोटिस दिया कि "यदि एक सप्ताह के भीतर रुपया जमा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं किया तो फौजी क्षेत्र में पानी का जाना रोक दिया जायेगा ।" फौजी अफसर ने इसको भी कोरी धमकी समझा और टैक्स की रकम अदा न की । बस टण्डन जी ने पानी को रोकने की आज्ञा दे दी और एक ही दिन में सहाब लोगों के बँगलों में 'हाय-तोबा' मच गई । विवश होकर अफसर साहब दौड़े हुए आये और बकाया रकम का एक भाग जमा करके तथा शेष को शीघ्र ही भेजने का वायदा करके टण्डन जी से पानी को खोल देने की प्रार्थना की । इस प्रकार उन्होंने निरंकुश फौजी अधिकारियों से सार्वजनिक धन की एक बड़ी रकम वसूल करके उसे जनहितकारी कार्यों में लगाया ।

आरम्भिक जीवन

श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन (सन् १८८१-१९६२) का जन्म इलाहाबाद के एक साधारण परिवार में हुआ था । आपके पिता श्री सालिगराम एकाउण्टेण्ट जनरल के दफ्तर में नौकरी करते थे और समय की परिस्थितियों में उनकी आर्थिक दशा सामान्य थी । टण्डन जी अपने स्कूली-जीवन में एक बुद्धिमान विद्यार्थी माने जाते थे, पर वे खिलाड़ी भी एक नम्बर के थे । साथ ही उनमें निर्भीकता भी कूट-कूट कर भरी थी । दस वर्ष की आयु में आप एक दिन सिविल लाइन की तरफ घूमने चले गये, वहाँ कुछ अंग्रेज लड़कों से कहा सुनी हो गई और इन्होंने उनको खूब पीटा । इतने में और कई अंग्रेज लड़के आ गये । इनके सब साथी भागने को तैयार हो गये, पर ये फिर भी साहसपूर्वक उनसे भिड़ गये और काफी मार खाने के बाद भी अन्त में उनको भगाकर ही छोड़ा । इस प्रकार वे बाल्यावस्था से ही अंग्रेजों से निडर रहने का अभ्यास कर चुके थे ।

कॉलेज में भी आपने इस निर्भीकता का परिचय दिया । जैसा कहा जा चुका है आप बड़े खिलाड़ी थे और कॉलेज की खेल कमेटी के सेक्रेटरी तथा क्रिकेट टीम के कप्तान थे । एक बार कॉलेज में प्रान्तीय टूर्नामेण्ट (खेल-प्रतियोगिता) हो रहा था । उसके प्रबन्धक मि. हिल ने, जो कॉलिज के ही एक प्रोफेसर थे, प्रबन्ध करने के लिये पुलिस बुला ली । यह बात विद्यार्थियों को नापसन्द हुई, क्योंकि वे इसे अपनी अप्रतिष्ठा समझते थे । खेल के समय किसी बालक को पुलिस के एक सिपाही ने धक्का देकर निकाल दिया । टण्डन जी ने पुलिस वाले को इस व्यवहार के लिये फटकारा तो बात बढ़ गई और मामला हिल साहब के सामने पहुँचा । साथियों ने टण्डन जी से कहा कि वे घर चले जायें जिससे हिल साहब से झगड़ा होने की नौबत न आवे । पर उन्होंने अपने उत्तरदायित्व से पीछे हटना स्वीकार न किया और हिल साहब के पास जाकर सारी घटना स्वयं ही सुना दी । हिल साहब ने निर्णय किया कि 'हमको इस मामले में कुछ कहना नहीं है, नगर पुलिस चाहे तो इनको हवालात भेज सकती है ।' पर टण्डन जी की तेजस्विता के सामने पुलिस वालों को दब जाना पड़ा । दूसरे दिन इसी घटना को लेकर कॉलेज के ३०० विद्यार्थियों ने हड़ताल कर दी और टूर्नामेण्ट में भाग लेना छोड़ दिया । इसके परिणामस्वरूप टण्डन जी को एक वर्ष के लिये कॉलेज से निकाल दिया गया और उतने समय तक इनकी पढ़ाई रुकी रही ।

ठीक ऐसी ही घटना देशभक्त सुभाष बाबू के सम्बन्ध में हुई थी । उन्होने भी अंग्रेज प्रोफेसरों के अनुचित व्यवहार के विरोध में कॉलेज में हड़ताल करा दी थी, जिसके लिये उनको निकाल दिया और दो वर्ष बाद बड़ी कठिनाई से अन्य कॉलेज में प्रवेश मिल सका । वास्तव में यह इन महापुरुषों की जातीय सम्मान की भावना का चिह्न था कि वे अंग्रेजों द्वारा भारतीयता की जान-बूझ कर उपेक्षा किया जाना तनिक भी सहन नहीं कर सकते थे और किसी तरह की हानि की परवाह न करके विरोध के लिये तैयार हो जाते थे । खेद है कि आज वैसी जातीयता की भावना बहुत थोड़े लोगों में दिखाई पड़ती है, अन्यथा प्रायः लोग व्यक्तिगत लाभ के सामने इस तरफ ध्यान ही नहीं देते । ऐसे लोग कभी जनता से सम्मानास्पद होने की आशा नहीं कर सकते ।

टण्डन जी अपनी इस मनोवृत्ति का परिचय देने से कभी पीछे नहीं हटे । जिस समय वे चेयरमैन थे, इंग्लैण्ड से प्रिंस आफ वेल्स भारत-यात्रा के लिये आये । इलाहाबाद के म्युनिसपल बोर्ड ने भी उनको अभिनन्दन पत्र दिया । नियमानुसार वह चेयरमैन द्वारा ही पड़ा जाना चाहिये था । पर टण्डन जी ने इस बात को, जिसके लिये अन्य लाखों लोग लालायित होते अपने सिद्धान्त के विरुद्ध समझा और उसे पढ़ने से इन्कार कर दिया । बोर्ड के वाइस चेयरमैन (उपाध्यक्ष) ने उसे पढ़कर सुनाया ।

त्याग और कष्ट-सहन

देश-सेवा और मातृभाषा-सेवा के क्षेत्र में टण्डन जी के जमाने में और भी अनेक सज्जन प्रशंसनीय कार्य कर रहे थे, पर त्याग और निस्पृहता की मात्रा उनमें जितनी अधिक पाई जाती थी, उतनी गाँधी जी के अतिरिक्त और किसी में नहीं देखने में आई यद्यपि वे इलाहाबाद हाईकोर्ट के एक अच्छे वकील थे और यदि अन्य वकीलों की तरह उस पेशे में पूरी शक्ति लगाकर काम करते तो सहज में लखपति बन सकते थे । पर उनका ध्यान वकालत की अपेक्षा सार्वजनिक सेवा के कार्यों में अधिक रहता था ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यही कारण था कि उनकी आर्थिक स्थिति सदैव साधारण ही बनी रही और बीच-बीच में ऐसे भी अवसर आये जबकि घर में अच्छी तरह रोटी मिलना भी कठिन हो गया। सन् १९१४ में माननीय मालवीय जी के कहने से आपने नाभा राज्य में मंत्री पद पर काम करना स्वीकार कर लिया पर जब देखा कि उसके कारण उनको सार्वजनिक सेवा कार्य करने का समय नहीं मिलता और न हिन्दी साहित्य-सम्मेलन की वृद्धि के लिये उचित प्रयत्न कर सकते हैं, तो आपने उस उच्च पद को सब लोगों और नाभा नरेश के अत्यधिक आग्रह करने पर भी छोड़ दिया।

जब गाँधी जी ने भारत में असहयोग आन्दोलन चलाया और लोगों से सरकारी अदालतों, नौकरियाँ और स्कूल आदि छोड़ने को कहा तो आपने बिना किसी संकोच के वकालत छोड़ दी और इस बात की भी चिन्ता न की कि फिर घर का काम कैसे चलेगा? यद्यपि श्री जमनालाल आदि धनी कांग्रेसी नेताओं ने अन्य कार्यकर्ताओं के समान इनको भी आर्थिक सहायता देने का प्रस्ताव किया, पर आपने सदा यही उत्तर दिया कि मैं अपने सेवा-कार्यों के लिये इस प्रकार धन लेना कभी पसन्द नहीं कर सकता।

जब लाला लाजपत राय को उनके आर्थिक कष्टों का पता चला कि कभी-कभी उनके घर में रोटी बनने की भी नौबत नहीं आती, तो वे उनको अपने साथ लाहौर ले गये और 'पंजाब नेशनल बैंक' में सेक्रेटरी के पद पर नियुक्त करा दिया। सन् १९२८ में लालाजी की मृत्यु के पश्चात् आपको ही उनके 'लोक सेवक मंडल' का अध्यक्ष बनाया गया। पहले तो उन्होंने इस पद को स्वीकार करने से इन्कार किया, क्योंकि इसके अध्यक्ष को अपनी समस्त कमाई तथा जीवन के अन्त तक समस्त समय मण्डल के कार्य में ही व्यय करने की प्रतिज्ञा करनी पड़ती थी। पर जब महात्मा गाँधी ने भी उनसे इस पद को स्वीकार कर लेने का आग्रह किया और घर वालों ने भी परिस्थिति को समझ कर अनुमति दे दी तो आपको उसे स्वीकार करना ही पड़ा।

किसान संगठन

आप किसान संगठन का कार्य असहयोग आन्दोलन से भी पहले से कर रहे थे। पर बाद में गाँधी जी के कार्यक्रम में भाग लेने के कारण वह ढीला पड़ गया था। सन् १९२९ में आपने उसी कार्य को फिर आरम्भ करने का निश्चय किया और पंजाब नेशनल बैंक की नौकरी छोड़कर इलाहाबाद चले आये। यहाँ आपने जमींदारी-प्रथा के उन्मूलन और भूमि पर किसानों का अधिकार होने का आन्दोलन उठाया। इसके साथ ही कांग्रेस संगठन का कार्य भी करते जाते थे। जब आप इस कार्य के लिये काशी के श्री शिवप्रसाद गुप्त और आचार्य नरेन्द्र देव के साथ बस्ती जिले में गये तो वहाँ के कलक्टर ने इन पर निषेधाज्ञा लगाकर जिले से बाहर चले जाने का आदेश दे दिया। जब इस आदेश का उल्लंघन किया गया तो तीनों गिरफ्तार कर लिये गये और प्रत्येक को तीन-तीन सप्ताह की सजा दी गई। वहाँ से छूटने पर फिर गाँधी जी के नमक सत्याग्रह में सम्मिलित हो गये और उत्तर प्रदेश के कांग्रेस के अध्यक्ष के पद पर कार्य करते हुए आपको जेल जाना पड़ा।

विधान सभा के अध्यक्ष

सन् १९३७ में जब कांग्रेस के चुनावों में भाग लिया और सभी प्रान्तों में कांग्रेस सरकारें स्थापित हो गईं तो टण्डन जी उत्तर प्रदेश की विधान सभा के अध्यक्ष चुने गये। पर इस पद को स्वीकार करते हुए आपने यह शर्त पेश की कि वे इस पद का कार्य करते हुए भी कौंसिलों के बाहर अपना राजनीतिक कार्य बन्द नहीं करेंगे। इससे कुछ लोगों को आशंका हुई कि आप अध्यक्ष का कार्य निष्पक्ष रूप से न कर सकेंगे, जिसकी कि उनसे आशा की जाती है। आपने उत्तर दिया कि "कुछ सदस्यों की यह आशंका सर्वथा निर्मूल है। मैं बाहर चाहे जिस दल का कार्य करता रहूँ, पर विधान-सभा के भीतर सदैव तमाम पार्टियों के सदस्यों के साथ एक-सा ही बर्ताव करूँगा। यदि कौंसिल के सदस्य मेरे कार्य से असन्तुष्ट होकर अविश्वास करने लगे तो मैं इस पद को त्यागने में जरा भी विलम्ब न करूँगा।"

टण्डन जी के चरित्र की दृढ़ता, उनकी सत्यवादिता, तथा त्याग-वृति पर सभी दलों के व्यक्तियों को इतनी अधिक आस्था थी कि उनके कथन का प्रतिवाद करने का साहस कोई न कर सका। उन दिनों श्री वल्लभभाई पटेल बम्बई व्यवस्थापिका सभा के अध्यक्ष थे और उनकी निष्पक्ष नीति और कार्य संचालन की सर्वत्र सराहना की जाती थी। उनका एक प्रसिद्ध सिद्धान्त यह था कि "व्यवस्थापिका सभा के अध्यक्षों को किसी राजनीतिक दल से सम्बन्ध न रखना चाहिये।" यद्यपि टण्डन जी ने इस सिद्धान्त के विपरीत सार्वजनिक रूप से कांग्रेस का कार्य करते रहने की घोषणा कर दी थी, पर उनके दो ढाई वर्ष के अध्यक्षता काल से एक भी ऐसी बात नहीं हुई, जिस पर कोई अँगुली उठा सके। यही थी, उनकी सत्यवृत्ति और आत्मबल की शक्ति।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना

यद्यपि टण्डन जी का नाम हिन्दी-लेखक की हैसियत से प्रसिद्ध नहीं है, और न उन्होंने फुटकर लेखों और कुछ निबन्धों के अतिरिक्त कोई विशेष पुस्तक लिखी है, पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हिन्दी-संसार में उनके नाम की जितनी धाक थी और उनको जितना सम्मान प्राप्त था उसका अन्य उदाहरण मिलना कठिन है । वे आरम्भ से ही मातृ-भाषा के अनन्य भक्त थे और स्वर्गीय बालकृष्ण भट्ट के 'हिन्दी प्रदीप' तथा मालवीय जी के 'अभ्युदय' में बराबर लेख भी देते रहते थे । अभ्युदय के तो वे एक वर्ष तक सम्पादक भी रहे थे । पर राजनैतिक क्षेत्र के एक प्रमुख कार्यकर्ता होने के कारण उनको अपने विचार अधिकांश में भाषणों और व्याख्यानों के रूप में ही प्रकट करने पड़ते थे, जिससे ग्रन्थ-लेखन का अवकाश ही नहीं रहता था ।

पर इतना होने पर भी टण्डन जी हिन्दी लेखक-समुदाय के 'सिरमौर' माने जाते थे । उनके परिश्रम तथा प्रभाव से जितने अधिक हिन्दी-लेखक बने तथा हिन्दी-ग्रन्थ कर्ताओं ने सहायता प्राप्त की, उनकी गिनती कर सकना सम्भव नहीं । उन्होंने हिन्दी-प्रचार की जड़ जमाने के लिये और हिन्दी को भारतवर्ष की राष्ट्रीय भाषा बनाने के लिये इतना अधिक कार्य और स्वार्थत्याग किया कि उनका नाम याद आते ही 'हिन्दी-सेवा' का भाव मूर्तिमान हो जाता है । उनकी चर्चा करते हुए बिहार के श्रेष्ठ साहित्यकार श्री शिवपूजन सहाय ने लिखा था—

"राजर्षि पुरुषोत्तम टण्डन हिन्दी के लिये जिये और हिन्दी के लिये मरे । हिन्दी उनकी जिन्दगी की साँस थी । हिन्दी उनकी आँखों की ज्योति थी । हिन्दी ही उनके मस्तिष्क की चिन्तनधारा थी । हिन्दी उनके रोम-रोम में रमी हुई थी । अपनी वाणी से उन्होंने हिन्दी की अपूर्व सेवा की है । 'अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन' के वह सजग प्रहरी थे । आप उन्हें सम्मेलन का जनक, प्रतिपालक, संरक्षक कुछ भी कहें, उनके लिये उपयुक्त ही होगा । उन्होंने उसके माध्यम से हिन्दी के हितार्थ जो प्रचारात्मक और रचनात्मक कार्य किये और कराये, वे ऐतिहासिक महत्त्व के हैं । टण्डन जी ने हिन्दी-भाषा के कल्पवृक्ष को अपने एक-एक रक्त बिन्दु से सींचकर पल्लवित, पुष्पित और फलित किया । आज भी प्रत्येक सहृदय साहित्यिक व्यक्ति हिन्दी हित साधन में उनके आदर्श आत्मोत्सर्ग, का स्मरण करके उनकी स्मृति में नत-मस्तक होता है । त्याग और तप की दृष्टि से वे हिन्दी-जगत के "महात्मा गाँधी ही थे ।"

निसन्देह सच्चा सेवक और त्यागी वही है जो अपने लक्ष्य के लिये सर्वस्व अर्पण कर दे । इसके बिना संसार में कोई महत्त्वपूर्ण कार्य पूरा नहीं हो सकता । जो लोग सार्वजनिक आन्दोलनों में शौक या कुछ नाम कमाने के लिये भाग लेने लगते हैं, अथवा जिनका उद्देश्य सार्वजनिक संस्थाओं में घुसकर रुपया पैदा करना होता है, वे टण्डन जी जैसे त्यागवीरों की महिमा को अनुभव नहीं कर सकते । वे उन व्यक्तियों में से थे जिनकी प्रशंसा वे लोग भी करते हैं जिनका उनके साथ मतभेद रहता है । यद्यपि टण्डन जी और पं. जवाहर लाल नेहरू एक ही नगर के निवासी होने और एक साथ कांग्रेस आन्दोलन में सम्मिलित होने के कारण परस्पर घनिष्ठ मित्रता का भाव रखते पर हिन्दी-प्रचार के सम्बन्ध में उनमें कई बातों में मतभेद भी था । जहाँ टण्डन जी ने सम्मेलन द्वारा संस्कृत शब्दों से युक्त भाषा को प्रधानता दी, वहाँ नेहरू जी ने हिन्दू-उर्दू शब्दों के मेल-जोल से बनी हिन्दुस्तानी भाषा के प्रयोग को देश की एकता की दृष्टि से अधिक हितकर माना । इसलिये इन दोनों नेताओं में अनेक बार वाद-विवाद भी छिड़ जाता था । पर जब टण्डन जी का स्वर्गवास हुआ तो नेहरू जी ने कहा—

"वह मेरे सबसे पुराने मित्रों और साथियों में से थे, जिनके प्रति मेरे दिल में बहुत प्यार और आदर था । उन्होंने देश के हित के लिये अपना पूरा जीवन लगाया, वे एकता तथा सादा जीवन के प्रतीक थे ।"

हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन कराने के सम्बन्ध में भी उनका अनेक प्रसिद्ध पुरुषों से मतभेद और विरोध हुआ था । सन् १९२५ में ही कांग्रेस की विषय निर्धारिणी समिति में उन्होंने यह प्रस्ताव रखा था कि उसका सारा कार्य अंग्रेजी के बजाय 'हिन्दुस्तानी' भाषा में किया जाये । चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य और पं. मोतीलाल नेहरू ने इसका विरोध किया तो भी टण्डन जी का प्रस्ताव पास हो गया और हिन्दी को कांग्रेस के विधान में सम्मिलित कर लिया गया । इसी प्रकार हिन्दी-शैली के सम्बन्ध में आपका महात्मा गाँधी से भी मतभेद होता रहा । वे भी भारत की अनेक जातियों तथा मजहबों की एकता के ख्याल से उर्दू मिली-जुली भाषा का प्रचार करने के पक्ष में थे । जब हिन्दी साहित्य सम्मेलन के कार्यकर्ताओं से उनका मत न मिल सका तो उन्होंने सम्मेलन से त्याग-पत्र दे दिया । टण्डन जी ने उसका उत्तर देते हुए लिखा—"यदि आप मेरे दृष्टिकोण से सहमत नहीं हैं और आपकी आत्मा कहती है कि सम्मेलन से अलग हो जाऊँ, तो आपके अलग होने पर बहुत खेद होने पर भी मैं नतमस्तक होकर आपके निर्णय को स्वीकार करूँगा ।"

उन दिनों गाँधी जी की सम्मति से विरोध प्रकट करना सार्वजनिक जीवन की दृष्टि से एक घातक बात थी, क्योंकि समस्त राष्ट्र बहुत बड़े बहुमत से उनके पीछे चल रहा था । पर मातृभाषा की सेवा का प्रश्न उठने पर टण्डन जी ने उस खतरे को भी उठा लिया । इसमें सन्देह नहीं कि इसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पश्चात् राजनीतिक क्षेत्र में उनका प्रभाव कम हो गया, पर हिन्दी-प्रचारकों के वे आराध्य बन गये । उनका यह कार्य किसी प्रकार की अन्धश्रद्धा अथवा हठधर्मी के कारण न था, वरन् उनका हार्दिक विश्वास था कि भारतीय राष्ट्र की एकता और प्रगति के लिये हिन्दी की अधिक से अधिक प्रगति और उसे सर्वोच्च पद दिया जाना अनिवार्य है । टण्डन जी के इस दृष्टिकोण की विवेचना करते हुए हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक सेठ गोविन्द दास जी ने लिखा है—

"टण्डन जी का लक्ष्य यही था कि देशवासियों के सतत् संघर्षों और बलिदानों की सार्थकता के रूप में जो स्वाधीनता हमें मिली है, उसके सभी सूत्रों को प्राप्त करके हम भारतीय आत्मा को सौंप दें । इन सूत्रों में उनका प्रधान सूत्र था राष्ट्र-भाषा को राष्ट्र-भाषा के रूप में व्यवहार में लाना । इसके साथ ही उनकी यह भी आकांक्षा रही कि भारत जिस श्रेष्ठ संस्कृति के कारण प्राचीनकाल में संसार का सिरमौर रहा है, अपनी उस विरासत को अक्षुण्ण रखे । आज के प्रगतिशील युग में जब बड़े-बड़े राष्ट्र विज्ञान की घुड़-दौड़ में पड़े हैं, टण्डन जी, विज्ञान और उसकी उपलब्धियों के प्रशंसक होते हुए भी, पुरातन और नूतन के सामंजस्य के समर्थक थे । हो सकता है कि कुछ लोगों की दृष्टि में वह रूढ़िवादी हों अथवा उनकी विचारधारा किसी वर्ग-विशेष के अनुयायियों की दृष्टि में फीकी जँचती हो, पर टण्डन जी प्रगतिशीलता के नाम पर भारतीय संस्कृति की छाती पर यूरोपीय ढंग का कोई नया वृक्षारोपण करने के विरुद्ध थे । उनकी मान्यता थी कि हमारा संस्कृति रूपी यह वट-वृक्ष, जिसकी शाखायें और टहनियाँ न केवल समस्त देश पर आच्छादित हैं, वरन् जिसकी शीतल वायु के झोंके बाहरी देशों तक भी सुरभि का वातावरण बनाये रखने में समर्थ हैं, उसका पोषण और अधिक विकास करने में ही हमारा कल्याण है ।"

पर टण्डन जी की इन भावनाओं में किसी भी प्रकार का द्वेष, अहंभाव अथवा स्वार्थ न था वरन् वे एक-मात्र राष्ट्रहित को ही लक्ष्य रखकर हिन्दी को राज्य-भाषा घोषित कराने का आन्दोलन कर रहे थे । इस सम्बन्ध में नवभारत टाइम्स (दिल्ली) के एक लेख में कहा गया है—

"वे राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी के लिये सारे जीवन आन्दोलन करते रहे और उसकी चिन्ता करते-करते ही उनका निधन हुआ । किसी अन्य भाषा से द्वेष रखकर या प्रान्तीयता की सीमा में बँधकर उन्होंने हिन्दी का आन्दोलन नहीं किया, वरन् उनका सदा यह विश्वास रहा कि भारत में जन-सम्पर्क की भाषा होने और समस्त देशवासियों को एक कड़ी में पिरोने की शक्ति हिन्दी में ही है । इसलिये वे केवल उत्तर प्रदेश में ही नहीं वरन् समस्त भारत में इसके लिये आन्दोलन करते रहे । वे सदैव कहा करते थे कि यदि कभी हिन्दी के कारण राष्ट्र की एकता में बाधा उपस्थित हुई तो मैं सबसे पहले उसका विरोध करता दिखाई दूँगा ।"

इतना ही नहीं जब भारतीय संविधान-सभा में हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के सम्बन्ध में समस्त देश के प्रमुख व्यक्तियों के सम्मुख विचार किया गया तो टण्डन जी ने अपने उपर्युक्त दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए कहा था—

"अत्यन्त विनम्रतापूर्वक मैं यह निवेदन करता हूँ कि राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रश्न पर जनमत गणना की बात मुझे सहर्ष स्वीकार है । यदि कोई प्रान्त हिन्दी को स्वीकार नहीं करता तो मैं वहाँ के लोगों पर हिन्दी को कभी नहीं लादूँगा । मैं तत्काल कहूँगा कि हिन्दी को राष्ट्र-भाषा नहीं होना चाहिये । हिन्दी को किसी प्रान्त पर क्यों थोपा जाये ? यह तो प्रान्तों को निर्णय करना है कि वे हिन्दी को स्वीकार करते हैं या नहीं । वे चाहें तो अंग्रेजी को ही चालू रख सकते हैं अथवा वे 'एसपरैन्टो' जैसी किसी कृत्रिम भाषा को अपना सकते हैं । यदि उनका ऐसा ही विचार हो तो मैं उसे स्वीकार कर लूँगा किन्तु जनता की इच्छा को जानने का कोई मार्ग तो निकालना चाहिये । यहाँ मेरे मित्र चाहे कुछ भी कहें, मुझे तो आशा है कि मद्रास की बहुसंख्यक जनता भी हिन्दी को चाहेगी ।"

शायद कुछ लोग यह समझते हों कि टण्डन जी हिन्दी-भाषी और उसके ज्ञाता होने के कारण ही उसका पक्षपात करते थे, तो यह शंका ठीक न होगी । उनका विद्यारम्भ उस समय की परिस्थितियों के कारण उर्दू, फारसी में ही हुआ था और उनके सर्वप्रथम 'गुरु' एक मुसलमान मौलवी ही थे जिनका सम्मान और सहायता वे अन्तिम समय तक करते रहे । उर्दू और फारसी साहित्य के वे अच्छे जानकार थे । इसी प्रकार अंग्रेजी और संस्कृत पर भी उनका पर्याप्त अधिकार था । पर भारतीय संस्कृति की विशेषता और यहाँ की जनता की मनोवृत्ति का अध्ययन करके ही वे हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में सर्वत्र प्रचलित करने के लिये प्रयत्नशील थे और उन्होंने अपना जीवन इसी कार्य में लगा दिया ।

हिन्दी प्रचार के लिये सच्ची लगन

टण्डन जी जो कुछ हिन्दी के सम्बन्ध में कहते थे उस पर उनकी हार्दिक आस्था कितनी अधिक थी इसका एक उदाहरण श्री रामप्रताप त्रिपाठी शास्त्री ने अपने लेख में दिया है । शास्त्री जी वर्षों से हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रमुख कार्यकर्ता हैं और उनको सदा टण्डन जी के निकट सम्पर्क में रहने का अवसर मिला है । आयु और पदवी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की निगाह से भी वे उनको अपना एक पूज्य गुरुजन मानते रहे हैं ।

टण्डन जी का हिन्दी-प्रेम कितना अगाध था इसका एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा । वे भारतीय संस्कृति के बहु-विश्रुत अनन्य जन-नायक थे और संस्कृत भाषा की उन्हें अच्छी जानकारी थी । भारतीय समाज में ऐसी कोई कुल-परम्परा नहीं जिसमें संस्कृत भाषा के बिना काम चल सके किन्तु टण्डन जी ने धार्मिक कृत्यों में भी हिन्दी को प्रवेश दिलाने का सच्चा प्रयत्न किया था । उन्होंने अपने कई पुत्रों के विवाह हिन्दी विवाह-पद्धति के अनुसार कराये थे । न केवल विधियों का ही अपितु वैदिक मंत्रों का भी हिन्दी अनुवाद कराया था ।

उक्त प्रसंग उस समय हुआ जब टण्डन जी के पुत्र डॉ. आनन्द कुमार का विवाह होने को था । टण्डन जी के पास एक पुरानी हिन्दी में अनूदित हस्तलिखित विवाह-पद्धति थी जो असावधानी से कहीं रख देने के कारण दीमकों द्वारा चट की जा चुकी थी । परिवार के विवाह के अवसरों पर ही उसकी झाड़-पौंछ की जाती थी । टण्डन जी ने जब देखा कि उससे काम चलना असम्भव है और विवाह हिन्दी में ही कराना है तो उन्होंने मुझे यह काम सौंपा कि पुनः विवाह-पद्धति का मन्त्रों सहित हिन्दी अनुवाद यथाशीघ्र कर दूँ । मैंने कार्य आरम्भ तो कर दिया किन्तु जन्मना ब्राह्मण और वह भी संस्कृत परम्परा में पालित-पोषित होने के कारण इस कार्य में उचित मनोयोग न कर सका, परिणाम यह हुआ कि दो तीन दिन यों ही बीत गये और काम नाम मात्र को ही हुआ । जब विवाह के दस-बारह दिन ही रह गये तो मैं बुलाया गया । मैंने कुछ लज्जित होकर क्षमा-याचना के भाव से कहा—"बाबूजी, वैदिक मन्त्रों को तो आप उसी भाषा में रहने दीजिये, क्योंकि अनुवाद होने पर उनका प्रभाव नष्ट हो जायेगा ।"

"अपने कथन की पुष्टि में मैंने महावैयाकरण पाणिनि का एक वाक्य भी उपस्थित किया कि 'मन्त्रों का वर्ण और स्वर विपर्यय अनर्थकारी होता है ।' टण्डन जी ने कहा—"भाषा तो विचारों को प्रकट करने का माध्यम है । जिसको हम समझेंगे ही नहीं उसका भला हम पर क्या प्रभाव पड़ेगा ?" विवाह के मन्त्रों में अनेक माँगलिक एवं समाज-हितकारी भावनायें व्यक्त की गईं हैं । वे उस युग के लिये तो ठीक थीं जब लोग उस भाषा को समझते थे किन्तु आज का समाज उससे बहुत दूर हो गया है । तोता के 'राम-राम' रटने की भाँति कोरे मन्त्रों के पाठ से तो कोई फल न होगा । मुझे आश्चर्य है आप जैसे लोग भी ऐसी बात क्यों नहीं समझते ?"

अन्त में उन्होंने शास्त्री जी को अपने पास बैठाकर और स्वयं भी मिलकर पाँच-छः दिन विवाह-पद्धति का अनुवाद कराया और बाद में उसे छपा कर प्रकाशित भी करा दिया । उनके घर में सभी विवाह इसी के अनुसार किये गये । कई बार पुरोहित का कार्य उन्होंने स्वयं ही किया, पर किसी भी विघ्न-बाधा से विचलित होकर वे अपने ध्येय से हट न सके ।

बात यही थी कि उनको हिन्दी की शक्ति पर अटूट श्रद्धा थी और जैसे अनेक प्राचीन सन्तों ने पंडित पुरोहितों के विरोध के होते हुए भी अपनी सम्पूर्ण शक्ति देश भाषा द्वारा धर्म-प्रचार में लगा दी थी, उसी प्रकार टण्डन जी ने युग-पुरुष गाँधी के मतभेद को सहन करके हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर विराजमान कराने के लिये अपनी समस्त शक्ति और व्यक्तित्व तक अर्पित कर दिया । यदि उनके कार्य में किसी प्रकार के स्वार्थ की गन्ध तक होती, या उन्होंने अपने आन्दोलन द्वारा किसी तरह का निजी लाभ उठाया होता तो गाँधी जी से विपरीत दृष्टिकोण रखने पर सार्वजनिक क्षेत्र में उनका अस्तित्व निश्चय ही समाप्त हो जाता । पर वे तो शुद्ध-भाव और देश हित की दृष्टि से कार्य करने वाले थे, अतएव इस अग्नि-परीक्षा में होकर भी पहले से अधिक निर्मल रूप में जनता के सामने प्रकट हुए, उनके इन्हीं गुणों से प्रभावित होकर हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध विद्वान गुलाबराय जी ने लिखा था—

"टण्डन जी उन विरले व्यक्तियों में से थे जिनकी कथनी और करनी में अन्तर नहीं था । इस विषय में वे महात्मा गाँधी और सन्त विनोबा की श्रेणी में रखे जा सकते हैं । गाँधी जी द्वारा प्रचारित 'एकादश व्रत' उनमें जीवित रूप में दिखाई देते थे—वह गृहस्थ होते हुए भी सच्चे त्यागी थे । जब वे प्रान्तीय विधान सभा के अध्यक्ष थे तो भी अपने कपड़े अपने हाथ से धोकर शारीरिक श्रम का नियम पालन करते थे । सुना है कि एक बार इन्कमटैक्स अफसर उनके हिसाब में कुछ भूल कर गये, जिससे उनको कम रुपया देना पड़ता था । टण्डन जी ने भूल सुधारने के लिये स्वयं ही सब कागजात उनके पास पुनः भेज दिये । ऐसी सत्यनिष्ठा मुश्किल से ही देखने में आती है ।"

"वह सत्य और स्वतन्त्रता के अनन्य उपासक थे । सत्य के उद्घाटन में वह निर्भीक रहते थे । दूसरे के पक्ष को पूर्ण महत्त्व देते हुए भी वह अपने पक्ष को कुशल वकील की तरह ही नहीं वरन् वीर सेनानायक की भाँति अग्रसर करने में आना-कानी नहीं करते थे । सच्चे देश-भक्त होते हुए उन्होंने निर्भीकतापूर्वक हिन्दी का पक्ष लिया । वे हिन्दी का समर्थन देश के सर्वोच्च हितों के लिये आवश्यक समझते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थे । वे हिन्दी को राष्ट्रीय एकता का मूलमन्त्र मानते थे । इसी राष्ट्रीय-दृष्टि से उन्होंने कांग्रेस के अनेक प्रमुख नेताओं के विरुद्ध हिन्दी-पक्ष बड़े जोर-शोर से सामने रखा । हिन्दी के राष्ट्रभाषा घोषित हो जाने पर भी अंग्रेजी अंकों की 'पूँछ' बाकी रह गई थी, उसके लिये वह आजीवन विरोध प्रकट करते रहे ।"

अन्य लोग भी उनके इस महान गुण की पूर्ण कदर करते थे । सन् १९५१ में आप अखिल भारतीय कांग्रेस के ५६वें अधिवेशन के अध्यक्ष चुने गये । यद्यपि राष्ट्रभाषा सम्बन्धी मतभेद के कारण बड़ी-बड़ी शक्तियों ने इस चुनाव को रोकने का प्रयत्न किया । पर त्याग और तपस्या के बल पर वे पर्याप्त बहुमत से चुन ही लिये गये । उस अवसर पर भारत के सुप्रसिद्ध अंग्रेजी दैनिक पत्र 'हिन्दुस्तान टाइम्स' ने उनकी प्रशस्ति में एक कालम का हिन्दी लेख प्रकाशित किया । यह एक सर्वथा नई बात थी । पर अपने भाषा सम्बन्धी विचारों के कारण जब आपने उस पद पर अन्य नेताओं के साथ मिलकर काम कर सकना कठिन देखा, और स्वयं पं. जवाहरलाल जी ने कांग्रेस-कार्यकारिणी की सदस्यता से इस्तीफा दे दिया तो आपने अध्यक्ष पद को सवेच्छापूर्वक छोड़ दिया । पर कांग्रेस को उन्होंने कभी नहीं त्यागा और जीवन के अन्त तक जैसा अवसर आया उसकी सेवा करते ही रहे । प्रत्येक सार्वजनिक कार्यकर्ता के लिये उनका यह उदाहरण अनुकरणीय है । जो लोग लोक-हितकारी या जातीय संस्थाओं में अपना कुछ विरोध होते देखकर हट ही नहीं जाते वरन् उसके मुकाबले में दूसरी संस्था खड़ी करने का प्रयत्न करने लगते हैं, या अन्य किसी प्रकार से उसे हानि पहुँचाने की चेष्टा करने लगते हैं, वे उपर्युक्त घटना से अवश्य ही शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं ।

सत्य के सच्चे पुजारी

वास्तव में टण्डन जी का मूलमन्त्र प्रत्येक अवस्था में सत्य का अनुसरण करना था । वे इस सम्बन्ध में "एकहि साधे सब सधै' सिद्धान्त के अनुयायी थे । परिस्थिति और देश की आवश्यकतानुसार उनको विविध क्षेत्रों में काम करना पड़ता था, पर वे इस बात को सदा दृष्टिगोचर रखते थे कि कहीं भी उनसे अनुचित बात अथवा अन्याय का समर्थन न हो जाये । उनकी इस मनोवृत्ति का जो परिचय उनके एक अन्तरंग सहकारी श्री वियोगी हरि ने दिया था उसमें सार रूप में कहा गया था—

"जब टण्डन जी के आदर्श जीवन की ओर हमारी दृष्टि जाती है तब उनके विविध लोक-सेवा कार्य सामने आ जाते हैं । वे कार्य हैं—राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक और धार्मिक । अपनी-अपनी रुचि, और दृष्टि के अनुसार हम उनके जीवन के किसी एक पहलू को लेते हैं और उसी को प्रधानता देने लगते हैं ।

"जब जन-सेवा के सच्चे क्षेत्र से राजनीति वालों के पैर काँपा करते थे, उस समय टण्डन जी ने उत्तर प्रदेश के अन्याय-पीड़ित किसानों के अन्दर प्राण फूँके थे, किसान सभाओं का मजबूत संगठन किया था । तत्कालीन शासकों ने भी इस संगठन को राजनीति का एक पुख्ता कदम माना था । समाज के उपेक्षित और आखिरी पंक्ति में खड़े हुए उस अंग ने, जिसे छूने से भी परहेज किया जाता है, टण्डन जी में उनके प्रति स्नेह की भावना पाई थी । जो समाज और जो घराना अस्पृश्यता पर जोर देता था, उसे उन्होंने ललकारा, उसके खिलाफ विद्रोह किया । यहाँ तक कह दिया कि भंगी को मलमूत्र उठाने का पेशा सदा कि लिये छोड़ देना चाहिये । अपना कमोड (शौच का पात्र) उन्होंने कई बार अपने हाथ से साफ किया । समाज में प्रचलित और भी अनेक कुरीतियों को मानने से उन्होंने स्वयं तो इन्कार किया ही दूसरों को भी उनके विरुद्ध विद्रोह खड़ा करने की सलाह दी ।

"जहाँ कोई संकट आया, वहाँ टण्डन जी तत्काल पहुँचे । उसके निवारण का कार्य स्वयं किया तथा अपने साथियों से भी कराया । उनको भारतीय संस्कृति का उद्धारक भी माना जाता है । 'राजर्षि' की उपाधि से उनको इसीलिये अलंकृत किया गया । हिन्दू-संस्कृति में वह निःसन्देह गहरी रुचि रखते थे, पर अनेक लोग इसका आशय समझने में गलती कर बैठते थे । हिन्दू-धर्म की कुछ घिसी-पिटी मान्यताओं या परम्पराओं पर विश्वास करना, इसी को बहुतेरे लोग 'संस्कृति' मानते हैं । टण्डन जी ऐसे विश्वासों से बहुत दूर थे । जो कृति सम्यक् हो, सच्ची हो, समीचीन हो, सुन्दर हो उसी को वह भारतीय संस्कृति मानते थे । कई प्रशंसकों ने टण्डन जी को धार्मिक पुरुष के रूप में भी देखा है । यह सही है कि उनके पिता राधास्वामी मत के एक प्रमुख अनुयायी थे, पर उनकी व्यापक दृष्टि पंथों और सम्प्रदायों से बहुत परे थी । सभी धर्मों की बुनियादी सच्चाइयों के प्रति उनके हृदय में पूरा आदरभाव था । अर्थहीन रूढ़ियों के वे कभी कायल नहीं थे ।"

इस प्रकार वियोगी हरि जी ने टण्डन जी के विविध जीवन-कार्यों पर दृष्टिपात करके यही निष्कर्ष निकाला है कि "टण्डन जी की राजनीतिक, समाज-सेवा, सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ, साहित्य और हिन्दी के प्रति गहरी निष्ठा और उनकी सतत् धर्मप्रियता, इन सभी के मूल में हम उनका एक ही लक्ष्य पाते हैं । वह लक्ष्य था 'सत्य' और उसकी साधना का मार्ग था नैतिकता । इसी नीति का हाथ पकड़

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर टण्डन जी ने सत्य तक पहुँचने का अनेक क्षेत्रों द्वारा प्रयास किया था ।"

खेद का विषय है कि आज इसी 'नैतकिता' को भूल जाने के कारण हमारे देश की इतनी दुर्दशा हो रही है । लोग 'भगवान' का, 'धर्म' का, 'परलोक' का नाम तो दिन भर लेते रहते हैं, पर उनका व्यवहार, आचरण इससे बिल्कुल उल्टा दिखाई पड़ता है । आप किसी भी पेशे या धन्धे की जाँच कीजिये, उसमें 'ईमानदार' कहे जा सकने लायक आदमी ढूँढ़ने पर नाममात्र को ही मिलेंगे । नहीं तो नौकरी में रिश्वत और भ्रष्टाचार, व्यापार में मोल-भाव, मिलावट और कम तोलना, नापना, मजदूरी में जहाँ तक सम्भव हो ढीलेपन से काम करना, हरामखोरी करना ही आमतौर से दिखलाई पड़ते हैं । इन बातों के कारण अपने देश में ही पारस्परिक विश्वास का अभाव नहीं पाया जाता वरन् विदेशों के निवासी भी यहाँ वालों की ईमानदारी पर सन्देह करते हैं, और उनसे व्यवहार करते समय बहुत चौकन्ने रहते हैं ।

यह अनैतिकता अथवा बेईमानी की प्रवृत्ति हमारे जातीय-जीवन के लिये एक भयंकर अभिशाप की तरह है । खेद है कि किसी समय जिस देश के निवासी 'सच्चाई' की निगाह से आदर्श माने जाते थे, जिनके लिये विदेशी पर्यटकों ने लिखा था कि 'यहाँ कोई व्यक्ति अपने मकान में ताला नहीं लगाता और कोई चीज अगर कहीं गिर जाती है तो वहीं पड़ी रहती है' वहाँ आज चोरी, ठगी, धोखेबाजी के कारण भले आदमियों का जीवन-निर्वाह कठिन हो गया है । टण्डन जी का जीवन और आचरण इस दृष्टि से हम लोगों के लिये एक उदाहरण है । वे वकालत के पेशे में चले गये थे, जिसको अधिकांश लोग झूठ और चालाकी का भण्डार समझते हैं, पर उसमें भी उन्होंने सदा सत्यनिष्ठा का ही परिचय दिया । उसके पश्चात् भी उन्होंने जिस किसी क्षेत्र में कार्य किया, अपनी इसी प्रवृत्ति का परिचय दिया । ऐसे व्यक्ति के लिये 'राजर्षि' की पदवी दी जानी उचित ही थी ।

स्वभाव और चरित्र की दृढ़ता

देश और मातृभाषा की अधिकाधिक सेवा के साथ ही टण्डन जी की एक बहुत बड़ी विशेषता उनकी अभूतपूर्व सादगी और अति सामान्य स्तर का रहन-सहन भी थी । उनको अकेले देखकर कोई अनजान व्यक्ति यह अनुमान नहीं लगा सकता था कि ये देश के प्रथम श्रेणी के नेता और हिन्दी-साहित्य सम्मेलन जैसी देश-विदेशों में विख्यात संस्था के निर्माता हैं । इसका एक मुख्य कारण यही है कि आप अपनी कथनी और करनी में एकता रखने वाले व्यक्ति थे, इसलिये जो कुछ मुख से कहते थे, या दूसरों को जैसा उपदेश करते थे, वैसा ही आचरण स्वयं करते थे । सन् १९०५ में स्वदेशी आन्दोलन के समय यह कहा गया कि विदेश से आने वाली दानेदार चीनी कभी नहीं खानी चाहिये, क्योंकि उसे गाय-बैलों की हड्डियों की राख से धोया जाता है । उस समय अन्य अनेक लोगों के साथ आपने भी उसके व्यवहार में न लाने की प्रतिज्ञा की । अन्य लोग तो भारतवर्ष में ही वैसी दानेदार चीनी बनना आरम्भ होने पर उसे खाने लग गये, पर टण्डन जी ने जो एकबार उसके बजाय देशी खाँड़ अथवा गुड़ खाने की प्रतिज्ञा की तो जीवन के अन्त तक उसे पूरी तरह निबाहा । इस प्रतिज्ञा के फलस्वरूप उन्होंने कभी चीनी या उससे बनी मिठाइयाँ चखी ही नहीं ।

इसी प्रकार जब गौ-रक्षा के लिये यह आन्दोलन उठाया गया कि बूट जूतों के लिये लाखों गायें काटी जाती हैं और बढ़िया क्रोम चमड़े के लिये तो जीवित गायों का चमड़ा उनको घोर कष्ट देकर उतारा जाता है, तो आपने चमड़े के जूते का भी त्यागकर दिया । तब से आजन्म आप सुतली के तले के जूते (रोप सोल) या अन्य प्रकार के बिना चमड़े की चप्पल आदि पहनते रहे । हाईकोर्ट में एक बड़े वकील की हैसियत से जाते हुए भी आप वही भद्दे से चप्पल आदि पहनते थे, जबकि अन्य वकील, बैरिस्टर वहाँ बड़े कीमती और चमचमाते बूट पहनकर जाते थे ।

स्वदेशी आन्दोलन में विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार की प्रतिज्ञा करने पर आपने स्नान के साबुन का व्यवहार भी छोड़ दिया था और उसके स्थान पर मुलतानी या पिंडोल मिट्टी का व्यवहार करते थे । उस समय स्नान के साबुन प्राय: इंग्लैण्ड से आते थे और उनमें चर्बी डाली जाती थी । आज भी सुनने में आता है कि बढ़िया किस्म के भारतीय साबुनों में भी चर्बी का कुछ भाग मिलाया जाता है । टण्डन जी का धर्म-भाव ऐसी अशुद्ध चीज का प्रयोग करना कैसे सहन कर सकता था ? इसलिये आप स्वच्छता के लिये भारतीय प्रजा के अनुसार स्वयं मिट्टी का प्रयोग करते थे और दूसरों को भी उसका उपदेश देते थे । एक बार शांतिनिकेतन के डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी उनके यहाँ आकर ठहरे । भोजन करने के पश्चात् उन्होंने हाथ धोने के लिये साबुन माँगा तो एक बच्चे ने उनको एक मिट्टी का टुकड़ा लाकर दे दिया और कहा—

"बाबूजी साबुन की जगह इसी को काम में लाते हैं ।" 'सुरुचि' का अधिक ध्यान रखने वाले द्विवेदी जी को यह बात सुनकर झेंप जाना पड़ा ।

वैसे तो आपकी पोशाक हमेशा साधारण ही रही थी और आप आरम्भ से ही स्वदेशी वेश-भूषा के पक्षपाती थे । फिर भी अदालत में वकील का कार्य करते हुए या

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नाभा-राज्य में मंत्री पद पर काम करते हुए आप अचकन, पायजामा का व्यवहार करते रहते थे । अन्य अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों या वकीलों आदि की तरह आपने कोट, पैण्ट, टाई आदि विलायती पोशाक का प्रयोग कभी नहीं किया । फिर जब से गाँधी जी के अनुयायी बनकर राष्ट्रीय आन्दोलन में सम्मिलित हो गये तब से बहुत मामूली खद्दर के धोती कुरते के सिवाय आपने कभी कुछ पहना ही नहीं । वह कुरता और धोती भी चाहे जब फटे-पुराने हों तो इस बात की भी चिन्ता उन्होंने कभी नहीं की ।

एक समय आपने देखा कि गाय को दुहते समय उसका बछड़ा दूध पीने के लिये बेहद कोशिश कर रहा है, परन्तु अपनी माता का दूध नहीं पी पाता । यह दृश्य देखकर आपके हृदय में इतना कष्ट पहुँचा कि आँखों से आँसू बहने लग गये । उस दिन से आपने घी, दूध, मक्खन आदि का व्यवहार भी बन्द कर दिया । अगर कभी आवश्यकता होती तो केवल छाछ ले लेते थे । शहद को प्राप्त करने के लिये जिस प्रकार सैकड़ों मक्खियों की हत्या की जाती है, उसके पापांश से बचने के लिये उसका व्यवहार भी आपने छोड़ रखा था ।

आप प्राकृतिक विधि के अनुकूल रहन-सहन के प्रेमी थे, इसलिये बजाय पके हुए खाद्य-पदार्थों के भिगोया हुआ गेहूँ, चना, मटर खाकर महीनों रह जाते थे । एक बार इसके कारण एक बड़ी मनोरंजक घटना हो गई । सन् १९२८ में आप कलकत्ता गये और वहाँ हिन्दी साहित्य की जड़ जमाने वाले विद्वान स्वर्गीय बालकृष्ण जी भट्ट के पुत्र श्री लक्ष्मीकान्त भट्ट के यहाँ पधारे । लक्ष्मीकान्त जी ने उनके भोजन के लिये पूरी-कचौड़ी, कई तरह के साग, रायता बनवाये और बाजार से मिठाई भी मँगवाई । जब यह सब सामान एक थाल में सामने रखा गया तो आपने कहा—'और कोई चीज तो नहीं है ?' भट्ट जी ने कहा—'हाँ, खीर भी बनवाई है, पर मैं चाहता था कि उसे मैं पीछे लाता ।' आपने हँसते हुए कहा—'पर मुझे तो कुछ नई तरह की चीजें खाने का अभ्यास है ।' भट्ट जी ने उत्तर दिया—'बहुत ठीक है, ये सब मिठाइयाँ कलकत्ते की मशहूर दुकानों की हैं, और इनका बड़ा नाम हैं ।'

तब आपने बताया—'ये सब चीजें मेरे काम की नहीं । मुझे चाहिये थोड़ा-सा भीगा हुआ गेहूँ, बिना नमक की दाल, मक्खन निकाली छाछ और गुड़ की एक डली ।' इस पर भट्ट जी भी उनके सुर में सुर मिला कर कहने लगे—'एक मुट्ठी घास और एक डलिया जौ का भूसा ।' इस पर चारों ओर हँसी का वातावरण व्याप्त हो गया । आपने अपने बतलाये भोजन के पदार्थों के लाभों पर एक घण्टा व्याख्यान दिया । पर भीगा हुआ गेहूँ तो तुरन्त कैसे मिलता, तोते के लिये भिगोये हुए चने रखे थे । उनको गुड़ की एक डली के साथ खाकर टण्डन जी प्रसन्न हो गये ।

टण्डन जी के घर में भोजन की सादगी के साथ ही ईमानदारी के नियम का पालन भी किया जाता था । जब सरकारी नियम के कारण बाजार में गेहूँ और चावल मिलना बन्द था तो अन्य जितना राशन मिलता उसी से काम चलाया करते, अन्य लोगों की तरह ब्लैक मार्केट (चोर बाजार) से खरीद कर कोई चीज प्राप्त नहीं करते थे, क्योंकि उनकी निगाह में यह बेईमानी को बढ़ावा देना था । जब अनाज की कमी पड़ती तो खुले बाजार से जौ-चना लेकर काम चलाया जाता । एक बार बिहार प्रान्त के कुछ मन्त्री आपके यहाँ आकर ठहर गये । घर में गेहूँ का आटा नहीं था । इसलिये रसोइया चिन्ता में पड़ गया कि क्या करे । जब आपको इसकी खबर लगी तो आपने कहा कि सब लोग जौ चने की रोटी ही खायेंगे । मन्त्रीगण इतने प्रसिद्ध नेता की इस निरभिमानिता और ईमानदारी को देखकर चकित रह गये ।

एक अन्य अवसर पर घर में थोड़ा-सा चावल था और कुछ अतिथि आ गये । उन्होंने आलुओं के साथ उन्हीं चावलों को पकवा कर सबका सत्कार कर दिया । वैसे आप अतिथि-सेवा को अपना धर्म-कर्त्तव्य मानते थे और उनके खाने, पीने, स्नान आदि की सुव्यवस्था का पूरा ध्यान रखते थे । पर उनके लिये भी आप चोर बाजार से कोई सामान खरीदने को तैयार नहीं होते थे क्योंकि सभी लोग प्रकट में इसकी निन्दा करते थे और इसे भ्रष्टाचार का कारण बतलाते थे । पर जहाँ अधिकांश व्यक्ति मुँह से ही इसकी निन्दा करके रह जाते थे, टण्डन जी सचमुच उसका बहिष्कार करते थे ।

इस सम्बन्ध में उनकी 'नैतिकता' यहाँ तक पक्की थी कि जब एक बार अपने पुत्र के यहाँ गये और भोजन के समय उनको मालूम हुआ कि इसके यहाँ अधिकांश खाद्य पदार्थ चोर-बाजार से ही आते हैं, राशन का घटिया अन्न उनको पसन्द नहीं, तो वे उसके यहाँ से बिना खाये ही लौट आये ।

श्री गोविन्ददास जी ने उनके संस्मरण लिखते हुए बताया है कि 'जब टण्डन जी दिल्ली में ठहरे थे तो पैन्सिलें बनाने के एक भारतीय कारखाने का प्रतिनिधि अपने कारखाने की कुछ पैन्सिलें उनको भेंट करने लाया । टण्डन जी बहुत देर तक पैन्सिलों को देखते रहे और उनमें से कुछ को छाँटते भी रहे । जब उन्होंने पैन्सिलों को छाँट लिया तो उनकी कीमत पूछी । प्रतिनिधि तो पैन्सिलें भेंट करने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आया ही था, वह उनकी कीमत क्या बताता ? पर टण्डन जी बिना कीमत चुकाये पैन्सिलों को लेने के लिये राजी नहीं हुए । बड़ी बहस के बाद उन्होंने उनकी कीमत दो रुपये दे ही दी ।' कुछ उपस्थित लोगों को यह कार्य कुछ अटपटा सा लगा । पैन्सिलें भेंट करने वाला व्यक्ति जिस श्रद्धाभाव से उनको भेंट करने आया था, सामान्य दृष्टिकोण से उनको स्वीकार करने में कोई दोष नहीं माना जाता, सभी नेताओं और उच्च अधिकारियों के पास ऐसी भेंट की वस्तुयें कभी-कभी भेजी जाती हैं और उनको स्वीकार कर लेना शिष्टाचार का एक अंग माना जाता है । पर सत्य और ईमानदारी के कट्टर उपासक टण्डन जी जानते थे कि इस प्रकार के शिष्टाचार में भी गुप्त अभिप्राय कुछ अप्रत्यक्ष लाभ उठाने का होता है । फिर कितने ही बार तो देने और लेने वाले इसी बहाने हजारों रुपये का माल दे दिला देते हैं, जिसका वास्तविक उद्देश्य अप्रत्यक्ष रूप से रिश्वत देना ही होता है । इसलिये इस आदर्श की छाप दूसरों पर डालने के लिये यदि सामान्य भेंट को भी अस्वीकार कर दिया जाये तो वे इसे दोष नहीं मानते थे ।

आप इस प्रकार के नियमों की कठोरता का व्यवहार बाहरी लोगों के साथ ही नहीं करते थे अपने घर के भीतर भी आप इस तरह की बातों का पूरा ध्यान रखते थे । आपके बड़े लड़के जब मैट्रिक में पढ़ रहे थे उस समय यह नियम था कि १६ वर्ष से कम आयु का लड़का परीक्षा में नहीं बैठ सकता था । आपके पुत्र की आयु १६ वर्ष से कुछ कम होती थी । यदि आप लिख देते कि परीक्षा में बैठने के समय उसकी आयु १६ वर्ष की हो जायेगी तो उसे परीक्षा में बैठने की अनुमति मिल जाती । पर आपने कोई गलत बात लिखना स्वीकार न किया और कहा—'यदि वह इस वर्ष परीक्षा में नहीं बैठ सकता तो अगले वर्ष दे लेगा । किन्तु मैं झूठ नहीं लिख सकता ।' पुत्र को एक वर्ष तक घर में बैठना पड़ा ।

हम यह जानते हैं कि इस प्रकार के सिद्धान्त और ऐसा त्यागी स्वभाव इस जमाने में 'प्रशंसनीय' नहीं समझा जाता । अगर दो व्यक्ति उनको 'आदर्श ईमानदार' बतलायेंगे तो अट्ठानवे 'सनकी' या 'बेअकल' कहने वाले मिलेंगे । ठीक है जो लोग दूसरे के धन को मार लेने में ही होशियारी समझते हैं और जब तक दस-बीस बार तकाजा न हो तब तक देने का नाम नहीं लेते, उनके लिये तो ऐसी निस्पृहता एक निकम्मी चीज ही जान पड़ेगी । इस प्रकार के व्यक्ति 'छोटे' और अशिक्षित लोगों में ही नहीं पाये जाते, वरन् साधन-सम्पन्न और समाज में बड़े बनने वालों में और भी ज्यादा पाये जाते हैं । छोटे व्यक्ति को तो यह भय भी रहता है कि अगर भेद खुल गया तो उसकी लोग भर्त्सना करेंगे और शायद कुछ दंड भी सहन करना पड़े । पर बड़े आदमियों को भरोसा रहता है कि उन पर जल्दी कोई सन्देह नहीं कर सकता और करेगा भी तो जल्दी कहने का साहस नहीं कर सकेगा और अन्त में कोई ऐसा मामला पैदा हो भी गया तो वे साम-दाम-दंड-भेद से किसी प्रकार निबट ही लेंगे ।

ऐसी भ्रष्टाचारी दुनिया में जिसमें 'भले' या 'सफेदपोश' कहलाने वाले निर्लज्जतापूर्वक रुपया कमाने के लिये धोखा-धड़ी का व्यवहार करने में संकोच नहीं करते, टण्डन जी जैसे जीवनमुक्त पुरुष ही प्रकाश-स्तम्भ का काम करते हैं । उनको देखकर लोगों को स्मरण होता रहता है कि संसार में सच्चाई का भी कुछ महत्त्व है । वह ऐसी चीज है जो चिथड़ों में लिपटी रहने पर भी दूर-दूर तक सम्मान की पात्र समझी जाती है जबकि किसी बेईमान को धन होने पर भी दूसरों से निगाह चुरानी पड़ती है वहाँ 'सच्चाई का धनी' सदैव मस्तक ऊँचा करके चलता है । इस समय संसार में धन की कितनी ही पूजा क्यों न होती हो पर उससे शान्ति और संतोष की प्राप्ति नहीं हो सकती । ये 'महान सम्पदायें' पराई वस्तु को हराम समझने वाले को ही प्राप्त होती हैं ।

भारतीय संस्कृति के उन्नायक

"टण्डन जी का स्वप्न था कि स्वाधीन भारत में पश्चिम का अन्धानुकरण न किया जाये, बल्कि अपने देश की संस्कृति की सुरक्षा और उसे पुनर्जीवित करने का काम सरकार को करना चाहिये । वे चाहते थे कि देश में ऐसा वातावरण तैयार किया जाये जिससे भारत की प्रतिष्ठा संसार में पुनः स्थापित की जा सके । इस आशा को लेकर उन्होंने 'भारतीय-संस्कृति सम्मेलन' की स्थापना कराई ।

"भारतीय संस्कृति के सम्बन्ध में वे सदैव बुद्धिवादी दृष्टिकोण के समर्थक थे । उनका कहना था कि भारतीय संस्कृति बौद्धिक ही है । जहाँ बुद्धि नहीं, वहाँ युक्ति नहीं और जहाँ युक्ति नहीं वहाँ भारतीय संस्कृति नहीं तथा धर्म भी नहीं । इस सम्बन्ध में वे बहुत बार बृहस्पति स्मृति का एक श्लोक पढ़ा करते थे जिसका अभिप्राय यह था कि 'शास्त्र-निर्णय की अपेक्षा युक्ति द्वारा धर्म का निर्णय करना चाहिये । जिस धर्म का निर्णय शास्त्र-मात्र से किया जाता है । वह ठीक नहीं । उनकी दृष्टि में शास्त्र-सम्मत और बुद्धि की कसौटी पर आँका गया धर्म ही सही धर्म हो सकता है ।"

वास्तव में बीच में अन्धकार-युग में और खास कर मुसलमानी-काल में हिन्दू धर्म के अस्त-व्यस्त हो जाने पर कुछ स्वार्थी लोगों ने हिन्दू-धर्म और संस्कृति में कितनी ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हानिकारक प्रवृत्तियाँ सम्मिलित कर दी हैं । 'शास्त्राज्ञा' को आँखें बन्द करके मानने का उपदेश भी ऐसे ही लोगों ने दिया है । सच्चाई को जाँच-पड़ताल का भय कब हो सकता है ? फिर दूसरी बात है कि कोई धार्मिक नियम ऐसा नहीं जो सब अवस्थाओं और प्रत्येक समय में एक-सा रह सके । लोकमान्य तिलक ने 'गीता रहस्य' में बतलाया है कि साधारण सामयिक नियमों की तो क्या बात सत्य, अहिंसा, क्षमा, दया भी ऐसे धर्म हैं जिनमें कभी श्रेष्ठ व्यक्ति को भी विपरीत आचरण करना पड़ता है, और उसी को धर्मानुकूल माना जाता है । पर इसका निर्णय तभी किया जा सकता है जब हम समस्त परिस्थिति पर स्वतन्त्र बुद्धि द्वारा व्यापक रूप से विचार करके कर्त्तव्य का निर्धारण करें । इसलिये यदि टण्डन जी ने धर्म का निर्णय करने के लिये बुद्धि का प्रयोग आवश्यकीय बतलाया तो उनका यह कथन हिन्दू-शास्त्रों में वर्णित उच्च सिद्धान्तों के अनुसार ही है ।

वर्तमान शिक्षा पद्धति में भारतीय संस्कृति का अधिकांश में अभाव होने के कारण वे उसे उपयुक्त नहीं मानते थे । विशेषकर आजकल के विद्यार्थियों के फैशन-प्रेम और विलासितापूर्ण आदतों को देखकर वे इसके और भी विरोधी बन गये थे । वे चाहते थे कि प्राचीन गुरुकुल प्रणाली और आधुनिक शिक्षा का समन्वय करके भारतवर्ष में उपयुक्त शिक्षा-विधि का प्रचार किया जाये । इसके परीक्षण के तौर पर उन्होंने प्रयाग में नगर से बहुत दूर 'विद्यापीठ' की स्थापना भी की थी, जिसमें सम्मेलन की परीक्षाओं की पढ़ाई के साथ-साथ विद्यार्थियों द्वारा खेती, फलोत्पादन, ग्रामोद्योग आदि का कार्य करते हुए स्वावलम्बी जीवन व्यतीत करने की व्यवस्था की गई थी । यद्यपि टण्डन जी पर कार्यभार की अधिकता और साधनों की कमी से यह संस्था अधिक समय तक ठीक-ठीक कार्य न कर पाई, तो भी इसने एक उत्तम आदर्श जनता के सामने रखा । वर्तमान शिक्षा-पद्धति की त्रुटियों की आलोचना करते हुए टण्डन जी ने जो विचार समय-समय पर प्रकट किये थे उनका सारांश इन शब्दों में मिल सकता है—

"वर्तमान शिक्षा-पद्धति में शिक्षक और विद्यार्थियों में अच्छे सम्बन्ध स्थापित नहीं हो सकते । जब तक शिक्षक इस बात पर विचार न करें कि विद्यार्थी के प्रति उसका क्या नैतिक कर्त्तव्य है, तब तक शिक्षा सफल नहीं हो सकती । इस समय ऋषि-मुनियों की तरह शिक्षा-क्षेत्र में आदर्श उपस्थित करने वाले विशिष्ट-शिक्षकों तथा आचार्यों की आवश्यकता है, जो विद्यार्थियों से यह कह सकें कि जो अच्छे काम हमने किये हैं उनसे शिक्षा लो और उन कामों की तरफ ध्यान मत दो जो भूल में हमसे हो गये हैं । विद्यार्थी अवस्था से छात्रों को अपना जीवन विलासी बनाने के बजाय कठोर साधना और तपस्या का बनाना चाहिये । केवल अपनी माँग संवारते रहने और हैट-बूट की चिन्ता करने में सारा-समय बर्बाद कर देने वाले विद्यार्थी कभी देश के गौरव नहीं बन सकते ।"

विद्यार्थी और युवक ही देश की प्रगति के आधार होते हैं । आज संसार के विद्यार्थियों के साथ भारत का छात्र वर्ग भी जागृत हो रहा है, पर उचित दिशा का ज्ञान न होने से वह ऐसे अनेक कार्यों में अपनी शक्ति का अपव्यय कर रहा है, जिनसे न उनका हित हो सकता है और न समाज का । विद्यार्थियों में सिनेमा, धूम्रपान आदि की बुराई दिन पर दिन भयंकर वेग से प्रविष्ट हो रही है और इसके परिणामस्वरूप उनमें अश्लीलता और चरित्रहीनता की भी लगातार वृद्धि होती जा रही है । खेद है कि वे विदेशी युवकों के दोषों की नकल करने को तो तत्पर रहते हैं, पर उनके सत्साहस आदि गुणों की तरफ ध्यान नहीं देते । टण्डन जी ने इस त्रुटि को बहुत पहले पहचान लिया था, और इसीलिये सम्मेलन की परीक्षाओं और तत्सम्बन्धी विद्यालयों की स्थापना द्वारा इसे यथाशक्ति दूर करने का प्रयत्न किया था । पर विद्यार्थियों की वर्तमान उच्छृंखलता और सच्चरित्रता का कोई मूल्य न समझने की प्रवृत्ति को देखकर विवश होकर कहना पड़ता है कि इस सम्बन्ध में टण्डन जी जैसे महानुभावों के प्रयत्न बहुत कम कारगर हुए हैं । इसलिये अब भी देश और समाज के हितैषियों का यह परम कर्त्तव्य है कि वे अपनी शक्ति और साधनों का प्रयोग भारतीय संस्कृति के अनुकूल शिक्षा विद्यार्थियों को दिलाने के लिये करें ।

साम्प्रदायिकता का मिथ्या दोषारोपण

भारतीय संस्कृति और देश की अखण्डता के अनन्य उपासक होने के कारण आप कुछ मुस्लिम लीगी नेताओं की आँखों में खटकने लगे थे । सन् १९१६ की लखनऊ कांग्रेस में जब हिन्दू-मुसलमानों के लिये पृथक निर्वाचन-क्षेत्रों का प्रस्ताव पास किया गया, तभी आपने उसका जोरों से विरोध किया । उन्होंने स्पष्ट कहा कि यह भारतीय राष्ट्रीयता के लिये हानिकारक है । जब लार्ड माउन्टबेटन ने देश को हिन्दुस्तान तथा पाकिस्तान—इन दो भागों में बाँटने की योजना बनाई तब भी आपने उसके विरुद्ध आवाज उठाई और कहा—"इस योजना से हमारे पवित्र आदर्शों और उद्देश्य को गहरा आघात पहुँचेगा । अगर अभी तक हिन्दुस्तान ने अपने प्राणों की आहुति देकर स्वतन्त्रता की ज्योति प्रज्ज्वलित रखी है, तो कोई कारण नहीं कि हम पंजाब तथा नोआखाली के मुट्ठी भर गुण्डों के डर से अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देश को बट जाने दें ।" जब मुसलमान नेताओं ने उत्तर प्रदेश में भी अपने अनुयायियों को पंजाब और बंगाल की सी गुण्डागर्दी करके अपनी धाक जमाने को भड़काया तो आपने सार्वजनिक भाषणों में कहा—"उत्तर प्रदेश को पंजाब या बंगाल बनाने का कुचक्र रचने वाले मुस्लिम नेताओं के कारनामों के प्रति प्रादेशिक सरकार पूर्ण रूप से सावधान है । वह उनके षड़यन्त्रों का दमन करने के लिये हर समय सन्नद्ध है ।"

टण्डन जी के इन निर्भीक उद्‌गारों को सुनकर, उनकी हिन्दी-प्रचार की तत्परता तथा ऋषियों का-सा वेश देखकर कट्टर मुसलमानों में यह भावना पैदा हो जाती थी कि टण्डन जी साम्प्रदायिक पक्षपात करने वाले हैं और वे अपने मन में मुसलमानों के प्रति विरोध-भाव रखते हैं । पर टण्डन जी ने कभी ऐसे आक्षेपकर्त्ताओं की बातों पर ध्यान नहीं दिया और वे अपना काम बिना लड़े-झगड़े करते चले गये । अन्त में परिणाम यह हुआ कि विरोधी स्वयं ही चुप हो गये, क्योंकि टण्डन जी ने मुसलमान जाति का कभी विरोध नहीं किया । उन्होंने उन्ही मुसलमान प्रचारकों की निन्दा की और विरोध किया जो हिन्दुओं के विरुद्ध विष वमन करके देश में फूट फैलाया करते थे ।

'आधुनिक प्रगतिशीलता' के पक्षपातियों का विरोध

एक और अन्य विचारधारा के लोग भी टण्डन जी की सांस्कृतिक गतिविधियों पर संकीर्णता अथवा साम्प्रदायिकता का दोष लगाया करते थे । पर वे ऐसे व्यक्ति हैं जो भारतीय समाज की वास्तविक स्थिति पर ध्यान न देकर केवल कुछ 'नये विचारों' की दुहाई देते रहते हैं । हम दूरदर्शी मनीषियों की भावी संसार सम्बन्धी कल्पनाओं से परिचित हैं और यह पूर्णतः स्वीकार करते है कि संसार में से 'धर्म', 'भाषा', 'राजनीति', 'अर्थनीति' के भेदभाव जितने अधिक मिट सकें और इन सभी विषयों में एकता और साम्य की जितनी अधिक वृद्धि हो सके उतना ही मानव-जाति के लिये कल्याणकारी है । टण्डन जी अथवा मालवीय जी जैसे महापुरुष इस तथ्य को न समझते हों यह भी कदापि नहीं कहा जा सकता, पर वे वस्तुस्थिति को आँखों से ओझल नहीं कर सकते थे । भावी संसार की एकता का चित्र अभी मुट्ठी भर व्यक्तियों को छोड़कर कल्पना लोक की ही चीज है और भारत के मुसलमान ही नहीं यूरोप और अमेरिका की वैज्ञानिक-सभ्यता वाली जातियाँ भी अभी दूसरों का शोषण और अपहरण करने में ही प्रयत्नशील दिखाई पड़ती हैं । ऐसी स्थिति भारतीय-संस्कृति की रक्षा के लिये टण्डन जी के विचारों को स्पष्ट करते हुए सेठ गोविन्ददास जी ने ठीक ही लिखा है—

"आजकल दो नये शब्द निकले हैं—'प्रोग्रेसिव' (प्रगतिवादी) तथा दूसरा 'नान प्रोग्रेसिव' (अप्रगतिवादी)। उनके अनुसार अगर अपनी संस्कृति, अपनी भाषा से किसी को प्रेम हो और जो भारत को इसके अनुरूप देखना चाहता हो, वह 'अप्रगतिवादी' कहलाता है । अपने देश की मिट्टी से, उसकी सभ्यता से, संस्कृति से, उसके धर्म और उसकी भाषा से प्रेम रखना यदि अप्रगतिवादी विचारधारा है, तो मैं जानना चाहूँगा कि आखिर स्वाधीनता और स्वदेश-प्रेम का अर्थ क्या है ? यह सब नहीं तो फिर भारत ही क्या, किसी भी देश का आज के स्वतन्त्र-विश्व में अस्तित्व ही नहीं रहना चाहिये । प्रगतिशीलता के नाम पर जो लोग हमारी सभ्यता, भारत की पुरातन संस्कृति के विरोधी हैं, वे ही सम्प्रदायवादी हैं । यदि भावी भारत का निर्माण भारतीय आदर्शों को स्थिर रखकर करना है तो हमको अपनी संस्कृति की विशेषताओं की रक्षा करना होगी और यही प्रयत्न टण्डन जी आजीवन करते रहे ।"

यद्यपि सेठ गोविन्ददास जी ने जो कुछ लिखा है, वह भारतीय जनता के बहुमत के अनुकूल ही है, फिर भी विद्वानों और नेताओं का एक ऐसा दल संसार में मौजूद है जो इस प्रकार की जातीयता को बढ़ावा देने के विरुद्ध है । उनका कथन है कि भावी जगत का निर्माण मानव-मात्र की एकता के आधार पर होगा और जब तक संसार भर में धर्म, जाति, भाषा, आचार-विचार, शिष्टाचार आदि के नियमों में अधिक से अधिक एकरूपता न लाई जायेगी तब तक शान्ति, सुरक्षा, प्रगति की आशा सर्वथा निर्मूल है ।

इसलिये साधारण व्यक्तियों की बात छोड़ भी दें तो संसार की गतिविधि को समझने वाले विद्वानों और सार्वजनिक कार्यकर्त्ताओं को तो धर्मों और संस्कृतियों के मतभेदों पर जोर नहीं ही देना चाहिये । उनको तो जन-समुदाय की मनोवृत्ति को हर प्रकार से विश्व की एकता, शान्ति और सहयोग की ओर ही आकर्षित करने का प्रयत्न करना चाहिये ।

"राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता में समन्वय करने की यह समस्या वास्तव में टेढ़ी है । हमारे ऋषि-मुनियों ने तो आदिकाल से "वसुधैव कुटुम्बकम्" के सिद्धान्त की घोषणा कर रखी है । साथ ही वे 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' कहकर मनुष्य मात्र को अपना आत्मीय भी बतलाते थे । किसी-किसी भावुक विद्वान् ने तो यहाँ तक लिख दिया है कि 'भ्रातरो मानवा सर्वे स्वदेशो लोकत्रयम्' मनुष्यमात्र हमारे भाई हैं और तीनों लोक हमारा राष्ट्र है ।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर आज तक कोई भी शासक अथवा राष्ट्र इस सिद्धान्त के अनुसार व्यवहार न कर सका। यद्यपि भारत जैसे दो-चार राष्ट्र अन्याय, अत्याचार और पारस्परिक कलह के विरुद्ध हैं और वे अपनी तरफ से सबके साथ भाई-चारे का ही व्यवहार करना चाहते हैं, पर उनको भी विवश होकर आक्रमणकारी के विरुद्ध शस्त्र-ग्रहण करना पड़ता है। इसलिये जब तक किसी उपाय से या संयोगवश परिस्थितियाँ बदल नहीं जातीं, तब तक आपत्ति धर्म के रूप में ही सही हमको अपनी जनता को आत्म-रक्षा के लिये प्रेरणा देनी ही पड़ेगी। टण्डन जी का भारतीय संस्कृति को बढ़ावा देना इसी मनोवृत्ति का परिचायक था, जिसका विरोध हम वर्तमान दशा में नहीं कर सकते।

टण्डन जी के चरित्र पर ध्यान देने से मालूम होता है कि वे ऐसी सस्ती वाह-वाही से लाभ उठाने की भावना से बहुत दूर रहते थे। वे अच्छी तरह देख रहे थे कि इस संक्रान्ति काल में 'पुरातनवादी' बनने से अनेक बड़े नेताओं के विरुद्ध खड़ा होना पड़ेगा और उसके परिणामस्वरूप अपनी स्थिति और ख्याति पर भी विपरीत प्रभाव पड़ना सम्भव है। फिर भी उन्होंने जिस बात को सत्य समझा उसका पालन करना और उसकी रक्षा के लिये हानि-लाभ की परवाह न करना अपना परम कर्त्तव्य माना। जिस प्रकार उन्होंने अपनी आवश्यकताओं को कम से कम करके धन का सदैव त्याग किया उसी प्रकार ख्याति के लोभ से भी बराबर बचते रहे। सन् १९६१ में जब भारत सरकार ने उनको एक उच्च उपाधि प्रदान की तो उन्होंने अपने एक मित्र को लिखा था—

"मुझे उतार-चढ़ाव की उपाधियाँ देने का सरकारी क्रम अच्छा नहीं लगता। सुमित्रानन्दन पन्त को छोटी उपाधि दी गई और मुझे ऊँची उपाधि मिली। यह सच है कि मैं आयु में बड़ा हूँ और पुराना कार्यकर्ता भी हूँ परन्तु यह मैं जानता हूँ कि मुझे जब लोग भूल जायेंगे तब भी सुमित्रानन्दन पन्त की कविता पढ़ी जायेगी। जनता अपने आदर के पात्रों को समय-समय पर स्वयं पहचान लेती है।"

ऐसे निर्लोभी थे टण्डन जी सांसारिक धन और मान की तरफ से। वास्तव में यही भारतीय संस्कृति के स्थापक ऋषि-मुनियों की परम्परा थी। इस दृष्टि से उनको दी गई 'राजर्षि' की पदवी सार्थक ही जान पड़ती है। वे आजन्म इसी आदर्श का पालन करते रहे और भारतीय संस्कृति एवं हिन्दी भाषा की हित-कामना करते हुए १ जुलाई, १९६२ को शरीर त्याग के अवसर तक उन्होंने ये ही शब्द कहे—

"आज हिन्दी संविधान द्वारा राज्य-भाषा बन जाने पर भी अपने मौलिक अधिकारों से वंचित है। पर वह दिन भी आयेगा जब काशी से कन्याकुमारी तक और गुजरात से नेफा की पहाड़ियों तक उसकी गरज सुन पड़ेगी, क्योंकि वही ऐसी भाषा है जिसमें हमारे विशाल देश के कोटि-कोटि निवासियों को एक सूत्र में बाँधने की शक्ति है।"

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Changing 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परमपूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँच स्थापनाएँ

युगदृष्टा के स्तर की अवतारी सत्ता के रूप में परमपूज्य गुरुदेव ने अपने अस्सी वर्ष के जीवन काल में जितना भी कुछ किया, उसकी मिसाल कहीं देखने को नहीं मिलती। करोड़ों व्यक्तियों के मनों का निर्माण उनके सोचने के तरीके में बदलाव एवं युगनिर्माण की पृष्ठभूमि बनाकर रख देने का कार्य इन्हीं के स्तर की सत्ता कर सकती थी जो लाखों वर्षों में कभी-कभी धरती पर आती है। उनके द्वारा की गयी स्थापनाओं का जब प्रसंग आता है तब ईंट-गारे-चूने-सीमेंट से बने भवनों से पहले उनकी स्नेह-संवेदना से सिक्त हुए, ममत्व में स्नानकर उनके अपने हो गये लाखों व्यक्ति दिखाई पड़ते हैं जिनने उनके एक इशारे पर अपना सब कुछ उनको अर्पित कर दिया। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में कभी ऐसा ही वातावरण भारत के कोने-कोने में दिखाई देता था, जब हर घर से सत्याग्रही निकलकर आ रहे थे। भावनाओं का आवेग चिरस्थायी नहीं रहता। वे ही लोग जो कभी राष्ट्रनिर्माण के लिए अपना सब कुछ छोड़ पढ़ना-लिखना छोड़ देश को आजाद बनाने के लिए कूद पड़े थे, कभी गड़बड़ाने न पाएँ, उसी के लिए बापू ने आजादी के बाद कांग्रेस भंग कर देने व सभी को एक आदर्श स्वयं सेवक की तरह दरिद्र नारायण का उत्थान कर राष्ट्र निर्माण में लग जाने की सलाह दी थी।

सभी इस तथ्य को जानते हैं कि ऐसा नहीं हुआ, राष्ट्र का कीर्ति स्तम्भ रूपी वह महापुरुष भी एक वर्ष के अंदर ही शहादत को प्राप्त हो चला गया। गिने-चुने उनके आदर्शों पर चलने वाले रह गये, अवसरवादियों को राजनेतृत्व भाने लगा एवं राष्ट्र आजाद होकर भी उनके हाथ में आ गया जो ब्रिटिश तो नहीं थे किन्तु, उसी रंग में रंगे सत्ता के उन्माद में काम करने वाले शासक थे- सृजेता नहीं। जिंदा रहा तो मात्र बापू का दर्शन बुनियादी आधार पर टिका-मानव को बनाने का तंत्र-आश्रम तंत्र जो सेवाग्राम-साबरमती आश्रम के रूप में कार्य करता रहा और वह भी शीर्ष-पुरुष के न रहने, बिनोबा जी के चले जाने के बाद अस्तित्त्व व महत्त्व की दृष्टि से गौण हो गया। परमपूज्य गुरुदेव ने अपनी दिव्य-दृष्टि से यह सब पूर्व में ही देख लिया था कि कोई भी भव्य निर्माण आश्रम या तंत्र बनाने से पूर्व राष्ट्र को सांस्कृतिक भौतिक, आध्यात्मिक आजादी दिलाने वाले अगणित व्यक्ति तैयार करने पड़ेंगे। १९११ में आज से ८४ वर्ष पूर्व वि. संवत् २०६८ में जन्में राष्ट्र की आजादी में उन्मत्त बने श्रीराम मत्त कहलाने वाले, आचार्य श्री ने पहले स्वयं को तपाया, वैचारिक क्रांति के निर्माण का आधारभूत तंत्र स्वयं व परमवंदनीया माता जी के रूप में खड़ा किया, 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका-अपनी लेखनी से लिखी ममत्व भरी चिट्ठियों व छोटी-छोटी एक आने की किताबों से जन-जन के मन को छुआ, तब जाकर अपने एक लक्ष के २४ गायत्री महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर उनने गायत्री तपोभूमि, मथुरा की स्थापना की बात १९५२-५३ में सोची। सबसे पहली मंत्र दीक्षा वहीं पर १९५३ में दी व यह मानते हुए कि बिना आध्यात्मिक आधार बनाये, मनोभूमि में, भावनाओं के स्तर पर बदलाब लाये कोई क्रांति सफल नहीं हो सकती, धीमी खुराक देते हुए हर व्यक्ति को गायत्री व यज्ञ के तत्व दर्शन से जोड़ते हुए चले गये। गायत्री परिवार रूपी विराट वट वृक्ष का मूल आधार वह स्थापना है जो जन-जन के मनों में पहले हुई- उनकी भाव संवेदनाओं के उदात्तीकरण के रूप में संपन्न हुई व उनके अंदर अपनी गुरु सत्ता को देखकर त्याग करने की यज्ञीय जीवन अपनाने की प्रेरणा बलवती होने लगी। उनने सर्वमेध के रूप में अपना सर्वस्व बलिदान एवं नरमेघ के रूप में अपने आप को समाज के हित न्यौछावर करने की भावना से दो यज्ञ किये। अपनी जमींदारी के बाण्ड बेचकर एवं परमवंदनीया माताजी के कीमती सोने के जेवर (ढाई सौ तोले) बेचकर जो स्वेच्छा से संपन्न हुआ, एक स्थापना भवन के रूप में जो हुई- वह थी **गायत्री तपोभूमि, मथुरा** जो वृन्दावन रोड पर ऋषि दुर्वासा की जन्मस्थली पर बनी आज से ४२ वर्ष पूर्व १९५३ में। प्रारंभिक स्थापना यों अखण्ड ज्योति संस्थान को माना जा सकता है जहाँ अखण्ड दीपक आँवल खेड़ा से अपनी जन्मभूमि से जो वहाँ से मात्र ४० मील दूर थी, स्थापित किया गया था एवं प्रारंभिक तप-तितिक्षा वहीं पर १९४१ से, तपोभूमि की स्थापना से भी 12 वर्ष पूर्व आरंभ हो गयी थी। इस प्रकार जन-जन के मनों का निर्माण उनके अंत: स्थल में प्रवेश कर उनके अंदर देवत्व के जागरण की ललक पैदा करने वाली पृष्ठभूमि पर स्थापनाओं का क्रम बना। किराये की ऐसी हवेली जिसे **भुतहा**

हवेली कहा जाता था, में अखण्ड दीपक की स्थापना, उसके समक्ष तप, **अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा** के रूप में विकसित हुआ एवं एक और दूसरा निर्माण मथुरा में ही गायत्री तपोभूमि के रूप में हुआ जोकि ३ मील दूर वृन्दावन रोड पर १९५३ बनाई गई। १९५३ में एवं क्रमशः सुसंगठित गायत्री परिवार के बनने की प्रक्रिया चल पड़ी।

इस प्रारंभिक भूमिका को समझने के बाद ही परमपूज्य गुरुदेव की पाँच मूल स्थापनाओं एवं बाद में देश के कोने-कोने में बनी भव्य इमारतों के रूप में शक्तिपीठों- प्रज्ञा संस्थानों भारत व विश्वभर में घर-घर में स्थापित स्वाध्याय मण्डलों व गायत्री परिवार की शाखाओं, प्रज्ञापीठों-चरणपीठों का महत्व समझा जा सकता है। नहीं तो जैसे अन्यान्य आश्रम-संस्थान बनते हैं ऐसे इनका भी वर्णन किया जा सकता था व यह कहा जा सकता था कि यह वैभवपूर्ण स्थापनाएँ पूज्यवर ने कीं। उनमें यदि प्राण फूँके गये हों, प्राणवान व्यक्ति वहाँ रहते हों व उस शक्ति के महा-अवसान के बाद भी वे सतत उसी दिशा में चल रहे हों तो माना जाना चाहिए कि प्रारंभिक पुरुषार्थ जो किया गया, वह औचित्य पूर्ण था।

परम पूज्य गुरुदेव की महत्वपूर्ण पाँच स्थापनाएँ, इस प्रकार हैं-

(१) युगतीर्थ आँवलखेड़ा (२) अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा (३) गायत्री तपोभूमि, मथुरा (४) शांतिकुंज, गायत्री तीर्थ, सप्तसरोवर, हरिद्वार तथा (५) ब्रह्मवर्चस शोध संस्था., सप्तसरोवर, हरिद्वार।

युगतीर्थ आँवलखेड़ा का नाम सबसे पहले इसलिए लिखा कि यहीं पर वह युगपुरुष जन्मा संवत् १९६८ की आश्विन कृष्ण त्रयोदशी तिथि के दिन ब्राह्म मुहूर्त में, जो अँग्रेजी तारीख से २० सितम्बर १९११ के दिन आती थी। एक श्री मंत ब्राह्मण परिवार में, जहाँ धन की कोई कमी नहीं थी, पूरा परिवार संस्कारों से अनुप्राणित-पिता भागवत के प्रकाण्ड पंडित बहुत बड़ी जागीर के मालिक। आज जहाँ पूज्यवर की स्मृति में एक विराट स्तंभ की, एक चबूतरे की तथा उनके कर्तृत्व रूपी शिलेखों की स्थापना हुई है- वहीं पूज्यवर ने शरीर से जन्म लिया था। समीप बनी दो कोठरियाँ जो काल प्रवाह के क्रम में गिर सी गयी थीं, जीर्णोद्धार कर वैसी ही निर्मित कर दी गयी हैं- जैसी उनके समय में थी। जन्मभूमि का कण-कण उस दैवीसत्ता की चेतना से अनुप्राणित है। उनके हाथ से खोदा कुआँ जिसे पूरे गाँव का एक मात्र मीठे जल वाला कुआँ माना गया- वह अभी भी है, उनके हाथ से रोपा नीम का पेड़ एवं वह बैठक जहाँ स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में सब बैठकर चर्चा करते थे, आज भी उन दिनों की याद दिलाते हैं। पास में ही दो कोठरियाँ हैं जिनमें से एक कक्ष में वह स्थान है जहाँ दीपक के प्रकाश में से सूक्ष्म शरीर धारी गुरुसत्ता प्रकट हुई थी तथा जिसने उनके जीवन की दिशा धारा का १९२६ के बाद के क्रम का निर्धारण कर दिया था। यह सब देखकर मस्तिष्क पटल पर वह दृश्य उभर आता था, जिसे गुरुसत्ता ने कभी देखा था व जो गायत्री परिवार की स्थापना का मूल आधार बना। आँवलखेड़ा में ही उनकी माताजी की स्मृति में स्थापित माता दानकुँवरि इंटर कालेज है जो उनके द्वारा दान दी गयी जमीन में प्रदत्त धन राशि द्वारा विनिर्मित्त है। १९६३ से चल रहे इस इंटर कालेज से कई मेधावी छात्र निकल कर आत्म निर्भर बने हैं व उच्च पदों पर पहुँचे हैं।

१९७९-८० में गायत्री शक्तिपीठ-एवं कन्या इंटर कालेज की स्थापना का ताना-बाना बुना जाने लगा एवं एक विशाल शक्तिपीठ तथा आसपास के दो सौ ग्रामों की बालिकाओं के पठन-पाठन की व्यवस्था करने वाले, उन्हें सुशिक्षित संस्कारवान आत्मावलम्बी बनाने वाले कन्या महाविद्यालय का अब रूप ले चुका है। प्रथम पूर्णाहुति हेतु इसी भूमि को जो शक्तिपीठ-जन्मभूमि-ग्रामीण क्षेत्र के चारों ओर है, इसीलिए चुना गया कि यहाँ से उद्भूत प्राण ऊर्जा से यहाँ आने वाला हर संकल्पित साधक अनुप्राणित होकर जाए व राष्ट्र के नव निर्माण की सांस्कृतिक-भावनात्मक क्रांति की पृष्ठभूमि रख सके। यहाँ पूज्यवर १९३६-३७ तक ही रहे, कुछ दिन आगरा रहकर १९४०-४१ में मथुरा चले गये जहाँ दो-तीन मकान बदलने के बाद वर्तमान मकान किराये पर लिया जिसे आज अखण्ड-ज्योति संस्थान कहते हैं।

अखण्ड ज्योति संस्थान, घीया मण्डी, मथुरा में स्थित हैं। परमपूज्य गुरुदेव सीमित साधनों में अपने अखण्ड दीपक के साथ यहीं रहने लगे एवं यहीं से क्रमशः आत्मीयता विस्तार की जन-जन तक अपने क्रांतिकारी चिंतन के विस्तार की प्रक्रिया 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका, जो आगरा से ही आरंभ कर दी गयी थी, की 'गायत्री चर्चा' स्तंभ व अन्यान्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लेखों की पंक्तियों के माध्यम से संपन्न होने लगी। व्यक्तिगत पत्रों द्वारा उनके अंतस्तल को स्पर्श कर एक महान स्थापना का बीजारोपण होने लगा। यहीं पर अगणित दुखी, तनाव ग्रसित व्यक्तियों ने आकर उनके स्पर्श से नये प्राण पाये तथा उनके व परम वंदनीया माताजी के हाथों से भोजन-प्रसाद पाकर उनके अपने होते चले गये। हाथ से बने कागज पर छोटी टेण्ड्रिल मशीनों द्वारा यहीं पर अखण्ड ज्योति पत्रिका छापी जाती थी व छोटी-छोटी किताबों द्वारा लागत मूल्य पर उसे निकालने योग्य खर्च निकलता था। बगल की एक छोटी सी कोठरी में जहाँ अखण्ड दीपक जलता था, आज पूजा घर विनिर्मित है। पूरी बिल्डिंग को खरीद कर उनके सुपुत्र ने एक नया आकार व मजबूत आधार दे दिया है किन्तु यह कोठरी अंदर से वैसी ही रखी गयी है जैसी पूज्यवर के समय में 1942-43 में रही होगी। तब से लेकर आगामी ३० वर्ष का साधनाकाल-लेखनकाल पूज्यवर का इसी घीयामण्डी के भवन में छोटी-छोटी दो कोठरियों में गहन तपश्चर्या के साथ बीता। तपोभूमि निर्माण की पृष्ठभूमि यहीं बनी, १९५८ सहस्र कुण्डीयज्ञ की आधार शिला यहीं रखी गयी, यहीं सारी योजना बनी एवं विधिवत-गायत्री परिवार बनता चला गया। रोज आने वाले पत्रों को स्वयं परम वंदनीया माताजी पढ़ती जातीं एवं पूज्यवर इतनी ही देर में जवाब लिखते जाते, यही सूत्र संबंधों के सुदृढ़ बनने का आधार बना। हर परिजन को तीन दिन में जवाब मिल जाता, शंका-समाधान होता चला जाता एवं देखते-देखते एक विराट गायत्री परिवार बनता चला गया। गायत्री महाविज्ञान के तीनों खण्ड, युग निर्माण परक साहित्य, आर्ष-ग्रन्थों के भाष्य को अंतिम आकार देने का कार्य यहीं संपन्न हुआ। जन सम्मेलनों छोटे-बड़े यज्ञों एवं १००८ कुण्डी पाँच विराट यज्ञों में पूज्यवर यहीं से गये एवं विदाई सम्मेलन की रूपरेखा बनाकर स्थायी रूप से इस घर से १९७१ की २० जून को विदा लेकर चले गये। इस संस्थान के कण-कण में जहाँ आज १० लाख से अधिक संख्या में हिन्दी सहित सभी भाषाओं में अखण्ड ज्योति पत्रिका के प्रकाशन विस्तार डिस्पैच आदि का एक विराट तंत्र स्थापित है, परमपूज्य गुरुदेव की चेतना संव्याप्त अनुभव की जा सकती है। भले ही बहिरंग का कलेवर बदल गया हो, अंदर प्रवेश करते ही परमपूज्य गुरुदेव व परम वंदनीया माताजी की सतत विद्यमान प्राणचेतना के स्पन्दन वहाँ विद्यमान हैं, यह प्रत्यक्षत: देखा जा सकता है।

गायत्री तपोभूमि, मथुरा को परमपूज्य गुरुदेव की चौबीस महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर की गयी स्थापना माना जा सकता है, जिसे विनिर्मित ही गायत्री परिवार रूपी संगठन के विस्तार के लिए किया गया था। इसकी स्थापना से पूर्व चौबीस सौ तीर्थों के जल व रज को संग्रहीत करके यहाँ उनका पूजन किया गया, एक छोटी किन्तु भव्य यज्ञशाला में अखण्ड अग्नि स्थापित की गयी तथा एक गायत्री महाशक्ति का मन्दिर विनिर्मित किया गया। चौबीस सौ करोड़ गायत्री मंत्रों का लेखन जो श्रद्धापूर्वक नैष्ठिक साधकों द्वारा किया गया था, यहाँ पर संरक्षित कर रखा गया है। पू० गुरुदेव की साधना स्थली व प्रात: काल की लेखनी की साधना की कोठरी यदि अखण्ड ज्योति संस्थान में थी तो उनकी जन-जन से मिलने, साधनाओं द्वारा मार्गदर्शन देने की कर्म-भूमि गायत्री तपोभूमि थी। यहीं पर १०८ कुण्डी गायत्री महायज्ञ में १९५३ में पहली बार पूज्यवर ने साधकों को मंत्र दीक्षा दी। यहीं पर १९५६ में नरमेध यज्ञ तथा १९५८ में विराट सहस्रकुण्डी यज्ञायोजन संपन्न हुए। श्रेष्ठ नररत्नों का चयन कर गायत्री परिवार को विनिर्मित करने का कार्य यहीं व्यक्तिगत मार्गदर्शन द्वारा संपन्न हुआ। हिमालय प्रवास से लौटकर पूज्य आचार्य श्री ने युग निर्माण योजना के शत सूत्री कार्यक्रम एवं सत्संकल्प की तथा युगनिर्माण विद्यालय के एक स्वावलम्बन प्रधान शिक्षा देने वाले तंत्र के आरंभ होने की घोषणा की। यह विधिवत् १९६४ से आरम्भ किया गया एवं अभी भी सफलतापूर्वक चल रहा है। जिस कक्ष में परमपूज्य गुरुदेव सभी से मिला करते थे, अभी भी यहाँ देखा जा सकता है। भव्य निर्माण परमपूज्य गुरुदेव की १९७१ की विदाई के बाद यहाँ हो गया है किन्तु, कण-कण में उनकी प्राणचेतना का दर्शन किया जा सकता है। विराट प्रज्ञानगर, युग निर्माण विद्यालय, साहित्य की छपाई हेतु बड़ी-बड़ी ऑफसेट मशीनें तथा युगनिर्माण साहित्य जो पूज्यवर ने जीवन भर लिखा, उसका वितरण-विस्तार तंत्र यहाँ पर देखा जा सकता है।

शांतिकुंज, हरिद्वार- ऋषि परम्परा के बीजारोपण केन्द्र के रूप में १९७१ में स्थापित किया गया था, जब परमपूज्य गुरुदेव मथुरा स्थायी रूप से छोड़कर परमवंदनीया माताजी को अखण्ड दीपक की रखवाली हेतु यहाँ छोड़कर हिमालय में चले गये। गुरुसत्ता के निर्देश पर वे पुन: एक वर्ष बाद लौटे व तब शांतिकुंज को उनने एक बड़ा विराट रूप देने,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सभी ऋषिगणों की मूलभूत स्थापनाओं को यहाँ साकार बनाने का निश्चय किया। इससे पूर्व परमवंदनीया माताजी ने 24 कुमारी कन्याओं के साथ अखण्ड दीपक के समक्ष २४० करोड़ गायत्री मंत्र का अखण्ड अनुष्ठान आरंभ कर दिया था। पूज्यवर ने प्राण प्रत्यावर्तन सत्र जीवन साधना सत्र, वानप्रस्थ सत्र आदि के माध्यम से विभिन्न क्षेत्र में सक्रिय कार्य करने वाले कार्यकर्त्ता यहीं गढ़े। यह सत्र शृंखला कल्प साधना, संजीवनी साधना सत्रों के रूप में तब से ही ९ दिवसीय सत्रों व एक माह के युग शिल्पी प्रशिक्षण सत्रों के रूप में चल रही है, अभी भी अनवरत उसमें आने वालों का तांता लगा रहता है। पहले से ही सब अपनी बुकिंग इसमें करा लेते हैं।

शांतिकुंज को गायत्री तीर्थ का रूप देकर सप्त ऋषियों की मूर्त्तियों की स्थापना १९७८-७९ में की गयी, एक देवात्मा हिमालय विनिर्मित किया गया एवं यहाँ सभी संस्कारों को संपन्न करते रहने का क्रम बन गया जो सतत चल रहा है। नित्य यहाँ दीक्षा, पुंसवन, नामकरण, विद्यारम्भ, यज्ञोपवीत, विवाह, श्राद्ध-तर्पण आदि संस्कार संपन्न होते हैं। इस बीच परम वंदनीया माताजी ने जागरण सत्र शृंखलाएँ संपन्न करना आरम्भ रखा। देव कन्याओं को प्रशिक्षित कर पूरे भारत में जीप टोलियों में भेजा गया। इनके माध्यम से तीन वर्ष तक भारत के कोने-कोने में तुमुलनाद होता रहा।

शांतिकुंज का गायत्री नगर जो आज एक विराट स्थापना के रूप में, एक अकेडमी के रूप में नजर आता है व जिसमें एक बार में एक साथ दस हजार व्यक्ति एक साथ ठहर सकते हैं १९८१-८२ में बनना आरम्भ हुआ। विलक्षण, दुर्लभ जड़ी बूटियों के पौधे यहाँ लगाये गये तथा प्रखर प्रज्ञा-सजल श्रद्धा रूपी तीर्थ स्थली का पूज्यवर ने अपने सामने निर्माण कराया। यहीं उनके निर्देशानुसार उनके शरीर छोड़ने पर दोनों सत्ताओं को अग्नि समर्पित की जानी थी। स्वावलम्बन विद्यालय से लेकर एक विशाल चौके का निर्माण एवं गायत्री विद्यापीठ से लेकर भारत के सभी सरकारी विभागों के प्रशिक्षण के तंत्र की स्थापना यहाँ पर की गयी है एवं यह एक जीता जागता तीर्थ अब बन गया है, जहाँ पर उज्ज्वल भविष्य की पूर्व झलक देखी जा सकती है। कम्प्यूटरों से सज्जित विशाल कार्यालय से लेकर पत्राचार विद्यालय जहाँ नित्य हजारों पत्रों के द्वारा पूरे तंत्र का मार्गदर्शन किया जाता है, यहाँ की विशेषता है।

ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान परम-पूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँचवी स्थापना है, जहाँ पर विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय का अभिनव शोध कार्य चल रहा है। इसे १९७९ की गायत्री जयंती पर आरम्भ किया गया था। वर्तमान शांतिकुंज-गायत्री तीर्थ से आधा किलोमीटर दूरी पर गंगातट पर स्थित यह संस्थान अपनी आकर्षक बनावट के कारण सहज ही सबके मनों को मोहकर आमंत्रित करता रहता है। इसमें तीन मंजिलों में प्रथम तल पर एक विज्ञान के उपकरणों से सुसज्जित यज्ञशाला विनिर्मित है तथा चौबीस कक्षों में गायत्री महाशक्ति की चौबीस मूर्त्तियाँ बीजमंत्रों व उनकी फल-श्रुतियों सहित स्थापित हैं। द्वितीय तल पर एक वैज्ञानिक प्रयोगशाला है, जहाँ ऐसे उपकरण स्थापित हैं जो यह जाँच पड़ताल करते हैं कि साधना से पूर्व व पश्चात्, यज्ञादि मंत्रोच्चारण के पूर्व व पश्चात् क्या-क्या परिवर्तन शरीर-मन की गतिविधियों व रक्त आदि संघटकों में देखने में आये। इनके आधार पर साधकों को साधना संबंधी परामर्श दिया जाता है। यहाँ पर वनौषधियों का विश्लेषण भी किया जाता है तथा यज्ञ ऊर्जा-मंत्र शक्ति का क्या प्रभाव साधक की मस्तिष्कीय तरंगों-जैव विद्युत आदि पर पड़ा यह देखा जाता है। विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण भी यहाँ किये जाते हैं। तृतीय तल पर एक विशाल ग्रंथागार स्थापित हैं, जहाँ विश्वभर के शोध प्रबंध वैज्ञानिक अध्यात्मवाद पर एकत्रित किये गये हैं। यहाँ प्रायः ४५००० से अधिक ग्रंथ हैं, जिनमें कई पुरातन पाण्डुलिपियाँ हैं। यह अपने आप में एक अनूठा संकलन है जो और कहीं एक साथ देखने में नहीं मिलता।

परमपूज्य गुरुदेव की उपरोक्त पाँच स्थापनाएँ किसी को भी यह परिचय दे सकती हैं कि किस विलक्षण दृष्टास्तर की वह महासत्ता थी जो हम सबके बीच अपना लीला संदोह रचकर चली गयी। प्रत्यक्ष तो यह केन्द्रीय पाँच स्थापनाएँ नजर आती हैं किन्तु ४८०० से अधिक अपने भवनों वाले प्रज्ञा संस्थान २४००० से अधिक प्रज्ञा मण्डल व स्वाध्याय मण्डल तथा अगणित गायत्री परिवार की शाखाएँ यदि इनमें मिलाई जायें तो इनका मूल्य राशि में आँका नहीं जा सकता। यही वह सब है जो उस महापुरुष को एक अवतारी स्तर की सत्ता के रूप में प्रतिष्ठापित करता है व जिसके कर्तृत्व पर श्रद्धावनत होने का मन करता है।

❑❑❑

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य का जीवनदर्शन : समग्र वाङ्मय

परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने जीवन भर जो अपनी लेखनी से लिखा, औरों को प्रेरित कर उनसे सृजनात्मक लेखन करवाया, पुस्तकों-पत्रिकाओं में जो प्रकाशित हुआ, समय-समय पर उनने अमृतवाणी के माध्यम से जो विचारों की अभिव्यक्ति की, विचारसार व सूक्तियाँ जो वे लिख गये या अनायास कभी कह गये तथा पत्रों के माध्यम से जो अंतरंग स्पर्श जन-जन को दिया, वह समग्र इस वाङ्मय के खण्डों में है । जिनके नाम इस प्रकार हैं :-

१. युगद्रष्टा का जीवन-दर्शन
समग्र वाङ्मय का परिचय
२. जीवन देवता की साधना-आराधना
३. उपासना-समर्पण योग
४. साधना पद्धतियों का ज्ञान और विज्ञान
५. साधना से सिद्धि-१
६. साधना से सिद्धि-२
७. प्रसुप्ति से जाग्रति की ओर
८. ईश्वर कौन है, कहाँ है, कैसा है ?
९. गायत्री महाविद्या का तत्वदर्शन
१०. गायत्री साधना का गुह्य विवेचन
११. गायत्री साधना के प्रत्यक्ष चमत्कार
१२. गायत्री की दैनिक एवं विशिष्ट अनुष्ठान-परक साधनाएँ
१३. गायत्री की पंचकोशी साधना एवं उपलब्धियाँ
१४. गायत्री साधना की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि
१५. सावित्री, कुण्डलिनी एवं तंत्र
१६. मरणोत्तर जीवन : तथ्य एवं सत्य
१७. प्राणशक्ति : एक दिव्य विभूति
१८. चमत्कारी विशेषताओं से भरा मानवी मस्तिष्क
१९. शब्द ब्रह्म-नाद ब्रह्म
२०. व्यक्तित्व विकास हेतु उच्चस्तरीय साधनाएँ
२१. अपरिमित संभावनाओं का आगार मानवी व्यक्तित्व
२२. चेतन, अचेतन एवं सुपर चेतन मन
२३. विज्ञान और अध्यात्म परस्पर पूरक
२४. भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म
२५. यज्ञ का ज्ञान-विज्ञान
२६. यज्ञ : एक समग्र उपचार प्रक्रिया
२७. युग-परिवर्तन कैसे और कब ?
२८. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-१
२९. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-२ (सतयुग की वापसी)
३०. मर्यादा पुरुषोत्तम राम
३१. संस्कृति-संजीवनी श्रीमद्भागवत एवं गीता
३२. रामायण की प्रगतिशील प्रेरणाएँ
३३. षोडश संस्कार विवेचन
३४. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व
३५. समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान
३६. धर्मचक्र प्रवर्तन एवं लोकमानस का शिक्षण
३७. तीर्थ सेवन : क्यों और कैसे ?
३८. प्रज्ञोपनिषद्
३९. नीरोग जीवन के महत्त्वपूर्ण सूत्र
४०. चिकित्सा उपचार के विविध आयाम
४१. जीवेम शरदः शतम्
४२. चिरयौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य
४३. हमारी संस्कृति : इतिहास के कीर्ति स्तम्भ
४४. मरकर भी अमर हो गये जो
४५. सांस्कृतिक चेतना के उन्नायक : सेवाधर्म के उपासक
४६. भव्य समाज का अभिनव निर्माण
४७. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता
४८. समाज का मेरुदण्ड सशक्त परिवार तंत्र
४९. शिक्षा एवं विद्या
५०. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-१
५१. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-२
५२. विश्व वसुधा जिनकी सदा ऋणी रहेगी
५३. धर्मतत्त्व का दर्शन व मर्म
५४. मनुष्य में देवत्व का उदय
५५. दृश्य जगत् की अदृश्य पहेलियाँ
५६.ईश्वर विश्वास और उसकी फलश्रुतियाँ
५७. मनस्विता प्रखरता और तेजस्विता
५८. आत्मोत्कर्ष का आधार- ज्ञान
५९. प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा
६०. विवाहोन्माद : समस्या और समाधान
६१. गृहस्थ : एक तपोवन
६२. इक्कीसवीं सदी : नारी सदी
६३. हमारी भावी पीढ़ी और उसका नवनिर्माण
६४. राष्ट्र समर्थ और सशक्त कैसे बने ?
६५. सामाजिक, नैतिक एवं बौद्धिक क्रान्ति कैसे ?
६६. युग निर्माण योजना-दर्शन, स्वरूप व कार्यक्रम
६७. प्रेरणाप्रद दृष्टान्त
६८. पूज्यवर की अमृतवाणी (भाग एक)
६९. विचारसार एवं सूक्तियाँ (प्रथम खण्ड)
७०. विचारसार एवं सूक्तियाँ (द्वितीय खण्ड)

वाङ्मय के आगे प्रकाशित होने वाले ३८ खण्ड निम्न विषयों पर होंगे—

७१. मनोविकारों की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि
७२. तनाव के कारण एवं उनके निवारण के उपाय
७३. चिन्तन का विधेयात्मक-निषेधात्मक स्वरूप
७४. पुरुषार्थ और मानवी जिजीविषा
७५. संकल्प बल का अनूठा प्रभाव
७६. बाल-विकास के विविध सोपान
७७. बाल मनोविज्ञान का सही उपयोग
७८. पारिवारिकता में सुसंस्कारों का योगदान
७९. पारिवारिक पंचशील और परिवार-निर्माण
८०. व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया
८१. विचार-विज्ञान का महत्त्व
८२. सामाजिक समस्याएँ और उनका समाधान
८३. समाज-निर्माण के विभिन्न चरण
८४. सामाजिक जीवन में सद्गुणों की भूमिका
८५. नर-नारी की सामान्य समस्याएँ और उनका समाधान
८६. नारी जागृति की बाधाएँ एवं उनके निराकरण के उपाय
८७. पारिवारिक जीवन: एक तप-साधना
८८. दाम्पत्य जीवन के संयुक्त दायित्व
८९. नीति-विज्ञान और नैतिकता
९०. कृषि, व्यवसाय और उद्योग की उन्नति के आधार
९१. पूज्य गुरुदेव के स्फुट विचार
९२. पूज्यवर की अमृतवाणी-२
९३. पूज्य गुरुदेव की दिव्य अनुभूतियाँ
९४. पूज्य गुरुदेव के लिखे स्मरणीय पत्र
९५. तंत्र महाविज्ञान विवेचन
९६. मंत्र महाविज्ञान विवेचन
९७. महापुरुषों के प्रेरक जीवन-प्रसंग
९८. प्रेरणाप्रद कथा एवं गाथाएँ
९९. हृदयस्पर्शी विविध कथाएँ
१००. शान्तिकुंज का प्रज्ञा अभियान
१०१. युग निर्माण मिशन का क्रमिक इतिहास
१०२. वेद-सार-चिन्तन
१०३. पुराण-शोध-सार
१०४. उपनिषद् और आरण्यकों की दार्शनिक विषयवस्तु
१०५. काव्य-गीत-मंजूषा
१०६. मिशन के रचनात्मक कार्यक्रमों का क्रमिक इतिहास
१०७. मिशन की लोक-व्यवहार संहिता
१०८. गुरुदेव की अपने आत्मीय जनों से अपनी बातें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org